अफ़नासी निकीतिन की भारत-यात्रा

व्लादीमिर
[illegible]बीत्कोव

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

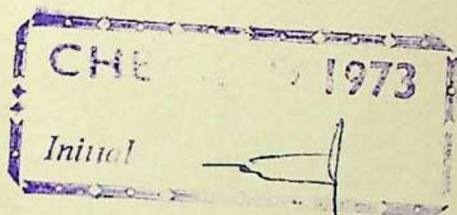
अतीत की अधिकृत इतिहास विद्या की स्मरणशक्ति किसी दासी की तरह कंगाल थी। उसे याद थी अपने शासकों की, उनकी आदतों की और उनकी मौज-बहारों की; पर मानवता के अमर गौरव कवियों, कलाकारों और अन्वेषकों के असली नामों और जीवन का उसे ध्यान न था और कभी कभी तो वह उन्हें यों ही भुला देती थी। पर इन नामों और उनके जीवन की स्मृति जनमानस ने सदैव संजोये रखी।

भारत पहुंचनेवाले पहले रूसी यात्री अफ़नासी निकीतिन के साथ यही बात हुई। पर यह भी बुरा न हुआ कि उसकी उत्कृष्ट जीवन-गाथा के सच्चे तथ्यों और घटनाओं को पीढ़ी दर -पीढ़ी मौखिक रूप से कई शताब्दियों की यात्रा करते हुए पौराणिक उपाख्यानों का सा रूप प्राप्त हुआ। कुछ भी हो वे हमारे समय तक पहुंची हैं और हम सुदूर अतीत का अन्वेषण करते हुए क्रमशः सचाई को प्रकाश में लाने का प्रयत्न कर सकते हैं।

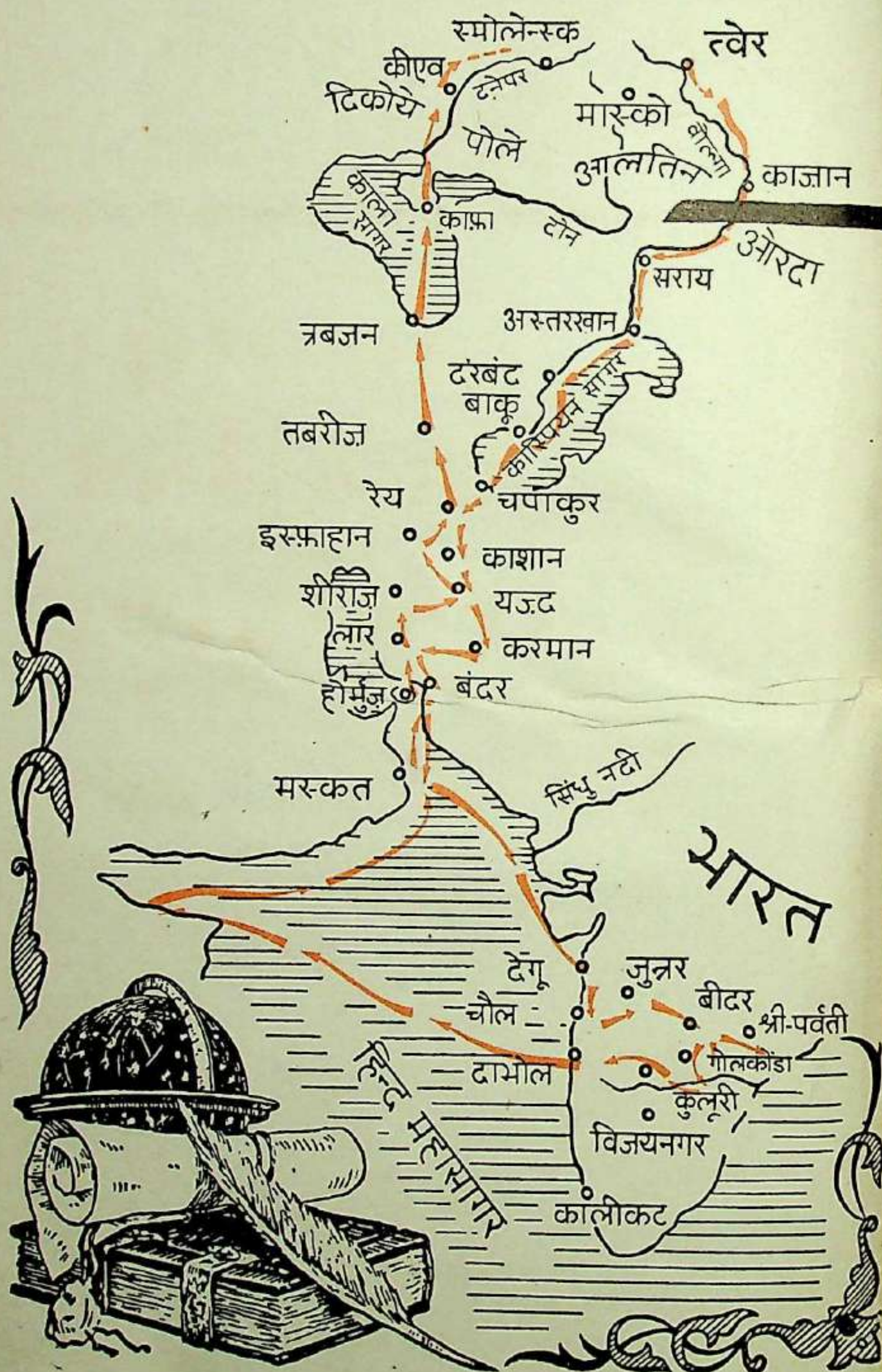
मैं मानता हूं कि जहां अन्वेषक रुक जाता है, लेखक को वहीं अपना क़दम बढ़ाना चाहिए। इसी भावना से प्रेरित होकर मैंने अफ़नासी निकीतिन की भारत-यात्रा के संबंध में 'अफ़नासी निकीतिन की भारत-यात्रा' शीर्षक उपन्यास लिखा।

भारत मेरे बचपन का सपना था। हर रूसी बच्चे की तरह मेरा मन भी जंगलों, हाथियों, राजाओं और अद्भुत मंदिरों के संसार में विचरता रहता था।

पुस्तक-वितरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।


CHE 1973
Initial


9.1.1
37238


स्मोलेन्स्क
त्वेर
कीएव
दिकोये
द्नेपर
मास्को
वोल्गा
पोले
आलतिन
काज़ान
काला सागर
काफ़ा
दोन
औरदा
सराय
अस्तरखान
त्रबजन
दरबंद
बाकू
कास्पियन सागर
तबरीज़
रेय
चपाकुर
इस्फ़ाहान
काशान
शीराज़
यज़्द
लार
करमान
होर्मुज़
बंदर
मस्कत
सिंधु नदी
भारत
दैंगू
जुन्नर
बीदर
श्री-पर्वती
चौल
गोलकोंडा
दाभोल
कुलूरी
हिन्द महासागर
विजयनगर
कालीकट

व्लादीमिर प्रिबीत्कोव

अफ़नासी निकीतिन की भारत-यात्रा

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह
मास्को





अनुवादक – डॉ० नारायणदास खन्ना

संपादक – यशवन्त

विषय-सूची

पहला भाग

दूसरा भाग



पहला भाग

पहला अध्याय

बात सन् १४६६ के वसन्त की है। त्वेर का एक धनी व्यापारी, वसीली काशीन, व्यापारियों के संरक्षक, सेन्ट निकोलाई के गिरजे से निकला ही था कि उसे कोई प्रेत जैसी आकृति दिखाई पड़ी। यद्यपि मौसम नम और गर्म था फिर भी वह आकृति फ़ेल्ट के बूट, भेड़ की खाल का बड़ा कोट और कुत्ते के फ़र की टोपी पहने थी। उसके बायें हाथ में दस्ताने थे और दायां हाथ गझी हुई भूरी-सी दाढ़ी के नीचे गला खुजा रहा था।

"अरे वसीली! नमस्ते!" काशीन को जड़वत् खड़े देख वह आकृति बोली, "मुझे नहीं पहचाना तुमने? अच्छा, ठीक से देखो, हां, हां, ठीक से, शायद पहचान लो।"

"ठहरो, ठहरो..." सलीब का निशान बनाते हुए काशीन बड़बड़ाया, "लेकिन लोग तो कहते हैं तुम्हें मार डाला गया था..."

"और तुमने उसपर यक़ीन भी कर लिया! व्यंग्यपूर्ण ढंग से आंखें झपकाते हुए दाढ़ीवाली आकृति बोली, "त्वेर के लोग ज़िन्दा

ही दफ़ना देने को तैयार हैं! और तुमने मुझे मरा हुआ समझकर गिरजे में बत्ती जलायी थी क्या?"

"नहीं..." जैसे घबड़ाकर काशीन ने उत्तर दिया।

"चलो, उतने ही खर्च से बच गये। तुम हो बड़े धूर्त। भला तुम्हारे हाथ से ऐसे ही पैसा थोड़े ही छूटेगा? तुम जानते थे कि निकीतिन परिवार के लोगों को मौत के घाट उतारना आसान काम नहीं, है न?"

"हां..." अप्रत्याशित भेंट के बाद जैसे होश में आते हुए काशीन मुट्ठी में दाढ़ी पकड़े पकड़े, बड़बड़ा उठा, "हां, तुम्हें मौत के घाट तो न उतारा गया, लेकिन तुम्हें सबक़ अच्छा सिखा दिया गया। तुम तो लोगों पर मुर्ग़े की तरह झपटते हो। नोवगोरद में तुम्हारी खातिर-वातिर नहीं हुई क्या?"

"और मैंने भी तो उन्हें कोई मिठाई खिलाने का वादा नहीं किया था। लगता है, तुमने मेरे बारे में सुन रखा है?"

"ज़रूर सुन रखा है। कैसे न सुनता! कहो, लौट तो आये! बहुत दिन रहोगे क्या?"

"यह तो भगवान ही जाने। तुम तो जानते ही हो कि मैं तुम लोगों के साथ अधिक नहीं रह सकता। मुझे गंदे लोगों से नफ़रत है।"

"थू है तुम पर अफ़नासी!" काशीन ज़मीन पर थूकते हुए बोला, "भगवान तुम्हें कभी न कभी ज़रूर दंड देगा। तुम अभी तक इतना भी न सीख सके कि बड़ों की इज़्ज़त करनी चाहिए। अब तो तुम्हारी ज़बान भी पहले से ज़्यादा खराब हो गयी है।"

"लोगों ने ही तो मुझे सिखाया है... तुमने गिरजे में कपिलोव को तो नहीं देखा?"

"तुम खुद ही वहां जाओ, सलीब का निशान बनाओ और उसे ढूंढो।"

इतना कहकर क्रोध से हाथ झुलाता और पानी और कीचड़ से मिली बर्फ़ को पैरों से रौंदता हुआ वसीली काशीन वहां से चल दिया।

यह वार्ता तीन व्यक्तियों के कानों में पड़ी। ये थे – गिरजे का प्राय: चक्कर लगानेवाली एक नगर-भक्तिनी, प्रार्थना के पश्चात् अपनी एक परिचिता के पास जानेवाला एक घंटिया और दूर के एक महल की छत पर बैठे हुए कौवों को गिननेवाला एक निठल्ला दूकानदार।

दिन समाप्त होते होते त्वेर की सभी छोटी-बड़ी गलियों और वहां के एक एक मकान में यह अफ़वाह बिजली की तरह फैल गयी कि नगर में कहीं से अफ़नासी निकीतिन नाम का व्यापारी लौट आया है जो सारी धन-दौलत खो बैठा है। वह न सिर्फ़ व्यापारियों के मुखिया को बल्कि गिरजे के मुखिया, मालदार काशीन को भी फटकारता है। यह है बुद्धि की, पुस्तकों की कृपा!

किन्तु दो महीने भी न बीते होंगे कि सभी को यह देखकर और भी आश्चर्य हुआ कि वही वसीली काशीन निकीतिन को उधार माल देता है ताकि वह और लोगों के साथ कहीं जाकर व्यापार करे। बात तो यह भी सुनने में आयी थी कि काशीन ने निकीतिन से यह वादा किया है कि वह अपनी पुत्री ओलेना का विवाह उसके साथ कर देगा। ओलेना निश्चय ही उस नगर की सबसे अच्छी लड़की थी।

पहले पहल तो लोगों को यक़ीन न आया क्योंकि कहते थे कि बरीकोव नामक एक धनी परिवार में ओलेना की मंगनी हो चुकी थी। किन्तु जब उन्होंने देखा कि किनारे पर अफ़नासी कारीगरों से एक नयी नाव बनवा रहा है और स्वयं काशीन भी प्राय: वहीं रहता

है तो उन्हें विश्वास हो गया कि ओलेना के साथ अफ़नासी का विवाह जरूर होगा। घंटिये और भक्तिनी को लोग बड़े बातूनी कहने लगे – ये दोनों राई से पहाड़ जो बनाते थे। क्या इस प्रकार लोगों को बदनाम करना उचित है? ईसाइयों और धर्म में विश्वास करने-वालों को तो ऐसा कभी न करना चाहिए।

किन्तु किसी को निश्चित रूप से कुछ भी पता न चला।

उस समय तक गर्मी पूरे ज़ोरों से पड़ने लगी थी। जून में ही चरागाहों के नाले सूख गये थे और दलदले स्थानों के आसपास की घास पीली पड़ गयी थी। जंगली बत्तखें दूर दूर की झीलों को भाग गयी थीं। वन-मुर्ग़ और काले मुर्ग़ घनी घनी झाड़ियों में छिप गये थे और छिछली पड़ी नदियों में गोमक्खियों से परेशान पशु डकार रहे थे, रंभा रहे थे। किसान लोग देवताओं की प्रतिमाएं लिये खेतों में घूम रहे थे और पादरी पौधों पर पवित्र जल छिड़क रहे थे। किन्तु भगवान ने उनकी प्रार्थनाएं न सुनीं। जुलाई-भर ज़मीन पहले जैसी ही धूप से झुलसती रही और यत्र-तत्र फट भी गयी। रातों में, जैसे लोगों को चिढ़ाने के निमित्त, कभी एकाध क्षण के लिए विद्युत् जैसी कोई लपक कहीं दूर से दिखाई पड़ जाती और उन्हें बिजली, बादलों की गड़गड़ाहट और वर्षा की सुध हो आती। किन्तु वर्षा न हुई। नोवगोरद और प्स्कोव में तो लोग भूखों मरने लगे थे। उत्तरी रूस में पिछले दो वर्षों से फ़स्ल कम हुई थी। इस वर्ष भी वहां भूखमरी के लक्षण दिखाई पड़ रहे थे।

नीज्नी नोवगोरद से लेकर त्वेर तक, अर्थात् वोल्गा के समस्त तट पर कुल्हाड़ियां बज रही थीं, उड़ती हुई चिप्पियां, तटवर्ती बालू और छोटे छोटे पत्थरों पर गिर रही थीं और लट्ठों पर जमी हुई राल तेज़ धूप के कारण पिघल पिघलकर, बूंद बूंद करके, ज़मीन पर

झर रही थी। वोल्गा नदी पर जहाज़ और तरह तरह की छोटी-बड़ी नावें बनायी जा रही थीं। उनके मालिक उत्तरी इलाक़ों के साथ अनाज का व्यापार करने की तैयारी कर रहे थे। उन्हें विश्वास था कि वहां उनके सामान की अच्छी बिक्री होगी और वे अच्छा-ख़ासा मुनाफ़ा कमा सकेंगे।

उस दिन प्रातःकाल से ही मौसम गर्म और सुहावना लग रहा था। साफ़ नीले आकाश में हल्के हल्के बादल तैरते हुए दिखाई दे रहे थे। वायु बायें तट से पीली घास की सुगन्धि बहाकर ला रही थी। हल्की रुपहली तरंगों से ढका हुआ नदी का चौड़ा पाट चमचमा रहा था। यद्यपि अभी सबेरा था फिर भी तट पर ढेरों लोग जमा हो चुके थे। नोवगोरद से आये हुए जहाज़ों पर से सामानों के गट्ठर, बड़े बड़े कनस्तर और छाल के बक्से उतारे जा रहे थे। बरीकोव, काशीन और वसीलियेव की खत्तियों के शहतीरों पर कुल्हाड़ियां बज रही थीं और बढ़ई एक दूसरे से चिल्ला चिल्लाकर गुहार कर रहे थे। किनारे पर जगह जगह अलाव जलते दिखाई दे रहे थे। पास ही राल इकट्ठा करनेवाले भी दौड़-धूप में लगे हुए थे। लट्ठों का बेड़ा किसानों के एक छकड़े को लादे लिये जा रहा था। त्वेरत्सा नदी के मुहाने के पास, जहां पुराना दुर्ग सिर उठाये खड़ा था, सहसा सफ़ेद धुआं दिखाई पड़ने लगा और एक तेज़ आवाज़ सुनाई दी। तोपचियों ने नयी तोप की परीक्षा की थी। बन्दरगाह से दाहिनी ओर कुछ दूरी पर कतिपय निर्माणाधीन नावें भी दिखाई पड़ रही थीं। इनमें से एक यात्रा पर चल देने के लिए तैयार भी की जा चुकी थी। उसपर रस्से कसे जा चुके थे, चौरस तल के नीचे लट्ठे बिछाये जा चुके थे और लोग नाव को नदी में उतार रहे



थे। नाव हिलने-डुलने लगी। यह नोवगोरद की क़िस्म की एक मस्तूलवाली भारी नाव थी जो दूर की यात्रा के लिए उपयुक्त थी।

कारीगर नाव को पानी में ढकेल रहे थे और एक दूसरे का उत्साह बढ़ाने के लिए चीख़-पुकार रहे थे। नाव का तल लट्ठों से रगड़ता और खड़खड़ा उठता। नाव ढकेलनेवाले कारीगरों की सूती क़मीज़ें पसीने से तर हो चुकी थीं। नाव धीरे धीरे पानी में उतर रही थी। उसके अगले भाग पर मोर का सिर बना हुआ था जो मानो आसपास सन्देह से देख रहा था। लग रहा था जैसे नाव पानी में उतरने में हिचकिचा रही है।

एक पहाड़ी पर दो त्वेर निवासी बैठे हुए थे और नाव को पानी में उतरती हुई देख रहे थे। जो बड़ा था गहरे नीले रंग का कोट पहने था, और दूसरा बिना पेटीवाली पीली और लम्बी-चौड़ी क़मीज़। सम्भवत: दोनों ही कुंजड़े थे क्योंकि वे देर से उगनेवाले खीरों, बन्दगोभी की बीमारी और फ़ोल नामक किसी व्यक्ति की बढ़िया शलगम और दालों आदि के विषय में बातचीत कर रहे थे। नदी किनारे पर इन कुंजड़ों के इतने तड़के आने का उद्देश्य था – मछलियां मारना। किन्तु इस समय मछलियां चारे की ओर आंख

उठाकर भी न देखती थीं। अतः वे धूप का आनन्द लेते हुए मज़े से सुस्ता रहे थे। उनकी अपनी बातें भी समाप्त हो चुकी थीं। अब वे चुप थे।

"निकीतिन तो ऐसी दौड़-धूप कर रहा है जैसे नाव उसकी अपनी है," बड़े ने द्वेषपूर्ण ढंग से अपनी मोटी मोटी पलकें झपकाते हुए कहा।

"निकीतिन है कौन?" छोटे कुंजड़े ने गरदन उचकाते हुए पूछा।

"वह जो बायीं तरफ़ खींच रहा है। देख रहे हो, कैसे चिल्ला रहा है, जैसे मालिक हो। हे-हे! नाव तो है काशीन की, लेकिन उसपर जान देता है निकीतिन। पक्का बेवक़ूफ़ है।"

"वह इसी में अपना लाभ देखता है।"

"कैसा लाभ! कहते हैं कि वह काशीन का माल लिये जा रहा है।"

"अनाज लिये जा रहा है, ऊपर की ओर?"

"शायद। खुद तो अपना सब कुछ गंवा बैठा है, अब दूसरों का माल ले जा रहा है। हे-हे!"

कुंजडों के पीछे से घंटों की आवाज़ें आ रही थीं। स्पास्क गिरजे की शहद जैसी मोटी, मिकूलिस्क गिरजे की वन-निर्झर जैसी मादक और दर्जनों दूसरे गिरजों की आवाज़ें—ये गिरजे त्वेर के गौरव जो थे।

नाव, नासिका के बल सरकती, शोर-सी करती, कभी रुकती, कभी डगमगाती, रस्सों पर थमी थमी अपनी छाती से धारा को चीरती हुई पानी में घुस चुकी थी। अब कारीगर सलीब का निशान बनाने लगे। हां, यह ज़रूर ठीक समझ में न आ रहा था कि वे लोग

राल से काली अपनी उंगलियां धूप के कारण सांवले पड़े अपने मस्तक पर क्यों लगा रहे थे—शायद इसलिए कि गिरजे के घंटे बज रहे थे, या शायद इसलिए कि एक नयी नाव बनकर तैयार हुई थी।

"भगवान हमारा भला करे! चलें, देखें कैसी बनी है," निकीतिन ने अपने साथियों को पुकारा।

कारीगर नाव में चढ़ आये। डांड़ चलने लगे, पाल खोल दिया गया, और नाव प्रवाह के साथ आसानी से आगे बढ़ने लगी।

"कितनी अच्छी नाव है!" पीली क़मीज़वाला कुंजड़ा बोल उठा, "सुनो कोज़्मा, निकीतिन को भी इससे काफ़ी लाभ रहेगा।"

कोज़्मा मायूसों की तरह बढ़ती हुई नाव की पिछाड़ी देख रहा था। नाव-उतराई नीरस-सी लग रही थी—न कोई फिसल गया और न पानी में गिर ही पड़ा।

"मुझे तुम्हारे निकीतिन की कोई चिन्ता नहीं," उसने उदासीन भाव से उत्तर दिया, "मरे या जिये, मुझे कोई चिन्ता नहीं। यहां मछलियां तो सो रही हैं। चलो, चलने का समय हो गया।" वह हांफते हुए खड़ा हो गया।

... नाव झुकती-झुकाती पाल के सहारे प्रवाह की उल्टी दिशा में चलती रही। नदी की तरंगें नासिका से टकरातीं, टूटतीं और मुंह पर छींटों के रूप में टूट पड़तीं। हवा बालों को उलझा रही थी और पसीने से तर बदन को छू रही थी।

अफ़नासी निकीतिन, संतुलन संभाले, सीधा खड़ा हो गया। वह बोल्गा पर पड़ती हुई सूर्य की किरणों, ऊंचे आकाश, निकट आते हुए वनों और नाव के पार्श्वों से आती हुई राल की तेज गन्ध का अनुभव करता हुआ मुस्करा रहा था। उसके मन में गाने की तरंग उठी। उसने घूमकर अपने निकटस्थ कारीगर को देखा, हाथ हिला



दिया और चमचमाते हुए झरने की कलकल के साथ होड़ लगाते हुए गाना शुरू कर दिया –

आसमान में बाज़ उड़ा
वोल्गा की धारा के ऊपर
हहराती लहरों के ऊपर
इठलाती हंसिनी के ऊपर
चकराता, मंडराता, तिरता!

लोगों ने भी तेज़ आवाज़ में गाना आरम्भ किया –

नील गगन में बाज़ उड़ा,
नील गगन में बाज़ उड़ा!

निकीतिन का चेहरा लाल हो उठा, गरदन की रगें तन गयीं, आंखें साहस और शरारत से चमक उठीं। उसने फिर गाना शुरू किया –

तिरो हंसिनी संभल संभल कर

और फिर लोगों की तेज़ धुन हवा में गूंजने लगी—

बचो, बाज़ है सिर के ऊपर!

पानी के छींटे उड़ते रहे, हवा सीटी-सी बजाने लगी, तरंगें उठती-गिरती रहीं, मधुर संगीत का आरोह-अवरोह आरम्भ हो गया—भागती हुई नाव की तरह।

निकीतिन गा रहा था, अलाप रहा था। उसके चेहरे की एक एक रग, हाथ की एक एक गति और शक्तिशाली शरीर की एक एक हरकत मुस्करा रही थी, खिली जा रही थी। वह गा रहा था और हंस रहा था। वह प्रसन्न था स्वर्णिम प्रभात पर, नाव की गति पर, धनी काशीन के साथ हुए सफल समझौते पर, काशीन की पुत्री ओलेना की मुस्कान और कातर दृष्टि पर और इस विचार पर कि जीवन और सफलता में उसका विश्वास फिर जमने लगा है।

लोगों ने उसे बहुत समय से इतना प्रसन्न न देखा था। दो वर्षों की अनुपस्थिति के बाद जब वह कहीं से उस वसन्त में त्वेर आया था तभी से वह उदास दिखाई पड़ रहा था। उसके विषय में लोग तरह तरह की बातें करते थे—लोग चाहें जो बक सकते हैं। किन्तु सच क्या था इसे कोई न जान सका। हां, एक बात साफ़ थी—वह ग़रीब हो गया था। इसके बारे में भी तरह तरह की ऊटपटांग बातें उड़ायी जा रही थीं। निकीतिन का परिवार त्वेर में एक सम्भ्रान्त परिवार समझा जाता था।

किन्तु सत्य अधिक कठोर, अधिक कटु था—जितना उसके कुछ शत्रु समझते थे उससे भी अधिक कठोर।

... दो वर्ष पहले जब नदी से अभी अभी बर्फ़ हट चुकी थी – अफ़नासी निकीतिन तीन नावें लेकर उत्तर की ओर गया था। त्वेर का यह व्यापारी उस समय तैंतीसवें वर्ष में क़दम रख चुका था। उसे अपनी इस यात्रा से बड़े बड़े लाभ की आशाएं थीं। अभी तक तो वह व्यापार के सिलसिले में अपने पिता के साथ ही आता-जाता रहा था। किन्तु स्वर्गीय प्योत्र निकीतिन समय के साथ बहुत कुछ सतर्क हो गया था। लम्बी यात्राओं पर जाना उसने छोड़ दिया था। और उसने अपने अशान्त और नये नये अनुभवों के लिए व्याकुल पुत्र को उत्तराधिकार से वंचित करने की धमकी देकर और भर्त्सना का भय दिखाकर रोके रखने की पूरी चेष्टा की थी।

"जब मरूंगा तो सब तुम्हारे लिए छोड़ जाऊंगा, जैसा चाहना करना, लेकिन इस समय मैं तुम्हें कहीं न जाने दूंगा। मैं बूढ़ा हो चुका हूं और अब कोई जोखिम नहीं उठाना चाहता।"

बेटा चुप रहा। पिता का कहना सच था। बेटा जानता था कि लम्बी यात्राओं में कितने कष्ट, कितनी मुसीबतें उठानी पड़ती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी यात्राओं में बड़े बड़े लाभ होते हैं, अनेकानेक आश्चर्यजनक चीज़ें, अभूतपूर्व सौन्दर्य और चमत्कार देखने में आते हैं। लेकिन यह भी तो है कि अगर आदमी मौत से बच गया तो फिर विनाश के क्षण उसके लिए मुंह बाये खड़े रहते हैं। स्वयं अफ़नासी तीन बार अपने पिता के साथ विदेशों में गया था – एक बार जर्मन प्रदेशों में, एक बार सराय में और एक बार प्रसिद्ध ज़ारग्राद में समुद्र के उस पार। और तीनों ही बार उसे खतरों का सामना करना पड़ा था, दुष्टों से लड़ना पड़ा था – माल-असबाब और ज़िन्दगी के लिए।

किन्तु उसके दिल में नये नये अनुभव प्राप्त करने की जो लालसा घर कर चुकी थी उसका दमन कोई भी काल्पनिक कष्ट न कर सका। वह अपने जन्मस्थान – त्वेर – में अधिक समय तक न रह सका, उस त्वेर में जहां बचपन में ही किसी ईस्टर के दिन उसे किसी सामन्त ने इसलिए पीटा था कि वह उसके पैरों के पास से निकलकर पहले ही गिरजे में पहुंच जाना चाहता था, उस त्वेर में जहां उसे पहले पहल आकृष्ट करनेवाली एक युवती की मंगनी उधर से गुज़रते हुए लिथुआनिया के एक धनी से कर ली गयी थी। वह अपने बाप-दादों के उस मकान में भी न ठहर सका जहां लोग पहले अपने राजा के स्वास्थ्य के लिए और फिर अपने स्वास्थ्य के लिए भगवान से प्रार्थना करते थे।

अपनी बात के पक्के अफ़नासी को दूसरे लोगों के कहने पर कोई भरोसा न था। वह धनियों को अपने से अधिक बड़ा न मानता था।

"अफ़नासी," उसका पिता तेज़ आवाज़ से बोला, "ठहरो! अभी भी तुमने सामन्तों का सम्मान करना नहीं सीखा।"

"सामन्त!" बेटे ने व्यंग्य किया, "जिसे अपना नाम लिखना भी नहीं आता।"

"तो तुमसे इससे क्या मतलब! तुम पढ़े-लिखे हो मगर इसका घमंड न करना। तुम्हारी इतनी खबर ली जायेगी कि ककहरा तक भूल जाओगे।"

पिता ने जो बात कही थी उसके सत्य से इनकार करना सम्भव न था। बेशक वे लोग उसे दंड देने में समर्थ थे। किन्तु उसे अपने भाग्य पर तरस आ रहा था। क्या वह उस सामन्त के धमधूसर बेटे से भी गया-बीता था, जिसका यश उसके कन्धे पर पड़े हुए सेबल के फ़र के कोट के मूल्य तक ही सीमित था?

किन्तु त्वेर में रहते रहते वह उक्त सत्य का पता चलाने की बात भी न सोच सकता था। उसने देखा था कि यहां लोग बेईमानी करके मालदार बने थे। ईमानदार लोगों के लिए तो एक ही रास्ता था – सारी उम्र दूसरों की जी-हुज़ूरी करना। जर्मन प्रदेशों में भी यही बात थी। ज़ारग्राद की स्थिति भी बहुत कुछ ऐसी ही थी। सेन्ट सोफ़िया के गिरजे के गुम्बदों की चमचमाहट और युस्तीनियान की मूर्ति की विशालता ने अफ़नासी की आंखों में कोई चकाचौंध न पैदा की थी। उसने ज़ारग्राद नाम के वर्णनातीत धनी नगर में भी न जाने कितने ग़रीब देखे थे। परन्तु पता नहीं क्यों उसे इस बात का विश्वास था कि कोई ऐसी भूमि ज़रूर है जहां बेईमानी का नामोनिशान भी नहीं।

वह बुज़ुर्गों की कहानियों, ग़रीब ख़ानाबदोशों की दास्तानों और अंधे गवैयों के गीतों को बड़े ध्यान से सुना करता। इन सभी में सुखद जीवन के स्वप्न थे। सभी में उसकी खोज थी और सभी में यह विश्वास प्रकट किया गया था कि उन्हें सत्य के दर्शन होंगे।

एक बार सराय में अफ़नासी ने अद्भुत वस्त्र देखे। कहा जाता था कि वे भारत से लाये गये हैं। तभी उसे उस गाने की याद आयी जिसमें वसीली व्यापारी का वर्णन किया गया था। यह व्यापारी विदेशी समुद्रों को पार कर अद्भुत भारत की भूमि पर गया था और स्वतंत्र ज़िन्दगी व्यतीत करने लगा था।

अफ़नासी उन महीन और चमचमाते हुए वस्त्रों को देखकर गदगद हो उठा था।

ज़ारग्राद के बाज़ार में मसाले भी बिक रहे थे, जिनकी क़ीमतें आसमान छू रही थीं। उसने पूछा था – "ये मसाले हैं कहां के?"

"भारत के ..."

भारत के! उसे उसके एक परिचित पादरी के पास इन्दीकोप्लोव की 'कास्मोग्राफ़ी' नामक एक पुस्तक मिल गयी थी जो उसने एक ही बार में समाप्त कर डाली थी।

इस पुस्तक के यूनानी लेखक ने भारत के चमत्कारों का वर्णन किया था। इससे एक बात स्पष्ट हो गयी थी – भारत नाम का कोई देश है अवश्य, भले ही वहां तक पहुंचना दुःसाध्य हो। वहां सोना ज़मीन पर लोटता है और वहां के निवासियों की निगाहों में उसका कोई मूल्य नहीं।

उस समय से अज्ञात भारत देश अफ़नासी के लिए स्वप्नों की दुनिया बन गया।

पिता की मृत्यु के बाद तो उसे एक क्षण के लिए भी चैन न मिला, उसकी आत्मा अशान्त हो उठी। अन्ततः उसने निश्चय किया – आरम्भ में जर्मन प्रदेश जाऊंगा – वहां का रास्ता जाना-बूझा है – वहां कुछ धन संग्रह करूंगा, फिर ख्वालीन* तक जाने के लिए क़ाफ़िला तैयार करूंगा। उसने सुना था कि ख्वालीन के उस पार दूर, बहुत दूर, सपनों का वह देश है – भारत।

निकीतिन तीन नावें लेकर उत्तर की ओर चल पड़ा। नावों पर माल भरा था जिसे उसने अपनी सारी पूंजी लगाकर ख़रीदा था। एक नाव पर विविध वस्त्र, धातु की चीज़ें और मास्को की देवताओं की प्रतिमाएं और बाक़ी दोनों पर चमड़े और चरबी लादी गयी।

आरम्भ में उसने नोवगोरद में व्यापार करने का निश्चय किया था, परन्तु वहां पहुंचकर उसने अपना इरादा बदल दिया और

---

*कास्पियन सागर।

वोल्खोव तथा लदोगा होते हुए रीगा पहुंचा और वहां से ल्यूबेक के लिए रवाना हो गया। वह इतनी लम्बी यात्रा पर केवल इसलिए नहीं निकला था कि धन कमाना चाहता था।

नोवगोरद में निकीतिन के पिता का एक पुराना दोस्त दनीला रेप्यीन नामक धनी व्यापारी रहता था। उसका एक बेटा अलेक्सेई, अफ़नासी की ही उम्र का था। अफ़नासी ने नोवगोरद की अपनी पहली यात्राओं में ही अलेक्सेई से मित्रता पैदा कर ली थी।

अफ़नासी को दनीला रेप्यीन से पता चला कि अलेक्सेई का विवाह हो चुका है और अब वह जर्मन प्रदेश गया हुआ है। अफ़नासी ने उससे वहां जाकर मिलने और उसके साथ फिर लौट आने का निश्चय किया।

अन्ततः निकीतिन की अलेक्सेई से भेंट हुई, परन्तु जिस मित्र पर उसने इतना विश्वास किया था उसने उसके साथ ग़द्दारी की–वह जर्मन व्यापारियों से मिल गया और अफ़नासी को धोखा देने में उनका दाहिना हाथ बन गया।

हानि उठा चुकने के बाद निकीतिन अलेक्सेई से मिलने गया किन्तु उस समय तक वह ग़ायब हो चुका था।

निकीतिन को जैसे काठ मार गया। उसके दिमाग़ में एक विचार कौंध गया किन्तु उसका दिल उसपर विश्वास करने को तैयार न हुआ। हां जब वह नोवगोरद लौटा और वहां अलेक्सेई को देखा तो उसका माथा ठनका–उसे देखते ही अलेक्सेई इतना घबड़ा गया कि हड़बड़ी में अपने जल्दी चले आने का कारण बताने लगा। अफ़नासी सब कुछ समझ चुका था। उसके हृदय में एक तूफ़ान उठ रहा था। उसे धिक्कारते हुए वह चल दिया।

"क्यों, अलेक्सेई, आख़िर बेच दिया न तूने मुझे। कितने

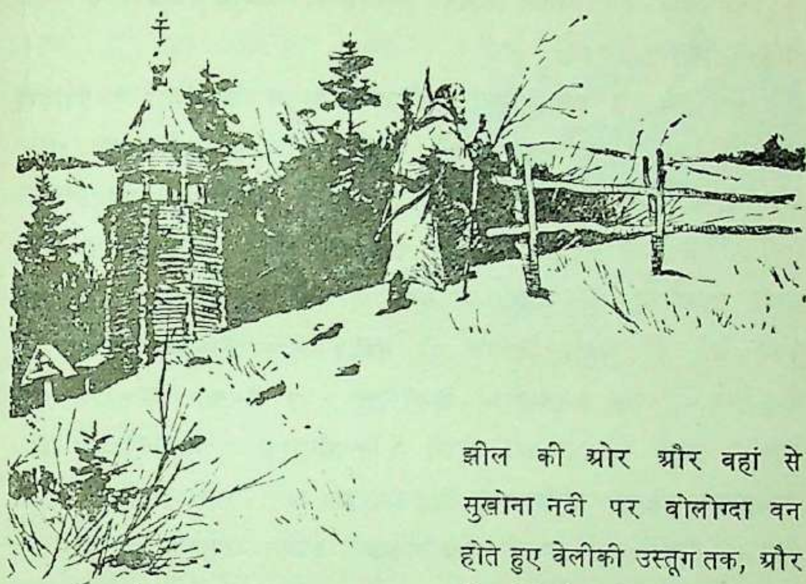
पैसे मिले तुझे ?" मुट्ठी भींचते हुए उसने सोचा। उसकी आत्मा व्यथित हो रही थी।

अफ़नासी को दुख केवल इस बात का न था कि उसके धन की हानि हुई थी, यद्यपि हानि गहरी थी, बल्कि इस बात का था कि उसकी भावनाओं को ठेस लगी थी। उसने इस धोखेबाज़ी का बदला लेने का निश्चय किया। वह उसके अपराध को सिद्ध करने में असमर्थ था। वहां नोवगोरद में अलेक्सेई को कौन बेईमान समझता ? अगर अफ़नासी वहां यह बात उठाता भी तो लोग उसी पर हंसते।

नहीं, किसी से कहने-सुनने से कोई लाभ नहीं। निकीतिन ने किसी दूसरे ढंग से बदला लेने की बात सोची। वह जानता था कि रेप्यीन परिवार के लोग ज़वोलोच्ये में नगर के मुखिया से व्यापार के लिए फ़र खरीदता था। हां, यहां वह उसे नुक़सान पहुंचाकर अपनी हानि पूरी कर सकता था।]

निकीतिन ने लोहे का सामान खरीदा और चुपचाप ओनेगा





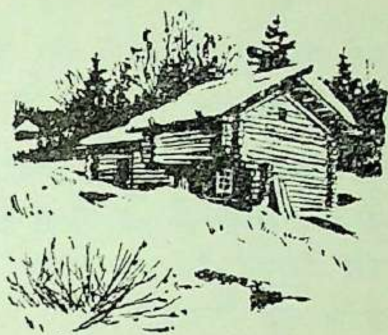
झील की ओर और वहां से सुखोना नदी पर वोलोग्दा वन होते हुए वेलीकी उस्तूग तक, और फिर सेवेर्नाया द्विना और विचेग्दा पर होते हुए पेचोरा की समृद्ध भूमि पर पहुंच गया। उसकी यात्रा सफल रही। जब तक वह सबसे दूर के स्थानों पर न पहुंच गया तब तक उसने लेन-देन न शुरू किया। उन स्थानों तक पहुंचकर वह शीघ्र ही लौट पड़ा और नोवगोरद के व्यापारियों के सामने मनमाना मूल्य दे देकर, अच्छे से अच्छा फ़र लेने लगा। नोवगोरद के व्यापारी एक एक कुल्हाड़ी के बदले सेवल की उतनी खालें पाते थे जितनी कुल्हाड़ी के मूठ जड़ने के सूराख से होकर निकल पाती थीं। अफ़नासी ने फ़र की क़िस्म के मुताबिक़ कभी कभी तो दो दो कुल्हाड़ियां तक दे दीं। ग़रीब शिकारी उसके पास पचास पचास मील से अपना फ़र लेकर लेन-देन के लिए आते और यदि किसी का फ़र वह उस समय न खरीद पाता तो इस आशा में अगले साल तक के लिए बचाये रखते कि जब अफ़नासी लौटेगा तो अच्छे दामों पर सौदा करेगा।

शीघ्र हीनिकीतिन अपनी स्लेज पर मूल्यवान फ़र के गट्ठर लादकर वहां से चल दिया।

त्वेर के इस सदय व्यापारी की चर्चा केवल शिकारियों के शिविरों तक ही नहीं सीमित रही अपितु नोवगोरद के इर्द-गिर्द वाली रक्षक बस्तियों में भी जा पहुंची। फलतः रेप्पीन, बोरेत्स्की और दूसरे धनी परिवारों के मुख़तारों के भी कान खड़े हुए। युगों युगों से चली आयी नोवगोरद की भूमि पर एक अजनबी जो आया था! उसे पकड़ लेने की आज्ञा निकाल दी गयी। अफ़नासी जानता था कि नोवगोरद के उन व्यापारियों से लोहा लेना कितना ख़तरनाक है जिन्होंने किसी को भी इन प्रदेशों में क़दम तक न रखने दिया था। वह अपने को बचाता-छिपाता निकल रहा था, किन्तु वहां की सड़कें ऐसी थीं जिन्हें सभी जानते थे और उनसे होकर जाना ख़तरे से ख़ाली न था। फ़र्वरी की एक तूफ़ानी रात में वोलोग्दा के रास्ते वह पहरेदारों के हत्थे चढ़ गया। उन्होंने उसे जूतों, तलवार की मूठों से मारा-पीटा, उसके हाथों को मरोड़ा और उन लोगों और शिकारियों के नाम बताने को कहा जिनके साथ उसने सौदा किया था। किन्तु वह चुप रहा। यह भी एक करिश्मा ही था कि वहां के किसानों की मदद से उसकी जान बच गयी और वह पहरेदारों की गिरफ़्त से निकल भागा।

एक हफ़्ते से अधिक समय तक वह घने जंगलों में मारा मारा फिरता रहा – बर्फ़ पर रात बिताता और उन चिड़ियों का कच्चा गोश्त खाकर पेट भरता जिन्हें वह अपने हाथ के बने तीर-कमान से गिराया करता था।

अन्ततः वह उस गांव में पहुंच गया जहां केवल तीन ही घर थे। यह गांव जाड़े के दिनों में बाक़ी दुनिया से एकदम कट-सा जाता



था। अफ़नासी हड्डी का ढांचा मात्र रह गया था। हां बसन्त समाप्त होते होते उसका स्वास्थ्य कुछ सुधरा और वह त्वेर की ओर रवाना हुआ।

उसी समय उसे काशीन की फटकार खानी पड़ी।

निकीतिन खाली हाथ लौटा था। वह बराबर विचारों में डूबा दिखाई देता था। अब उसकी ज़बान पहले से अधिक कटु हो चुकी थी।

उसकी परिस्थितियां अब भी प्रतिकूल थीं। गोश्त की दूकान खोल देने-भर के लिए उसने जैसे-तैसे कुछ पैसा जुटाया। त्वेर में तो राह चलते लोग तक उसकी ओर उंगली उठाते। पीठ पीछे लोग उसपर हंसते किन्तु सामने पड़ने पर उसे रास्ता दे देते। सच पूछो तो लोग उससे डरने लगे थे। ऐसा आदमी क्या नहीं कर सकता! और इस भय का कारण था उन लोगों का पापी मन। पर ऐसा लगता था जैसे उसने इन सब बातों पर कोई ध्यान न दिया। वह एकान्त में रहता, रात रात-भर धर्म-ग्रन्थों का पाठ करता, दुनियादारी की पुस्तकें भी पढ़ता। मेहमान बनकर दावतें उड़ाने कहीं न जाता। अफ़नासी का एक पुराना शिक्षक, पादरी इओना ही उसके विचारों और उसकी इच्छाओं को अच्छी तरह जानता था, समझता था।

अफ़नासी के ये विचार बड़े ही साहसपूर्ण थे। इन विचारों ने इओना को खिन्न कर दिया था।

"सुनो," आह भरते हुए इओना बोला–"इन विचारों से तुम कहीं के न रहोगे। इन्हें छोड़ो-छाड़ो और सीधी-सादी ज़िन्दगी बसर करो।"

"कैसे? कुत्तों की तरह? जो उसके सामने हड्डी फेंके उसके आगे तो वह पूंछ हिलाये और जो हड्डी न फेंके उसपर गुर्राये?"

"जैसे और लोग रहते हैं..."

"वे कैसे रहते हैं? दोस्त, क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता? वे भी कोई आदमी हैं, वे तो जंगली हैं जंगली, गन्दे लोग! यह भी कोई ज़िन्दगी है? एक महल में रहता है, दूसरे को गज़-भर ज़मीन नहीं मिलती।"

"भगवान की इच्छा..."

"क्या? बरीकोव परिवार के लोगों ने ससुर का काम तमाम कर दिया। क्यों? इसी लिए न कि उन्हें उसकी दौलत मिल जाय। सामन्तों को ही देख लो! क्या करते हैं? किसानों पर अत्याचार करते हैं। शराब पीते हैं, छोकरियों को लिये लिये घूमते हैं, तातारों के साथ क़रार और समझौते करते हैं, फिर भी उनकी इज़्ज़त है, सफलता उनके क़दम चूमती है। और तुम–तुम अपनी ही दुम के पीछे दौड़नेवाले कुत्ते की तरह इधर-उधर चक्कर काटते हो! वाह री भगवान की इच्छा!"

"भगवान उस दुनिया में सबका न्याय करेंगे। समझे। अपना फ़ैसला खुद न करो..."

"ओ-हो! तो कोई मेरा फ़ैसला करे और मैं चुप रहूं? मैं कच्ची मिट्टी का पुतला थोड़े ही हूं? भगवान ने मुझे भी दांत दिये हैं। मैं दूध ही नहीं पीता, हड्डी भी चूस सकता हूं। तुम मुझसे बहस न करो। मैं तो इन भेड़ियों के झुंड में रहते रहते तंग आ गया हूं। मेरे लिए सब बराबर है–जल्द ही चला जाऊंगा..."

"फिर वही? इतनी घुमक्कड़ी तो कर चुके, लेकिन मिला क्या? या फिर भी तुम्हें विश्वास है..."

"हां, है। बस एक ही ख्याल और है। जहां अब मेरा जाने का इरादा है यदि वहां भी मुझे दौलत और सत्य नहीं मिलता तो बस, मेरा फ़ातिहा पढ़ो। तब यह सिद्ध होगा कि धरती पर सत्य है ही नहीं!"

"दूर जाना चाहते हो?"

"हां।"

"और तिजारती सामान?"

"उधार ले लूंगा।"

"तुम्हें मिल जायेंगे?"

"मिल जायेंगे। आदमी का लोभ क्या नहीं करा लेता। मैं एक एक के बदले दस दस लौटाने का वादा जो करूंगा।"

"और दौलत तुम्हें मिलेगी कहां से? ज़मीन पर पड़ी हुई है क्या?"

"एक बार तुमने भी तो अनुमान ठीक लगाया। जहां मैं जा रहा हूं वहां सोना ज़मीन पर बिछा है।"

इओना आंख फाड़कर देखने लगा। उसने हाथ पर हाथ मारा और पादरियों वाले उसके लबादे की चौड़ी चौड़ी आस्तीनें ऊपर चढ़ीं।

"फिर तुमने क्या तय किया? कहो, क्या तय किया?" निकीतिन के और भी निकट आते हुए वह धीरे से बोला, "इस सबकी जड़ किताबें हैं, किताबें! तुमने किताबों की बकवास पर विश्वास कर लिया न? हे भगवान! इसी लिए तो तुम्हारी मेज़ पर इन्दीकोप्लोव की किताब है... दोस्त, अपने दिमाग़ से ये सारी खुराफ़ातें निकाल फेंको!"

"क्यों ?"

"हे भगवान... वहां कभी कोई नहीं गया, उस..."

"डरो नहीं, कहो न – भारत में।"

"हे भगवान, हे भगवान, रहम कर, रक्षा कर... भारत में... हो सकता है यह देश पृथ्वी पर है ही नहीं।"

"वहां से लोग माल लाते हैं।"

"कौन लोग लाते हैं? ईसाई लोग?"

"नहीं, सूरोज के व्यापारी, मुसलमानों से..."

"हां, तो मुसलमानों से! और तुम अपनी नाक कहां अड़ाओगे? अच्छा, तो भारत है कहां? जानते हो?"

"जान लूंगा! कहते हैं भारत के निवासी सराय में आये थे। इसके माने यह हैं कि पहले मुझे वोल्गा पर यात्रा करनी होगी।"

"अरे इस सब के चक्कर में न पड़ो! वहां शैतान, देव, दैत्य, जाने कौन कौन रहते हैं। यह बात इन्दीकोप्लोव ने भी लिखी है। मारो गोली उस सोने को। भगवान की प्रार्थना करो कि इस मोह से छूट जाओ!"

"प्रार्थना करना तुम्हारा काम है, दोस्त। मेरा काम है रास्ता ढूंढना। अपनी आत्मा को सुख दो और चुप रहो। मैं चाहता हूं कि मेरे विचारों को कोई न जान पाये। अगर मैंने सुना कि तुमने मेरे बारे में ऐरी-ग़ैरी बातें फैलायीं तो मैं तुम्हें दिल से निकाल दूंगा!"

"हे भगवान! यह तुम क्या कह रहे हो अफ़नासी! तुम तो मेरे बेटे की तरह हो।"

"अगर मैं तुम्हारे बेटे की तरह हूं तो मेरे मामले में टांग मत अड़ाओ... देखो, त्वेर में अकेले तुम ही तो मेरे दोस्त हो जो

मुझे समझ सकते हो। लेकिन तुम भी मुझे नहीं समझना चाहते! ख़ैर बहुत हो चुका, हम बहुत कुछ कह-सुन चुके।"

चिन्तित मुद्रा से इग्रोना ने सलीब का निशान बनाया और पीले पड़े हुए निकीतिन की सूजी हुई आंखों की ओर देखने लगा।

शीघ्र ही अफ़नासी के मित्रों ने उसमें एक परिवर्तन और देखा। मामला क्या है इसका अनुमान सबसे पहले नौकरानी मार्या ने ही लगाया था, किन्तु इससे उसे प्रसन्नता नहीं हुई थी।

"अफ़नासी, काशीन की बेटी ओलेना को ताकता रहता है, मीठी मीठी नज़रों से।" उदास होकर उसने इग्रोना से कहा।

"क्या सच? हे भगवान तेरे बड़े बड़े हाथ हैं," इग्रोना गदगद हो उठा।

"पादरी, आप इस तरह खुश क्यों हो रहे हैं," सिर हिलाती हुई मार्या बोली, "त्वेर में वही तो एक लड़की है, खूबसूरत भी और मालदार भी। लेकिन उसे यह लड़की देगा कौन? कहां राजा भोज कहां गंगू तेली।"

"कोई बात नहीं, भगवान की इच्छा!" बूढ़ा इग्रोना आंखें नचाते हुए खुशी से बोला, "मुझे आशा है कि शीघ्र ही उसके पास पैसा हो जायेगा, वह अपने दिमाग़ से सारी ख़ुराफ़ातें निकाल फेंकेगा!"

मार्या चली गयी। इग्रोना खुश होकर अफ़नासी के विवाह के सपने देखने लगा।

और अच्छे मूड में इग्रोना ने निकीतिन पर छींटाकशी करने की सोची, किन्तु जैसे ही उसने उस राजहंसिनी की बात छेड़ी कि अफ़नासी ताव में आ गया—

"क्या बक रहे हो? किस राजहंसिनी के सपने देख रहे हो?" वह बोला।

इग्रोना चुप हो गया।

ग्रौर सच बात तो यह थी कि निकीतिन सचमुच धनी वसीली काशीन की बेटी के ही बारे में सोच रहा था। उसके समक्ष ग्रोलेना का लम्बा-सा मुख-मंडल, गालों की कुछ उभरी हुई हड्डियां, धंसी हुई कनपटियां ग्रौर ठुड्ढी का गड्ढा साकार हो उठा। उसने ऐसी सुन्दरता कभी न देखी थी।

एक बार गिरजे से लौटते हुए उसे ग्रोलेना ग्रंधेरे में जलते हुए चिराग़ की तरह दिखाई पड़ी थी।

वह मन ही मन कहने लगा – "उसकी सराहना मत करो। वह तुम्हारे लिए नहीं।" उसने उसका ख्याल ग्रपने दिल से निकाल देने का प्रयत्न किया ग्रौर ग्रपने पर खीझ उठा – वह स्वयं ग्रपने को ही न संभाल सका। ग्राखिर उसे फिर क्रोध ग्रा गया – "क्यों वह मेरे लिए नहीं? मुझे मिलन-सुख बदा ही नहीं है क्या? या फिर ग्रोलेना को प्राप्त करना मेरे लिए सम्भव ही नहीं?"

उसने ग्रपने को ग्रौर ग्रपने जीवन को एक नयी दृष्टि से देखा। वह जैसे मांद में रह रहा था, सारी दुनिया से ग्रलग। यह ज़िन्दगी भी कोई ज़िन्दगी है? उसकी ग्रात्मा में एक हाहाकार-सा मचा हुग्रा था, जैसे उसे ग्रपने ग्रन्तस् में यही ग्रावाज़ सुनाई पड़ रही थी – "निराश होने की कोई बात नहीं! मैं दुनिया को दिखा दूंगा कि मैं कौन हूं! निकीतिन ऐसा-वैसा ग्रादमी नहीं!"

ग्रौर उस ग्रद्भुत देश की यात्रा करने का विचार उसके हृदय में ग्रौर भी ग्रधिक तेज़ी से उठने लगा।

दूर की यात्रा के लिए न तो उसके पास पैसा ही था ग्रौर न व्यापारिक सामान ही ... तो भी क्या हुग्रा? वह क़र्ज़ लेगा। ग्रौर यद्यपि उसे त्वेर के थैलीपतियों के पास हाथ फैलाने जाना पसंद न था फिर भी उसने ऐसा करने का निश्चय कर लिया। किन्तु उसका

भाग्य बली था। वसीली काशीन ने, अप्रत्याशित रूप से, स्वयं ही अफ़नासी को बुला भेजा... उस दिन से जैसे सब कुछ बदल गया। दिन यों उड़ने लगे जैसे डरी हुई चिड़ियां उड़ती हैं। ज़िन्दगी फिर से निकीतिन के समक्ष मुस्करा रही थी।

नाव घाट से काफ़ी दूर जा चुकी थी। गाना बन्द हो चुका था और उसकी अन्तिम धुन वोल्गा के जल पर थिरक थिरककर विलीन हो रही थी।

"अफ़नासी, अब हम लौटें न?" निकीतिन से प्रश्न किया गया, "हम इतनी दूर तो चले आये।"

निकीतिन ने चारों ओर निगाह डाली। सचमुच लौटने का समय हो चुका था। उसने पाल उतारने की आज्ञा दी और नाव धीरे धीरे मुड़ने लगी। फिर वह बेंच के पास आया और एक कारीगर को एक ओर हटाते हुए स्वयं डांड़ का खुरदरा हत्था थाम लिया। डांड़ से पानी की बूंदें अर्द्धवृत्त के रूप में टपकती हुई दिखाई पड़ रही थीं।

नाव किनारे पर लग गयी। निकीतिन ने उसे जंजीरों से बांधा और हाथ हिलाया –

"चलो, दोस्तो। अभी तुम सब की मजूरी दूंगा।"

कोट कन्धे पर डाले वह सब्ज़ी बाग़ों से होता हुआ घर की ओर बढ़ने लगा।

कारीगर कुल्हाड़ियां और रस्सियां साथ लिये उसके पीछे पीछे चल दिये।

वसीली काशीन के अभ्रक की खिड़कियों वाले दुमंज़िले मकान में उस दिन सबेरे से ही चहल-पहल थी। स्वयं मालिक काशीन,

जैसे ही उठा, कि गिरजे में गया, माता मरियम की प्रतिमा के आगे मोमबत्ती जलायी, फिर घाट की ओर, खत्तियों की तरफ़ और यह देखने के लिए गया कि नौकर घोड़ों को कैसे नहला रहे हैं, और इसके बाद घर के हर कोने का चक्कर लगाने के बाद बड़बड़ाता हुआ ऊपर की मंज़िल में एक कमरे में चला गया जहां बिना किसी खास कारण के घर के लोगों का न जाना ही ठीक रहता था। प्राथमिक प्रार्थना के घंटों की आवाज़ मुश्किल से ही विलीन हुई होगी कि पीले-से चेहरेवाला एक चुस्त व्यापारी मिकेशिन अन्दर आया और मालिक के पास आकर न जाने उसके कानों में क्या फुसफुसाने लगा। उसे भी यात्रा पर जाना था। घर के लोग पहले से ही इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे। वसीली काशीन, प्रथानुसार, यात्रियों के लिए खाना तैयार कराने में लगा था।

काशीन की चौरस वक्षा पत्नी, अग्राफ़ेना, का चेहरा उतरा-सा लग रहा था। उसके पतले-से ओंठ भिंचकर रह गये थे। वह बहुत ही व्यस्त नज़र आ रही थी। टिकियां भी बननी चाहिए, मांस भी भुनना चाहिए और फिर चटनी-अचार भी क़ायदे का होना चाहिए।

चारों ओर उसी की तेज़ डाट-फटकार सुनाई पड़ रही थी। अग्राफ़ेना का ख्याल था कि काशीन ने जो यह नया काम उठाया है वह बिल्कुल बेकार है और उसकी तरफ़ से होनेवाली इस सारी दावत का कोई परिणाम न होगा। किन्तु उसे पति की अवज्ञा का साहस न हुआ और इसी लिए वह अपना सारा ग़ुस्सा घरवालों पर उतारती रही। कभी कभी वह बुदबुदाती रही—

"हे दयामय, तुम मुझे किन पापों की सज़ा दे रहे हो? वह वसीली तो सठिया गया है। ज़िन्दगी में कई बार बाज़ी लगा चुका है और अब, जब खुद उससे कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता, तो

उसने सामान निकीतिन को सौंप दिया है! देने के लिए ग्रादमी भी ऐसा चुना जो शैतान है, ग्रपने को ग्रक़्ल का ख़ज़ाना समझता है ग्रौर है किताबी कीड़ा... हे भगवान! जो ग्रादमी ग्रपने बाप के मरने के बाद ग्रपना ही माल-मता न बचा सका वह दूसरे का कैसे बचायेगा! लोगों की इज़्ज़त करना तो दूर ही रहा वह तो ग्रपनी हरकतों से शरीफ़ व्यापारियों तक की नाक नीची करता है। मेरे पति को जाल में फंसा लिया है ग्रौर मेरी बिटिया पर भी जादू कर रखा है – सदा उस बदमाश की टोह में है!"

बेटी का ध्यान ग्राते ही ग्रग्राफ़ेना ने उसे पुकारा। किन्तु कोई जवाब न मिला। ग्रग्राफ़ेना ने ग्रोलेना के कमरे में झांककर देखा – कमरा खाली था। बेटी ग्रांगन में भी न दिखाई पड़ी। वह घबड़ाकर उत्तेजित हो उठी – घर से ग्रकेली बाहर निकल पड़ी! कहां? किस लिए? कभी किसी ने ऐसी बात देखी-सुनी थी?

पीली पड़ती हुई ग्रग्राफ़ेना ने बूढ़ी ग्राया को ग्रावाज़ दी –

"दौड़कर गिरजे में तो देख ग्रा... शाल रास्ते में ही लपेट लेना! उसे ढूंढ ला, यहां ले ग्रा..."

ग्राया ग्राह भरते हुए लंगड़ाती लंगड़ाती सड़क पर निकल गयी।

वसीली काशीन ने मिकेशिन को चले जाने के लिए कहा। ऐसा लग रहा था जैसे उसने घर में चलनेवाली इस चिल्ल-पों को सुना ही न हो। वह खुली हुई खिड़की के पास बैठा ग्राराम कर रहा था ग्रौर बाहर सड़क की ग्रोर देखता हुग्रा ग्रपने गठिया-ग्रस्त हाथ से ग्रपनी लम्बी सफ़ेद दाढ़ी सहलाता जा रहा था।

कभी काशीन भी एक सुन्दर जवान था। किन्तु ग्रब बुढ़ापे ग्रौर गम्भीर रोग ने उसकी शक्ल विकृत कर दी थी – झुर्रीदार ऊंचा माथा, पतली ग्रौर टेढ़ी नाक, पोपले गाल। पहले की तरह उसकी

आंखें तो बड़ी बड़ी ही थीं किन्तु उनकी चमकती हुई नीलिमा जाती रही थी।

वसीली काशीन निकीतिन और उन दूसरे व्यापारियों की प्रतीक्षा कर रहा था जो उसके साथ यात्रा पर जाते थे। उन्हें सनद लेने के लिए जाना था।

वसीली खुश था। उसे विश्वास था कि उसने जिस काम में हाथ लगाने का निश्चय किया है उसमें उसे अवश्य सफलता मिलेगी। नहीं, उसने निकीतिन को न तो उत्तर में ही भेजा था और न अनाज के साथ ही।

जिन दो वर्षों में फ़स्ल कम हुई थी उनमें काशीन ने बहुत-सा फ़र खरीदा था–सेबल, लोमड़ी और एर्माइन का फ़र। सारे फ़र काशीन के मकान ही में पड़े थे और जैसा कि घर के मालिक का कहना था वे पड़े थे "किसी उपयुक्त अवसर पर काम आने के लिए"। किन्तु बहुत समय से वह "उपयुक्त अवसर" न आया था और फ़र की क़ीमत बढ़ने के बजाय घटती ही गयी थी।

बेशक, यह सारा सामान बरीकोव के हाथ या मास्को के बाज़ार में बेचा जा सकता था किन्तु जब कभी वसीली काशीन को इसका ध्यान आता तो वह खीझ उठता। अगर उसने अपना माल इस प्रकार बेच दिया तो उसे बहुत ही थोड़ा लाभ होगा।

इसी लिए काशीन ने विचार किया कि वह अपना सारा माल वोल्गा के दहाने पर तातारों के हाथ बेचेगा या फिर ख़्वालीन में।

किन्तु वह स्वयं कहीं आता-जाता भी न था। फलतः वह सारा सामान या तो अपने मुख़तारों को देता या फिर उधार दूसरे लोगों को। काशीन जानता था कि मुख़तार चोरी करते हैं,

ग्रौर उधार माल लेनेवाले भी उसके माल से ग्रपनी ही जेबें भरते हैं। किन्तु उसने यह सोचकर सन्तोष किया कि जब वह स्वयं माल बेचने जाता था तो ग्रनाज वैठ जाने ग्रथवा ऊनी कपड़ा खराब हो जाने के कारण उसे स्वयं दामों में छूट देनी पड़ती थी, रिग्रायत करनी पड़ती थी। वह समझ लेगा कि इस बार भी उसने वैसी ही छूट दे दी है।

काशीन बहुत समय तक ऐसे व्यक्ति की तलाश करता रहा जिसे पूरे विश्वास के साथ दहाने तक ले जाने के लिए माल दिया जा सके। किन्तु बहुत समय तक कोई क़ायदे का ग्रादमी न मिला। उसके मुख़तारों में से न तो पढ़े-लिखे लोग ही थे ग्रौर न ग्रनुभवी ही। क्लाज़्मा नदी पर शहद, सेस्त्रा नदी पर पटसन खरीदने ग्रौर गांवों में घूम घूमकर हंसिये ग्रौर लम्बे लम्बे खुरपे या नोवगोरद में चमड़ा बेचने के लिए तो उसे ग्रासानी से लोग मिल जाया करते किन्तु ये लोग तातारों के साथ ग्रथवा विदेशों की भूमि में व्यापार करने के क़ाबिल न थे। इस कार्य के लिए सिर्फ़ ग्रनुभवी, बुद्धिमान ग्रौर व्यापार में कुशल ग्रादमी की ही ज़रूरत न थी, ज़रूरत थी ऐसे ग्रादमी की भी जो मौक़ा पड़ने पर मरने-मारने को भी तैयार रहे... किन्तु ऐसा ग्रादमी मिलता कहां? पढ़े-लिखे व्यापारी तो गिने-चुने ही थे ग्रौर ग्रपने ग्रपने कामों में लगे थे। वे दूसरों का काम ग्रपने हाथ में लेने को तैयार न थे।

ऐसे ही समय काशीन को निकीतिन की याद ग्रायी।

ऐसा लग रहा था कि जब निकीतिन त्वेर लौटा तो उसकी जेब में एक पाई तक न थी। मगर व्यापारी का काम ही ऐसा है– कभी ग्रमीर कभी फ़क़ीर। वह चिड़चिड़ा है ग्रौर गुस्सैल भी किन्तु

यह स्वाभाविक है। जब कोई आपके मुंह से रोटी छीनेगा तो आपको गुस्सा आयेगा ही।

दूसरों की तुलना में अफ़नासी निकीतिन कहीं अच्छा पढ़ा-लिखा है। और एक बार तो उसने प्रेग्रोब्राजेन्स्क मठ के मुखिया को बहस में इतना छका मारा था कि उसका मुंह लटक आया था। त्वेर के व्यापारी इस घटना का ज़िक्र प्रायः मज़े ले लेकर किया करते थे। वह तातारी भाषा जानता है, जर्मन जानता है, मज़बूत है, बहादुर है और तलवार और बन्दूक़ इस्तेमाल कर सकता है।

अफ़नासी पहली बार अपने पिता के साथ रीगा गया था। तब वह उन्नीस साल का था। लौटते समय रूसी क़ाफ़िले पर कुछ डाकुओं ने हमला किया था। व्यापारियों ने डाकुओं से मोर्चा लिया था और उन्हें भगा दिया था। तभी निकीतिन ने यह साबित कर दिया था कि वह कितना बहादुर है – उस समय घायल हो जाने पर भी वह अन्त तक लड़ता रहा था। उस मुठभेड़ में उसने अपना ख़ून बहाया था और फिर मुश्किल से ठीक हुआ था ...

ऐसे व्यापारी को अपना माल-मता अवश्य सौंपा जा सकता है।

इन सभी बातों पर मनन कर चुकने के बाद काशीन ने अफ़नासी को बुलाया। बड़ी बारीकी के साथ बातचीत होती रही। उसने उससे अपनी और उसके पिता की मित्रता की चर्चा की, उसके कामों के बारे में पूछ-ताछ की, लोगों की बेरहमी की शिकायत की और पूछा – "अब फिर तिजारत पर जान का इरादा नहीं है क्या?"

निकीतिन अपने इरादे न छिपा सका – यह ठीक था कि वह उधार माल लेना चाहता था।

काशीन ने एक आह भरी और फिर, जैसे निकीतिन पर तरस खाकर, सिर खुजाते हुए कहने लगा –

"ख़ैर माल मैं तुम्हें दे दूंगा। इस वक़्त सराय जाने का अच्छा मौक़ा है। शेमाखा का राजदूत शीघ्र ही मास्को से वापस आनेवाला है। तुम उसके साथ बेखटके जा सकते हो। मगर मैं नहीं जानता कि हमारा-तुम्हारा समझौता भी हो सकेगा या नहीं।"

निकीतिन क्या कहता! काशीन ने एर्माइन और सेबल के हर चालीस फ़रों पर मास्को के बाज़ार के दामों की तुलना में पचीस रूबल बढ़ा दिये थे और दूसरे जानवरों के फ़रों पर भी काफ़ी दाम बढ़ाने का मन ही मन निश्चय किया था।

किन्तु इस समझौते के बारे में निकीतिन के अपने विचार थे जिन्हें उसने काशीन से कहना उचित न समझा। दोनों में बात पक्की हुई। यात्रा के असफल रह जाने का भय काशीन को व्यग्र नहीं कर रहा था। वह यह ज़रूर जानता था कि निकीतिन की सम्पत्ति अपने माल की ज़मानत में लिखा ले तो उससे उसका घाटा लगभग पूरा हो सकता है। और फिर वह व्यापार ही क्या जिसमें खतरा न हो।

उसने निकीतिन के साथ मिकेशिन व्यापारी के जाने की भी व्यवस्था कर दी। मिकेशिन पहले से ही काशीन का क़र्ज़दार था, अतः वह उसके लिए सब कुछ करने को तैयार था। वह बिना कुछ अधिक कहे-सुने इस बात के लिए राज़ी हो गया कि वह निकीतिन के व्यापार की देख-रेख करेगा और यदि निकीतिन मुनाफ़े को छिपाने लगे, तो बाद में काशीन को सब कुछ बता देगा।

आज सुबह मिकेशिन ने अपने संबंधियों के लिए कोई चार मन आटा काशीन से पेशगी ही ले लिया था। ले भी लेने दो, क्या बात है! एक नक़्क़ाशीदार जर्मन कुर्सी पर बैठे बैठे काशीन मुस्कुराया और सोचने लगा। उसका ध्यान आकाश में भागते हुए बादलों की ओर आकृष्ट हुआ। लम्बा पतला बादल, एक छोटे बादल के

पीछे दौड़ा। उसके पास पहुंचा, उसपर झपट्टा मारा, छोटा बादल कुड़मुड़ाया और दोनों तरफ़ से बड़े की लपेट में आ गया... बड़ा छोटे को खा गया।

वसीली काशीन ने दाढ़ी सहलायी। बादलवाली बात तो भगवान के हाथ है लेकिन यह भी सच है कि दुनिया में छोटे बनकर रहने में कोई मजा नहीं – छोटे बनो तो सब की बातें सहो। जिसकी लाठी उसकी भैंस। अरे भाई मान-अपमान शरीर में कोई चिपका थोड़े ही रहता है? काशीन को उन पिछले वर्षों की याद हो आयी जब उसने ज़िन्दगी में क़दम रखा था। कभी उसने, व्यापारी मतवेई ज्वोन्त्सोव और दूसरे मित्रों के साथ मिलकर कुछ व्यापारियों पर हमला किया था और उनकी बहुत-सी सम्पत्ति हड़प ली थी। कहना मुश्किल है कि पहल किसने की थी। मतवेई तो बता नहीं सकता – वह मर गया है और बाक़ी लोगों का क्या हुआ, त्वेर में कोई नहीं जानता।

तब से वसीली काशीन के पास पैसा बढ़ता ही गया। उसने बढ़िया घर बनवाया, उम्दा घोड़े ख़रीदे, छोटे छोटे व्यापारियों को उधार सामान देने और आस्त्रख़ान और नोवगोरद में अपनी नावें भेजने लगा। उसका नाम प्स्कोव और मास्को के प्रसिद्ध व्यापारियों की ज़बान पर नाचने लगा। जर्मन प्रदेशों में भी उसकी तूती बोलती थी।

सहसा इस बूढ़े व्यापारी की कल्पना के समक्ष मूरोम के निकट की वह वन्य सड़क घूम गयी जहां सनोबर के वृक्षों की दमघोट गंध भरी हुई थी और मरे हुए लोगों की लाशें पड़ी हुई थीं। उसके कानों में जैसे आवाज़ सुनाई पड़ी –

"बढ़ो, हमला करो!" वसीली के मस्तिष्क में ऐसे ही अप्रिय विचार घूम रहे थे, जिनसे ऊबकर उसने सलीब बनाना शुरू किया।

ऐसा कभी नहीं हुआ था, कभी नहीं हुआ था! ओफ़, मैंने जैसे यह सब कुछ एक दुःस्वप्न में देखा-भर था!

वसीली हांफता हुआ उठा और कमरे में टहलने लगा। उसका हृदय धक-धक कर रहा था। जैसे-तैसे उसने अपने को संभाला और शान्त रहने का प्रयत्न करने लगा। जो हुआ उसपर ख़ाक पड़ गयी। और फिर उस समय उसकी भी तो हत्या की जा सकती थी। जो लोग मरे थे उनके लिए उसने मोमबत्तियां जलायी थीं, गिरजे में दान-दक्षिणा दी थी। अब कोई परेशानी न रही थी।

वह देवताओं की प्रतिमाओं के पास गया और शमादान में मोमबत्ती ठीक कर दी। पवित्रात्माओं के इन विचारमग्न चेहरों से उसे कोई डर न लग रहा था। वे भी कभी पापी रहे थे, किन्तु फिर भी उन्हें पवित्रात्माओं की श्रेणी में रख दिया गया था। सब कुछ भगवान के हाथों में है, शायद धर्म की सेवा के लिए ईश्वर ने उसे भी चुना है।

वह आह भरते हुए वहां से लौटा। सचमुच इस संसार में किसी चीज़ की भी पूर्वकल्पना नहीं की जा सकती। इसमें न जाने कितने रहस्य, कितने आश्चर्य भरे पड़े हैं। हाल ही में नोवगोरद से कुछ व्यापारी आये थे, कह रहे थे कि कुछ लोगों ने पेचोरा नदी के उस पार छोटे छोटे हिरन बादलों से ज़मीन पर गिरते देखे थे। वे गिरते ही उठने लगते और भाग खड़े होते। और कहते हैं कि दुनिया में ऐसे ऐसे देश भी हैं जहां स्त्रियों के मुखड़ों वाली चिड़ियां पेड़ों पर बैठी दिखाई देती हैं। वे गुज़रते हुए लोगों को अपनी ओर बुलाती हैं, और अगर कोई उनकी बात सुनता है तो वह मर जाता है। कहते हैं कि वहीं एक अद्भुत जानवर रहता है जो बड़ा विचित्र है, दूसरे जानवरों से एकदम उल्टा – उसकी दुम उसके मुंह पर होती

है ग्रौर दुम ही से वह खाना मुंह में रखता है। शायद यह बात सच हो, शायद झूठ। वे देश बहुत दूर हैं। सूरोज ग्रौर जर्मन प्रदेशों के व्यापारी वहां का माल लाते हैं। ग्रौर इसमें बरसों लग जाते हैं। माल भी ग्रजीब क़िस्म का होता है—मसाले, ग्रद्भुत फल, डिज़ाइनदार कपड़े—इतने महीन तथा पारदर्शक कि लज्जा तक नहीं ढकते। ग्रौर यह सभी चीज़ें बड़ी महंगी होती हैं। हे भगवान, तू निकीतिन के सराय तक जाने ग्रौर वापस ग्राने में हमारी मदद कर! वह ग्रच्छी ग्रच्छी चीज़ें लायेगा...

काशीन की भौंहों पर बल पड़ गये। निकीतिन को देर हो गयी थी। "नाव को कहीं कुछ हो तो नहीं गया?" व्यापारी चिन्तातुर सोचने लगा। वह दरवाज़े की ग्रोर बढ़ा किन्तु चौखटे पर कुछ ऐसी ग्रावाज़ सुनाई दी मानो कोई चूहा भड़भड़ाया हो। उसने मुंह बिचकाया। वह जान गया था कि उसकी पत्नी दरवाजा खटखटा रही है।

"ग्रन्दर ग्रा जा!" काशीन जैसे भन्नाता हुग्रा बोला। ग्रग्राफ़ेना ने दरवाज़ा खोला ग्रौर पीछे ढरकते हुए शाल को ठीक करने लगी। काशीन ग्रपनी ग्रस्थिपंजर ग्रौर डरी हुई सी पत्नी को कभी प्यार न करता था। उससे उसने ब्याह रचाया था पैसे के लालच से ग्रौर उसे लम्बा दहेज भी मिला था। वह मन ही मन कहा करता था कि प्यार-व्यार मनगढ़न्त चीज़ है। ग्रादमी ग्रौरत का ग्रादी हो जाता है। किन्तु वर्ष पर वर्ष बीतते गये लेकिन ग्रग्राफ़ेना उसके मन के निकट कभी न ग्रा सकी। इसके विपरीत, वसीली के हृदय में ग्रपनी पत्नी के प्रति द्वेष ही बढ़ता गया।

"इस ब्याह में मेरा बड़ा नुक़सान हुग्रा!" उसने कुछ कटुता के साथ सोचा, "मैं पैसे पर गिरा था ग्रौर एक चुड़ैल को घर

में उठा लाया... ओफ़, दूसरी भी तो कितनी अच्छी अच्छी लड़कियां थीं!"

और ऐसे ही क्षण उसकी कल्पना के समक्ष एक कृषक कन्या मार्फ़ा आकर खड़ी हो गयी – मतवाली आंखें, मोती जैसे दांत, ढालदार कंधे। एक ज़माना हुआ होगा – यह लड़की काशीन को प्यार भरी निगाहों से देखती थी। वसीली का दिल उसकी ओर आकृष्ट हुआ था किन्तु उसने अपने मन की बात न मानी और अपना विचार बदल दिया। मार्फ़ा ग़रीब थी। काशीन ने उसके समक्ष विवाह का प्रस्ताव नहीं रखा। कहते थे कि उसका विवाह किसी कुंवारे के साथ कर दिया गया, उसकी ज़िन्दगी ग़रीबी में कट रही है। वह अपने पति को प्यार नहीं करती... काशीन ने कभी किसी से यह पता लगाने की कोशिश न की कि बाद में मार्फ़ा का हुआ क्या। जो हो गया, हो गया...

"यहां क्यों आयी?" काशीन ने, बड़ी बेरुखी से, पत्नी से पूछा।

"वसीली," अपनी पुरानी क़मीज़ की चौड़ी आस्तीनों से अपना मुंह ढांपते हुए वह जैसे चिल्ला पड़ी – "वसीली शायद तुम अपना विचार बदल दो। मुझपर तरस खाओ। मेरे मन में कुछ अशकुन उठ रहे हैं। तुमने जो कुछ करने का विचार किया है वह उचित नहीं है..."

"यह सब तुमसे किसने पूछा!" काशीन चिल्ला पड़ा। पत्नी ने उसके क्रोध को और भी भड़का दिया, "यह तुम्हारा काम नहीं। जाओ, अंगीठी के पास बैठो।"

"हे भगवान! क्या मैं तुम्हारी इच्छा के ख़िलाफ़ कुछ कह रही हूं? निकीतिन को कोई लूट ले तो? हो सकता है कुछ और

भी हो जाये... मुझे उसका कोई विश्वास नहीं, ज़रा भी विश्वास नहीं। लोग कहते हैं वह छलिया है, जादूगर है।"

"बेवक़ूफ़!" काशीन चिल्लाया, "क्यों कांव कांव कर रही हो? आख़िर क्यों? सच पूछो तो तुम्हारे ऐसा कहने से ही कोई मुसीबत आ सकती है," उसने सलीब का निशान बनाया और फिर धीरे धीरे कहने लगा, "निकीतिन जैसा आदमी तो चिराग़ लेकर भी ढूंढो तो न मिलेगा। तुम्हारी समझ में कुछ आता है ही नहीं। अच्छा, टलो तो यहां से!"

किन्तु अग्राफ़ेना न गयी।

"वसीली, मेरे मालिक," सिसकी लेती हुई वह बोली, मुझसे नाराज़ मत हो। ठीक है मैं मूर्ख हूं, अब तक चुप रही हूं... दोष मेरा ही सही... अफ़नासी ओलेना को तो ऐसे घूरता है..."

"ओह!" काशीन हंसा, "तो क्या हुआ? वह मर तो नहीं गयी, उसका कुछ छिन तो नहीं गया?"

अग्राफ़ेना रो रही थी।

"वह ठहरा नंगा दरिद्री! और मैं हूं मां..."

"बन्द भी करो यह बकबक!" काशीन ने पत्नी को रोका, "मैंने अफ़नासी का ब्याह रचाने का तो ठेका नहीं लिया, मैंने क़रार किया है रोज़गार का..."

"हां और ओलेना... यह भी तो..."

"यह भी क्या?"

"तुम्हें अपनी आंखों से तो कुछ दिखाई नहीं देता? लड़की सयानी हो गयी है। और अफ़नासी उसपर डोरे डाल रहा है। आज भी देखो न, बिटिया की आंखें उसकी राह देखते देखते पथरा गयी हैं..."

"झूठ मत बोलो, झूठ मत बोलो!" दाढ़ी सहलाता हुआ काशीन कहने लगा, "यह काम तुम्हारी बिटिया का नहीं कि अपने लिए खसम ढूंढती फिरे।"

"हां, मैं जानती हूं। बिटिया सूखती जा रही है। मैं कहती हूं कि तुम निकीतिन को निकाल बाहर करो... यही अच्छा होता कि... इससे बरीकोव परिवार के लोग नाराज़ हो रहे हैं। हमने उस ख़ानदान में अपनी बेटी ब्याहने का वादा किया है न।"

"बन्द करो यह अपनी टें टें," जैसे ही उसकी पत्नी ने उसके काम-धाम के बारे में कहना शुरू किया कि काशीन चिल्ला उठा, "बस, बस। और हां, कान खोलकर सुन लो अगर मैं चाहूंगा तो निकीतिन के साथ ओलेना का ब्याह कर दूंगा!"

अग्राफ़ेना ने एक आह भरी, मुंह खोला और दहलीज़ के पास खड़ी हो गयी। उसमें जवाब देने का भी साहस न रह गया था। पत्नी की यह उतरी-सी शकल देखकर काशीन को बेहद खुशी हुई। उसे कुछ और सताने के उद्देश्य से काशीन ने इतना और कह डाला—

"ज़रूर अपनी ओलेना निकीतिन को दे दूंगा। जब वह मुनाफ़ा कमाकर वापस आयेगा तो मैं उससे कहूंगा कि वह अपने ब्याह के प्रस्ताव के लिए मेरे पास बिचौलिये भेजे। और मैं उस प्रस्ताव को नहीं ठुकराऊंगा, नहीं ठुकराऊंगा..."

मगर वह तुरन्त चुप हो गया और अग्राफ़ेना के निकट आ गया।

"क्या बात है? क्या बात है?"

वह चीखती हुई उसके पैरों के पास आ गिरी—

"ओलेना का कहीं पता नहीं! सुबह से ही वह घर में नहीं है!"

"हो सकता है गिरजे में हो?"

"नहीं है वहां..."

"मेरा कोट तो देना। वास्का को बुलाओ! घोड़े को पुकारो... घोड़ा तैयार कराओ! बदमाश, बेशरम! कहां जा सकती है! शैतान कहीं की इसी छड़ी से तेरी ख़बर लूंगा!"

"तुम कहां जा रहे हो? यहां व्यापारी जो आयेंगे!"

यह सीधी-सी बात सुनकर काशीन वहीं बैठ गया। ठीक तो है अपनी मनमौजी बिटिया के पीछे मैं कहां दौड़ूं? वह मुझे एक न एक चिन्ता में डाले ही रहती है। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे? व्यापारी आ ही रहे हैं।

"जाओ, निकल जाओ!" वह पत्नी पर बरस पड़ा, "ओलेना को... ओलेना को..." काशीन के शब्द उसके मुंह में ही अटक गये।

"अच्छा, मैं ही सब कुछ ठीक कर लूंगा," आखिर वह बोल उठा, "जैसे ही वह आये उसे ताले में डाल देना! फिर उसकी अच्छी तरह खबर लूंगा..."

पिता के घर से चुपके से निकलकर ओलेना एक मिनट के लिए रुकी, फिर बाड़े के साथ पीठ टेकती और हांफती हुई कुछ सुनने लगी। इसके पश्चात् क़दम बढ़ाती, और पीछे मुड़कर न देखती हुई, सीधी एक गली में घुसी और एक नुक्कड़ पर मुड़ गयी।

वह शाल से मुंह ढककर चलती रही। वह कांप-सी रही थी। प्रातःकाल सड़कें सुनसान थीं—सिवा किसी इक्की-दुक्की बूढ़ी या ऊंघते हुए चौकीदार के कोई नहीं दिखाई दे रहा था। फिर भी ओलेना को लगा कि रास्ता चलनेवाले सभी लोग जानते हैं कि वह कौन है, कहां

ग्रौर क्यों जा रही है ग्रौर सभी जैसे उसे तिरस्कार ग्रौर द्वेष की भावना से देख रहे हैं।

किन्तु उसने ग्रपनी चाल न धीमी की ग्रौर जब रास्ते में, संयोगवश गिरजे से निकलकर ग्राती हुई एक भक्तिनी पर उसकी नज़र पड़ी तो ग्रोलेना ने उसे कुछ इस तरह घूरा कि बूढ़ी एकदम पीछे हटकर सलीब का निशान बनाने लगी।

एक क्षण के लिए ग्रोलेना के दिमाग़ में यह विचार भी कौंध गया कि वह गिरजे में क्यों न चली जाये, किन्तु उसी क्षण उसने यह ख़्याल छोड़ दिया ग्रौर उसके ग्रपने पिता जैसे पतले नथुने ग़ुस्से से फूल गये ग्रौर सिर ऊपर उठ गया।

उसका रास्ता नज़दीक का न था। उसे जाना था सारे त्वेर का चक्कर लगाते हुए याम्स्काया बस्ती तक। उसे बड़ी जल्दी थी क्योंकि उसे शीघ्र ही घर लौटना था।

ग्रग्राफ़ेना काशीना को पुत्री के प्रति शंकित होने का कारण भी था। ये सारी बातें वसन्त ऋतु के उन दिनों में शुरू हुई थीं जब पेड़ों की डाल डाल मुस्कराती है ग्रौर कन्याएं, ग्रपनी मनोकामनाग्रों की पूर्त्ति के लिए बर्च के पेड़ों के नीचे उबले हुए ग्रंडें रखती हैं ग्रौर गाती हुई पेड़ की परिक्रमाएं करती हैं।

एक दिन ग्रोलेना ग्रपनी मां के साथ गिरजे से निकलकर घर जा रही थी। दोनों, ग्रपने लम्बे लम्बे फ़र-कोटों के किनारे उठाये, पानी से भरे गड्ढों से होती हुई ग्रपने रास्ते चली जा रही थीं। ग्रभी घर पास ही था कि उन्हें सहसा रुकना पड़ा। गली में किसी किसान का घोड़ा माल से भरी एक गाड़ी को कीचड़ में से खींच ले जाने का ग्रसफल प्रयत्न कर रहा था। पेड़ों की छाल के फटे-पुराने जूते पहने हुए गाड़ीवान की ग्रावाज़ घोड़े को डांटते-चिल्लाते बैठ-सी गयी थी ग्रौर

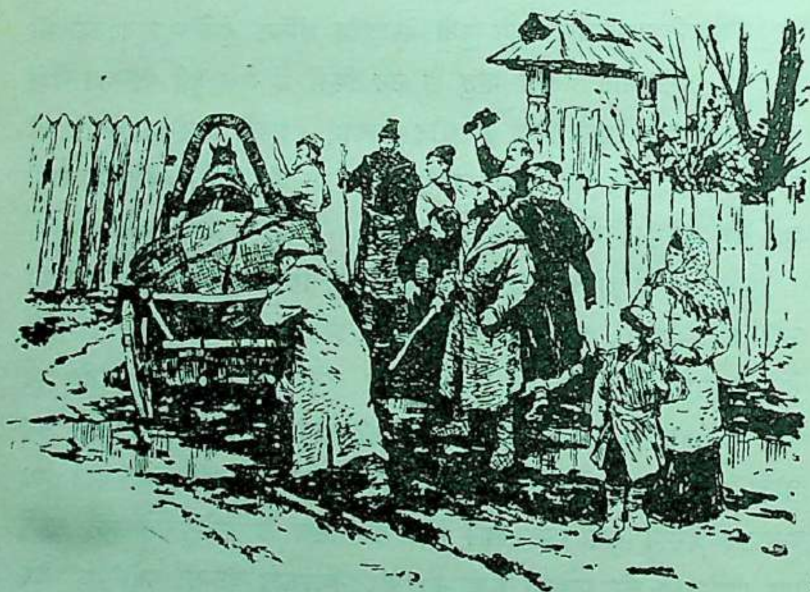
वह इर्द-गिर्द एकत्र लोगों को भयभीत निगाहों से देखता हुआ घोड़े को कोड़े से पीट रहा था। मक्खियों की खायी हुई घोड़े की खाल के नीचे पसलियां जैसे तेज़ी से चलती हुई दिखाई दे रही थीं।

"बदमाश के कान पर दो न एक घूंसा!"

"घोड़े को कोड़े लगाओ! यहां दया दिखाने से काम न चलेगा!"

"यह कोड़ा अगर इसी बदमाश पर पड़े तभी ठीक रहेगा यह!" भीड़ में से किसी की आवाज़ सुनाई दी।

"हट जाओ, हट जाओ!" सहसा ओलेना को एक आवाज़ सुनाई दी और फ़र की टोपी तथा खुले बटनों वाला फ़र-कोट डाटे नीली आंखों वाला एक लम्बा-तड़ंगा आदमी कहीं से आकर, उन उत्सुक व्यक्तियों को एक ओर हटाता और कीचड़ में से गुज़रता हुआ गाड़ी की ओर बढ़ने लगा। उसने इतना कसकर अपने कंधों का ज़ोर लगाया





कि गाड़ी कुछ आगे खिसकी और घोड़ा, जैसे इस सहायता से उत्साहित होकर, गाड़ी को आसानी से सूखी जगह ले आया। गाड़ीवान खुश होकर, घोड़े को टिटकारता हुआ, गाड़ी हांकता रहा और अपने सहायक को धन्यवाद देना भी भूल गया।

"निकीतिन।" ओलेना के पास ही एक आवाज़ सुनाई दी। इस आवाज़ से मित्रता का कोई बोध न हो रहा था।

ओलेना, उत्सुकता के साथ, इस व्यक्ति को बड़े ध्यान से देखती रही जिसके बारे में लोग तरह तरह की बातें कर रहे थे। सहसा ओलेना की आंखें उसकी चमचमाती हुई आंखों से मिलीं और वह शर्म से गड़ गयी।

निकीतिन ने बूटों पर से कीचड़ झाड़ा और साश्चर्य अपनी काली काली भौंहें ऊपर उठाते हुए सीधा खड़ा हो गया। किन्तु तभी उसकी निगाह अग्राफ़ेना काशीना पर पड़ी और उसने मुस्कराते हुए उसका अभिवादन किया।

"आपकी बेटी है? मैंने नहीं पहचाना। कितनी बड़ी हो गयी है!"

"हां, तुम लगाते हो दुनिया-भर का चक्कर, हम त्वेरवालों को कैसे पहचानोगे," बातों में विष घोलते हुए अग्राफ़ेना ने जवाब दिया और उसके पास से होकर निकल गयी।

मां की बातों से बेटी की गरदन नीची हो गयी। वह घबड़ाकर पीछे देखने लगी और एक बार फिर अपनी ओर ताकती हुई उन दो चमचमाती और विस्मित आंखों में डूब गयी ...

मई के आरम्भ में ओलेना सोलह की हो चुकी थी।

"अरे अब तो लड़की पूरी जवान हो गयी है! पूरी जवान," लोग कहा करते।

ओलेना की कई सहेलियों के विवाह पहले ही हो चुके थे। वह कितने ही 'सहेली सम्मेलनों' में भाग ले चुकी थी, कितनी ही बार विवाह समारोहों में सम्मिलित होने के लिए गिरजों में गयी थी, जहां उसने लोहबान की सुगंध के बीच आंसू बहाती हुई अपनी सहेलियों को देखा था, बेशर्मी से भरी हुई लोगों की फुसफुसाहट सुनी थी और शराब के नशे में धुत्त बिचौलियों को देखा था। और इन सबने जैसे उसे भयभीत कर दिया था। वह बड़ी परवशता से उस घड़ी का इन्तज़ार करती रही जब उसके मां-बाप भी ऐसे ही उसका हाथ किसी दूसरे को पकड़ा देंगे और वह उसका घर बसायेगी। किन्तु जब कभी वह अपने भावी पति की बात सोचती तो उसका मन निराशा से भर जाता, संतप्त हो उठता। उसने जीवन से कोई बड़ी बड़ी आशाएं नहीं लगा रखी थीं।

उसके हृदय की गहराइयों में एक अस्पष्ट-सी आशा अंगड़ाइयां ले रही थी किन्तु वह न जानती थी कि यह आशा किस बात की है। उसके हृदय के एक कोने में विषाद की भी छाया थी किन्तु यह किस बात का विषाद था इसे भी वह न समझ सकती थी।

सहसा उसे अनुभव होने लगा था – प्यार की करवटों का। वह किसी के प्यार की प्रतीक्षा कर रही थी। और उसे यह प्यार मिलने की आशा थी, इसी के लिए वह तड़प रही थी। उसे लग रहा था जैसे अफ़नासी उसे प्यार करता है। और वह उस प्यार की ओर बढ़ रही थी, खिंच रही थी। उसके हृदय में सिहरन, उल्लास, भय, विजय की अनुभूति और प्रथम प्रेम के अंकुर पनप रहे थे।

अफ़नासी क्या सोचता है, ओलेना यह भी न जानती थी। उसने लोगों के सामने कुछेक बार ही अफ़नासी के साथ बातें की थीं और उसे



कभी पता न चला कि अफ़नासी के जीवन में उसका स्थान क्या है। उसने अफ़नासी की निगाहें देखीं और खुश होकर अपनी गदराती हुई जवानी के भार से दबकर धीरे से मुस्करायी भी थी।

ओलेना को अफ़नासी की भावी यात्रा का पता चल गया था। उसे यह भी मालूम था कि उसका पिता अफ़नासी को उधार माल दे रहा है। फलतः उसे खुशी भी हुई और दुख भी।

खुशी इसलिए कि उसका हाथ किसी ग़रीब को नहीं पकड़ाया जायेगा, और दुख इसलिए कि बूढ़े और अनुभवी लोगों की बातें सुन सुनकर उसे यक़ीन हो गया था कि दूर देशों में जाकर व्यापार करना कितना ख़तरनाक है।

जैसे ही जैसे अफ़नासी की यात्रा का समय निकट आता जा रहा था वैसे ही वैसे ओलेना की व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। यात्रा के पहले की रात, उसने निराश होकर एक विलक्षण क़दम उठाने का निश्चय किया।

वह अपने प्रेम की रक्षा करना चाहती थी। उसकी इस अदम्य आकांक्षा के आगे बाक़ी सभी बातें पिछड़ गयीं – पिता के क्रोध का भय, पड़ोसियों की अपमानजनक बातें, दुष्टात्माओं का डर ...

ओलेना बाज़ार के चौक से होती हुई सेन्ट प्योत्र के गिरजे से होकर गुज़री और टेढ़ी-मेढ़ी तथा उल्टी-सीधी गलियों से होती हुई याम्स्काया बस्ती पहुंच गयी।

दूसरे मकानों से दूर पर स्थित बूढ़ी जिगाल्का की लकड़ी की कुटिया ऐसी लग रही थी मानो उसे लोगों का डर लग रहा हो। वृक्षों की शाखों के बाड़े से घिरे हुए एक छोटे-से बाग़ में ओलेना ने चेरी के तथा अन्य झुरमुट और खिले हुए पीले पीले फूल देखे। उसे लगा जैसे बाग़ की फूल-पत्तियों तक से टोटकों की गन्ध आ रही थी – बाग़ तो चेटकी का था!

ओलेना ने कपड़े से ढका हुआ एक संकरा-सा दरवाज़ा खोला और देहली पार कर अन्दर चली गयी। जैसे ही उसने पहलेवाले छोटे-से कमरे में क़दम रखा कि सूखी घास की गन्ध और आर्द्रता ने उसका स्वागत किया।

दीवाल के पीछे से किसी के क़दमों की आहट सुनाई दी। ओलेना जल्दी जल्दी सलीब का निशान बनाने लगी।

उसने सोचा था कि जिगाल्का एक दुष्ट, कुबड़ी डायन होगी पर बात ऐसी न थी। जिगाल्का की मुखमुद्रा शान्त और मुस्कराहट लिये थी। उसने बेंच पर बैठी हुई बिल्ली को खदेड़ा और ओलेना को उसी बेंच पर बिठा दिया। फिर आंखें मिचकाते हुए उसके सामने खड़ी हो गयी। ऐसा लग रहा था जैसे वह कुछ याद करने की कोशिश कर रही हो।

कुटिया के कोनों में और छत की शहतीर पर से कुछ सूखी घास लटक रही थी और कमरे में उसकी गन्ध भरती जा रही थी जो ओलेना के दिमाग़ में घुसकर उसे बुढ़िया के जादू-टोने की याद दिला रही थी।

जिगाल्का के बारे में कहा जाता था कि वह मंत्र फूंककर किसी का बुरा कर सकती है, तरह तरह की जड़ी-बूटियां उबालकर वशीकरण की औषधि बनाती है और भविष्य बताती है। पादरी लोग इस बुढ़िया

के बारे में कहा करते थे कि वह कुधर्मी है लेकिन लड़कियां तथा जवान औरतें उसे तारणहार कहकर पुकारती थीं।

ओलेना ने जल्दी जल्दी अपनी पोटरी खोली और उसमें से दस अंडे, थोड़ा-सा मक्खन और तीन सिक्के निकाल लिये।'

"बाई, मेरी मदद करो," इतना कहकर वह जैसे डरकर पीली पड़ गयी।

बूढ़ी ने ओलेना को अपनी बात न पूरी करने दी। वह अपनी जगह पर ही, हिलती-डुलती हुई, कहने लगी –

"सुन्दरी, मैं जानती हूं, सब कुछ जानती हूं। तुम्हारे आने का मतलब मैं समझती हूं।"

"तुमने कैसे जाना?" ओलेना फुसफुसाती हुई बोली।

बूढ़ी हंसती हुई ओलेना के पास आयी और उसके सिर पर पड़ा शाल ऊपर उठाती और उसके सिर के काले काले बालों को सहलाती हुई बोली –

"मैं सब कुछ जानती हूं बेटी! तू मुझसे मत डर ... जिधर बाज़ उड़ता है उधर दिल दौड़ता है, जिधर नदी बहती है उधर नाव तिरती है ... तेरा बर्च है हरा-भरा ... पर चिन्ता ने उसको घेरा ... तेरी माला सदाबहार ..."

ओलेना लज्जा से लाल हो उठी। उसका दिल ज़ोरों से धड़क रहा था। बूढ़ी ने एक आह भरी और हाथ नीचे डाल दिया।

"मैं तुम्हें तावीज़ दूंगी ..."

अंगीठी के पीछे रखे हुए लकड़ी के एक डिब्बे में से जिगाल्का ने एक छोटी-सी प्रतिमा निकाली। प्रतिमा के एक ओर ईसा मसीह का चेहरा बना था और दूसरी ओर मरे हुए काले विषधर का।

बूढ़ी ने प्रतिमा पर कोई मंत्र फूंका, बायें कन्धे के ऊपर से तीन बार थूका और फिर प्रतिमा ओलेना को देकर कहने लगी –

"अब तुम मेरे साथ कहो... पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के नाम में..."

ओलेना ने आज्ञाकारिणी की भांति दुहराया –

"मैं भगवान की दासी ओलेना, सलीब का निशान बनाती और आशीर्वाद प्राप्त करती हुई द्वार से होकर, घर से और फाटक से होकर, आंगन से जा रही हूं और खुले मैदान के सामने सिर नवाती हूं ..."

जिगाल्का सिर हिलाती आगे कह रही थी –

"...तातारों के तीरों से, ऐ लौह पुरुष, उठ..."

"कष्टो और बीमारियो, भाग जाओ," कांपती हुई आवाज़ में ओलेना ने दुहराया – "हाड़-मांस से, रक्त की नाड़ियों से, गुलाबी चेहरे से, चंचल आंखों और हाथों से, घने वनों के उस पार, भूरी काई के उस पार, ठंढे दलदलों के उस पार भाग जाओ, भाग जाओ..."

"आमीन!" बूढ़ी ने अपनी बात पूरी की।

"आमीन!" ओलेना ने भी दुहराया।

ओलेना सफ़ेद उंगलियों में प्रतिमा पकड़े डरी डरी-सी बैठी रही।

बूढ़ी की वाणी सुनकर ओलेना होश में आयी।

"बस, बस! इस प्रतिमा को छिपा देना कि उसे कोई देख न सके। और जिसे तुम प्यार करती हो उसे अपने ही हाथों से दे देना।"

"अपने ही हाथों से?" ओलेना मुंह बाती हुई जैसे होश में आयी, "और दूसरे नहीं दे सकते?"

"नहीं, मेरी बेटी, नहीं। तब तो इसका असर ही जाता रहेगा।"

ओलेना लज्ज़ा से लाल पड़ गयी। निकीतिन ने उसे कभी भी

तो अपने प्यार की बात नहीं बतायी। वह यह प्रतिमा उसे देगी कैसे? कितनी बेशर्मी की बात है!

"तुम डरो मत," जिगाल्का बड़े प्यार से बोली, "सब ठीक हो जायेगा। वह तो तुम्हारा दीवाना हो रहा है..."

"ओफ़, मैं नहीं जानती, मैं नहीं जानती, बूढ़ी मां," घबड़ाकर ओलेना उठ खड़ी हुई।

जिगाल्का उसे दरवाज़े तक पहुंचाने आयी और यह देखने के लिए बाहर झांकी कि आसपास कोई है तो नहीं। फिर धीरे से कहने लगी –

"चली जाओ, चली जाओ, लोग घर में तुम्हें ढूंढ रहे होंगे ... कैसी निडर हो!"

ओलेना को पहुंचा आने के बाद बूढ़ी भीतर लौट आयी और भेंट में मिली चीज़ें समेटने लगी। वह मुस्करायी। बूढ़ी नें तुरन्त ही ताड़ लिया था कि यह लड़की काशीन की बेटी है। कहते हैं कि काशीन निकीतिन को माल-मता देकर समुद्र पार भेज रहा है। मैं जानती हूं यह प्रतिमा किसके लिए है! अच्छा ही है। आदमी आदमी को ढूंढता है, वह जिन्दगी में सुख चाहता है। फिर उसकी मदद क्यों न की जाये? इसी लिए तो उसने ओलेना से कहा था कि वही इस प्रतिमा को अफ़नासी के हाथ में दे। दोनों एक दूसरे के मन की बात जान जायें ...

बिल्ली फिर कूदकर अपनी जगह बैठ गयी और मक्खन की ओर लपकी।

"क्या है!" बूढ़ी बोली, "तू आदमी की मुसीबतों से फ़ायदा उठाती है, जीभ-चाटती है? धिक्कार है तुझे! यह रहा तेरा टुकड़ा..."

घर पर पहले पहल ओलेना की निगाह बूढ़ी आया पर पड़ी। वह आह-ऊह करती तथा लंगड़ाती हुई उससे मिलने के लिए बढ़ी।

उसका परेशान चेहरा देखकर ओलेना समझ गयी कि जरूर उसे घर में किसी मुसीबत का सामना करना पड़ेगा।

अस्तबल में लाल बालों वाला गाड़ीवान फ़ेदोत्का आता हुआ दिखाई दिया। वह मालिक के मकान की ओर देख देखकर हंस रहा था। उसे अनूत्का का जिज्ञासु चेहरा भी दीख पड़ा। ओलेना के पैर मन मन-भर के हो रहे थे। बेजान जैसी वह ड्योढ़ी पर चढ़ गयी।

अग्राफ़ेना उसका रास्ते में ही इन्तज़ार कर रही थी।

"कहां गयी थी?"

"गिरजे में, मां ..."

"गिरजे में? गिरजे में? कलमुंही कहीं की!"

ये शब्द सुनते ही ओलेना के हाथ स्वतः ऊपर उठ गये, मानो वह इन अपमानजनक शब्दों से अपनी रक्षा करने का प्रयत्न कर रही हो।

अग्राफ़ेना ने उसे ग़लत समझा था।

"आ-हा!" वह चिल्लायी और बेटी के पास तक दौड़कर उसकी चोटी पकड़कर खींच ली, "मेरे दिल ने पहले ही कह दिया था, मैं जानती थी, डाइन, तू यही करेगी!"

ओलेना, अग्राफ़ेना को ढकेलती हुई वहां से हट गयी।

"क्या कह रही हो मां, क्या कह रही हो?!"

उसकी बड़ी बड़ी नीली आंखों में आंसू छलक आये।

"मैं तुम्हें मार डालूंगी!" अग्राफ़ेना चिल्लायी और दोनों हाथ सामने करके उसकी ओर बढ़ी, "किसके साथ थी? बता! अफ़नासी के साथ?"

ओलेना हाथों से चेहरा ढंकती हुई कुछ क़दम पीछे हट गयी।

"पिता जी, पिता जी!" उसने पिता को खांसते हुए सुना और उन्हें पुकारने लगी।

"कहां गयी थी?" ज़ीने के जंगले से झुकते हुए काशीन चिल्लाया।

बूढ़ी आया ओलेना की मदद को आ गयी और गलियारे में आकर चिल्लाने लगी –

"वसीली, व्यापारी आये हैं!"

अग्राफ़ेना तुरन्त चुप हो गयी। काशीन ने ओलेना का कंधा पकड़ा।

"इसे ताले में बंद कर दो ... चले जाओ यहां से!"

ओलेना सिसकती हुई सीढ़ियों पर चढ़ी और पलंग पर गिरकर, तकिये में मुंह ढांपकर, रोने लगी। दरवाज़े पर ताला लगा दिया गया।

कामगारों को पैसा दे चुकने के बाद निकीतिन ने गर्म पानी से मुंह धोया, साफ़ कपड़े पहने और कमरे में चला गया। यहां कमरे की दीवाल पर एक धुंधला-सा शीशा लगा था – कभी इस मकान में ऐसे बहुत-से शीशे लटकते थे किन्तु आज अकेला यही रह गया था। उसने तांबे के कंघे से बालों को संवारा, उनमें तेल लगाया। उसकी नौकरानी मार्या ने मेज़ पर खाना लगा दिया।

इन कुछ दिनों में निकीतिन आराम से बैठ तक न सका था। उसने नाव बनाने के लिए ख़ुद ही लकड़ियां छांटी थीं, सुबह से शाम तक किनारे पर खड़े खड़े काम की देखभाल की थी और लोगों को यह समझाया और यह दिखाया था कि गन्धाते हुए रालदार लट्ठों को कैसे काटना और ठीक करना चाहिए। उसने स्वयं ही कुल्हाड़ी और आरे ले लेकर लोगों की सहायता की थी ताकि काम जल्दी समाप्त हो जाये।

उसने गोदाम में जाकर कपड़े के थानों को देखा था और उनमें से ऐसे ऐसे मज़बूत और हल्के कपड़े छांटे थे कि उनसे बना पाल ठीक

से काम कर सके ग्रौर थैले की तरह न लटका रहे। उसने राल से मढ़ी हुई ढेरों रस्सियां इकट्ठी कीं; खाद्यान्न, नमकीन मछलियां ग्रौर दालें खरीदीं ग्रौर उन्हें बड़े बड़े गट्ठरों में बांध लिया। उसने बन्दूकों के लिए सीसा, गोला-बारूद ग्रौर धनुषों के लिए तीरों की भी व्यवस्था कर ली।

इस सब के लिए काफ़ी मेहनत की ग्रावश्यकता थी। लेकिन सिर्फ़ ग्राज सारा काम समाप्त हो जाने पर निकीतिन को बेहद थकान मालूम पड़ रही थी। उसकी पीठ दर्द कर रही थी ग्रौर हथेलियां जल रही थीं – इस वर्ष उसने पहली बार डांड़ चलाया था। वह मेज़ पर बैठा ग्रौर बंदगोभी के शोरबे से भरी हुई तश्तरी खींच ली। मेज़ पर एक पुराना मेज़पोश बिछा था।

"कपिलोव नहीं ग्राया?"

"ग्राया था, उसने कहा है कि उसने सारा काम तुम्हारे मन माफ़िक़ पूरा कर दिया है। ग्रौर लप्शोव . व्यापारी भी ग्राये थे।"

"ग्रच्छा ... उन्होंने इल्या के बारे में कुछ नहीं कहा?"

"इल्या सीधे वसीली के यहां जायेगा ग्रौर वहां इन्तज़ार करेगा।"

निकीतिन ने गोश्त के कुछ टुकड़े निगले, मेजपोश से हाथ पोंछा ग्रौर लपसी पर जुट पड़ा। लपसी गर्म थी जिससे उसके ग्रोठ तक जल गये। वह उसे चम्मच से फूक फूककर खा रहा था।

"हम कल ग्रपना सफ़र शुरू करेंगे। सफ़र लम्बा होगा। पर यह भगवान के हाथ है। मेरे हमसफ़र ग्रगले वसन्त तक लौट ग्राना चाहते हैं। यदि तातारों ने कोई ग्रड़ंगा न लगाया तो ग्राऊंगा वरना शायद गर्मियों से पहले ग्राना नामुमकिन है। वसन्त में तातारों की चांदी रहती है न ... ग्रच्छा ... यहां सब कुछ मैं तुम्हारे भरोसे छोड़ता हूं। मैं तुम्हें पेत्रोव दिवस तक तीन कोपेक रोज देता रहूंगा। फिर, तरकारियों का बाग़ है ही। तुम्हें कोई तकलीफ़ न होगी। ज़्यादा कुछ मेरे पास है ही

नहीं। भंडारे में क़रीब डेढ़ मन आटा रख दिया है, लगभग एक मन दूसरे अनाज हैं और नमक भी। हंसों को बाद में मार लेना जब वे काफ़ी मोटे-ताज़े हो जायेंगे। यदि फिर भी तुम्हें कुछ ज़रूरत पड़े तो काशीन से ले लेना। जब मैं लौटूंगा तो उसे वापस कर दूंगा। लकड़ी काटनी हो तो इग्रोना से कहो..."

मार्था गाल पर कालिख भरे हाथ रखे कुर्सी पर बैठी बैठी चुपचाप सब कुछ सुनती रही।

निकीतिन ने उसपर एक उड़ती-सी नज़र डाली और चम्मच रखकर फिर कहने लगा–

"और अगर ... तो मिकोलिंस्क गिरजे में मेरे लिए प्रार्थना करवा देना। लेकिन ज्यादा पैसा न खर्च करना। हां, एक रूबल ज़रूर दे देना। इसके लिए मैं तुम्हें अलग से दे जाऊंगा।"

मार्था रोने लगी और अपने शाल के छोर से आंसू पोंछने लगी। "ओह, कैसी बेचैनी है ... और सपना भी कितना बुरा।"

"मार्था, रो मत।"

निकीतिन खड़ा हो गया और बड़े स्नेह से अपना हाथ बूढ़ी के कंधे पर रख दिया।

"लगता है तुम सब के एक ही जैसे विचार हैं। अग्राफ़ेना काशीना को भी ऐसे ही भ्रम हो रहे हैं।"

"मारो भी गोली उस अग्राफ़ेना को! वह कोई औरत है, गुस्सैल कुतिया है, कुतिया!"

"तुमसे अग्राफ़ेना से क्या लेना-देना! कुछ देर बाद मैं आकर तुम्हें अच्छा फ़र-कोट पहनाऊंगा और मोती के हार भी। अग्राफ़ेना का कलेजा फट जायेगा तुम्हें देखकर!"

"मुझसे हंसी मत करो। मोती मुझपर नहीं फबेंगे। सफ़र पर जाते समय लौटने की बात करना ठीक नहीं!"

"तो चुप हो जाता हूं ... चलो सन्दूक़ देखें। शायद हम कुछ रखना ही भूल गये हों।"

परन्तु उन्हें सन्दूक़ की चीज़ों पर निगाह डालने का भी समय न मिला। दरवाज़े पर दस्तक हुई और मिकेशिन का पीला-सा चेहरा दिखाई पड़ा।

निकीतिन ने स्वयं ही उन लोगों को चुना जिन्हें उसके साथ यात्रा करनी थी। उसने अपनी ही तरह बदक़िस्मत कपिलोव को, ज़िरहसाज़ इल्या कोज़लोव को – जिसने पहली बार व्यापार में तक़दीर आजमाने का निश्चय किया था, और युवक इवान लप्शोव को अपने साथ लिया। इवान के पिता ने निकीतिन से इवान को ले जाने का अनुरोध किया था। अगर काशीन की ज़िद न होती तो अफ़नासी मिकेशिन को कभी न ले जाता क्योंकि उसे उसकी लम्बी ज़बान पसन्द न थी।

इस समय भी मिकेशिन ने प्रवेश किया और बैठने के साथ ही कहने लगा –

"हे-हे-हे! मैं आटा लेने काशीन के यहां गया था ... वहां तो आफ़त मची हुई थी जैसे आग लगी हो, दौड़ते दौड़ते लोगों का दम फूल रहा था ..."

"हां, तो?" निकीतिन ने अनमनेपन से पूछा। वह सोच रहा था कि यह व्यापारी भी कैसे बेवक़्त आ गया है।

मिकेशिन मेज पर झुका और फुसफुसाने लगा –

"ओलेना सुबह से ही अकेली घर से निकल गयी है। सचमुच ... हे-हे! यह रही सबसे अच्छी लड़की! अभी तक उसका कोई पता नहीं चला। यह सब वसीली की लापरवाही का दोष है।"

"झूठ बोलते हो!" निकीतिन ने रुखाई से उसे टोका।

मिकेशिन ने उत्सुकता से निकीतिन की ओर देखा। वह जैसे उसकी फटकार भूल-सा गया था।

"भगवान की क़सम ... और तुमसे ...तुमसे क्या मतलब? तुम उसके कौन हो–भाई या भतीजे?"

निकीतिन समझ गया कि उसके सामने बैठा हुआ व्यक्ति है कौन और शान्ति से जवाब देने लगा–

"मालिक की लड़की पराई नहीं होती।"

मिकेशिन हंसने लगा–

"आख़िर संबंध जोड़ ही लिया न ... वसीली तो आग बबूला ही हो उठा है!"

निकीतिन तो मिकेशिन का सिर ही तोड़ डालना चाहता था, बल्कि अगर उसका बस चलता तो ज़मीन में गाड़ देता कि उसके कानों में उसकी हंसी तो न पड़ती।

"मीत्का, दूसरों की मुसीबतों पर हंसा नहीं करते," ओंठ भींचते हुए मार्या बोली, "शायद तुम्हें भी वैसी ही मुसीबतें उठानी पड़ें।"

निकीतिन ने भौंहें घुमायीं और कोट ले लिया–

"हमें ये सब बातें सुनने की फ़ुरसत नहीं, चलो चलें।"

"अभी तो बहुत समय है न?"

"नहीं, चलने का समय हो गया।"

काशीन का घर दूर न था। निकीतिन ने शान्तिपूर्वक रास्ता तय करने का प्रयत्न किया यद्यपि वह चाहता यह था कि दौड़कर काशीन के घर पहुंच जाये। ओलेना कहां चली गयी, वह शीघ्र से शीघ्र इस बात का पता लगाना चाहता था। उसने मिकेशिन की भी एक न सुनी। शायद ओलेना अपनी सहेली के यहां चली गयी हो, शायद दूर

के किसी गिरजे में चली गयी हो या शायद बाज़ार में उसका मन कहीं फ़ीतों पर अटक गया हो।

रास्ते पर कपिलोव भी उनके साथ हो लिया।

"टें टें मत करो!" उसने मिकेशिन को चुप कराते हुए कहा।

काशीन के मकान में क़दम रखते ही निकीतिन को अग्राफ़ेना की चिल्लाहट सुनाई दी और ओलेना की डरी हुई आवाज़ भी। निकीतिन का मन शान्त हो गया—आख़िर वह घर पर ही तो है!

"तुमने झूठ कहा था न?" कपिलोव ने धीरे से मीत्का से कहा।

"और यह शोर-गुल नहीं सुनते?" मीत्का ने जैसे चिढ़कर जवाब दिया।

काशीन व्यापारियों से ड्योढ़ी पर ही आकर मिला और निकीतिन की ओर तिरछी नज़रों से घूरते हुए कहने लगा—

"आप लोग अन्दर आयें, दूसरे भी आते ही होंगे।"

व्यापारी कमरे में चले गये।

"नाव ठीक है न?" निकीतिन के बूटों की ओर देखते हुए काशीन ने पूछा, "तुमने उसकी जांच तो कर ली?"

निकीतिन को लगा जैसे वसीली उससे नाराज़ है।

उसने कंधे झुलाते हुए कहा—

"कर ली! अच्छी चलती है..."

"कहां तक ले गये थे उसे?"

"नदी की प्रवाह की उल्टी दिशा में ... हरे तट तक।"

"और फिर घर वापस आ गये?" काशीन ने निगाहें ऊपर उठायीं, "बड़ी जल्दी ... और कामगार कहां हैं?"

"उन्हें मज़दूरी दे दी गयी और वे चले गये।"

काशीन अपना निचला ओंठ बाहर निकाले और दाढ़ी हिलाते

हुए चुप बैठा रहा। नहीं, निकीतिन झूठ नहीं बोलता। काशीन कामगारों को जानता था। वह एक एक शब्द की जांच करा सकता था ... और फिर मिकेशिन भी तो कहता था कि मैंने नाव देखी है और मैं निकीतिन के साथ ही साथ आया हूं। नहीं, निकीतिन का कोई दोष नहीं। फिर यह पगली लड़की गयी कहां थी? शायद गिरजे में गयी हो और इस कुतिया अग्राफ़ेना ने ही बिना वजह आसमान सिर पर उठा लिया था।

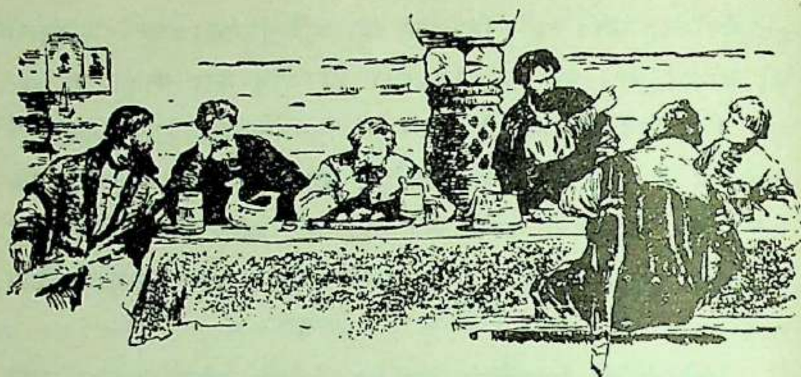
काशीन ने व्यापारियों पर एक पैनी-सी दृष्टि डाली। उसने मिकेशिन की निगाहें देखते ही जान लिया था कि उसके घर की घटना सभी जानते हैं। आख़िर वे घर में होनेवाला शोर-गुल बाहर से भी तो सुन सकते थे। हे भगवान! बूढ़े व्यापारी को अपनी बेवक़ूफ़ पत्नी पर गुस्सा आ रहा था–चुड़ैल ने तिल का ताड़ बना दिया।

"अग्राफ़ेना!" वह चिल्लाया, "शहद लाओ! तुम्हारा दिमाग़ तो नहीं खराब हो गया?"

वसीली काशीन बड़ा होशियार और दृढ़ निश्चयी था। घर के सब लोग चुप रहेंगे और ये व्यापारी कल चले जायेंगे इसलिए अधिक से अधिक वे आज-भर चें चें कर सकते हैं, तो आज मैं उन्हें जाने ही न दूंगा, यहीं रखूंगा, उन्हें ख़ूब पिलाऊंगा, इतनी ज्यादा कि अपना नाम तक न ले सकेंगे वे। लेकिन इस समय चुप रहना ही ठीक होगा जैसे कि घर में कुछ हुआ ही न हो। और शाम को ओलेना इन्हीं मेहमानों की ख़ातिर करेगी। वह भाग तो जायेगी नहीं। उसने कटोरों में ख़ुद ही शहद उड़ेला।

"जाने से पहले एक एक कटोरा हो जाये ..."

शीघ्र ही लप्शोव पिता-पुत्र और ज़िरहसाज़ कोज़लोव भी आ गये।



"समय हो गया!" निकीतिन बोला, "शहद कोई भाग तो जायेगा नहीं!"

"अग्राफ़ेना, टोपी लाओ!" काशीन चिल्लाया।

शाम होने को थी। आखिरी गाड़ियां बाज़ार के चौकों से जा चुकी थीं और झक्की तथा पंगु भी वहां से चले गये थे। केवल गौरैयां और कौवे ही सूखी घास और गोबर के ढेरों पर उड़ उड़कर बिखरा हुआ अनाज चुग रहे थे। दूकानें बन्द हो चुकी थीं। बोल्गा पर, जहाजों के पास सिर्फ़ चौकीदार खड़े थे। सभी घर पहुंचने की जल्दी में थे। क़िले के द्वारों और मीनारों में पहरेदार बदले जा चुके थे।

दिन समाप्त होते होते ठंढक पड़ने लगी थी। धूमिल पड़ते हुए आकाश में बादल मंडरा रहे थे और शीत एवं उदासीन सन्ध्या धीरे धीरे ज़मीन पर उतर रही थी। चहारदीवारियों के पास लगी हुई बेंत की झाड़ियां और एकाकी खड़े हुए बर्च-वृक्ष सायंकालीन बयार के झोंकों में सरसरा रहे थे। यात्रा पर जानेवाले व्यापारी काशीन के मकान में लम्बी-सी मेज़ के इर्द-गिर्द बैठे हुए मंगलमय यात्रा और कार्यों की सफलता की कामना में जाम पर जाम खाली कर रहे थे।

काशीन खुश था। सभी कुछ उसकी इच्छानुसार हुआ था, ठीक वैसा ही जैसा उसने सोच रखा था। उसने दफ़्तर में जाकर परिचित मुंशी को आंख मारी, थैली का मुंह खोला और दूसरे ही दिन सनद तैयार हो गयी। मुंशी को यह काम कर देने में कोई समय न लगा।

क्रेमलिन से लौटकर उसने सभी यात्रियों को अपने यहां बुलाया। केवल निकीतिन ही मां की क़ब्र पर गया था। निकीतिन ऐसा आदमी नहीं जो दूसरों की उन बातों को ले उड़े जिनसे किसी की नाक नीची होती हो। फिर वह भी शीघ्र ही आ गया।

काशीन ने दिल खोलकर मेहमानों की ख़ातिर की। उनके सामने हंसा, उनके साथ हंसी-मज़ाक़ किया, बूढ़े लप्शोव के कन्धे थपथपाये।

अफ़नासी ने थोड़ा-सा खाया-पिया। प्रथानुसार, पहले अग्राफ़ेना और ओलेना मेहमानों के सामने कटोरे लायीं और अफ़नासी के आने के पहले पहले ही वहां से चली गयीं। निकीतिन को यह दुख हो रहा था कि जाने से पहले वह ओलेना से न मिल सकेगा। उसने ओलेना के बारे में जो ख़बरें उड़ती हुई सुनी थीं उनसे उसे बड़ा संताप हो रहा था। हो सकता है उसे कोई ऐसा मिल गया हो जिसे वह दिल दे बैठी हो? आख़िर उसे ऐसा आदमी क्यों न मिले? और मेरा ओलेना पर हक़ ही क्या? मुझे देखकर मुस्करायी थी और लज्जा से लाल भी पड़ गयी थी? और कौन जाने यह उसका भ्रम ही रहा हो? आख़िर मुझमें ऐसा है ही क्या जिससे कोई लड़की मेरी ओर आकृष्ट हो? मैं जवान नहीं, इवान लप्शोव की तरह, मालदार नहीं... काशीन ने उसे आवाज़ दी —

"अफ़नासी, तुम पीते क्यों नहीं? यह इतालवी शराब है!"

निकीतिन ने शराब का कटोरा ओंठों से लगाया। बूढ़ा लप्शोव आकर उसके पास बैठ गया। वह निकीतिन के पिता का पुराना दोस्त था।

"सुनो अफ़नासी," लप्शोव निकीतिन के पास झुककर कहने लगा—"कभी तुम मेरे साथ जाया करते थे लेकिन आज मैं अपने बेटे को तुम्हारे सुपुर्द कर रहा हूं। उसका ध्यान रखना ..."

"चिन्ता न करें। मुझसे जो भी हो सकेगा करूंगा।"

"उसकी मां तो अपने बेटे के लिए आठ आठ आंसू रोती है। शायद तुम्हें याद हो, तुम्हारी मां भी कैसा रोती थी? औरतों का दिल कच्चा होता ही है। मेरा बेटा सचमुच अच्छा है, है न?"

"बड़ा अच्छा है!" इवान की नीली आंखों और भूरे-से बालों की ओर देखता हुआ निकीतिन मुस्करा दिया।

बूढ़ा लप्शोव अपनी नाक मलता और दाढ़ी हिलाता हुआ बोल उठा—

"अच्छा तो अच्छा, लेकिन है ज़रा-सा बेवक़ूफ़। तुम ज़रा इवान का खास ध्यान रखना, व्यापार में उसकी मदद कर दिया करना। वह कुछ विचित्र-सा लड़का है।"

निकीतिन पूछना ही चाहता था कि लप्शोव अपने बेटे को बेवक़ूफ़ क्यों समझता है कि मेज़ के एक सिरे पर कुछ शोर-ग़ुल सुनाई दिया। बूढ़ा लप्शोव तुरन्त ही उस ओर झुक गया।

सेरेगा कपिलोव खुला कोट डाटे कटोरों के ऊपर से मिकेशिन पर झुका और अपना खुरदरा हाथ फैलाते हुए कहने लगा—

"यह रहा मेरा हाथ!" वह चिल्लाया, "यही देता है मुझे खाना! हां, यही! मैं तुम्हारी तरह दूसरों पर सवारी नहीं गांठता, किसी को धोखा नहीं देता। और न ही सामन्तों के तलवे चाटता हूं!"

पास बैठे हुए लोग कपिलोव को शान्त करने लगे और वह उनकी उपेक्षा करता हुआ भयभीत मिकेशिन को खरी-खोटी सुनाता रहा—

"देखो, मुझे राजा-सामन्तों का डर न दिखाना। हम उनकी नस नस पहचानते हैं। हमने ऐसे बहुत-से देखे हैं!"

यह झगड़ा क्यों शुरू हुआ निकीतिन न जानता था। हां, वह यह जानता था कि अगर कपिलोव सामन्तों को सुनाने पर आ ही गया है तो उसे चुप कराना आसान नहीं है। पिछले जाड़े में जब कपिलोव अपने सामान के साथ मास्को से जाता था तो सामन्त कोलोक ने अपने आदमियों की मदद से उसपर हमला बोल दिया था और उसका सारा माल-असबाब लूट लेने के बाद उसे मारा भी था। यही नहीं कोलोक ने उसे यह धमकी भी दी थी–"अगर तुम किसी से इसकी शिकायत करोगे तो नतीजा और खराब होगा!" कपिलोव एक एक पैसे से ख़ाली हो गया और अपनी पत्नी और तीन छोटे बच्चों के साथ ग़रीबी में गुज़र-बसर करने लगा। चालीस वर्ष की उम्र में उसे सब कुछ नये सिरे से करना पड़ा।

कपिलोव का मुंह तमतमा रहा था–

"तुम मास्को को गालियां दे रहे हो? लेकिन तुमने मास्को देखा है? तुम वहां गये हो? वहां ज़ार इवान की कठोर व्यवस्था है। वहां के लोग एक दूसरे का गला नहीं काटते, एक दूसरे को लूटते नहीं। आज वहां का बाज़ार हमारा जैसा नहीं रहा। विदेशी व्यापारी हमारे यहां से होते हुए मास्को जाते हैं। वह ऐसी जगह है जहां सारी दुनिया के लोग इकट्ठा होते हैं। लेकिन हम पर कौन ध्यान देता है? समय के साथ साथ मास्को की सेनाएं वोल्गा के निचले क्षेत्र पर क़ब्ज़ा करेंगी तब हम लोगों को आटे-दाल का भाव मालूम होगा। क्या नोवगोरद में अपनी टांग अड़ाओगे? नागरिकों को तो अपनी जेब प्यारी है। वे हमारे कारण मास्को से झगड़ा मोल

लेने को तैयार नहीं। क्या तुम लिथुआनिया का, कुधर्मियों का मुंह जो होगे? ईसाइयों के साथ विश्वासघात करोगे?"

"हमारे राजा को फटकारने..." मिकेशिन ने कहना ही शुरू किया।

"आं!" कपिलोव गरज पड़ा, "भौंको, दौड़ो और उनके कानों में फूंक आओ! लेकिन मैं सच कहता हूं। इन सामन्तों और उनकी लड़ाइयों के कारण हमारी तो जिन्दगी दूभर हो गयी है! यहां हम सब रूसी हैं और एक ही भगवान की प्रार्थना करते हैं। लेकिन यहां से कुछ ही दूर कुकुरमुत्ते तोड़ने तो जाओ कि दूसरों की ज़मीन पर पहुंच जाओगे–फिर चुंगी अदा करते करते नानी याद आ जायेगी। नोवगोरद में पैसा ऐंठेंगे फिर प्स्कोव में, र्याज़ान में और मास्को में भी। इतना ही नहीं तातार भी..."

"लेकिन तुम चाहते क्या हो?" चापलूसी-सी करते हुए मिकेशिन ने पूछा।

बातचीत गरमागरमी पर आ गयी थी। कपिलोव की धुंधली आंखों में घृणा की झलक दिखाई पड़ी। वह मिकेशिन को घूर रहा था। गुस्से के कारण उसके लिए सांस लेना तक दूभर हो रहा था। हर क्षण वह जैसे बेक़ाबू होता जा रहा था।

निकीतिन उठकर खड़ा हो गया। उसने बलूत के कटोरे से मेज़ पटपटायी और शहद नीचे छलक पड़ा।

"सेरेगा, बैठ जाओ! सुनो, मुझे कुछ कहना है। मिकेशिन, तुमने उसे छेड़ ही क्यों दिया? चुप हो जाओ! जब तुम यहीं लड़-झगड़ रहे हो तो सराय तक कैसे पहुंचोगे? तुमने मुझे सरदार माना है–बस, अब चुप हो जाओ! मैं किसी तरह का लड़ाई-झगड़ा नहीं चाहता। नाव में यह फ़ैसला करने का समय नहीं कि कौन ठीक

कहता है कौन ग़लत। या तो अपने झगड़े बन्द करो या फिर मैं दोनों में से एक को ही ले चलूंगा। बस मुझे यही कहना है।"

निकीतिन पूरे विश्वास के साथ अधिकार के स्वर में बोल रहा था। कपिलोव किसी पर भी निगाह न टिकाते हुए बेंच पर बैठ गया। मिकेशिन कुछ नाराज़गी के साथ कहने लगा –

"ये बातें मैंने तो नहीं शुरू की थीं..."

"अच्छा अब आम कटोरा उठाओ!" निकीतिन ने आज्ञा दी, "हम अपनी मंगलमय यात्रा की कामना में पियेंगे!"

एक एक करके सबने आम कटोरे से शहद पी ली। दोनों प्रतिद्वन्द्वियों ने भी, अनिच्छा से, उसे ओंठों से लगाया।

फिर बैठते हुए निकीतिन कहने लगा –

"एक बात में सेरेगा बिल्कुल ठीक है। व्यापारियों को ज़रूरत होती है व्यापार के खुले रास्तों की। अगर हमें ऐसे रास्ते मिल जायें तो हम दिखा देंगे कि हम रूसी क्या कर सकते हैं! हम अपना व्यापार बढ़ा सकते हैं और सभी के साथ तिजारत शुरू कर सकते हैं। हमारा माल लो और अपना हमें दो – दोस्तों की तरह।"

बूढ़ा लप्शोव निकीतिन के कन्धे पकड़कर उससे लिपट गया –

"मालिक!"

मिकेशिन चुप हो गया, किन्तु सेरेगा कपिलोव अफ़नासी की ओर देखते हुए उदास-सी हंसी हंस दिया।

"लेकिन ऐसे रास्ते हमें मिलेंगे कहां और कैसे?"

"कभी मिल ही जायेंगे," विश्वास से निकीतिन ने उत्तर दिया, "तातारों और हमारे दूसरे दुश्मनों के पंख हम तोड़ डालेंगे। फिर तुम जहां चाहो तिजारत कर सकते हो!"

वह हंसा और आगे कहने लगा –

"भारत भी जा सकते हो!"

लप्शोव का पिता क़हक़हे लगाकर हंसने लगा। काशीन मुस्करा दिया और कपिलोव के ओंठों पर भी हल्की-सी मुस्कान बिखर गयी।

"कहां?" इवान लप्शोव ने पूछा।

निकीतिन ने जाम चांदी की सुराही के नीचे लगाते हुए प्रसन्नता से जवाब दिया—

"पता है धरती है कहां? बड़े महासागर के बीच तैर रही है। और भारत देश पृथ्वी के बिल्कुल छोर पर है।"

इवान जैसे सकपका गया और शंकित तिरछी नज़रों से लाल लाल, मुस्कराते हुए चेहरों की ओर देखने लगा। फिर उसकी भौंहों में बल पड़े, त्यौरियां चढ़ीं और उसने जैसे अशिष्टता से सिर झुका लिया।

"अफ़नासी, उसे तुम्हारा यक़ीन नहीं," मिकेशिन हंसने लगा।

"क्या सच?" शहद की चुस्की लेते हुए निकीतिन गम्भीर हो गया, "तुम मुझपर नाराज़ मत हो, इवान। मैं हंसी नहीं करता। लोग कहते हैं सचमुच ऐसी धरती है। खैर, कल तो हम सफ़र कर ही रहे हैं। जानते हो यह बात कोज़्मा इन्दीकोप्लोव ने लिखी है अपनी किताब में। मैं तुम्हें दिखा दूंगा। वह बड़ा योग्य आदमी है। उसने भारत के बारे में बड़ी बड़ी अद्भुत बातें कही हैं।"

"फिर तुम सराय की तरफ़ क्यों जा रहे हो?" मिकेशिन बोला, "सीधे भारत ही क्यों नहीं चले जाते? हो-हो! अगर पतलून नुचाकर ही लौटना है तो कहीं से भी लौटो, एक ही बात है!"

निकीतिन ने उसकी ओर पैनी दृष्टि से देखा। मिकेशिन ने जिस चीज़ का संकेत किया था वह निशाने पर बैठ चुका था। पर

निकीतिन ने मिकेशिन को कुछ भी न कहा बल्कि सिर्फ़ हाथ हिलाकर कह दिया –

"अगर ऐसी नौबत आयी तो मैं वहीं रह जाऊंगा। भारत की गर्मी में पतलून की ज़रूरत ही न पड़ेगी!"

उसकी बात सुनकर सभी व्यापारी खिलखिलाकर हंस पड़े। सबसे तेज़ क़हक़हा लगाया था ज़िरहसाज़ इल्या ने –

"ख़ूब कहा! ख़ूब कहा!"

इल्या कोज़लोव व्यापारियों की संगत में रहने का आदी न था। और यद्यपि उसे अपने बच्चे और पत्नी के साथ अन्तिम बार भोजन करने की जल्दी थी, फिर भी यहां की मजेदार बातें सुनकर वह वहीं रह गया। वह अफ़नासी निकीतिन को चाहता था। इल्या ने अपना चौड़ा सीना मेज़ से सटाते हुए बड़े विश्वास से व्यापारी की ओर देखा।

धीरे धीरे शोर-गुल बन्द हुआ और बातचीत कई विषयों में बंट गयी। आखिर इवान लप्शोव को गाने के लिए मना ही लिया गया।

इवान उठा और एक क्षण तक हिचकिचाने के बाद उसने धीरे धीरे, किन्तु साफ़ आवाज़ में, गाना शुरू किया –

नीले सागर की लहरों पर
सफ़ेद पालों को फड़काता
इठलाता, हिलता, डुलता
दौड़ रहा व्यापारी बेड़ा ...

वातावरण में शान्ति छा गयी। ज़िरहसाज गाल पर हाथ रखे बठा था, मिकेशिन मेज़पोश पर के शराब के धब्बे पर आंखें गड़ाये

था ग्रौर कपिलोव की नज़रों में उदासी झलक रही थी। काशीन हाथों में सिर पकड़े बैठा था ग्रौर भगवान जाने उस शोकगीत को सुनते हुए क्या सोच रहा था। इस गीत में उन युवक व्यापारियों के बारे में कहा गया था जो सुख की तलाश में घर से निकले थे किन्तु जिन्हें गले लगाना पड़ा था मौत को।

निकीतिन ग्रकेला रहना चाहता था। वह चुपचाप उठा ग्रौर दरवाज़े की ग्रोर चल दिया। ग्रंधेरा हो चुका था। घरों के ऊपर चांद मन्द मन्द चांदनी बिखेर रहा था। ऐसा लगता था कि उसका ग्रग्राह्य-सा प्रकाश वस्तुग्रों में से होकर निकल जाता है ग्रौर उनकी रूप-रेखाएं, किसी रहस्यपूर्ण स्वप्न की भांति, शान्त नीलिमा में बिखर जाती हैं। बेंत के पेड़ों में सरसराहट सुनाई देती थी ग्रौर फिर नीरवता छा जाती थी। निचाई पर कोई रात्रिचर पंछी उड़ा ग्रौर ग्रांखों से ग्रोझल हो गया।

निकीतिन बड़ी देर तक खड़ा खड़ा रात्रि की नीरवता की ग्रोर कान लगाये रहा।

उसे तरह तरह की चिन्ताएं सता रही थीं। दूर-दराज़ रास्ता! वह ग्रपनी मंज़िल तक पहुंच भी सकेगा? एक बार फिर वह ग्रपने वतन, उज्ज्वल वोल्गा ग्रौर त्वेर के चहचहाते हुए वनों को छोड़ रहा है। ग्रौर यदि भाग्य उसे दूरस्थ प्रदेशों से लौटाकर न लाया तो किसी को भी उसकी याद न ग्रायेगी, कोई भी उसके लिए ग्रांसू न बहायेगा। सचमुच, धरती पर तनहा रहना कितना मुश्किल है। ग्रौर शायद ग्रोलेना के बारे में भी सोचना-विचारना व्यर्थ है... सहसा दरवाज़े पर कुछ ग्राहट हुई, पर उसने घूमकर न देखा। उसके मस्तिष्क में चित्त को उद्विग्न करनेवाले वैसे ही विचार उठते रहे। शायद कोई व्यापारी होगा...

जब काशीन सनद के लिए गया था, तभी अग्राफ़ेना कमरे में अपनी बेटी के पास आयी –

"उठ, उठ, सारे शहर में तो हमारा ढिंढोरा पिटा चुकी और अब पें पें कर रही है! उठ, उठ, तेरे बाप ने हुक्म दिया है कि कपड़े पहनकर तैयार हो जा!"

ओलेना ने प्रतिमा चुपके से तकिये के नीचे छिपायी, धीरे धीरे पलंग से उठी और स्वयं ही रेशमी कम्बल ठीक करने लगी।

मां ने उसे बनाने-संवारने में मदद दी। नीले रेशम की क़मीज़, मोतियों से कढ़ा हुआ लाल कुर्ता और लाल चमड़े के नीली डिज़ाइनवाले बूट।

ओलेना ने अपने ओंठ काटे अपनी प्रसन्नता को छिपाते हुए, अग्राफ़ेना के सिर के ऊपर देखा। उसे डर था कि अगर उसे ताले में बन्द कर दिया गया तो वह अफ़नासी से मिल भी न सकेगी। उसे मुक्त कर दिया गया है – लगता है कोई उसके बारे में कुछ भी न भांप सका।

ओलेना जानती थी – चुपके से अकेले घर से निकल जाना किसी भी लड़की के लिए कलंक का टीका है, बदनामी की बात है। लेकिन इस समय उसे इसका भी डर न था। वह कुछ और ही सोच रही थी – प्रतिमा निकीतिन को कैसे दी जाये।

उसने चमचमाते हुए पुखराजों वाले अपने प्रिय कर्णफूल कानों में और सुन्दर-सी नेकलेस गले में पहनी और गालों में लाली लगायी। बेटी की इस सुन्दरता ने अग्राफ़ेना को और भी परेशान कर रखा था।

"बेशर्म कहीं की! मां-बाप तो उसके लिए जान दें और वह मटरगश्ती करती रहे, नाक कटाती फिरे..."

"मां!" ओलेना ने चौंकते हुए कहा—"अगर तुम यों डाँटो-फटकारोगी तो मैं मेहमानों के पास न जाऊंगी!"

"नहीं जाओगी! कैसे नहीं जाओगी?" भयभीत-सी अग्राफ़ेना चिनचिना उठी, "बड़ी लाट साहब हो गयी हो न! ठहरो तो!"

किन्तु उसने डांट-फटकार बन्द कर दी और ओलेना को बूढ़ी आया के हवाले करके वहां से चल दी।

पिता के कमरे में आते ही ओलेना को पता चल गया कि मेहमानों में निकीतिन है ही नहीं। सिर झुकाये हुए उसने मेहमानों की खातिर की। उसने न तो मिकेशिन की ज़लील मुस्कराहट ही देखी और न इवान लप्शोव की प्रसन्नता ही, जो उसे मुंह बाये ताक रहा था। अन्ततः वह उदासचित्त वहां से चली गयी—आखिर किसके लिए उसने यह साज-सिंगार किया था, गालों पर लाली लगायी थी? फिर उसने सुना—अफ़नासी आ गया। उसकी समझ ही में न आ रहा था कि वह क्या करे। कैसे उसे एक क्षण की मुहलत मिले और वह अफ़नासी से भेंट करे? आखिर उसने तरक़ीब निकाल ही ली। जो होना हो, हो! उसने प्रतिमा अपनी छाती के पास छिपायी, धीरे धीरे नीचे उतरी और छिपकर गलियारे में खड़ी हो गयी। अगर यहां से होकर निकीतिन निकला तो हाथ फैलाकर प्रतिमा उसे दे दूंगी... वह देर तक इन्तज़ार करती रही और हर क्षण डरती जा रही थी कि कहीं उसकी मां न पुकार ले, क्षण क्षण पर बैठक-खाने में जानेवाले घर के लोग न देख लें। ओलेना के पैर सुन्न हो रहे थे और वह इन्तज़ार करते करते इतनी थक गयी थी कि जब सचमुच वह उसके पास से होकर निकला तो उसका दिमाग़ कट-सा गया और वह प्रतिमा निकालकर उसके हाथों में न दे सकी।

उसका सिर घूमने लगा। उसके हाथ उसके वश में न रहे और पैर जहां के तहां जड़ हो गये। उसने आंखें बन्द कीं, मन ही मन भगवान की प्रार्थना की और फिर मुश्किल से क़दम बढ़ाती हुई ड्योढ़ी पर आ गयी।

अफ़नासी उसकी ओर पीठ किये, सिर झुकाये और खम्भे के चारों ओर हाथ डाले खड़ा था।

ओलेना ने उसे देखा और जैसे उसके पैरों के नीचे की धरती खिसक गयी। अनिच्छित ही उसका जी रोने रोने को हुआ। उसमें अपनी अनुभूतियों तक को वश में रखने की शक्ति बाक़ी न रही। उसके दिमाग़ में एक ही विचार कौंध गया – "मैं क्या कर रही हूं? मैं क्या कर रही हूं?" उसे अपने सामने सिवा निकीतिन की चौड़ी-सी पीठ के और कुछ भी दिखाई न दे रहा था। वह उसी से लिपट गयी।

ढकेले जाने का डर, कातर आशा, लज्जा, अपने मुक्त हृदय पर तरस और प्रेमी से मिलने की उत्कट आकांक्षा – इन सभी अनुभूतियों ने ओलेना को झकझोरकर रख दिया। उसने सिर उठाया और जैसे लकड़ी की तरह जड़ हो गयी।

उसी समय उसके कानों में कहीं से आती हुई एक उत्तेजित-सी आवाज़ पड़ी –

"ओलेना!"

उसे लगा जैसे कोई किसी और को पुकार रहा है। पर यही आवाज़ एक बार फिर सुनाई दी और दो मज़बूत हाथों ने उसे आलिंगन में ले लिया। उसे लगा कि धरती घूम रही है पर वे मज़बूत हाथ उसे पकड़े हुए हैं जिससे वह गिरने से बच रही हो।

उसने अपनी व्यथित आंखें ऊपर उठा दीं। अपने ऊपर अफ़नासी का झुका हुआ प्रसन्न चेहरा देखकर जैसे उसकी जान में जान आयी।

ओलेना के ओंठ स्वयं ही अफ़नासी के ओंठों से मिले और उसके हाथों ने अफ़नासी का सिर थाम लिया...

"निकीतिन, अरे कहां हो तुम?" खुली हुई खिड़की में से उसे आवाज़ सुनाई दी।

ओलेना ने अफ़नासी के हाथों से अपने को मुक्त कर लिया –

"जाओ, तुम्हें बुला रहे हैं..."

अफ़नासी ने उसे फिर अपनी बांहों में भर लिया। उसकी आवाज़ भारी हो रही थी –

"पुकारने भी दो उन्हें... मुझे इसकी बिल्कुल आशा न थी, मैंने कभी सोचा तक न था। हे भगवान! मुझे अपनी ओर आंख भरकर देख तो लेने दो! मैं तो समझता था तुम मुझे नहीं चाहती थी... खैर, जब लौटूंगा तो सब ठीक हो जायेगा – हमारे रास्ते में कोई बाधाएं न रहेंगी... मेरी प्यारी, मेरी जान, मेरी दुलारी, मेरा इन्तज़ार करोगी न? मैं बहुत समय के लिए..."

"तुम्हारा इन्तज़ार करूंगी!"

और वह एक बार फिर अफ़नासी से लिपटकर चुप हो गयी। फिर आलिंगन से हटती हुई बोल उठी –

"जाओ... याद रखना। और यह लो..."

निकीतिन को लगा कि उसके हाथों में कोई सख़्त-सी चीज़ आ गयी। उसने उसे देखा – यह थी तावीज़।

अब उसकी समझ में आया – ओलेना घर से क्यों निकली थी।

अफ़नासी ओलेना की ओर बढ़ा लेकिन वह दरवाज़े के पीछे चली गयी और सीढ़ियों पर से आती हुई उसके पैरों की आहट सुनाई देने लगी। खिड़की में से फिर किसी की आवाज़ उसके कानों में पड़ी –

"अरे कहां हो तुम?"

निकीतिन अपना हाथ माथे तक ले गया और प्रतिमा को छिपा लिया। और, जैसे बेहोशी में कमरे में चला गया।

"ज़्यादा पी गये थे क्या?" कपिलोव ने धीरे से उससे पूछा।

अफ़नासी ने अपनी धूमिल और शून्य-सी आंखें ऊपर उठा दीं और हंस दिया।

कपिलोव ने सिर हिला दिया।

यद्यपि लोगों को बड़े तड़के ही घाट पर पहुंचना था फिर भी वे रात में देर से ही काशीन के घर से बाहर निकले। घर पहुंचकर निकीतिन सीधे पलंग पर लेट गया। उसने सिवा बूटों के और कुछ भी न उतारा था।

"तुम्हें कब जगाऊं?" मार्या ने पूछा।

"जब दूसरी बार मुर्ग़ा बोले!" उसने उत्तर दिया, "मेरा ख्याल है आज मुझे नींद ही न आयेगी..."

वह आंख बन्द किये किये देर तक पड़ा पड़ा मुस्कराता रहा लेकिन वह इतना थक गया था कि सुबह होने के पहले पहले उसकी ख़ूब आंख लगी।

ओलेना ने आंखें बिल्कुल नहीं बन्द कीं—कभी हंसती, कभी तकिये में मुंह ढांपकर रोने लगती। यह सब देखकर उसकी बूढ़ी आया तो परेशान ही हो उठी थी।

सुबह को जब उसका पिता घर से चला गया तो क़मीज़ ही पहने पहने वह खिड़की तक आयी, उसे खोलकर मुस्करायी और सामने वोल्गा पर मुड़ती हुई नक़्क़ाशीदार नासिकावाली नाव को देखकर उसकी दिशा में सलीब का निशान बनाया।

दूसरा अध्याय

"धुआं!"

पतवार पर बैठा हुआ कपिलोव नाव की दाहिनी ओर झुका ताकि वह सब कुछ साफ़ साफ़ देख सके।

उसकी आवाज़ सुनकर निकीतिन ने सिर ऊपर उठाया और उसके विचारों की शृंखला टूट गयी। इवान लप्शोव को कोई खबर न हुई – वह नाव के तल में खुर्राटे ले रहा था। ज़िरहसाज़ नाव की नासिका पर आराम से बैठा था और मुंह पाल की ओर किये औरतों जैसी महीन आवाज़ में गाना गा रहा था। जो लोग इल्या की भारी और गम्भीर आवाज़ से परिचित थे वे विशेष रूप से उसकी ज़नानी आवाज़ सुनकर खिलखिला पड़ते थे। सहसा उसने गाना बन्द कर दिया।

मिकेशिन सन्दूक़ खखोल रहा था। वह सिर हिला हिलाकर पूछने लगा –

"कहां? कहां?"

उन्हें नाव पर यात्रा करते करते कोई तीन घंटे हो चुके थे। उनकी निगाहों के सामने से क़िले की दीवालें और स्पास्क गिरजे के कलापूर्ण गुम्बद कब के ओझल हो चुके थे। नाव के दोनों ओर नदी के वीरान किनारे तेज़ी से भाग रहे थे। गांव तो बस यदा-कदा ही दीखते थे। कहीं नदी के पानी से लगा लगा कोई वन शुरू हो जाता और कहीं मीलों तक फैला हुआ कोई चरागाह धुंध में से दिखाई पड़ जाता। नदी के निकट पानी पर झुकी हुई बेंत की झाड़ियों की पत्तियां वोल्गा पर छोटी छोटी नावों की तरह मंडरातीं और छिछले पानी में चिकने और चमकीले पत्थर दिखाई पड़ जाते।

जब लोग बोरों और बक्सों के बीच नाव में बैठे और नाव खुली, तब निकीतिन के हृदय में यात्रा की परिचित एवं उत्तेजक अनुभूतियां हिलोरें लेने लगी थीं — दूर जाने का शोक और आशाओं से उत्पन्न होनेवाली खुशी, कभी किसी की याद में होनेवाला दुख, कभी सुख, बीते हुए दिनों की स्मृतियां, भविष्य के स्वप्न, और अज्ञात को जानने की अटूट लगन! उसे लगा जैसे दूरस्थ वनों की रूप-रेखा और नीले क्षितिज के उस पार उसकी वह प्रसन्नता खेलती है जिसे उसे अभी भी प्राप्त करना है। उसे लगा कि वह बेंतों की झाड़ियां और बड़े बड़े जल-क्षेत्र ही पीछे नहीं छोड़ आया अपितु अपनी सारी असफलताएं, सारे दुख भी छोड़ आया है, और अब उसके सामने है एक अनन्त, उल्लासपूर्ण और आह्लादभरा जीवन। बस, हाथ बढ़ाने-भर की देर है कि वह उसका होगा।

उसे विदा करने के लिए आये हुए लोगों की संख्या अधिक न थी — काशीन, जो हर समय फ़र के बक्स को सावधानी से धरने-उठाने में ही परेशान था कि कहीं वह भीग न जाये; कपिलोव और इल्या कोज़लोव की पत्नियां, जिनके गालों पर अब भी आंसू की बूंदें ढरक रही थीं; बूढ़ा लप्शोव, जो रात के नशे से छुट्टी पाने के लिए सुबह भी थोड़ी-सी चढ़ा आया था और अब बार बार सब को चूम रहा था और एक उदासीन-सा दिखाई पड़नेवाला मिकेशिन का दूर का संबंधी, जो उसका सामान लाया था। इओना भी आया था। वह अलग एक तरफ़ खड़ा रहा इस डर से कि कहीं उसके आने-जाने से यात्रियों के कार्यों में बाधा न पड़े। निकीतिन को उसी से गले मिलने का मौक़ा न मिला और उसे उसका ध्यान तब आया जब नाव चल चुकी थी। उसने इओना को देखकर अपनी टोपी हिलायी। उस समय वहां एकाकी खड़े हुए इओना का चेहरा

खिल उठा। वह भी निकीतिन को देखकर सिर झुका झुकाकर उसकी दिशा में सलीब बनाने लगा... निकीतिन को मन ही मन सन्ताप हो रहा था कि उसने अपने पुराने दोस्त को नाराज़ किया है। घाट पर वही एक आदमी तो था जो उसे सबसे अधिक प्यारा था।

नाव के पिछले भाग में लेटा हुआ निकीतिन ओलेना के बारे में सोचने लगा। फिर उसकी कल्पना के समक्ष उसकी मां का चित्र घूम गया... बेचारी मेरे सुदिन आने तक ज़िन्दा न रही। मैं लौटूंगा, अपने पुराने मकान को नया बनाऊंगा, अच्छी और खूबसूरत चीज़ें और महंगे बरतन ख़रीदूंगा और युवा पत्नी के साथ मज़े की ज़िन्दगी बसर करूंगा। लेकिन मां को ये सारे सुख नहीं बदे थे। पिता के साथ भी उसे बहुत ही कम सुख मिला... अब उसकी कल्पना के समक्ष बीते दिनों का एक और चित्र घूम गया—मां बराबर डरती रहती है कि उसका बेटा कहीं गिर न पड़े, कहीं उसके गूमड़ न फूल आये, कहीं वह वोल्गा में न डूब जाये... वह देर तक जगती रहती है इस इन्तज़ार में कि कब उसका बेटा घुमक्कड़ी के बाद घर आये। जब पहली बार वह पीकर घर आया था तो मां कितनी रोयी थी... वह हर समय उसी की फ़िक्र करती है और वह है कि मां की कोई चिन्ता नहीं करता... अपने आख़िरी वर्षों में बीमार मां घुप्प कमरे में पड़ी रहती है लेकिन वह बड़ा व्यस्त है—काम, काम, काम... नहीं, मां से कोई पुत्र उऋण नहीं हो सकता!

और तट भागते रहे, भागते रहे। यात्रा शुरू हो चुकी थी। ओलेना त्वेर में इन्तज़ार कर रही है और वह उसके साथ सुख के सपने देख रहा है... सफलता मिलेगी, ज़रूर मिलेगी! इल्या गा रहा है, मिकेशिन सन्दूक़ खखोल रहा है—इसके माने हैं कि हम नाव पर सफ़र कर रहे हैं, और इसके माने हैं कि हमें सफलता मिलेगी!

और निकीतिन इन्हीं सुखकर विचारों में डूबा हुआ था कि उसे सेरेगा की आवाज़ सुनाई दी।

सचमुच दाहिनी ओर, सामने से धुआं उठ रहा था।

मिकेशिन भयभीत निकीतिन की ओर मुड़ा–

"ये तातार तो नहीं?"

"यहां तातार कैसे होंगे!" निकीतिन ने उत्तर दिया, "वे यहां होते तो हमें उनकी खबर कभी की लग गयी होती। वे कोई सुई तो हैं नहीं जो दिखाई न दे..."

"शायद, आग लगी हो?" सेरेगा बोला।

"धुआं तो ज़बरदस्त है। हो सकता है कि सारे गांव में आग लगी है..."

सभी दाहिने तट की ओर देखने लगे। सूर्य चढ़ चुका था, धुंध छंट गयी थी, नाव तेज़ी से भाग रही थी। सभी किनारे की पहाड़ी पर उठते हुए धुएं की ओर ताक रहे थे।

"इपात्येव्स्की का मठ? नहीं वह अभी दूर है... फिर यह कौन गांव हो सकता है?" निकीतिन सोचने लगा।

उसने तट की ओर एक उड़ती-सी नज़र डाली, जैसे उसे किसी चीज़ की याद आ गयी हो–यही है वह खिसकी हुई ज़मीन, उधर सामने सरकंडे की झाड़ियां... और कुछ आगे–चीढ़ के तीन वृक्ष, जो एकसाथ जैसे घुलमिल कर बढ़ रहे हैं...

"यह क्यातिनो गांव है!" निकीतिन को याद आयी, "हां, बेशक क्यातिनो गांव ही। मैं यहां कोई तीन साल पहले आया था जब मैं नीज्नी नोवगोरद से लौट रहा था।"

"लेकिन यह आग कैसी है? सारा गांव ही उसकी लपटों में आ गया है," कपिलोव ने हाथ हिलाते हुए कहा।

"ऊंह! " मिकेशिन हंसते हुए बोला, "पिछले साल मास्को में ऐसी आग लगी थी कि कुछ न पूछो, और तुम क्यातिनो की बात कर रहे हो! "

नाव धुएं में ढकी पहाड़ी की ओर बढ़ रही थी। गांव के किनारे की एक कुटिया दिखाई दी जिसकी छत पर आग की लपटें लपलपा रही थीं।

"देखो न, मवेशी हंकाये जा रहे हैं! " ज़िरहसाज़ ने उन्हें दिखाया, "और वे जल्दी भी कर रहे हैं! "

और सचमुच मवेशी गांव से दूर, नदी के किनारे किनारे, मठ की दिशा में हंकाये जा रहे थे। घोड़ों पर चढ़े हुए लोग, मवेशियों के इर्द-गिर्द दाहिने-बायें भागते हुए, छोटे छोटे-से दिखाई पड़ रहे थे। ये सवार मवेशियों पर कोड़े बरसा रहे थे। उनकी संख्या बहुत थी।

"बड़ी विचित्र बात है! " कपिलोव धीरे से बोल उठा, "आखिर वे अपने अपने घर क्यों नहीं बचाते?"

"ज़रूर दाल में कुछ काला है," निकीतिन ने हामी भरी, "मैं जानता हूं, क्यातिनो में कोई दस मकान हैं, इसके माने हैं मवेशियों के इर्द-गिर्द सारा गांव इकट्ठा है ... सेरेगा, पाल उतार दो! देखें क्या मामला है ..."

"रुकना चाहते हो? " भयभीत मिकेशिन बोला – "आख़िर क्यों? अच्छा हो हम यहां से जल्दी ही निकल चलें। "

"कहां निकल चलें? " निकीतिन की त्यौरियां चढ़ गयीं, "और अगर सचमुच तातारों ने हमला किया हो तो? फिर तो हमें त्वेर खबर भेजनी चाहिए ..."

"तुम्हीं ने तो कहा था तातार यहां नहीं हो सकते ..."

"चलकर देखें। "

कपिलोव ने पाल हटा लिया और डांड़ मारने शुरू कर दिये।

निकीतिन ने आज्ञा दी कि नाव कुछ दाहिने, किनारे से नीचे लायी जाये ताकि पहाड़ी पर से उन्हें कोई देख न सके। उसने नाव को रेतीले छिछले किनारे पर लगाने की आज्ञा दी।

नाव रुकने से जो धक्का लगा उससे इवान लप्शोव की नींद टूट गयी और वह आंखें मलता हुआ यह समझने की कोशिश करने लगा कि आख़िर मामला क्या है। निकीतिन ने कोट और बूट उतारे और पतलून की मोहरियां उलटने लगा।

"सेरेगा, तैयार हो जाओ, हम नाव से उतरकर यह जानने की कोशिश करेंगे कि माजरा क्या है।" निकीतिन बाक़ी लोगों पर नज़र डालते हुए बोला – "इल्या, तुम मेरी जगह यहीं रहो। अगर कोई बात हो जाये तो नाव फ़ौरन उस किनारे पर ले जाना। हम लोग तैरते हुए आ जायेंगे।"

निकीतिन और कपिलोव गुनगुने-से और चमचमाते हुए जल में उतरे। वे पैर उठा उठाकर रख रहे थे ताकि पानी न छलके। वे किनारे की ओर बढ़ रहे थे। निकीतिन घास तक पहुंचा ही था कि पीछे से उसे छपाक की ध्वनि सुनाई दी। उनके पीछे इवान लप्शोव चला आ रहा था।

"तुम क्यों चले आये?" निकीतिन ने पूछा।

"आख़िर वहां बैठा बैठा क्या करता?" अपराधी की सी नक़ली मुस्कान के साथ इवान बोला और पतलून पकड़े पकड़े जहां का तहां खड़ा रह गया। "चाचा अफ़नासी, मैं कोई नन्हा बच्चा थोड़े ही हूं। मुझे ले चलो न।"

"ले भी लो इसे अपने साथ!" हाथ हिलाते हुए सेरेगा कपिलोव बोला, "देखो न कैसा बहादुर है!"

इवान का मुंह लाल हो उठा।

"अच्छा चलो ..." निकीतिन मुस्करा दिया, "पर जल्दी न करो! समझे!"

और वे इधर-उधर देखते-भालते बड़ी होशियारी के साथ किनारे पर चढ़ने लगे।

ऊपर आकर उन्होंने देखा कि गांव में आग लगी है। उनके देखते ही देखते एक मकान की छत गिरी और चारों ओर धुआं और चिनगारियां फैल गयीं। कुछ और आगे दूसरे मकान जल रहे थे। उन्हें स्त्रियों की सिसकियां, बच्चों का रोना-धोना और पुरुषों की चीखें सुनाई पड़ रही थीं।

उस गिरे हुए मकान के पास ही उन्हें ज़मीन पर पड़ा हुआ एक आदमी दिखाई दिया। इस आदमी का बायां पहलू लहूलुहान था। उसकी क़मीज़ तक ख़ून से तर थी। नीचे की घास भी ख़ून से लाल हो रही थी। इस व्यक्ति के ऊपर, अपनी कनपटियों पर हाथ रखे, एक बालिका बैठी थी। उसके चेहरे से निराशा टपक रही थी। वह हिलती-डुलती हुई, एक ही दर्दनाक आवाज़ में, बराबर रोये जा रही थी। आख़िर व्यापारियों को देखकर लड़की ने रोना-धोना बन्द कर दिया और, टूटे पंखवाली चिड़िया की भांति, लम्बी-सी नाली की ओर खिसकने लगी।

"ज़रूर यहां कोई दुर्घटना घटी है!" चिन्तातुर कपिलोव बोला।

"बेटी!" अफ़नासी ने बालिका को संबोधित करते हुए पूछा, "यहां हुआ क्या है?"

लड़की मुंह ज़मीन की ओर करके और सिर दोनों हाथों से छिपाती हुई लेट गयी।

कपिलोव ने पास पड़े हुए आदमी के सीने पर कान लगाया और सलीब बनाता हुआ उठा और कहने लगा—

"यह तो मरा पड़ा है ..."

व्यापारी आग से बचते हुए आगे बढ़े। उन्हें सामने कुछ स्त्री-पुरुषों का एक झुंड-सा दिखाई पड़ रहा था। वे इन लोगों के पास तक पहुंच गये।

"यहां कौनसी घटना घटी है?" अभी निकीतिन कुछ दूर ही था कि लोगों को संबोधित करता हुआ पूछने लगा, "क्या हुआ है यहां?"

क्यातिनो निवासी चुपचाप खड़े रहे मानो प्रश्न उनकी समझ ही में न आया हो। ये नंगे पैरों वाले तीन आदमी आ कहां से गये – ये ग्रामवासी निकीतिन और उसके साथियों की ओर देखते हुए शायद यही सोच रहे थे।

एक स्त्री अपने डरे हुए बच्चे को छाती से चिपटाये बैठी थी। रोते रोते उसके आंसू तक सूख चुके थे। बच्चा कांप रहा था और मां की जीर्ण-शीर्ण ब्लाउज़ में मुंह छिपाने का प्रयत्न कर रहा था। वह अपनी नन्ही नन्ही उंगलियों से मां का खून से लथपथ कंधा थामे था। अफ़नासी इसी स्त्री के पास आकर बैठ गया।

बच्चे की नन्ही नन्ही उंगलियों का स्पर्श करती हुई मां, जैसे होश में आकर, बोल उठी। वह अपने पास बैठे हुए इस भूरी-सी दाढ़ीवाले व्यक्ति की ओर मुखातिब हुई पर बोली कुछ नहीं। वह, जैसे रोती हुई, अपने आप को ही समझा रही थी कि उनपर कौनसी मुसीबतों का पहाड़ टूटा है।

"मठ के लोगों ने हमपर हमला किया है और हमारे हाथ-पैर बांधकर हमारे कितने ही आदमियों को मौत के घाट उतार दिया है ..."

अफ़नासी और उसके साथी वहां जड़वत् खड़े हुए ये सिसकियां और करुण कथा सुनते रहे। आतंकित और भयभीत ग्रामवासी इन्तज़ार

कर रहे थे कि कहीं से तिनके का सहारा मिल जाये। उन्हें लगा जैसे ये अजनबी उनके साथ सहानुभूति दिखा रहे हैं। फलतः वे उनके चारों ओर एकत्र होकर, मन ही मन प्रार्थना करते हुए और दिलों में क्षीण-सी आशा संजोये उनकी ओर देखते रहे।

आग की लपटें उठ उठकर वातावरण को झुलसाये दे रही थीं और जलती हुई खपच्चियां और चिनगारियां उड़ उड़कर इधर-उधर गिर रही थीं।

"क्या तुम लोग उस मठ के अधीन हो?" निकीतिन ने पूछा। उसने वहां खड़े हुए ग्रामवासियों पर एक नज़र डाली।

"नहीं तो! हम आज़ाद हैं," किसी ने कहा।

"तो क्या मठवालों से कोई झगड़ा हो गया था?"

"कैसा झगड़ा?" वहां खड़े हुए लोगों में से एक ने दुखी होकर जवाब दिया। उसके हाथों में उसकी कुल बची-खुची सम्पत्ति, एक जुआ, था – "तुम्हीं देखो न, हमारी जमीन ..."

पास ही एक बड़ा-सा आदमी फटी हुई गुलाबी क़मीज़ पहने, कराहता हुआ, उठने का प्रयत्न कर रहा था। उसने सामने के लोगों पर एक धूमिल-सी दृष्टि डाली और ख़ून से सने हुए हाथ ज़मीन पर टेके और सिर लटकाये पृथ्वी की ओर ताकता हुआ काफ़ी देर तक वहीं बुत बना बैठा रहा।

चारों ओर चुप्पी छा गयी थी।

"चले गये न?" हल्की-सी आवाज़ में उस आदमी ने पूछा।

"चले गये ..." किसी ने धीरे से जवाब दिया, "सभी जगह आग लगा गये हैं ..."

वह आदमी पूरी ताक़त से ज़मीन का सहारा लेते हुए उकड़ूं बैठा और आख़िर किसी का कन्धा पकड़कर पूरा पूरा खड़ा हो गया।

उसके पिटे हुए चेहरे पर लाल लाल बाल ख़ून से चिपक गये थे जिन्हें वह कोहनी से एक ओर हटा रहा था।

"मेरे सगे-संबंधी ... यहीं हैं?"

"यहीं, फ़्योदोर ..."

निकीतिन को इस आदमी पर तरस आ रहा था। ओफ़, बेचारे को मार मारकर भुरता बना दिया। देखने में आदमी बहादुर लगता है, तन्दुरुस्त! उस आदमी ने देखा कि ये लोग उसकी ओर सहानुभूति से देख रहे हैं।

"देख रहे हैं न, किसानों को कैसे लूटते हैं," वह खरखराती-सी आवाज़ में बोला, "आखिर क्यों? किस लिए?"

वह कहते कहते रुका और मठ की दिशा में देखने लगा। फिर मुट्ठी भींचते हुए धमकी के स्वरों में चीख पड़ा—

"सत्यानाश हो आप लोगों का! हां, हां, सत्यानाश!"

आखिर किसी प्रकार निकीतिन ने इन क्न्यातिनो निवासियों से मठवालों के हमले के सारे विवरण मालूम किये। सबसे ज्यादा फ़्योदोर ही बोल रहा था। निकीतिन को यह आदमी पसन्द आया था। वह दूसरों की अपेक्षा अधिक चतुरता से बातचीत कर रहा था।

"मठाधीश ने अन्याय किया है!" क्रोध से निकीतिन कहने लगा, "आखिर हम ऐसे किसी न किसी आदमी को तो ढूंढ़ ही निकालेंगे जो उसकी खबर ले सकेगा, उसे मज़ा चखा सकेगा!"

"कहां?" निराशा और क्रोध से फ़्योदोर ने पूछा।

"क्यों! बड़े राजा जो हैं! उनसे प्रार्थना की जा सकती है!"

"हां, ठीक तो है," कपिलोव ने हां में हां मिलाते हुए कहा, "तुम लोग घुटने मत टेक देना। तुम्हें अपने हक़ के लिए लड़ना चाहिए। मैंने सुना है कि एक बार उग्लीच के मठाधीश ने अपने किसानों पर

टैक्सों की भरमार कर दी थी, नतीजा यह हुआ कि किसानों ने बड़े पादरी से शिकायत की और पादरी ने उनकी रक्षा की।"

"ठीक तो है," अफ़नासी तेज़ पड़ते हुए बोला, "फिर मठाधीश को अपने सारे टैक्स घटाने पड़े। तुम्हें भी वही करना चाहिए।"

वहां एकत्र लोगों में कुछ हलचल-सी हुई और वे कहने लगे–

"मठाधीश के दिमाग़ में जो आता है कर बैठता है ..."

"आखिर दुनिया में कहीं सत्य भी होगा ही!"

"बड़े राजा हमारी रक्षा करेंगे ..."

"हमें बड़े पादरी के पास जाना चाहिए ..."

फ़्योदोर ने सिर उठाया–

"लेकिन वहां जायेंगे कैसे? उसके लिए अर्ज़ी चाहिए ... बिना उसके हम वहां नहीं जा सकते।"

ग्रामवासी उदास हो गये।

"सचमुच हमें अर्ज़ी चाहिए ..."

"बिना उसके हम जा भी कहां सकते हैं?"

"और उसकी क़ीमत अदा करने के लिए हमारे पास रहा ही क्या है?"

"बस अब एक ही रास्ता बचा है–भीख मांगने का ..."

निकीतिन ने फ़्योदोर के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा–

"अर्ज़ी मैं तुम्हें लिख दूंगा।"

फ़्योदोर ने जैसे विश्वास न करते हुए पूछा–

"सच, तुम लिख दोगे?"

"हां, सच ... इवान," निकीतिन लप्शोव की ओर मुड़ते हुए बोला, "ज़रा नाव तक तो दौड़ जाना और हां मेरे नीले बक्स में से एक कॉपी और दावात तो निकाल लाना।"



"अभी लाया, चाचा अफ़नासी!"

इवान तुरन्त दौड़ गया। निकीतिन और कपिलोव घास पर बैठ गये। क्यातिनो निवासी भी, पहले ही की तरह, उनकी ओर झुके हुए से खड़े रहे।

"लेकिन आप लोग हैं कौन?" फ्योदोर ने प्रश्न किया।

"सौदागर," निकीतिन ने जवाब दिया।

"तो आप लोग ठहरे आज़ाद आदमी," मुंह पर से ख़ून पोंछते और दर्द के कारण आह भरते हुए फ्योदोर बोला – "आपका काम ही क्या? खरीदा-बेचा ... और यहां, देखो न कि ..."

"हां, लेकिन हमारी ज़िन्दगी भी फूलों की सेज नहीं है," कपिलोव ने उसे शान्त करते हुए कहा, "और हमें टैक्स कितने अदा करने पड़ते हैं? फिर कभी कभी हम लुट भी तो जाते हैं ..."

"ठीक है, सौदागरों की ज़िन्दगी ही ऐसी होती है," फ्योदोर ने उदासीनता से हां में हां मिलायी, "आज़ादी मिलने के बाद हममें से भी दो आदमी सौदागर बन गये थे। कहते हैं कि एक तो बड़ा आदमी हो गया था। त्वेर में। प्रोश्का विकेन्त्येव ... आपने सुना है उसके बारे में?"

"नहीं," जैसे कुछ याद करता हुआ, निकीतिन बोला, "मुझे याद नहीं आता।"

"बेशक, आप सब को जान भी कैसे सकते हैं ... त्वेर इतना बड़ा जो है।"

वह चुप हो गया और आग की ओर घूरने लगा। अब मकानों के निचले लट्ठे सुलग रहे थे और राख उड़ रही थी। व्यापारियों ने गांव पर एक नज़र डाली—वह धू धू करता हुआ जल रहा था। उसी समय एक बूढ़ी भी वहीं आ गयी। उसकी भी ख़ासी मरम्मत की गयी थी और अब वह पैर तक मुश्किल से टिका सकती थी। वह फ़्योदोर के पास बैठ गयी और उसके कन्धे को इस तरह स्पर्श करने लगी मानो यह इत्मीनान कर लेना चाहती हो कि फ़्योदोर ज़िन्दा भी है या नहीं। साथ ही उसने व्यापारियों पर भी एक ऐसी नज़र डाली मानो उनका भेद लेना चाहती हो कि ये अजनबी हैं कौन।

"मां?" कपिलोव ने पूछा और उत्तर की प्रतीक्षा न करते हुए कहा—"हां ..."

इसी समय इवान के स्थान पर मिकेशिन नाव पर से आ गया। उसके मुंह में ढेरों धुआं चला गया था और वह खांस रहा था, थूक रहा था। उसके कोट पर एक चिनगारी गिर गयी जिससे उसमें एक छोटा-सा छेद हो गया था। उसने निकीतिन को कॉपी और दावात थमायी और अपना कोट उतारकर खीझ के साथ उसका छेद देखने लगा। वह इस नुक़सान को सहन न कर सका और क्रोध से भभक उठा—

"पिशाच इन सौदागरों को यहां भी ले आये ..."

कपिलोव ने क्रोध से आंखें मिचकाते हुए धीरे से कहा—

"इन बेचारों को देखो! इनके घर-बार स्वाहा हो गये हैं,

लेकिन ये तुम से कम ही चीख रहे हैं। तुम रोते हो एक छेद के लिए..."

"बड़े बेचारे आये," मिकेशिन भुनभुनाया, "यह कोट अभी नया ही तो है, सिर्फ़ चार ही साल तो पहना है ..."

गांव के निवासी निकीतिन के इर्द-गिर्द जमा हो गये और एक दूसरे को टोकते हुए अपनी अपनी बातें कहने लगे—

"वास्का नेमीती के बारे में भी लिख देना। बेचारा तीन बच्चे छोड़ गया है ..."

"सूखी घासवाली खत्तियों के बारे में लिख देना और यह भी कि सारी घास जल गयी।"

"और मवेशियों को मत भूल जाना!"

निकीतिन को मेज़ की जगह एक लट्ठा दे दिया गया था। वह उसी पर कॉपी रखकर, और सिर हिलाते हुए, लिखता गया ...

कोट के छेद की देखभाल कर चुकने के बाद मिकेशिन ने सावधानी से उसकी तह लगायी और गांववालों की ओर देखता हुआ कपिलोव से पूछने लगा—

"लगता है, अर्ज़ी लिखी जा रही है?"

"हां।"

"देखो मुझे इस सबसे कोई सरोकार नहीं। और निकीतिन भी अपनी टांग क्यों अड़ा रहा है, बेमतलब ही तो?"

"बेमतलब क्या?" कपिलोव तेज़ी से मुड़ा और कहने लगा, "यहां लोगों को लूटा जो गया है!"

"उन्हें लूटा गया है तो वे रोयें। उनकी मुसीबत अपने सिर लेना ठीक नहीं। फिर यह भी तो पता नहीं कि कौन ठीक कहता है कौन ग़लत। हो सकता है मठाधीश ने ठीक ही किया हो।"

"घर जला दिया, आदमियों को मौत के घाट उतार दिया, बच्चों को मारा-पीटा ... यह सब उसने ठीक किया?"

"अरे तुम मुझपर क्यों बरस रहे हो, मैं तो नहीं ..."

फ़्योदोर की मां जो उनकी बातचीत सुन रही थी, उदासी भरी चुप्पी के साथ मिकेशिन को घूरती रही।

"क्यों घूर रही हो? क्या बात है?" मिकेशिन उसकी निगाह से कुछ सकपकाकर मुस्कराया। "आखिर बात क्या है? लगता है कि आप लोग संकट में हैं?"

बूढ़ी न तो कुछ बोली ही और न उसने अपनी आंखें ही मिकेशिन पर से हटायीं।

"मैं जा रहा हूं!" जाने के लिए तैयार मिकेशिन बोल उठा, "लगता है बुढ़िया सठिया गयी है... हम तो नाव में रहेंगे पर तुम सब जल्दी चले आना... यहां का काम-धाम निपटाकर..."

वह शीघ्र ही पगडंडी पर आ गया और इधर-उधर नज़र डालते और फिर पीछे देखते हुए, जैसे दौड़ने लगा।

बूढ़ी ने एक ठंढी सांस ली और फिर कपिलोव की ओर नज़र फेरती हुई कहने लगी—

"वह तुम्हारे साथ है?"

"हां," अनिच्छा से कपिलोव को स्वीकार करना पड़ा।

"मुझे उसपर तरस आता है," दर्द से सिर हिलाती हुई वह बोली, "वह रहेगा कैसे? बेचारा अकेला है!"

जिसका मकान जल गया था, जिसे इतनी मार पड़ी थी, वही बूढ़ी, मिकेशिन पर दया दिखा रही थी! इस अप्रत्याशित दया-प्रदर्शन से कपिलोव के रोमांच खड़े हो गये।

...किसी तरह निकीतिन ने लिखना खत्म किया। उसकी लिखावट

एक जैसी न थी, कोई अक्षर कहीं जा रहा था, कोई कहीं। कई जगहों पर निव ने काग़ज़ तक फाड़ दिया था। उसने काग़ज़ की स्याही पर फूंक मारी ताकि लेख जल्दी सूख जाये। क्न्यातिनो निवासी उसके ओंठों की ओर बड़ी श्रद्धा से देखने लगे।

"सुनना चाहते हो, मैं पढ़ रहा हूं ..."

निकीतिन ने दोनों हाथों से काग़ज़ पकड़कर पढ़ना शुरू किया –

"हम, क्न्यातिनो निवासी किसान, आप, बड़े राजा, से करबद्ध प्रार्थना करते हैं कि आप बरीस और ग्लेब के मठाधीश पेरफ़ीली से हमारी रक्षा करें। न जाने कब से हमारे खेतों और चरागाहों पर इस मठाधीश के दांत थे। अब उसने उनपर क़ब्ज़ा करने के लिए अपना क़दम बढ़ाया है ..."

पढ़ना बन्द कर उसने सिर उठाया –

"सारी बातें आ गयीं इसमें?"

"हां! हां!"

"सब ठीक है!"

निकीतिन ने अर्ज़ी फ़्योदोर को दे दी। फ़्योदोर ने अपने हाथ पोंछे, सावधानी से काग़ज़ लिया और उत्सुक नेत्रों से उसकी काली काली पंक्तियों की ओर देखने लगा। ग्रामवासियों में से एक युवा स्त्री अपने फैले हुए हाथ में एक छोटा-सा थैला लिये दिखाई दी।

"हमारी ओर से ये थोड़े-से अंडे स्वीकार करो। ये बच रहे थे ..."

निकीतिन दो क़दम पीछे हट गया।

"यह कर क्या रही हो? क्या मैं कुधर्मी हूं जो तुमसे कुछ लूंगा?"



वह स्त्री थैला वैसे ही अपने हाथ में लिये रही। कपिलोव उसकी बग़ल में आया, अधिकारपूर्वक किन्तु प्यार से उसका हाथ झुकाया और स्त्री को एक क़दम पीछे हटा दिया।

"भगवान को क्रोध मत दिलाओ, सुन्दरी ... अच्छा, दोस्तो, नमस्ते। ईश्वर तुम्हें सफलता दे! अफ़नासी, चलो चलें।"

"ठहरो," निकीतिन ने उसे रोकते हुए कहा, "फ़्योदोर, तुम कभी त्वेर गये हो?"

"नहीं।"

"जब जाओ तो वहां निकीतिन का मकान पूछ लेना। और जब तक तुम्हारा कोई फ़ैसला न हो जाये तब तक वहीं रहना।"

दुखती हुई पीठ के बावजूद फ़्योदोर ने ज़मीन तक झुककर उसका अभिवादन किया। इस समय तक आग ठंढी पड़ चुकी थी। हवा से काली काली राख उड़ उड़कर हरी घास पर बैठती जा रही थी। ग्रामवासी व्यापारियों को नाव तक पहुंचाने आये। सभी लोग, किनारे पर खड़े, नाव को नदी में बढ़ते हुए देर तक देखते रहे। इन लोगों में फ़्योदोर का हट्टा-कट्टा जिस्म दूर से ही साफ़ दिखाई पड़ रहा था ...

"तो ऐसे हमने शुरू किया है अपना सफ़र," मिकेशिन बोरों पर बैठा, और इधर-उधर निगाहें नचाता हुआ गुस्से में भुनभुनाता रहा, "अगर हमने ऐसे ही सफ़र किया तब तो मुनाफ़े की बात सपना हो

जायेगी, सपना। हमारा काम है तिजारत करना, न कि दूसरों के मामलों में दखल देना ... अगर हम ऐसा ही करते रहे तो फिर देखना आगे कितनी मुसीबतें आती हैं।"

"बन्द करो अपनी बकवास!" कपिलोव ने उसे रोकते हुए कहा, "ऐसी बातें सुनना भी शर्म की बात है।"

"तो मत सुनो!" मिकेशिन भौंक पड़ा, "रक्षक, पैग़म्बर! जब खुद चक्कर में आयें तो सारे छक्के-पंजे भूल जायें!"

"अच्छा, अच्छा!" निकीतिन चिल्लाया, "तुम डरते क्यों हो? तुम्हें कौनसा चक्कर दिखाई पड़ रहा है? उन गांववासियों का पक्ष सत्य का था!"

लेकिन मिकेशिन देर तक बड़बड़ाता रहा और तभी चुप हुआ जब अपने कोट के छेद में रफ़ू करने लगा। फिर इस काम में वह पूरी तरह व्यस्त हो गया।

"चाचा अफ़नासी!" नाव के पिछले भाग में निकीतिन के पास जाते हुए इवान धीरे से बोला, "क्या उन किसानों को सफलता मिलेगी?"

"मिलनी चाहिए," इवान के गम्भीर चेहरे की ओर देखते हुए निकीतिन ने उत्तर दिया, "हां, ज़रूर मिलनी चाहिए ... जानते हो इवान, किसान सब का आधार है। उसे लूटना-खसोटना गुनाह है। और जहां तक सामन्तों और मठवासियों की बात है ..."

और बिना बात पूरी किये उसने हाथ हिलाया। इवान ने निकीतिन की ओर देखा और चुप हो गया।

"तुम ... अभी हो ही कितने से!" निकीतिन सस्नेह उसके बारे में सोचने लगा, "अभी तुमने दुनिया देखी कहां है ... लेकिन खैर, हो सकता है कि यह तुम्हारे लिए अच्छा ही हो।"

वह लेटा रहा और कोट सिर तक खींचते हुए अपनी आंखें बन्द

कर लीं। आखिर आदमी सभी बातों पर तो दिमाग़ दौड़ा नहीं सकता और अगर दौड़ाये भी तो उससे होगा क्या?

तय यह हुआ था कि त्वेर के व्यापारी नीज्नी नोवगोरद में मास्को दूतावास के लोगों के साथ मिलेंगे और उनके साथ शेमाखा की ओर रवाना होंगे। नीज्नी नोवगोरद के मार्ग में कल्याज़िन, येरोस्लाव्ल, प्लेस और कोस्त्रोमा नगर पड़ते थे। नाव दूसरे दिन कल्याज़िन पहुंच गयी। यहां उन्होंने पहला बड़ा पड़ाव डाला और नाव एक छोटी-सी नदी, जाब्न्या, में खड़ी करके व्यापारी नगर की सैर के लिए निकल गये। सभी इस नगर से अच्छी तरह परिचित थे – जिरहसाज़ इल्या तक। यहां उनकी भेंट अन्य त्वेर निवासियों से और मास्को के उन लोगों से हुई जो पिछले सप्ताह वहां दिमित्रोव से आये थे।

मास्को के इन्हीं लोगों ने इस बात की भी पुष्टि की थी कि मास्को दूतावास शेमाखा जा रहा है और त्वेर के व्यापारी समय रहते उनसे नीज्नी नोवगोरद में मिल सकेंगे।

सूर्यास्त होते होते व्यापारी पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के नाम से प्रसिद्ध एक मठ में गये। मठ जाब्न्या के पास ही था। व्यापारियों ने अपने मार्ग की सफलता के लिए प्रार्थना करायी और एक रूबल चढ़ा दिया। मठाधीश मकारी ने अन्य पादरियों के साथ प्रार्थना कर चुकने के बाद व्यापारियों को बुलाया, उनसे त्वेर स्थित स्पास्क मठ का हाल-चाल पूछा, और उत्सुकता से एक सवाल और कर दिया – "हमें अपने लोगों के लिए चोग़े बनवाने हैं, आप लोगों के पास कोई मामूली क़िस्म का कपड़ा तो न होगा? बस सौ हाथ चाहिए।" और जब उसे मालूम हुआ कि उन व्यापारियों के पास वैसा कपड़ा नहीं तो उसने उन्हें यात्रा की सफलता का आशीर्वचन देते हुए विदा किया।

व्यापारियों ने उग्लीच में पड़ाव न डालने का ही निश्चय किया था – उनके पास समय जो न था। वे दोपहर तक इस छोटे-से नगर से होते हुए गुज़र गये। शाम होते होते तो वे और भी कई मील आगे बढ़ सकते। उग्लीच में जानने-समझने योग्य था ही क्या? बेशक यह नगर सुन्दर था – वोल्गा के पास स्थित दुर्ग और मठों की सफ़ेद दीवालें, ऊंचे ऊंचे घंटाघर, हरियाली में डूबी हुई मकानों की छतें। वह कल्याज़िन जैसा न था। कल्याज़िन इतना रमणीक तो न था किन्तु उसमें ज़िन्दगी थी, चहलपहल थी। उग्लीच में सिर्फ़ प्रार्थनाएं सुनी जा सकती थीं या फिर भक्तिनियों की टर्र टर्र।

उन्होंने यरोस्लाव्ल में आधा दिन, पूरी रात और दूसरा आधा दिन बिताया। नगर में पहुंचने से कुछ ही पहले वे हहराते हुए तूफ़ान में फंस गये। आसमान पर घने घने बादल मंडरा रहे थे, फिर बिजली, बादलों की गड़गड़ाहट और मूसलधार पानी। उनकी नाव बड़ी कठिनाई से ही टिकी रह सकी। ठहरने के लिए क़ायदे की जगह खोजने का भी उनके पास समय न था। वे सारी गठरियां नाव के पिछले हिस्से में खींच लाये और उन्हें कनवास से ढक दिया। खुद उन्होंने बोरों से अपने को ढक लिया और अपने ऊपर फ़ालतू पाल तान लिया। वे इसी दशा में सलीब बनाते और मन ही मन भगवान की प्रार्थना करते तब तक बैठे रहे जब तक अन्धाकुप्प न हो गया। दो बार तो नाव ऐसी उलटी-पलटी कि लगा जैसे मौत सामने हो। बिल्कुल पास ही बिजली चमकी और लगा जैसे ज़मीन और आसमान दो दो भागों में बंट गये हों। सभी भीग गये थे, सभी ठिठुर रहे थे, सभी में डर समा गया था। शाम होते होते तूफ़ान आगे बढ़ गया, लेकिन नाव से बाहर निकलना उचित न था – आखिर उस सुनसान नदी तट पर वे अपना माल-असबाब किसके भरोसे छोड़ते? फलतः भोर होने तक वे आग

जलाये बैठे और ठिठुरते रहे। दो गठरियां भीग गयी थीं। उन्हें खोला गया, उनका फ़र और लिनेन सुखाया गया, फिर उन्हें जहां का तहां रखकर सी दिया गया। किसी प्रकार वे साढ़े तीन बजे तक वहीं उठा-धरी करते रहे, वे शहर में न गये। उन्होंने कुछ खाना ख़रीद लिया, खाया, पिया और बस यरोस्लाव्ल में यही कुछ हुआ।

कोस्त्रोमा में उन्होंने पूरा दिन बिताया था। यहीं से वह इलाक़ा शुरू होता था जिसपर मास्को का अधिकार था। उन्हें मास्को के राजा अलेक्सान्द्र की सनद की ज़रूरत थी। इस सनद का शुल्क था आधा रूबल, उसे जल्दी प्राप्त करने के लिए मुंशियों और राजा को दी जानेवाली घूस थी तीन रूबल। यह भी अच्छा हुआ कि उन्होंने वहां कंजूसी नहीं की। उन्हीं के साथ ही नोवगोरद निवासियों को भी सनद लेनी थी। उन्होंने पैसा दांतों से पकड़ा। नतीजा यह हुआ कि उन्हें तीन दिनों तक लटकना पड़ा और राजा की ड्योढ़ी की हाज़िरी बजाते बजाते उनके पैर सूज आये। लेकिन परिणाम कुछ न निकला। आख़िर उन्हें पैसा देना ही पड़ा, और इसमें एक दिन और बरबाद हो गया – तब कहीं उन्हें सनद मिली। कंजूसी का यही फल होता है!

उन्हें राजा के भी दर्शन हो गये। लम्बा-सा क़द, सींक-सलाई जैसा बदन, उसपर डिज़ाइनदार कोट, जवाहरात के आभूषण। वह सिर झुकाये, और लोगों की ओर न देखता हुआ, क्रेमलिन से निकलकर कहीं जा रहा था। उसके आगे आगे कुछ अश्वारोही, भीड़ हटाते हुए, उसका रास्ता साफ़ करते हुए चल रहे थे। कोई रास्ते में आ गया और घोड़े की लपेट में आकर ज़मीन पर गिर पड़ा। राजा ने उसकी ओर देखा और नाराज़गी से ओंठ भींच लिये।

व्यापारी प्लेस से होते हुए अन्ततः अगले सप्ताह नीज्नी नोवगोरद पहुंच गये। निकीतिन तो इस नगर को पहचान तक न सका। तीन

साल की अवधि कम तो होती नहीं! उस समय सारा नगर लकड़ी का ही दिखाई पड़ता था लेकिन अब दुर्ग की पत्थरों की नवनिर्मित सफ़ेद दीवालें दूर से ही दिखाई दे रही थीं। उसकी ऊंची ऊंची दांतेदार मीनारें, मीनारों में पतले छेद, जिनकी आड़ से गोलाबारी की जाती थी – इन सब से दुर्ग की मज़बूती प्रकट हो रही थी।

इस दुर्ग पर दांत रखनेवाले तातारों के दांत खट्टे हो जायेंगे – ऐसा मज़बूत था यह दुर्ग। जय हो मास्को, तेरी! लेकिन इस दुर्ग के निर्माण में शायद त्वेरवालों का भी कम योग न था। त्वेर के राजगीर सारे रूस में प्रसिद्ध थे। उन्होंने भी इस दुर्ग के निर्माण में योग दिया है।

अफ़नासी ने नीज्नी के नये क्रेमलिन की मन ही मन प्रशंसा की, ऐसी प्रशंसा मानो उसका निर्माण स्वयं उसी ने किया है, मानो उसकी नयी दीवालों की शक्ति उसकी रक्षा के लिए अपने हाथ फैलाये खड़ी है, मानो वह आज भी उसकी रक्षा कर रही है और भविष्य में भी करती रहेगी।

"लो, भगवान की कृपा से हम नगर में पहुंच गये!" इवान लप्शोव के कन्धे थपथपाते हुए निकीतिन बोला, "तुम्हें यहां गिरजों में जाने का काफ़ी समय मिलेगा!"

रास्ते-भर निकीतिन को सबसे अधिक चिन्ता रही इवान की। और इसका एकमात्र कारण यह न था कि इवान के पिता ने उससे आग्रह किया था अपितु वह स्वयं उसे चाहता था – क्यातिनो में इवान ने जो कुछ किया था उसका निकीतिन पर अच्छा प्रभाव पड़ा था। निकीतिन की समझ में यही न आ रहा था कि इवान के पिता ने अपने बेटे को विचित्र क्यों कहा था। इवान बातूनी न था। एकांतप्रिय था, जिज्ञासु था। इवान को रास्ते में याद आयी – निकीतिन ने उसे भारत के संबंध में एक पुस्तक देने का वादा किया था। फलतः उसने किताब

मांग ली और उसे बड़े ध्यान से पढ़ा, समझा और छोटे छोटे ब्यौरों पर मनन किया और उसके बाद उसपर सोच-विचार करने लगा।

एक बार निकीतिन ने सूर्य और सितारों की गति के बारे में समझाया था। इवान बड़े ध्यान से उसकी बातें सुनता और समझता रहता था।

आखिर इवान में कौनसी विचित्रता थी?

सचमुच निकीतिन ने इस बात पर ध्यान दिया था कि इवान प्रायः नाव में खड़ा खड़ा सामने से गुज़र जानेवाले जंगलों और चरागाहों को मन्त्रमुग्ध-सा देखा करता और अगर उसे एक क्षण का भी अवकाश मिल जाता तो एकांत में जा बैठता। आखिर ऐसा क्यों? एक दिन निकीतिन ने इवान को तट पर बैठे देखा। वह भी आकर उसके पीछे खड़ा हो गया।

इवान, निकीतिन को न देख सका। वह अपने घुटनों पर एक तख़्ती रखे उसपर कोयले से कुछ रूप-रेखाएं बना रहा था। धीरे धीरे तख़्ती पर बल खाती हुई वोल्गा और लट्ठों का एक बेड़ा उभर आया। बेड़े का एक सिरा वोल्गा के रेतीले तट पर था। पास ही एक गाड़ी बेड़े की ओर बढ़ रही थी, कुछ आगे एक वन भी दिखाई पड़ रहा था।

निकीतिन सांस रोके वहीं खड़ा रहा—तख़्ती पर उभरा हुआ चित्र उसे वास्तविक जैसा लग रहा था। उसे लगा कि वह भी उसी दृश्यावली का एक अंग है और सभी कुछ यथावत् देख रहा है।

"तो यह बात है!" वह धीरे से बोला और आकर उसी के पास उकड़ूं बैठ गया।

इवान ने जैसे डरकर तख़्ती अपनी आस्तीन से ढंक ली और भय और चिन्ता से निकीतिन की ओर देखने लगा।

"क्या हो रहा है?"



"कुछ नहीं... यों ही..."

"डरो मत... मैंने तुम्हारा हुनर देख लिया है।"

इवान ने आंखें नीची कीं और चुप हो गया।

"इसी लिए तुम्हारे पिता तुम्हें डांटते-फटकारते थे, हैं न?" तख़्ती की ओर देखता और सिर हिलाता हुआ निकीतिन दोस्ताना ढंग से कहने लगा।

इवान ने सिर उठाया। वह फीकी-सी हंसी हंस दिया और फिर फुसफुसाते हुए जल्दी जल्दी कहने लगा—

"किसी से कहना मत, चाचा अफ़नासी..."

इस प्रार्थना से निकीतिन का मन जैसे भर आया।

"अच्छा अच्छा, मगर मुझे एक बार फिर तो दिखाना," वह बोला।

इवान ने देखा कि उसका चित्र निकीतिन को पसन्द है। इसी लिए वह उसे चित्र दिखाते हुए कहने लगा—

"मैं अक्सर ऐसी ही रेखाएं खींचा करता हूं... दुनिया कैसी ख़ूबसूरत है, उसे जुगा कर रखना चाहता हूं, लोगों तक पहुंचाना चाहता हूं, उन्हें धरती का गदराता सौन्दर्य दिखाना चाहता हूं!"



"हां, लोगों को धरती का वह सौन्दर्य प्रायः दिखाई भी तो नहीं पड़ता। वे उसकी ओर से अपनी आंखें मूंदे रहते हैं।"

"ठीक, वे उसे नहीं देख पाते!" उत्सुकता से इवान ने सहमति प्रकट की। ऐसा लगता था मानो निकीतिन ने उसके मन की ही बात कही थी। "वे हैं कि झगड़े-टंटे में पड़े रहते हैं, दुखी रहते हैं। लेकिन इस दुनिया में सौन्दर्य जैसे फूटा पड़ता है! मैं समझता हूं कि अगर लोग इस सौन्दर्य को देखें और उसमें रम जायें तो ज़िन्दगी उनके लिए फूलों की सेज हो जाये।"

"हूं..." विस्मित-सी आंखें ऊपर उठाते हुए निकीतिन धीरे से बोला, "मैं नहीं जानता... शायद तुम ठीक कहते हो। कितना अच्छा चित्र बनाया है तुमने। जी होता है तुम्हारी वोल्गा में एक डुबकी लगाऊं।"

अपनी प्रशंसा सुनकर इवान के गाल लाल पड़ गये। उसे कोई जवाब न सूझा। फिर भी कह चला—

"मैंने कुछ प्रतिमाएं भी बनायी हैं... घर पर।"

दो ऐसी प्रतिमाएं अभी भी उसके पास थीं। इनमें से एक उस ने अफ़नासी को दिखायी। इस प्रतिमा में कांटों का सेहरा बांधे ईसामसीह को दिखाया गया था।

"बहुत अच्छा," अफ़नासी बोला, "और दूसरी भी तो दिखाओ?"

इवान ने निकीतिन पर एक अजीब-सी नज़र डाली और शर्माते हुए कहने लगा–

"वह अभी तक पूरी नहीं हुई..."

"अच्छा जब पूरी हो जाये तब दिखा देना," निकीतिन बोला, "तुम्हारे ईसा तो ऐसे लगते हैं कि अब बोले, तब बोले।"

उस दिन के बाद से निकीतिन इवान का वैसा ही ख्याल रखने लगा मानो वह उसके अपने हृदय का टुकड़ा हो और इवान भी उसके इशारों पर चलने को तैयार हो गया। उसने संकल्प कर लिया था कि वह निकीतिन की हर आज्ञा का पालन करेगा।

इल्या कोज़लोव यात्रा-भर बड़ा प्रसन्न रहा–हर अफ़वाह पर विश्वास करता, आश्चर्य प्रकट करता और जहां जहां व्यापारी ठहरते वहां का कोना कोना छान आता, आंखें ठंढी करता। ऐसा लगता जैसे उसे दुनिया की हर चीज़ में रुचि हो– कल्याज़िन मठ के पादरी की धीर गम्भीर आवाज़ में, राजा अलेक्सान्द्र के कोट में लगे हुए रत्नों में और यरोस्लाव्ल के गिरजों में।

"जब लौटूंगा तब इन सारी बातों का ज़िक्र किया करूंगा," इल्या कोज़लोव का दिल नाच उठा और उसके ओंठों पर मुस्कराहट खेलने लगी, "मेरा बेटा तो मुझसे सवालों की झड़ी ही लगा देगा– तरह तरह के सवाल। वह हर बात जानना जो चाहता है। हाथ का काम सीख ही रहा है, अभी से लोहे की चीज़ें बना लेता है। अभी उसकी उम्र ही क्या–कोई तेरह साल।"

कभी कभी तो वह अपने बेटे की तारीफ़ों के पुल बांधता। कहता कि ऐसा चतुर है उसका बेटा, इतनी होशियार है उसकी बीवी, वग़ैरह वग़ैरह, और ये बातें इतनी लम्बी चलतीं कि कपिलोव के कान पकने लगते और वह उसका मज़ाक़ बनाने लगता।

"सुनो इल्या," वह ज़िरहसाज़ को रोकते हुए पूछ बैठता, "कहते हैं कि तुम्हारी बस्ती में एक बकरी है जो स्तोत्र-पाठ करती है। वह तुम्हारी ही तो नहीं है?"

"नहीं, नहीं..." खुशमिज़ाज ज़िरहसाज़ घबड़ाकर कहने लगता।

"परन्तु मैं तो समझता था वह तुम्हारी है। तुम्हारे पास जो है भला वह दूसरों को कहां नसीब! तुम्हारा सब कुछ दूसरों से बीस है," आंखों में शरारत भरे कपिलोव बड़ी गम्भीरता से कहने लगता।

निकीतिन, इवान और मिकेशिन क़हक़हे लगाने लगते। ज़िरहसाज़ के गाल लाल हो उठते और वह गर्दन लटका लेता।

कुछ देर तक वह चुप रहता मगर उससे रहाइश न होती और वह फिर अपनी हांकना शुरू कर देता–

"मेरा बेटा..."

और ये शब्द मुंह से निकलते ही सहसा वह भयभीत इधर-उधर देखने लग जाता। निकीतिन भी अपने को मुश्किल से ही संभाल पाता और उसकी हंसी गले में अटक जाती। कुछ भी हो ज़िरहसाज़ दिल का अच्छा था। वह हाथ हिलाकर हंस दिया करता। और अगर वह फिर अपनी अनन्त कथा शुरू करने लगता तो कपिलोव पीछे से सींग दिखाने लगता और फिर इल्या जैसे उसकी हां में हां मिलाता हुआ हाथ उठा देता और कहने लगता–

"हां, वह बकरी! वह तो मेरी ही थी..."

... नीज्नी नोवगोरद आ गया। सभी खुशी से खिल उठे। लेकिन घाट पर पहुंचते ही उन्हें पता चला कि ज़ार इवान का राजदूत वसीली पापीन पहले ही जा चुका है।

इस ख़बर से व्यापारियों पर जैसे बिजली टूट पड़ी। मिकेशिन तो बड़बड़ाने लगा–"दूसरों के लिए तो आंखें बिछाये रहते हैं, पर अपनों की याद तक नहीं आती।"

"अरे तुम लोग तो उदास हो गये? क्यों?" निकीतिन ने अपने साथियों को खुश करने का प्रयत्न करते हुए कहा, "राजदूत चला गया, कोई बात नहीं, कोई मुसीबत तो हम पर आ नहीं गयी। हम खुद ही जायेंगे। हमें गवर्नर के पास जाना चाहिए, शायद हमें उधर जानेवाले कुछ लोगों का पता चल जाये... कोई बात नहीं!"

व्यापारी नाव से सामान उतारने लगे। उन्होंने निकीतिन और कपिलोव के एक परिचित व्यापारी के साथ ठहरने का निश्चय किया था। उसी व्यापारी के यहां सारा सामान रखा जाना था। अफ़नासी तुरन्त वहां से गवर्नर के यहां चला गया।

जब लौटा तो उसने कई ऐसी खबरें सुनायीं जिनसे व्यापारी गदगद हो गये–शेमाखा के राजा फ़रुख़-यासार का राजदूत शीघ्र ही इधर से होकर गुज़रेगा। मुंशियों ने तो यही बताया था। अन्ततः, व्यापारियों ने निश्चय किया कि वे शेमाखा राजदूत की प्रतीक्षा करेंगे। उनका विचार था कि उसके साथ यात्रा करना सुरक्षा के ख्याल से लाभदायक है, इसलिए कि उनका रास्ता आलतिन ओरदा से होकर है।

तीसरा अध्याय

मास्को के प्रवेश द्वार-सा नीज्नी नोवगोरद–वोल्गा पर स्थित एक अभेद्य दुर्ग था। बेशक व्यापारियों को पापीन के निकल जाने का जो समाचार मिला था उससे उन्हें काफ़ी निराशा हुई थी। लेकिन

फिर उन्हें जो जो खबरें मिलीं उससे उन्हें बराबर खुशी ही होती गयी – सभी समाचार जैसे उनका उत्साह बढ़ा रहे थे।

व्यापारी, ऊनी कपड़ों के सौदागर खरीतोन्येव के यहां ठहरे थे। गोल चेहरा, सुग्रर जैसी ग्रांखें, बुज़दिल जैसा ग्रादमी। ग्रभी कुछ ही समय पहले वह भी नाव पर सराय गया था। दूसरे सभी बुज़दिलों की तरह उसे भी एक बात पसन्द थी यानी यह कि वह खौफ़नाक कहानियां सुनाकर दूसरों को भयभीत किया करता था। लेकिन खुद उसका भी यही कहना था कि रास्ते में कोई डर नहीं।

नदी के नीचे की ग्रोर से प्रतिदिन नये नये क़ाफ़िले ग्राया करते – ग्रारमीनियाई भी, ईरानी भी। काज़ान से दो जहाज़ ग्राये थे। नदी तट के रास्ते तातार वहां के बाज़ार में कोई दो हज़ार घोड़े भी लाये थे।

यही लगता था कि ग्रानेवाली शरद शान्ति की वाहिका है। बस एक ही खराबी थी – राजदूत को ग्राने में देर लग रही थी।

प्रायः निकीतिन दुर्ग की दीवालों की ग्रोर चला जाता। वहां तरह तरह के ग्राकार-प्रकार तांबे की तोपें थीं जिनपर लोहे के मोटे मोटे हुक चढ़े थे। तोपों के निकट पहरेदार खड़े खड़े ऊंघा करते थे। निकीतिन देर तक वल्याज़्मा की दिशा में देखा करता, किन्तु किसी ग्राती हुई नाव का पाल उसे नज़र न ग्राता।

निकीतिन निराश हो गया। इन्तज़ार करते करते दूसरा हफ़्ता चल रहा था। बेकार ही उन लोगों का पैसा खर्च होता जा रहा था। यद्यपि उनका मेज़बान कोई शिकवा-शिकायत न करता, फिर भी उसपर इतने ग्रादमियों के रहने-ठहरने का बोझ रखना निकीतिन को उचित न लग रहा था।

निकीतिन ने अपने साथियों को अकेले ही यात्रा पर चल देने के लिए समझाया, लेकिन मिकेशिन बैल की तरह अड़ा रहा और कपिलोव और कोज़लोव बहाने बनाते रहे। फलतः अफ़नासी ने सारी कोशिशें छोड़ दीं।

"अच्छी बात है, तो फिर हम इन्तज़ार करेंगे!"

बैठे-ठाले व्यापारी करते ही क्या? वे गिरजे की प्रायः सभी प्रार्थनाओं में उपस्थित रहने और देर देर तक बाज़ार में मटरगश्ती करने लगे। नोवगोरद में ऐसी कोई बात न थी जिसे देखकर उन्हें कुछ आश्चर्य होता, दांतों तले उंगली दबानी पड़ती – सामन्तों के मकानों की त्वेर जैसी नक़्क़ाशीदार छतें, नौकरखाने और तरह तरह की कोठरियां; नगर की पतली पतली गलियां और उनके दोनों ओर बने हुए ऊंचे ऊंचे बाड़े, पत्थरों और लकड़ियों के बने छोटे-बड़े गिरजे।

बेशक, बाज़ार शानदार था। यहां नये दुर्ग की दीवालों के पास लगी हुई छतदार छोटी छोटी दुकानों की कई क़तारें थीं, जिनमें दुनिया की हर चीज़ मिल सकती थी – तुर्की के मुलायम मुलायम बेजोड़ क़ालीन; फ़ारस के विचित्र रंगों वाले कपड़े; पानी जैसे पारदर्शी, दूध जैसे सफ़ेद और दूसरे रंगों के वेनिस के शीशे – नीले, गुलाबी, हरे, सोने के काम के और कटावदार ऐसे ऐसे शीशे जिनपर फूल, घास और लम्बी लम्बी पूंछवाली चिड़ियों की आकृतियां बनी हुई थीं; गेनोआ के हथियार, जिनका रूप-रंग, कारीगरी और सुन्दरता देखकर मनुष्य यह भी भूल जाता था कि उनमें मौत बरपा कर देने की भी ताक़त है; मूल्यवान रत्न, जो गाहकों को दूकानों के भीतरी कमरों में दिखाये जाते थे, उत्तम कारीगरीवाले आरमीनियाई कंटर; सुगन्धित शराबें जो आधी दुनिया का सफ़र करने के बाद वहां पहुंची थीं।

यह सारी चीजें ऐसे भिन्न भिन्न रंगों में चमचमा रही थीं कि सहसा उनपर आंखें ही न टिक पातीं। और वे महंगी भी इतनी थीं कि लोभी मिकेशिन चौंधिया गया था।

इतना ही नहीं, गेनोआ के थैले के लापरवाही से गन्दी ज़मीन पर फेंके हुए साधारण चिथड़े तक का लोगों की निगाहों में मूल्य था, इसलिए कि वे समझते थे कि वह दुनिया के उस हिस्से से आया है जिसे उन्होंने कभी नहीं देखा, इसलिए कि वह एक ऐसे देश की ओर संकेत कर रहा है जिसका जीवन रोचक और रहस्यमय था।

इस बाज़ार में क्या नहीं था—तरह तरह के कंटर, घोड़ों के सोने के कामवाले खूबसूरत साज़, मनुष्यों और पशुओं के मुख-चित्रों से जड़े हुए तरह तरह के शीशे, चमचमाती हुई नंगी तलवारें और उनकी खूबसूरत मूठें। पर इन सबसे विचित्र एक और चीज थी—वहां एकत्र तरह तरह के लोग।

कहीं किसी घोड़ा बेचनेवाले तातार का चिक्कट लबादा बिना किसी भेदभाव के किसी वेनिस निवासी के लाल और क़ीमती चोगे से टकरा रहा था, कहीं किसी नोवगोरद निवासी की लाल टोपी फ़ारस की पगड़ियों के बीच झलक रही थी, कहीं भेड़ की खाल का कोट पहने हुए कोई आदमी किसी मखमली टोपीवाले से मोलतोल कर रहा था, तो कहीं पूर्वी देशों की रंगीन दाढ़ीवाला कोई आदमी किसी मठवासी से बतिया रहा था।

और वे क्या क्या बातें कर रहे थे? घोड़ों की हिनहिनाहट, फेरीवालों की चिल्ल-पों, लोगों की गाली-गलौज और तरह तरह की ध्वनियों से पूर्ण भिन्न भाषाभाषी मनुष्यों के उस समुद्र में यह जान सकना हंसी-खेल न था!

बाज़ार में तरह तरह की खबरें आया करती थीं – यहां आप यह तक जान सकते थे कि काज़ान के खान की सबसे छोटी बीवी को क्या क्या पसन्द है; यहां आपको शीराज़ के मौसम, गेनोआ निवासियों के बास्फ़ोरस पर हमले, मास्को के राजा द्वारा भविष्य में निर्मित किये जानेवाले भवन के संबंध में उसके इरादे और नोवगोरद की आम सभा के अन्तिम फ़ैसले तक के बारे में जानकारी हो सकती थी। नतीजा यह कि कभी बाज़ार-भाव तेज हो जाते थे और कभी मन्दे, पुराने सौदे ख़त्म हो जाते थे और नये पटते थे, जिन व्यापारियों को ये ख़बरें पहले मिलती थीं उनकी चांदी थी और बाक़ी व्यापारियों का बेड़ा ग़र्क़ हो जाता था।

निकीतिन को लग रहा था जैसे वह काफ़ी समय तक जंगलों की ख़ाक छान चुकने के बाद आख़िर किसी ऐसी जगह आ गया हो जहां से उसे दूर दूर तक फैले हुए भूखंड दिखाई पड़ रहे हों।

किन्तु वहां उसने किसी प्रकार की तिजारत न की। वह बाज़ार जाता और वहां तरह तरह की चीज़ें देखकर अपना अनुभव बढ़ाता। एक दिन ख़रीतोन्येव को घोड़ा खरीदने की धुन सवार हुई। वह बाज़ार चल दिया। निकीतिन भी उसके साथ हो लिया। घोड़ों की हाट, बाजार के अन्त में एक बड़े-से चौरस चरागाह पर लगती थी। निकीतिन ने भी घोड़े ख़रीदे थे लेकिन वह घोड़ों का माहिर न था और प्रायः लोगों की सलाह पर ही घोड़े ख़रीदता था। ख़रीतोन्येव इस मामले में उस्ताद था। निकीतिन घोड़ों के बारे में उसकी बातें बड़े ध्यान से सुना करता – वह फ़ौरन जान जाता कि घोड़ा कैसा है, जवान है या बूढ़ा, उसे नशा तो नहीं खिलाया गया है, वह अंधा तो नहीं है, उसका मिज़ाज कैसा है...

"तुम इस धोखे में न आना कि घोड़ा कैसे पटपटाकर पैर रख रहा है," खरीतोन्येव जैसे अपनी बात से सन्तुष्ट होकर बोलता ही रहा, "मेरे भाई, इसका मतलब है कि उसे कुछ पिला दिया गया है। अजी घोड़े खरीदना किसी ऐरे-ग़ैरे का काम नहीं। इसके लिए तो राई-रत्ती जानना पड़ता है, यह देखो, वह देखो... अच्छा, देखना मैं कैसे खरीदता हूं।"

खरीतोन्येव का आत्मप्रशंसा का स्वर निकीतिन को अच्छा न लगा, फिर भी वह बड़े संयम से सुनता रहा – "उसे कहने दो। आखिर यह भी तो एक कला है। न जाने कब काम आ जाये।"

एक युवक तातार एक घोड़े की लगाम पकड़े खड़ा था। घोड़े का रंग भूरा था और वह बराबर थरथराता जा रहा था। अफ़नासी ने घोड़े की लाल लाल आंखों, सिकुड़ी हुई गर्दन और काठी पर एक निगाह डाली और खरीतोन्येव को कुहनियाते हुए संकेत करने लगा। परन्तु खरीतोन्येव ने निषेध-सा करते हुए अपना सिर हिला दिया –

"मुझे घोड़ा लेना है गाड़ी के लिए, सिपाहियों की तरह उसपर चढ़ने के लिए नहीं।"

फिर भी अफ़नासी ने ख़रीतोन्येव से घोड़े को सिर से पैर तक देखने के लिए कहा। खरीतोन्येव बड़ी स्थिरता से आगे बढ़ा और जैसे अनिच्छा से मुड़कर ऐसे देखने लगा जैसे संकोच कर रहा हो। फिर हाथ हिलाते हुए तातार से पूछने लगा –

"यह घोड़ा बूढ़ा तो नहीं?"

"बूढ़ा? बूढ़ा क्यों होगा? देखते नहीं – अभी चार ही साल का तो है!"

खरीतोन्येव घोड़े के इर्द-गिर्द दाहिने-बायें घूमा और उसकी चमचमाती हुई काठी थपथपाते हुए कहने लगा –

"क्या लोगे इसका ?"

"जब घोड़ा देखा ही नहीं तो क़ीमत क्यों पूछते हो ?" तातार ने तेज़ ग्रावाज़ में कहा, "देखो तो पहले! वह ख़ुद ही सब कुछ बता देगा!"

"हां, हां, ग्रच्छा देखता हूं," ख़रीतोन्येव धीरे से बोला, "देखता हूं... पिंडलियां तो सूजी लगती हैं।"

"झूठ बोलते हो !"

"झूठ क्यों! ग्रौर दांत तो लगता है जैसे रिते हुए हैं।"

तातार ने घोड़े का सिर ग्रौर उसका ऊपरी ग्रोंठ उठाया ग्रौर उसका जवड़ा खोला, "दांत तो इसके जवान लड़की के जैसे हैं! चाहो तो हाथ में ले लो!"

उनके चारों ग्रोर उत्सुक लोगों की एक भीड़-सी लग गयी। ख़रीतोन्येव ने ग्रास्तीनें चढ़ायीं, ग्रपना हाथ घोड़े के मुंह में डाला ग्रौर वहां जाने क्या क्या टटोलने लगा; फिर हाथ कोट से पोंछ लिया। उसने घोड़े की नाक में फूंका, एक एक करके चारों खुरों का निरीक्षण किया ग्रौर जोड़ों का मुग्राइना करने लगा।

तातार क्रोध से ग्रौर जैसे उसका उपहास करते हुए उसकी सारी चालें देखता रहा। उत्सुक लोग सिमटकर ख़रीतोन्येव के पास ग्रा गये। निकीतिन समझ रहा था कि ख़रीतोन्येव तातार पर हंसेगा लेकिन ख़रीतोन्येव तो उसकी ग्राशा के विपरीत गम्भीरतापूर्वक कहने लगा –

"ग्रच्छा घोड़ा है, बहुत ग्रच्छा!"

तातार ने विजय के गर्व से सिर ऊपर उठाया।

"ठीक कहते हो! तो फिर ख़रीद लो न! घोड़ा पसन्द ग्रा गया है तो ले लो, सस्ते में दे दूंगा!"

उसने क़ीमत बतायी और फिर एक सर्द आह-सी भरते हुए खरीतोन्येव कहने लगा –

"नहीं। नहीं ले सकता।"

"क्यों? महंगा है? कहो न, महंगा लगता है क्या?!"

"नहीं, महंगा नहीं है। सस्ता ही है। लेकिन मेरी जेब में इतने भी पैसे नहीं।"

"फिर क्यों खोपड़ी चरी मेरी? बेचारे घोड़े को भी कितने नाच नचा डाले! उल्लू का पट्ठा!" तातार बड़बड़ाने लगा।

खरीतोन्येव निकीतिन को आंख मारता और जैसे खेद से अपने दोनों हाथ हिलाता हुआ वहां से चल दिया। उत्सुक लोगों के पीछे से पीली टोपीवाला एक आदमी घोड़े की ओर बढ़ता हुआ दिखाई दिया।

"सचमुच घोड़ा बढ़िया है?" ख़रीतोन्येव के साथ कुछ आगे निकल जाने पर निकीतिन ने सवाल किया।

"हां, वैसे बुरा तो नहीं," उसने जवाब दिया, "पर उसके पिछले पैर टेढ़े हैं। उसके लिए इतनी क़ीमत देना ठीक नहीं।"

"लेकिन तुमने तो कहा था घोड़ा सस्ता है!"

"उस पीली टोपीवाले को देखा था तुमने?" ख़रीतोन्येव ने प्रश्न किया, "मैंने तो उसे सुनाने के लिए कहा था। यह बेवक़ूफ़ सामन्तों के लिए घोड़े ख़रीदता है। जानता-बूझता कुछ भी नहीं – तो ख़रीदे वही यह घोड़ा! सामन्तों के पैसे बरबाद हों तो मुझे नहीं खलता!"

दोनों हंस दिये।

दोनों ने एक घोड़ा खरीदा। बड़ा सुन्दर तो न था लेकिन था बड़ा मज़बूत। ख़रीतोन्येव ने निकीतिन को उसका निरीक्षण करने

के लिए कहा। अफ़नासी ने घोड़े की उम्र और उसके दोष सभी कुछ ठीक ठीक बता दिये।

"हुं-ह!" खरीतोन्येव ने आश्चर्य से कहा, "देखनेवाले तुम्हें देखते ही कह पड़ेंगे कि तुम आलतिन ओरदा में खेले-खाले वहीं बड़े हुए!"

अफ़नासी गदगद हो गया।

इवान लप्शोव था कि उसे गिरजों में ही मज़ा आता। वह वहां प्रतिमाएं, धातु के वर्तन और दीवाल-चित्र आदि जाने क्या क्या देखा-भाला करता। जब निकीतिन को थोड़ा-बहुत समय मिल गया तो वह इवान को दूकान पर ले गया और उसे समुद्र पार से आयी हुई चीज़ें दिखाने-भलाने लगा।

डिज़ाइनदार शीशे, छोटी छोटी अद्भुत पुतलियां और चित्रित तश्तरियां देखकर इवान की आंखें चौंधिया गयीं।

एक दूकानदार गेनोआवासी था। दुबला-पतला, हड्डी का ढांचा। वह इवान की एक एक गति देख देखकर मुस्करा रहा था—इवान उसकी चीज़ें बड़ी सावधानी से छूता, उन्हें ऐसे देखता मानो उनका हर रंग, चमचमाता हुआ प्रत्येक वस्त्र, पात्रों पर मुस्करा उठनेवाली पच्चीकारी अपने मन की गहराई में घोल लेना चाहता हो।

"'भाई?" गेनोआ निवासी ने इवान की ओर सिर हिलाते हुए पूछा।

"भाई, भाई!" घबड़ा-से गये इवान के कन्धे थपथपाते हुए निकीतिन ने मज़ाक़-सा करते हुए कहा।

निकीतिन और गेनोआ निवासी दूकानदार विचित्र खिचड़ी भाषा में बातचीत करने लगे। इस भाषा का जन्म कास्पियन और काला सागर जानेवाले व्यापारी मार्गों पर ही कहीं हुआ होगा। इसमें

8—1576

रूसी, तातारी, इतालवी और फ़ारसी भाषाओं के शब्दों का खुलकर प्रयोग होता था। यह एक ऐसी भाषा थी जिसे छोटे-मोटे सौदागर तक जानते थे।

दूकानदार दोनों को दूकान के भीतरी कमरे में ले गया, फिर उकड़ूं बैठा जिससे उसके घुटनों से खर्र खर्र की आवाज़ आने लगी। दूकानदार ने सन्दूक़ में से कोई चीज़ निकाली और बड़ी सावधानी से उसे खोलने लगा। यह तांबे की एक नमकदानी थी और कला की दृष्टि से एक अद्भुत चीज़—उसपर एक हंस के सामने एक नग्न औरत का चित्र नक़्क़ाशी करके बनाया गया था।

निकीतिन ने इवान की ओर देखा और चकित-सा रह गया। इवान का मुंह खुला रह गया और गाल लाल हो उठे। गेनोआवासी ने नमकदानी युवक व्यापारी के हाथों में थमा दी। इवान ने उसे हथेली पर रखकर चारों ओर घुमाया।

निकीतिन ने भी नमकदानी पर एक दृष्टि डाली। क्या कहने! कितनी अद्भुत चीज़ है यह अगरचे इसे इसलिए मेज़ पर नहीं रखा जा सकता कि इसपर बेशर्मी की मुहर लगी है।

किन्तु इवान के चेहरे से स्पष्ट था कि उसकी निगाह निकीतिन से अधिक गहराई में देख रही थी।

"हंस ने तो लड़की को डरा दिया है," लज्जा से लाल पड़ते हुए इवान ने कहा, "और वह खुद निडर, अटल..."

"यह कारीगरी है किसके हाथ की?" निकीतिन ने प्रश्न किया।

"एक बड़े कारीगर की। उसे मौत के घाट उतार दिया गया था।"

"क्यों? क्या किया था उसने?"

"वेनिस के ग़रीबों ने बग़ावत की थी और उसने उनका साथ दिया था।"

"सामन्तों के ख़िलाफ़, है न?"

"हां, सामन्तों के ख़िलाफ़!"

अब निकीतिन नमकदानी को एक नये पहलू से देखने लगा। उसपर एक गर्वीले हंस और एक व्यथित स्त्री के नमूने बने हुए थे।

"बेचारा कारीगर!" निकीतिन ने सिर हिलाते हुए कहा।

"उसकी खुशक़िस्मती ही कहो कि एकदम मारा गया!" सहसा गेनोआवासी घृणा से कहने लगा, "विजेताओं को बराबर यह अफ़सोस बना रहा कि वे उसे ज़िन्दा न पकड़ सके। वे शैतान उसे सीसे की छतवाली मीनार में बन्द करके रखते जहां बीस बीस साल के जवान एक एक साल में बूढ़े हो जाते हैं!"

गेनोआवासी शान्त हो गया और नमकदानी मख़मल में लपेटते हुए इवान से पूछने लगा–

"तुम भी ऐसी ऐसी पच्चीकारी कर सकते हो?"

"यह चित्र बनाता है!" निकीतिन ने कहा।

"प्रतिमाएं? मैंने तुम्हारे कलाकार अन्द्रेई रुब्लेव की कृतियां देखी थीं। उसे धरती से प्यार नहीं है, उसने जैसे उससे अपना संबंध ही तोड़ लिया है। उसके देवी-देवता मनुष्यों के कष्टों को नहीं जानते हैं... तुम भी प्रतिमाएं बनाते हो?"

इवान ने हामी-सी भरते हुए सिर हिलाया।

"लाओ न फिर उन्हें मेरे पास। मुझे भी दिखाओ। मेरा नाम है निकोलो पिचारदी। मेरे दोस्तों का ख्याल है कि मैं छेनी और तूलिका का भेद समझता हूं, उनका रहस्य जानता हूं।"

निकीतिन और इवान चल दिये। निकीतिन ने उसे समझाया कि यह गेनोग्रावासी वेनिसवासियों से इसलिए घृणा करता है कि इन लोगों ने सारी समुद्री तिजारत अपने हाथों में ले ली थी। बस, निकोलो की बात यहीं रह गयी। पर कुछ समय बाद निकोलो ने खुद जाकर अफ़नासी को बाज़ार में ढूंढ लिया। उसने उसे दूर से ही पुकारा।

निकोलो भीड़ को चीरते हुए अफ़नासी की ओर बढ़ने लगा। उसकी टोपी ज़मीन पर गिरते गिरते बची। वह वसन्ती गौरैया की तरह चहकता-सा लग रहा था।

"मैंने तुम्हारे भाई की बनायी प्रतिमाएं देखी थीं!" निकोलो चिल्ला पड़ा, "इस कला में वह अभी बच्चा ही है। हां, हां, बच्चा! लेकिन फिर भी जिसने उसकी माता मरियम को देखा है वह बिना उसे प्यार किये नहीं रह सकता!"

बात इतनी अप्रत्याशित थी कि अफ़नासी क़हक़हा लगाकर हंसने लगा।

"निकोलो, तुम ज़रूरत से ज़्यादा तारीफ़ कर रहे हो उसकी... माता मरियम... प्यार... हे भगवान!"

निकीतिन देर तक हंसता रहा। निकोलो ने हाथ झुला दिये— लग रहा था जैसे वह किसी बात से भन्ना गया हो।

अफ़नासी ने अपना हाथ पिचारदी के कंधे पर रख दिया—

"भाई माफ़ करना मेरी यह हंसी। तुमने बड़ी अद्भुत बातें की हैं... तुम्हें प्रतिमा पसन्द आयी? आयी न?"

निकोलो ने इवान की कला पर आश्चर्य प्रकट करते हुए पूरे विश्वास से कहा—

"उसे जरूरत है अभ्यास की, सीख की!"

"तो क्या उसे इसके लिए किसी मठ में जाना चाहिए ?" निकीतिन ने गम्भीरतापूर्वक प्रश्न किया।

"क्यों, मठ में क्यों ?"

"फिर इस प्रकार की प्रतिमाएं बनाने की शिक्षा और कहां दी जाती है ?"

गेनोआवासी जैसे विचारों में डूब गया।

"मठों में हरगिज़ नहीं !" वह बोला, "मैं तुम्हारे मठों और मठवासियों को अच्छी तरह जानता हूं। उनके चक्कर में पड़कर अपनी प्रतिभा तक से हाथ धो बैठेगा वह ! समझे ? उसकी माता मरियम के गालों में आज जो लाली है, जवानी की जो गहराहट है, जो उभार है, वह भी न दिखाई देगा ... नहीं उसे मठों में भेजना ठीक नहीं!"

ईसाई धर्म के बारे में बोलने का इस विदेशी का अजीब ढंग निकीतिन को बुरा लगा।

"हमारे मठों में एक से एक बुद्धिमान, एक से एक विद्वान लोग पड़े हैं," उसने रुखाई से जवाब दिया, "वे पाप नहीं करते, लोगों को पुण्य का रास्ता दिखाते हैं।"

और फिर आगे कहता गया—

"और फिर ज़ारग्राद से पादरी और धर्मात्मा लोग हमारे यहां मास्को आते हैं, तुम्हारे यहां नहीं जाते !"

गेनोआवासी ने अफ़नासी और इल्या कोज़लोव पर एक दयापूर्ण-सी नज़र डाली और कोट का लैसदार कालर पकड़े और टोपी सिर पर सरकाते हुए न जाने क्या क्या बड़बड़ाता हुआ एक ओर चल दिया।

शाम के समय अफ़नासी लप्शोव के पास आया और जैसे अपने पर संयम न रखते हुए उससे ऐसे बातें करने लगा मानो उससे नाराज़ हो—

"अपनी प्रतिमा बेचना चाहते हो? यही बात है न? बाज़ार ले गये थे उसे?"

इवान के गाल लाल हो गये। उसने सिर झुका लिया और हाथ मलने लगा।

"मुझे भी तो दिखाओ! देखूं तो कौन सुरख़ाब के पर लगे हैं उसमें?"

इवान ने कोई जवाब न दिया बल्कि सिर और भी झुका लिया।

आख़िर वह ऐसा हठ कर क्यों रहा है? अफ़नासी इसका कारण न जान सका।

सुबह निकीतिन ने, हमेशा की तरह, इवान को अपने पास बुलाया। इवान ख़ुश हो गया, उसके ओंठों पर मधुर मुस्कराहट हमेशा की ही तरह खेल रही थी।

"ख़ैर, छोड़ भी दो इस प्रतिमा की बात!" अफ़नासी ने सोचा।

उनकी दोस्ती फिर जैसी की तैसी हो गयी और ऐसा लगा जैसे उस क्षणिक मनमुटाव का उनपर कोई असर न पड़ा हो। किन्तु निकीतिन गेनोआवासी के प्रशंसा भरे शब्दों को न भूल सका और उसे उसकी याद हो आयी। हां, अब वह इवान को भी आदर की दृष्टि से देखता।

इस परिवर्तन ने इवान को खिन्न कर दिया था।

किन्तु नीज्नी नोवगोरद में सब कुछ शान्ति से ही चलता रहा हो, ऐसी बात न थी। वहां कभी कभी अप्रिय घटनाएं भी हो जाती थीं।

एक दिन बाज़ार में बड़ी भीड़ थी। सभी उत्सुक थे, सभी चिन्तित। निकीतिन, लप्शोव, मिकेशिन और इल्या कोज़लोव भी इसी भीड़ में मिल गये थे। वे कन्धे झटकारते और हाथों से भीड़ चीरते हुए

आगे बढ़ रहे थे। आखिर वे एक ऐसी जगह पहुंचे जहां किसी को मौत की सज़ा दी जानी थी।

सज़ा कार्रवाइयां शुरू हो चुकी थीं। एक आदमी सफ़ेद सूती पैजामा और क़मीज़ पहने लकड़ी के तख्ते के बीचोंबीच खड़ा था। वह एक खम्भे से बंधा था। उसका मुंह उसी खम्भे की तरफ़ था।

तख्ते के एक किनारे एक मुंशी खड़ा था – चुपचाप, शान्त। उसके हाथ में एक सफ़ेद हुक्म था, जो पढ़ा जा चुका था।

वहीं एक जल्लाद भी था। नाटा क़द, चपटी नाक, शरीर पर लाल क़मीज़। वह भीड़ में किसी को देखकर खिलखिलाकर हंस रहा था और अपना कोड़ा सटकार रहा था। मुंशी ने सिर हिलाकर इशारा किया। जल्लाद ने बाल फटकारे, हंसी बन्द की, दो बार नाक सिसकारी, दूरी का मन ही मन अन्दाज़ लगाया और कोड़ा उठाया...

जैसे ही मज़बूत चमड़े का कोड़ा हवा में सर्राया कि भीड़ को सांप सूंघ गया। खम्भे से बंधा हुआ आदमी कांपा और उसके मुंह से एक भयानक चीख़ निकल गयी। कोड़े के पहले ही हाथ ने उसकी खाल उधेड़ दी थी। ख़ून के छींटे तख्ते पर छलक आये थे और उस बदनसीब के पैजामे पर जम गये थे।

"मर जायेगा..." निकीतिन के पास खड़ा हुआ कोई आदमी बोल उठा। उसकी आवाज़ में दर्द था। देखने में दुबला-पतला और छोटा, शरीर पर किसानों वाला भूरा-सा कोट, झुर्रियोंदार छोटा सा चेहरा। लगता था जैसे सर्दी से कांप रहा हो। वह तख्ते पर आंखें गड़ाये था।

"इसे क्यों मारा जा रहा है?" निकीतिन ने उस आदमी से प्रश्न किया।

आदमी ने आंखें बन्द कर लीं और कोई जवाब न दिया। दूसरी बार फिर कोड़ा सर्राया और फिर पिटते हुए आदमी के मुंह से एक दर्दनाक चीख़ निकली, लेकिन वह तुरन्त ही चुप्पी में बदल गयी ...

उस आदमी ने आंखें खोलीं। उसका चेहरा फक पड़ गया था।

"दूसरी बार से तो ..." उसने कहना शुरू ही किया था कि कोड़ा एक बार फिर सर्रा उठा, किन्तु इस बार कोई चीख़ न सुनाई पड़ी।

"आखिर क्यों?" अपने ऊपर सलीब का निशान बनाते हुए निकीतिन ने एक बार फिर पूछा।

"यह एक सौदागर था," धीरे धीरे उस आदमी ने कहना शुरू किया, "उसने उधार माल लिया था, लेकिन तिजारत में उसे नुक़सान हुआ और उसके पास मालिक को देने के लिए एक पाई तक न रह गयी। अब इसके लिए एक ही रास्ता था – गुलाम बनना। लेकिन उसका भरा-पूरा परिवार है। उसने भाग जाने का निश्चय किया, पर पकड़ा गया ..."

निकीतिन सलीब का निशान बनाने लगा।

"हे भगवान, रक्षा करो!" उसके ओंठ जैसे स्वयं बुदबुदा उठे।

जब मुजरिम के बन्धन खोले गये तो उसका पिटा हुआ शरीर खम्भे के पास गिर पड़ा। जल्लाद ने उसके मुर्दे-से शरीर पर भेड़ की एक तुरत उतारी हुई खाल उढ़ा दी।

"इससे वह बचेगा नहीं," आदमी दुखी होकर बोल उठा, "हत्यारे ने मारते मारते उसकी हड्डियां तक पीस डालीं ... अब तो उसे क़ब्र में ही दम मिलेगा ..."

भीड़ धीरे धीरे छंटने लगी। निकीतिन ने इवान पर एक नज़र डाली। उसका चेहरा पीला पड़ गया था। निकीतिन ने उसके कंधे ज़ोर से दबाये।

मिकेशिन भी फक पड़ चुका था। उसके ओंठ तेज़ी से कांप रहे थे। उसके मुंह से एक शब्द तक न निकल रहा था।

जब वे उस भयानक तख्ते से दूर हट आये, तब कहीं इवान का मुंह खुला। बोला –

"उसे भागना नहीं था – कितनी दर्दनाक है ऐसी मौत!"

"और गुलाम बनकर रहना तो और भी बुरा है!" निकीतिन ने बात काटी। उसकी आवाज़ तेज़ थी, "बिना आज़ादी के आदमी वैसा ही है जैसे बिना पंख का पंछी।"

इस दर्दनाक कांड के बाद निकीतिन उदास-सा रहने लगा। शेरवानशाह के राजदूत की प्रतीक्षा करते करते वह थक गया था। रोज़ प्रातःकाल शरद की सरदी और अब-तब हो जानेवाली बूंदा-बांदी से वह और भी परेशान हो उठा था। नगर में जैसे उदासी छा गयी थी।

"आख़िर यह दुष्ट हसन-बेग कहां गया?" व्यापारी ग़ुस्से में एक दूसरे से कहने लगते।

मिकेशिन ने खीसें निकालना छोड़ दिया, वह अपने सहयात्रियों के साथ अधिक समय रहने लगा। वह प्रायः निकीतिन की ओर आंखें गड़ाये देखा करता। सहसा एक दिन उसने, अकेले में, निकीतिन के सामने यह स्वीकार किया कि काशीन ने उसे इसी लिए यहां भेजा है कि वह सारी तिजारत पर निगाह रखे... और निकीतिन ने मिकेशिन का कालर पकड़कर इतने ज़ोर से झटका कि मिकेशिन के दांत तक बज उठे।

"तो मैं चोर हूं, है न?" निकीतिन ज़ोर से चिल्लाया, "तुम्हें शरम कैसे नहीं आती?"

लेकिन मिकेशिन अपनी बात कहता गया –

"सुनो ... हम काशीन को अपने दाम बतायेंगे, और जो कुछ बचेगा वह हम ले लेंगे, आधा आधा बांट लेंगे। है न? मैं कह दूंगा कि यही दाम ठीक थे ..."

निकीतिन मकान में चहलक़दमी कर रहा था। उसने जैसे ही ये शब्द सुने कि जहां का तहां खड़ा रह गया, सन्न।

"क्या?!"

मिकेशिन बेंच पर दूर कोने की ओर धीरे धीरे बढ़ा और कंधों के बीच सिर को समेटते हुए दोनों हाथों से मुंह ढक लिया।

"हे-हे," उसकी डरी-सी आवाज़ जैसे झनझना रही थी, "ओह. तो तुमने मेरी बात का यक़ीन भी कर लिया, मैं तो मज़ाक़ ही कर रहा था ... सुना तुमने ... हे-हे! मैं तो मज़ाक़ कर रहा था!"

"अच्छा!" निकीतिन ने बात काटते हुए कहा, "लौटने पर त्वेर में बात करेंगे।"

इस घटना के तीसरे दिन खरीतोन्येव घाट से होता हुआ घर आया, बोला –

"राजदूत आ गया! लेकिन अकेला नहीं है। उसके साथ मास्को के व्यापारी भी हैं और पूर्वी देशों के भी। उसका अपना जहाज़ बड़े रईसाना ढंग का है। तीस तो बाज़ हैं उसपर, जो तोहफ़े के रूप में शेरवानशाह की पत्नी के लिए भेजे गये हैं!"

अपने मित्रों के साथ निकीतिन तुरन्त वोल्गा की ओर चल दिया। ये लोग खुशक़िस्मत थे। मास्को के व्यापारियों में कपिलोव को अपना एक परिचित भी मिल गया, जिसने अफ़नासी का परिचय अपने दल के प्रधान से करा दिया। प्रधान का नाम था मत्वेई र्यावोव। उसकी आंखें थीं काली काली और वह खुद था बैल जैसा।

निकीतिन को र्‌यावोव अच्छा लगा। र्‌याबोव हट्टा-कट्टा आदमी था। क़ायदे का और वक़्त का पाबन्द। एक एक बात तौलकर कहता। उसने त्वेर के व्यापारी की बातें बड़े ध्यान से सुनीं। और जब उसे यह मालूम हुआ कि अफ़नासी को तातारी भाषा अच्छी तरह आती है, वह कई बार ज़ारग्राद भी जा चुका है तो वह कुछ सोचने लगा।

"अच्छा सुनो," र्‌याबोव बोला, "बात यह है ... हम सिर्फ़ तिजारत के लिए ही तो जा नहीं रहे हैं। हमें बड़े राजा ने आज्ञा दी है कि हम ख़्वालीन के पार जाकर वहां के बाज़ारों में बिकनेवाला माल देखें-भालें। हमें तो वे रास्ते जानने हैं जिनसे होकर सभी प्रकार का क़ीमती माल लाया ले जाया जाता है। अगरचे हमारे साथ काफ़ी आदमी हैं, सभी एक से एक बहादुर, एक से एक साहसी, लेकिन अभी तक उन्होंने भी दूर देशों की यात्रा नहीं की है। मैं तुम्हें अपने साथ ले चलूंगा। लेकिन तुम्हें यह तय करना है कि तुम लोग हमारे साथ सराय के पार तक चलोगे, ख़्वालीन के पार? अगर भगवान ने हमें सफलता दी तो बड़े राजा हमें अच्छा-ख़ासा इनाम भी देंगे।"

निकीतिन ने सिर ही पर अपनी टोपी सरकायी। किसे उम्मीद थी कि हमें ऐसा मौक़ा भी मिलेगा! उसने तो सोचा था कि उसे सराय में आगे चलने के लिए अपने लोगों को मनाना पड़ेगा। लेकिन ये तो ख़ुद उसे ख़्वालीन चलने को कह रहे हैं। शाबाश, मास्कोवासियो!

"देख लेंगे!" निकीतिन बोला, "मेरी क्या, मेरे लिए कोई बात नहीं, पर मैं आगे चलने के लिए अपने साथियों को समझाऊंगा।"

"मुझे कोई जल्दी नहीं है," उससे सहमति-सी प्रकट करते हुए र्‌याबोव बोला।

फ़िलहाल उन्होंने साथ साथ रहने का निश्चय किया। र्‌याबोव ने भी वचन दिया कि वह राजदूत को समझा देगा।



निकीतिन ने सफ़र की तैयारियां शुरू कर दीं। सभी ख़ुश थे। ख़रीतोन्येव भी प्रसन्न था। उसने सौदागरों को एक घोड़ा दिया और उसकी पत्नी ने उनके लिए समोसे, मांस, लपसी वग़ैरह तैयार की।

"खा लो, खा लो," वह कहती रही, "जब अलाव के इर्द-गिर्द बैठोगे तो पेट में चूहे कूदेंगे।"

त्वेर-व्यापारियों की नाव, ज़ंजीर से बंधी हुई, अपनी जगह पर ही खड़ी थी। उसका आधा भाग पानी में और आधा रेत में था। व्यापारियों ने उसे पानी में सरकाया, उसपर माल लादा और मास्को के लोगों से बातचीत करने लगे। अन्ततः उन्हें गवर्नर की गाड़ी आती दिखाई दी। उसमें से धीरे धीरे हसन-बेग बाहर निकला। शरीर पर फ़र का क़ीमती कोट, सिर पर पगड़ी। फिर किसी नौकर की मदद से वह एक कमज़ोर-सी पुलिया पर होता हुआ अपने जहाज़ में चला गया।

"अच्छा, चलें, मेरे शेरो," निकीतिन चिल्लाया, "हम चल पड़े अपने सफ़र को। हे भगवान तेरे बड़े बड़े हाथ हैं! नोवगोरद, तेरे आगे हम सिर झुकाते हैं, तेरी मिट्टी को नमस्कार!"

इस सुबह, जब निकीतिन नीज्नी के सफ़ेद क्रेमलिन के आगे सिर

झुकाये खड़ा था, उस समय यह विचार उसके मन में भी न आया था कि वह नोवगोरद की मिट्टी को अन्तिम बार प्रणाम कर रहा है, अन्तिम बार।

यात्री दोपहर होते होते तातारों की राजधानी सराय-बेर्के पहुंच गये।

मत्वेई र्‍यावोव ने नीज्नी में जो कुछ कहा था उससे सभी व्यापारी व्याकुल हो रहे थे।

निकीतिन ने मत्वेई की बात ज्यों की त्यों अपने साथियों को कह सुनायी – यह तक न छिपाया कि उसने ख्वालीन से भी आगे जाने का निश्चय कर लिया है। बस उसने यह बात ज़रूर न कही कि उसने उससे भी पहले ख्वालीन से आगे जाने की सोची थी।

पहले तो त्वेर के व्यापारी यही समझते रहे कि अगर सराय तक पहुंच जायें तो भी बहुत है। और चाहिए भी क्या! किन्तु रास्तों में कोई मुसीबत न आयी और इससे उनके दिलों में सफलता की आशा अंगड़ाइयां लेने लगी। फिर, पूर्व के व्यापारियों की कहानियों और मास्को के सौदागरों के वादों ने व्यापारियों के दिलों में और भी उत्तेजना पैदा कर दी थी।

जीगुली के बाद एक पड़ाव पर व्यापारियों ने निश्चय किया – यदि सराय तक कोई खास घटना न घटी तो फिर हम लोग हसन-बेग के साथ दरबंद तक जायेंगे। ज़्यादा समय भी बरबाद न होगा और अच्छा लाभ भी कमा लेंगे। वहां रूसी माल आलतिन ओरदा की बनिस्बत ड्योढ़ी क़ीमत पर बिकता है।

धूप और हवा के कारण इवान लप्शोव का चेहरा खुरखुरा हो रहा था। वह नाव की नासिका में ही बैठा रहा। वह चौरस स्तेप के बीच बसे हुए इस विचित्र नगर – सराय-बेर्के – को आंख-भर देख लेना चाहता था। इस नगर के बारे में उसने न जाने क्या क्या सुन रखा था।

दूर से सराय सफ़ेद और रंगीन टीलों की क़तार की तरह लगता। ये टीले एक के बाद एक, तरतीब से, रखे हुए से लग रहे थे। नगर के चारों ओर कोई दीवालें न थीं मानो वहां के रहनेवालों को दुश्मनों का कोई डर ही न हो। यह बात तत्काल ही त्वेर व्यापारियों की आंखों में बस गयी। उन्हें वहां कोई हरियाली न दिखाई दी और इस कारण उन्हें और भी आश्चर्य हुआ। थोड़े-से पेड़ इधर-उधर खड़े थे।

नाव कुछ और आगे बढ़ी और नगर की सफ़ेद सफ़ेद मीनारें दिखाई पड़ने लगीं। इवान ने उन्हें गिनना शुरू किया और साठ तक गिन गया, लेकिन फिर उसकी गिनती गड़बड़ा गयी और वह आगे न गिन सका। एक मीनार पर उसे सोने के कामवाला सलीब भी दिखाई दिया। वह उसे बड़े ध्यान से देखने लगा। ओह, यह तो ईसाइयों का सलीब है।

"चाचा अफ़नासी, गिरजा!" इवान ज़ोर से बोल पड़ा।

निकीतिन ने वहीं से जवाब दिया—

"और ध्यान से देखो तो तुम्हें वहां के बड़े पादरी भी दिखाई देंगे!"

"अच्छा, सचमुच, हमारा पादरी?"

"हां, यहीं, यहां सब कुछ है।"

"और खान का घर कहां है?"

"उधर जहां तीन मसजिदें हैं। वह ऊंची-सी छत देख रहे हो?"

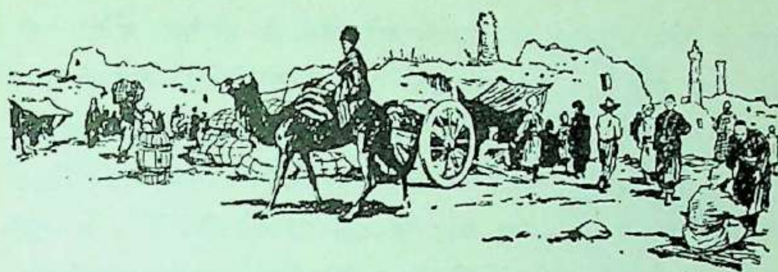
"हां, हां, वह?"

"वही। कैसा सुन्दर मकान है। चारों तरफ़ बाग़-बगीचे।"

"लकड़ी का है?"

"नहीं, उनके मकान पत्थर के होते हैं।"

"फिर वह ठंडा नहीं रहता क्या?"



"आखिर वहां लोग रहते ही हैं। और वह दाहिनी तरफ़ जहां नीला गुम्बद है, देख रहे हो क्या है – बाज़ार। ऐसे वहां कई बाज़ार हैं।"

"यहां रूसी भी रहते हैं? यह पराया मुल्क जो है ..."

"इस नगर के एक हिस्से में हमारे ही लोग रहते हैं। नगर में हर क़ौम के लिए एक एक हिस्सा अलग कर दिया गया है।"

"कितनी विचित्र बात है ... मैं तो यहां कभी न रह सकूं।"

"ज़रूरत आ पड़े तो रहोगे ही। यहां जो रूसी रह रहे हैं उनमें बड़े मालदार भी हैं।"

"तातारों के साथ रहते हैं?"

नावें घाट पर लगीं और लोग उनकी तरफ़ बढ़ने लगे। तांबे जैसा रंग, अधनंगे तातार मुसाफ़िरों से उनके बोरे लेने की कोशिशें कर रहे थे और दोनों हाथ झुलाते हुए नगर की तरफ़ इशारे कर रहे थे।

"इन्हें हटाओ भी यहां से!" निकीतिन चिल्लाया, "हमें किसी की मदद की ज़रूरत नहीं। ये करेंगे क्या – माल चुरायेंगे!"

हमाल बड़बड़ाते हुए वहां से हट गये। उनकी जगह दूसरे लोग आ डटे। ये भी तातार थे। तरह तरह के आदमी – कुछ फ़रों के कोट और चोग़े पहने हुए थे, तो कुछ की नाक टेढ़ी थी, रंग सांवला था

श्रौर वे सफ़ेद कपड़ों में थे। उनकी बातें किसी के भी पल्ले न पड़ रही थीं। कुछ दूसरे भेड़ की खालवाली ऊंची ऊंची टोपियां डाटे थे ...

लाल बालों वाले वास्का ने एक को धक्का मारकर हकाल दिया।

"हम सौदागरी नहीं करते!" निकीतिन चिल्लाया, "हम सौदागरी नहीं करते! हम खान के यहां जा रहे हैं!"

खान का नाम सुनते ही वे उजड्ड सौदागर इधर-उधर तितर-बितर हो गये।

राजदूत ने निकीतिन श्रौर र्याबोव को बुला भेजा। अफ़नासी श्रौर मत्वेई ने अपने साथियों को हुक्म दिया कि वे नावें छोड़कर कहीं न जायें, श्रौर खुद राजदूतवाले जहाज़ में चले गये। डेक पर वास्का बाज़ों के पिंजड़ों पर ढका हुश्रा कपड़ा उतार रहा था श्रौर पक्षियों जैसी बोली बोल रहा था। चारों श्रोर बाज़ों की बीट की गन्ध उड़ रही थी। रूसियों ने एक दूसरे की श्रोर देखा श्रौर हंस दिये।

"राजदूत कैसे मज़े में सफ़र कर रहा है?"

"मैं तो जा रहा हूं शहर में," हसन-बेग बोला, "वहां खान या उसके वज़ीर हमें फ़रमान देंगे श्रौर तब हम लोग आगे का सफ़र कर सकेंगे। तुम्हारे काग़ज़ात कहां हैं?"

निकीतिन श्रौर र्याबोव ने हसन-बेग के हाथों में गोल लिपटे हुए काग़ज़ात थमा दिये।

राजदूत शीघ्र ही वहां से चला गया।

राजदूत के जहाज़ पर से सुनाई पड़नेवाली वास्का की गाली-गलौज व्यापारियों को बड़ी नीरस लग रही थी। वे अपनी नाव पर बैठे नदी पर से किनारे की श्रोर देख देखकर उकता रहे थे, ऊब रहे थे। किनारे पर लोगों की भीड़ थी, लम्बे कानों वाले गधे रेंकते हुए भाग रहे थे श्रौर गम्भीर-से लगनेवाले ऊंट इठलाते हुए चक्कर लगा रहे थे।



"कैसे विचित्र हैं ये जानवर," इवान साश्चर्य बोल उठा।

"सामन्तों जैसे चलते हैं ये," कपिलोव ने हंसते हुए कहा, "इल्या, अच्छा हो अपने बेटे को इनके दर्शन करा दो!"

स्तेप से आनेवाली हवा के साथ धूल भी बहती चली आ रही थी। वे लोग नाव पर बैठे बैठे ऊब चुके थे।

इवान लप्शोव ने किनारे तक जाने के लिए निकीतिन की अनुमति ले ली। और वह चला गया।

दूर से निकीतिन ने इवान को जाते हुए देखा – कैसे एक तातार ने उसे रोका, कैसे उसने उससे कुछ पूछा और कैसे इवान ने जवाब दिया। तातार ने इवान के कंधे थपथपाये और नावों पर तिरछी नज़र डालता हुआ वहां से दूर चला गया।

"इवान, इधर आओ!" अफ़नासी ने उसे पुकारा।

इवान दौड़ता हुआ निकीतिन के पास चला आया।

"क्या बात है?"

"तातार तुमसे क्या पूछ रहा था?"

"यही कि कौन जा रहा है।"

"तुमने क्या कहा?"

"कहा, हम रूस से आये हैं और शेमाख़ा के राजदूत के साथ जा रहे हैं..."

"क्यों कहा?"

"उसने पूछा जो था।"

"कैसे दूध पीते बच्चे हो! किसी से कुछ भी नहीं कहना चाहिए!

तातार को हम लोगों से क्या मतलब ? वे तो हमसे सिर्फ़ पैसा ऐंठना जानते हैं।"

"अगर इतना कह ही दिया तो कौनसी ख़ास बात हो गयी, चाचा अफ़नासी ?"

"तुम नहीं समझते ! यह पराई ज़मीन है, हम विदेश में हैं," निकीतिन सख़्ती से बोला, "यहां हमारे दोस्त कम हैं। यहां तो हमेशा कान खड़े रखना चाहिए..."

इवान परेशान-सा अपनी जगह पर खड़ा रहा। निकीतिन ने मुस्कराते हुए उसकी छाती में हाथ गड़ा दिया —

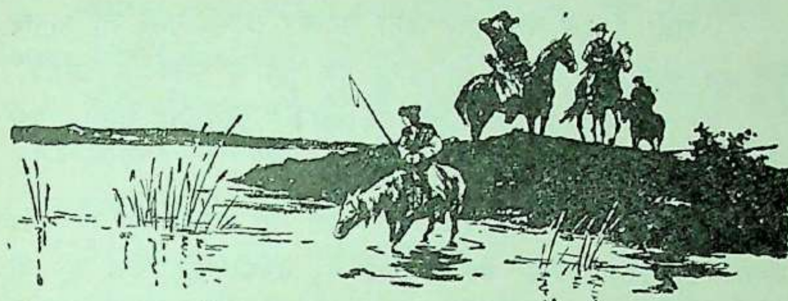
"अच्छा अच्छा, जाओ, मगर दूसरों से कुछ न कहना !"

लप्शोव सिर हिलाता हुआ चल दिया और निकीतिन मत्वेई र्याबोव की बग़ल में वहीं किनारे पर लेटा लेटा सहयात्रियों, कारोबार और गर्मी आदि के बारे में बातचीत करता रहा ...

और उनके क़ाफ़िले में दिलचस्पी रखनेवाले तातार ने बोरों के ढेर के पीछे घूमकर कैसे मुड़कर देखा और जल्दी जल्दी शहर की ओर बढ़ गया, इसपर न तो इवान लप्शोव ने ही ध्यान दिया, न निकीतिन ने ही।

निकीतिन गर्मी से परेशान था और राजदूत की ख़बर का इन्तज़ार करते करते थक गया था। उसने र्याबोव को ऊंघते हुए देखा और कोट से सिर ढकते हुए ख़ुद भी सो गया। कपिलोव ने आकर उसे जगाया।

सूर्य अख़्तूबा नदी के पीछे डूब रहा था और सोनेवालों पर नावों की लम्बी लम्बी परछाइयां पड़ रही थीं। किनारा वीरान हो चुका था। राजदूत लौट आया था और अपने जहाज़ में आराम कर रहा था। कपिलोव ने कहा कि तातारों ने सभी को वहां से आगे जाने



की अनुमति दे दी है, पर राजदूत रात में सफ़र नहीं करना चाहता।

"हम लोग सुबह चलेंगे!" कन्धा मलते हुए निकीतिन शान्ति से बोला, "नदी में नहायेंगे ..."

उन्होंने कुछ खाया-पिया, कुछ आराम किया और फिर कपड़े उतारते हुए पानी में कूद पड़े और बालू रगड़ रगड़कर अपने शरीर का मैल छुड़ाने लगे। मसजिदों से नमाज़ की आवाज़ें आ रही थीं– मुस्लमानों की इबादत शुरू हो चुकी थी।

अंधेरा बढ़ने लगा–सायंकाल की रंगीनी धूमिल पड़ रही थी, आसमान का लाल रंग बैंगनी पड़ रहा था, झुटपुटा छा रहा था।

निकीतिन ने तट पर एक निगाह डाली। पास ही कुछ संदिग्ध-सी आकृतियां चक्कर लगा रही थीं।

निकीतिन ने इल्या को पुकारा–

"अब पहरा देने की तुम्हारी बारी है।"

इल्या ने तीर-कमान लिया, तरकश बांधा और चुपचाप नाव के अगले भाग में बैठ गया।

इवान सोने के लिए नाव के निचले भाग में चला गया और, जैसे आश्चर्य प्रकट करते हुए, कहने लगा–

"रास्ते में हम लोग आग जला जलाकर उसकी गर्मी का आनन्द लेते हुए सोये हैं, लेकिन यहां सोना पड़ रहा है पानी के ऊपर।"

"पराया नगर है, मेरे भाई! पराया!" निकीतिन बोला, "सो जाओ ... बच्चे हो अभी!"

इसी समय चार घुड़सवारों ने अख़्तूबा पार की। गीले घोड़े इन सवारों को रेतीले किनारे तक ले आये थे, उनकी सांस फूल रही थी लेकिन सवार उन्हें दम लेने की भी फ़ुरसत न दे रहे थे और उनपर चाबुक बरसाते हुए उन्हें आगे बढ़ा रहे थे। वे चुप थे मानो ज़ीन से जड़ दिये गये हों। शीघ्र ही वे अंधेरे में ग़ायब हो गये – चांद बादलों के पीछे छिप गया था। घोड़ों की टापें सराय से दूर, और दूर, होती जा रही थीं और वोल्गा के निकट स्तेप में विलीन हो रही थीं। घास की सरसराहट में तो वे और भी डूब गयीं।

सबसे पहले इल्या कोज़लोव ही जगा। नमी से ठिठुरते हुए भी उसने अपने साथियों, गीले किनारे, स्थिर-से लगनेवाले बड़े बड़े बादलों और सुबह के प्रकाश में भूरे पड़ते हुए दूरस्थ मकानों पर एक उड़ती-सी नज़र डाली, हंसा और सिर के काले, सख़्त, गझे हुए बाल हिलाने-डुलाने लगा। अब एक एक करके त्वेर के व्यापारी भी उठने लगे। र्याबोव का अब भी ऊंघता-सा चेहरा दिखाई पड़ रहा था। राजदूत के जहाज़ के डेक पर कुछ ईरानी आकर खड़े हो गये थे। वे रूसियों की नाव पर टकटकी लगाये हुए थे।

ज़िरहसाज़ इल्या ने कपिलोव को आंख मारी और उसकी कमर पर प्यार का एक भारी मुक्का जड़ दिया।

"यह तुम्हें हो क्या गया है?" कपिलोव साश्चर्य कहने लगा।

इल्या हंस दिया।

"अब भी पूछते हो! कहां हैं चोर-वोर यहां!"

कपिलोव उसकी बात न समझ सका और उसे आंख फाड़ फाड़कर देखता रहा। इल्या गदगद हो रहा था।

"लोग कितने चतुर होते हैं, कितने गप्पी! हे भगवान! बातें बनाना कोई इनसे सीखे! हो-हो!"

निकीतिन इस हो-हो को सुनकर घूम पड़ा –

"सेरेगा, इसे हो क्या गया है?"

"हो-हो, बस ..."

निकीतिन, चिन्तित-सा, ज़िरहसाज़ के सामने उकड़ूं बैठ गया।

"इल्या, इल्या ... क्या बात है?"

इल्या को धोखा देना अब आसान न रह गया था। अब वह सब कुछ समझ सकता था। निश्चय ही व्यापारी ख़तरों, डकैतियों और पराये इलाक़ों की बड़ी बढ़ा-चढ़ाकर बातें करते हैं। यह रहा सराय। वे वोल्गा पर इतना लम्बा सफ़र कर आये, कहीं कोई ख़तरा दिखाई दिया उन्हें? और यहीं आलतिन ओरदा में कौनसी मुसीबत दिखाई दी उन्हें? कैसे होते हैं ये व्यापारी भी – बेपर की उड़ाते हैं, जब चाहें क़ीमतों को आसमान छुआ दें! किसी प्रकार इल्या के हंसने का कारण जानकर निकीतिन भी क़हक़हा लगाकर हंसने लगा।

कपिलोव हंसते हुए बोला –

"आख़िर हंसा ही दिया हमें! कुछ भी हो, इल्या है चतुर! कभी अच्छा सौदागर बनेगा!"

मत्वेई र्याबोव ने सिर हिलाया –

"मेरे भाई, तुम बेवक़ूफ़ हो!"

"अच्छा, अच्छा," हंसते हुए इल्या ने उत्तर दिया, "तुम चाहे जो कहो, बुरा-भला कहो या क्रोध करो, लेकिन मेरी आंखें चारों तरफ़ रहती हैं ..."

इसपर सभी ठहाका मारकर हंस दिये। ऐसा लगा जैसे लहराती हुई नावें, पानी की इठलाती हुई धारा, और धूप में नगर की मीनारों पर चमकता हुआ अर्ध-चन्द्र – सभी इन लोगों के साथ हंस रहे हों।

प्रातःकाल इसी हंसी-खुशी से आरम्भ हुआ था। नावें मज़े में चल दीं। उन्होंने हंसी-खुशी अख्तूबा को पीछे छोड़ दिया और हंसी-खुशी बुज़ान में प्रवेश करने लगीं। बुज़ान उनके मार्ग में वोल्गा की अन्तिम सहायक नदी थी। इसके बाद उन्हें सिर्फ़ वोल्गा का डेल्टा पार करना था और ख्वालीन पहुंच जाना था।

यात्री बुज़ान पर, जगह जगह पानी की थाह लेते हुए बड़ी सावधानी से नावें बढ़ा रहे थे। नावें नदी के सुनसान और चौरस तटों के बीच आगे बढ़ रही थीं।

किसी ने दूर पर खड़े एक तातार घुड़सवार को देखा। वह झाड़ियों के पास दाहिनी ओर अकेला खड़ा था, उसपर सूर्य की किरणें पड़ रही थीं। वह हिल-डुल नहीं रहा था। ऐसा लगता था मानो घोड़े के साथ वह भी ज़मीन से चिपक गया हो।

तातार ने हाथ उठाया और बढ़ती हुई नाव की दिशा में चिल्लाने लगा। घोड़ा भी, चिन्तातुर-सा, नावों की ओर बढ़ने लगा ...

"राजदूत की आज्ञा है कि नावें किनारे लगा दी जायें!" सभी नाववालों से कहा गया।

व्यापारी चिन्तित होते हुए, शेमाखा के जहाज़ के पास आ गये। वे अपने अपने हथियार संभाल रहे थे।

"निकी-तिन! र्‌या-बोव!" वास्का जहाज़ के पिछले हिस्से पर से चिल्लाया, "हसन-बेग बुला रहा है!"

अफ़नासी और मत्वेई कूदकर किनारे पर आ गये। उन्होंने इस तातार को जहाज़ पर चढ़ते हुए देखा। उन्हें दो तातार और दिखाई

दिये जो पहले तातार के घोड़े की रखवाली कर रहे थे। ऐसा लग रहा था कि ये तातार आसमान से टपक पड़े हों।

"आ गयी कोई मुसीबत!" डेक पर खड़े वास्का ने व्यापारियों के कानों में फुसफुसाते हुए कहा। अली राजदूत के कमरे के पास खड़ा था। उसका चेहरा फक था, ओंठ भिंचे थे। भयभीत यूसुफ़ दोनों रूसियों को हसन-बेग के पास ले गया और स्वयं दरवाज़े पर अपनी छोटी-सी दाढ़ी में उंगलियां फेरने लगा।

कमरे में एक दिया जल रहा था। क़ालीन के एक सिरे पर शतरंज की बिसात और मोहरे लुढ़के पड़े थे। ऐसा लगता था जैसे खेलते खेलते सहसा उसे एक ओर तेज़ी से सरका दिया गया हो। हसन-बेग के सामने उन्होंने उकड़ूं बैठे हुए उसी तातार को देखा जिसे वे पहले देख चुके थे। तातार एक ऊंची-सी टोपी लगाये था। उसका नीचा माथा घाव के किसी निशान के कारण दो हिस्सों में बंटा-सा लगता था। उसके चौरस चेहरे पर हल्की हल्की मूंछें थीं। उसके चेहरे से कोई भी भाव प्रकट न हो रहे थे।

हसन-बेग ने उन्हें बैठने का संकेत किया और तातार की ओर देखते हुए कहने लगा —

"अब सारी बातें फिर कहो ... ये लोग तुम्हारी भाषा समझते हैं।"

तातार सीने पर हाथ रखकर झुका और कुत्तों जैसे दांत निकालते हुए कहने लगा —

"ऐ दानिशमन्द खान, अल्लाह तुम्हारे इन दोस्तों को बरकत दें! मुझे यही कहना है कि बुज़ान में सुलतान क़ासिम अपनी तीन हज़ार की फ़ौज लिये आपका इन्तज़ार कर रहा है। वह डाका डालेगा और सब कुछ ले जायेगा। सुलतान बड़ा बदमाश है ... शायद बहुत जल्दी ही वह बुज़ान पर मिलेगा।"

तातार ने फिर अपने सीने पर हाथ रखा, झुका और चुप हो गया।

राजदूत के माथे पर बल पड़ गये। उसने रूसियों की ओर देखा।

"तुम्हें यह सब कैसे मालूम हुआ?" निकीतिन ने पूछा।

तातार निकीतिन की ओर घूमा और उसपर एक तीखी-सी दृष्टि डालते हुए अपनी लाल लाल पलकें नीची कर लीं।

"मैं ग़रीब चरवाहा हूं, थोड़े-से घोड़े चरा लेता हूं, हर जगह आता-जाता हूं, सुनता हूं, देखता हूं ..."

"तुम्हारे घोड़े कहां हैं?"

"तुम मेरी बात का यक़ीन क्यों नहीं करते? मैं तुम्हारी भलाई चाहता हूं। मैं अपने घोड़े इतील नदी के पास छोड़ आया हूं इसलिए कि मैं चाहता था कि तुम लोगों से मिलकर तुम्हें उसकी सूचना दे दूं ..."

निकीतिन और र्याबोव ने एक दूसरे की ओर देखा। फिर निकीतिन रूसी में यूसुफ़ से बोला—

"राजदूत को समझा दो कि हमें इस मामले पर तातार की अनुपस्थिति में ही विचार करना चाहिए।"

यूसुफ़ ने यह बात हसन-बेग के कान में कह दी। हसन-बेग ने सिर हिला दिया।

"तुम बाहर जाकर इन्तज़ार करो!" उसने तातार को आज्ञा दी।

चरवाहा चुपचाप उठा और सिर झुकाकर कमरे के बाहर निकल गया। यूसुफ़ भी बाहर चला आया और दरवाज़ा बन्द कर दिया।

"हालत खतरनाक है," हसन-बेग बोला।

"शायद झूठ ही बोलता हो, कौन जाने," र्याबोव ने संदेह प्रकट करते हुए कहा।

"शायद झूठ बोलता हो, शायद न बोलता हो!" निकीतिन ने आपत्ति करते हुए कहा, "हमें होशियार रहना ही चाहिए ..."

"वह वादा करता है कि हमारा पूरा क़ाफ़िला ऐसे ले जायेगा कि कोई भांप भी न सकेगा," राजदूत बोला, "लेकिन उसका कहना है कि हमें रात में ही सफ़र करना चाहिए।"

"अगर जाना है तो बेशक रात में ही चलना पड़ेगा," निकीतिन ने उत्तर दिया, "अंधेरे में दूसरों की नज़रों से छिपना आसान रहता है। बस डर यही है कि यह हम लोगों के लिए जाल न साबित हो।"

"कैसा जाल?" हसन-बेग ने पूछा।

"वह भेंगी आंखों वाला शैतान हमें रास्ता दिखायेगा!" र्‍याबोव ने कहने को तो कह दिया, लेकिन तुरन्त ही परेशान-सा हो गया इसलिए कि राजदूत भी भेंगी आंखों वाला था। हसन-बेग ने इसपर कोई ध्यान न दिया पर र्‍याबोव का अनुमान उसे ठीक लगा।

"हां, यह भी हो सकता है। तो फिर किया क्या जाये?"

सब चुप हो गये।

"जो भी हो," निकीतिन बोला, "हमें इन खबर देनेवालों को जाने नहीं देना चाहिए, तीनों को अपनी नाव पर रखना चाहिए। हम उन्हें तोहफ़े देने का वादा करेंगे। हम ऐसा करेंगे कि वे सोचें कि हम उनपर विश्वास करते हैं। किन्तु हमें चौकस रहना चाहिए। अगर कोई बात हो जाये तो हमें लड़ने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।"

"ठीक है," र्‍याबोव ने हां में हां मिलायी।

"मेरे पास एक ही बन्दूक़ है," राजदूत ने शिकायत के से स्वर में कहा, "एक बन्दूक़ और पांच तीरंदाज़। हमारा जहाज़ अरक्षित है।"

"कोई बात नहीं," निकीतिन ने उसे धीरज बंधाते हुए कहा,

"हमें तुरन्त ही कोई न कोई फ़ैसला करना चाहिए। आपके जहाज़ में अभी और कितने लोग आ सकते हैं?"

"पांच की जगह अभी और है।"

"ठीक है। सुनो मत्वेई हमें अपनी एक नाव छोड़ देनी चाहिए।"

"क्यों?"

"खुद ही सोचो। अगर हम तीन नावों पर होंगे तो हमारी सारी ताक़त बंटी रहेगी और अगर लड़ाई हुई तो हमें सभी से हाथ धोना पड़ेगा। दो नावें ठीक रहेंगी – कम हो-हल्ला, कम चिल्ल-पों ..."

"मुझे अपनी नाव छोड़ने का अफ़सोस होगा।"

"अच्छा, अच्छा। मैं अपनी छोड़ दूंगा। तुम हमारा सामान तो अपनी नाव पर रख लोगे न?"

"क्यों नहीं ..."

हसन-बेग बीच में बोल उठा –

"बड़े शाह तुम्हारी नाव का दाम चुका देंगे, सिर्फ़ हमारा जहाज़ और राजा द्वारा दिये गये तोहफ़े बच जाने चाहिए।"

"तो फिर बात तय हो गयी ... इसके माने हैं राजदूत के जहाज़ पर दो बन्दूक़ चलानेवाले और आठ तीरंदाज़ हैं। और हां, मत्वेई, तुम्हारे साथ भी तो एक बन्दूक़ और कुछ तीर-कमान हैं ... मेरा ख्याल है, हम निपटा लेंगे। हमारे पास आतशी हथियार हैं जो शायद तातारों के पास नहीं।"

"भगवान भला करे!"

"अल्लाह मददगार है!"

तातार को बुलाकर उससे कहा गया – "क़ाफ़िले को रास्ता दिखाओ। तुम्हें इनाम मिलेगा।"

चपटे-से चेहरेवाले तातार ने सिर हिलाया, सिजदे के ढंग से झुका और फिर बड़बड़ करने लगा –

"मैं ठहरा ग़रीब आदमी, मेरे ये भाई भी बड़े ग़रीब हैं। सभी हमें डांट सकते हैं। किससे हम कुछ कहें? अपनी अपनी क़िस्मत!"

व्यापारियों ने अनुमान लगाया कि तातार अपना इनाम तुरन्त चाहते हैं। हसन-बेग ने आज्ञा दी कि हर तातार को एक एक जैकेट और एक एक थान कपड़े का दे दिया जाये।

तातार ने दांत निकाल दिये –

"ख़ान तो कितना अच्छा है, कितना मेहरबान! फ़िक्र मत करो ख़ान! मछलियों की तरह ले चलूंगा। किसी को कानों कान ख़बर न होगी। हम सीधे चलेंगे!"

और यह कहकर तातार ने खीसें बा दीं।

"तुम तीनों हमारे साथ चलोगे!" अफ़नासी ने तातार को चेतावनी दी और उसकी आंखों में घूरने लगा।

तातार ने अपनी निगाहें नहीं हटायीं।

"ठीक है! हम तीनों चलेंगे।"

... सारे क़ाफ़िले में चिल्ल-पों मच गयी। इल्या, जो अभी कुछ ही पहले हंस रहा था, अब शून्य मस्तिष्क और अपराधी की भांति इधर-उधर देखने लगा।

"तुम्हीं ने नज़र लगायी है!" मिकेशिन उसके पास आकर फुसफुसाने लगा, और किसी ने भी इल्या का पक्ष नहीं लिया, "क्यों न हम लौट पड़ें। सराय तक तो हम आ गये ..."

"मैं आगे जाऊंगा," निकीतिन ने दृढ़ता से कहा, "तुम लोग जैसा चाहो करो। कोई इसका बुरा न मानेगा।"

कपिलोव बूट से नाव को ठोकर देते हुए बोला –

"हम साथ साथ यहां तक पहुंचे हैं तो आगे भी साथ साथ ही चलेंगे। दोस्ती अपनी चमड़ी से ज्यादा क़ीमती है।"

कोज़लोव ने निकीतिन से पूछा –

"तुम मेरा बख़्तर पहन लो न?"

उसकी आवाज़ में इतना दर्द था कि अफ़नासी का दिल भर आया।

"शायद वह हमारे लिए काम का साबित होगा। अच्छा निकाल लो उसे।"

इल्या ने अपने बोरों की रस्सी तोड़नी शुरू की यहां तक कि उसकी बायीं हथेली जलने लगी।

त्वेर के व्यापारियों ने मास्को के सौदागरों की सहायता से अपना माल उनकी नाव पर रखना शुरू किया। कुछ ही समय बाद त्वेरवालों की नाव, जिसका पाल तक हटा लिया गया था, यतीम जैसी दिखाई पड़ने लगी।

मिकेशिन बड़ी हिचकिचाहट के बाद मास्कोवालों की नाव पर चढ़ा। बाक़ी सारे व्यापारी राजदूत के जहाज़ पर चले गये और जहां जगह मिली, जम गये – डेक के नीचे, नम और बदबूवाली जगह में, ऊपर पिंजड़ों के इर्द-गिर्द।

वास्का डेक पर घूमता रहा। शीघ्र ही वहां भी भीड़-सी लग गयी।

"अरे दोस्तो, चिड़ियां बचाये रखना," वह बोला।

हसन-बेग ने नावें घुमाने की आज्ञा दी। लोगों ने बुज़ान पर एक सरसरी निगाह डालते हुए नावों को अख़्तूबा नदी में मोड़ दिया। उन्होंने अपना रास्ता बदल दिया ताकि अस्तरख़ान उनके रास्ते से दूर से दूर छूट जायें।

राजदूत शतरंज और क़िस्से-कहानियां भूल गया और चिन्तित-सा जहाज़ के ऊपरी भाग में आकर लोगों को और नदी के किनारों को देखने लगा।

निकीतिन उसके पास आया, बोला –

"सूर्य डूबते डूबते हमें अस्तरखान दिखाई पड़ने लगेगा। तो कहीं हम रुकेंगे और रात होने का इन्तज़ार करेंगे।"

सभी की निगाहें ऊपर आसमान पर लगी थीं। सभी अनुमान लगा रहे थे कि जाने मौसम बदलेगा या नहीं। साफ़ आसमान देखकर उन्हें कोई प्रसन्नता नहीं हो रही थी। काश इस समय बरसात हो जाती! वे भारी आवाज़ में एक दूसरे से बातें कर रहे थे। उत्तेजित इवान लप्शोव हाथों में तीर-कमान लिये मुस्करा रहा था और निकीतिन से आंख मिलाने की कोशिश कर रहा था।

निकीतिन आकर उसी के पास बैठ गया।

"तुम्हें डर तो नहीं लगता?"

"नहीं चाचा, नहीं..."

"शाबाश ... जब लड़ाई शुरू हो तो नाव की आड़ ले लेना, और जब दुश्मन नज़दीक आये तो तीर चलाने लगना, उन्हें बेकार बरबाद न करना।"

"अच्छी बात है।"

कपिलोव धीरे से बोल उठा –

"मुझे नाव का दुख है। र्याबोव कितना बदमाश निकला, अपनी नाव तो नहीं छोड़ी।"

"भगवान उसका भला करे!" निकीतिन ने चिन्तित होकर कहा, "अगर हम बचकर निकल गये तो फिर नाव की मुझे कोई चिन्ता नहीं ..."

अगर बचकर निकल गये तो! इस विचार मात्र से सभी सोच में पड़ गये और जैसे भयभीत हो उठे। शायद वे न निकल सकें, न बच सकें।

"तातारों पर निगाह रखना," अफ़नासी ने धीरे से कपिलोव से कहा, "अगर कोई बात हो तो उनपर ज़रूर तीर चला देना ..."

"अच्छा ..."

इल्या कोज़लोव को लग रहा था जैसे वह स्वयं अपराधी हो और खुद ही लोगों के दुख का कारण भी। वह नाव के अगले हिस्से में तातारों के पास खड़ा रहा। वह किसी भी क्षण उनपर झपटने के लिए तैयार था।

नावें वोल्गा में, नदी के वीरान किनारों के बीच बढ़ती चली जा रही थीं। शाम होते होते वे एक छोटी-सी खाड़ी के पास आकर रुक गयीं।

यहां ये लोग बहुत देर तक अंधेरा होने का इन्तज़ार करने लगे। वक़्त धीरे धीरे कट रहा था। चांद रूई के फाहे जैसा उठता हुआ झिरझिरे बादलों से बाहर निकला। बादल जैसे बड़ी अनिच्छा से एक दूसरे में विलीन हो रहे थे। वे चांद को छिपाकर रख सकेंगे? कौन जाने! हवा में ताज़गी आ चुकी थी और वह पहले से अधिक तेज़ी से चलने लगी थी।

"हे भगवान," निकीतिन ज़ोर से बोला, "हमारी सहायता करो!"

आखिर अन्धाघुप्प छा गया। बादलों ने चांद को चारों ओर से ढक लिया और उसकी चांदनी एकदम मुरझा-सी गयी।

निकीतिन हसन-बेग के पास आया, बोला –

"हमें कूच करना चाहिए!"

हसन-बेग ने अपना वेश बदल लिया था। अब उसने चोग़े की जगह बख़्तर पहन लिया था और पेटी में कटार खोंस ली थी। अब टेढ़ी नाकवाला उसका मोटा चेहरा सीधा-सादा नहीं बल्कि गंभीर लग रहा था और वह पैनी दृष्टि से इर्द-गिर्द देख रहा था।



"कूच करो।"

निकीतिन ने धीरे से कहा–

"डांड़ चलाओ!" और जहाज़ की नासिकावाले हिस्से में बैठे हुए तातारों के पास आ गया। माथे पर घाव के निशान और टेढ़े पैरों वाले तातार ने उसे देखकर सिर हिलाया–

"सौदागर, मेरी बात सुनो ... अब बायीं तरफ़ ले चलो।"

डांड़ धीरे धीरे चलने लगे। राजदूत का जहाज़ शान्ति से बढ़ने लगा। पीछे आनेवाली मास्को के सौदागरों की नाव के डांड़ों की छपाक इतनी धीमी थी कि मुश्किल से ही सुनाई पड़ रही थी। तातार चुपचाप बैठे रहे। निकीतिन सावधान खड़ा था–कहीं उनमें से कोई उसपर टूट न पड़े। पास ही इल्या तेज़ी से सांस ले रहा था। किनारे दिखाई न पड़ रहे थे। वे रात के अंधकार में छिप-से गये थे। और फिर किनारे तो किनारे! हर क्षण अंधेरा बढ़ता जा रहा था। पानी तक न दिखाई पड़ रहा था। और पास खड़े हुए साथियों का तो वे अनुमान-भर लगा पा रहे थे।

"बायीं तरफ़, बायीं तरफ़!" तातार फुसफुसाया।

जहाज़ और भी बायीं ओर एक नयी धारा में बढ़ने लगा। लगता था जैसे तातार झूठ नहीं बोल रहा है–अस्तरख़ान दाहिनी ओर ही होगा।

"दाहिनी तरफ़, दाहिनी तरफ़!"

निकीतिन भौंहें चढ़ाकर सोचता रहा–शायद तातार झूठ बोल रहे थे? शीघ्र ही वह इस भ्रम में पड़ जाता है कि उनका क़ाफ़िला

जा किधर रहा है। दाहिने-बायें – ये शब्द जैसे उसे चक्कर में डाल रहे हैं।

यूसुफ़ की फुसफुसाहट सुनाई दे रही है –

"हसन-बेग पूछता है – हम हैं कहां ?" निकीतिन हाथ में कटार थाम लेता है और चुप रहता है।

जहाज़ धीरे धीरे अज्ञात क्षेत्रों की ओर बढ़ रहा है, कभी सरकंडों की झाड़ियों से टकराता है तो कभी नदी के तल से।

रात। चारों ओर मौत जैसा सन्नाटा। डांड़ों की छपाक। पानी में उगी हुई घास की सरसराहट।

"बायीं तरफ़ ... दाहिनी तरफ़ ..."

तो ऐसा है रास्ता! सब कुछ कैसा शान्त था। और एक ही क्षण में सारा सपना टूट जायेगा। हे भगवान, हमें इतना कठोर दंड मत दो। ओलेना, तुम्हीं हमारे लिए प्रार्थना करो न! अगर ... तो फिर सब कुछ समाप्त। इल्या की क्या? उसका अपना माल है, लेकिन काशीन तो मुझसे पाई पाई धरा लेगा। अगर पार लग गया तो गिरजे में दान करूंगा ... जाने वहां इवान का क्या हाल है?

उसके दिमाग़ में तरह तरह के विचार उठ रहे थे और तातारों पर रह रहकर क्रोध आ रहा था। इन्हें सिर्फ़ लूट-खसोट आती है। ये रोटी ही लूट-खसोट की खाते हैं। और अगर ये झूठे हैं तो मैं उनपर क्यों दया करूं!

"दाहिनी तरफ़ ... दाहिनी तरफ़ ..."

"हमारे पीछे की नाव?" निकीतिन कुछ सुनने लगता है, "हमारा सारा माल तो उसी पर है ... हे भगवान!"

सहसा बादल छंटने शुरू होते हैं। चांद बादलों से झांकता है और उसके धीमे धीमे प्रकाश में नदी की संकरी-सी धारा दिखाई पड़ती

है। किनारों पर झाड़ियां और दाहिनी ओर दूरी पर अंधेरे से काली पड़ती हुई ऊंची ऊंची जगहें। सहसा निकीतिन ने अनुमान लगा लिया – अस्तरखान! किन्तु उसे तातारों को पुकारने का समय नहीं मिला। वे पकड़ में न आनेवाली परछाइयों की भांति पानी में कूद चुके थे। उसे सुनाई दी थी केवल पानी की छपाक। झाड़ियों के पीछे से घुड़सवारों की आकृतियां दिखाई दे रही थीं और उधर से आनेवाली चिल्ल-पों कानों में पड़ रही थी –

"रुक जाओ!"

घुड़सवार दाहिने-बायें भाग रहे थे। नदी संकरी थी। चन्द्रमा के प्रकाश में नावें साफ़ साफ़ दिखाई पड़ रही थीं। कपिलोव ग़ुस्से में बड़बड़ा रहा था। इवान उठकर खड़ा हो गया। कोई चीज़ सनसनाती हुई नाव के डेक पर पड़ रही थी ... तीर!

"हमारे साथ ग़द्दारी की गयी!" निकीतिन चिल्लाया, "दोस्तो, नाव खेते रहो!"

हमेशा संकट के समय अफ़नासी में न जाने कहां की ताक़त आ जाती और उसमें ख़तरों से ऊपर उठने और उनपर विजय पाने की कामना जग उठा करती। उसने तुरन्त ही निश्चय किया – हमें हर हालत में यहां से निकल जाना चाहिए।

राजदूत का जहाज़ आगे बढ़ गया। किनारे से तेज़ आवाज़ें सुनाई दे रही थीं, ढेरों तीर सनसना रहे थे।

"लड़ाई शुरू कर दो!" डेक पर लेटते और बन्दूक़ का निशाना साधते हुए अफ़नासी ने आज्ञा दी, "सेरेगा! कपिलोव! सामने देखो, रास्ता ढूंढो!"

बन्दूक़ में बारूद भरना और डगमगाती हुई नाव से निशाना साधना खेल न था, फिर भी बन्दूक़ घुड़सवारों को निशाना बना रही

थी। चक़मक़ का खट्ट सुनाई पड़ता और नाव का कोई भाग एक क्षण के लिए लाल-पीली आग से जगमगा उठता, और फिर बादलों जैसी गरज सुनाई देती ...

"अल-ल-ल-लाह!" किनारे पर से चीखें सुनाई पड़ने लगीं।

इतने ही में दूसरी बन्दूक़ भी दग़ पड़ी और डांड़ चलानेवालों में हो-हल्ला मचने लगा।

"बायीं ओर!" कपिलोव तेज़ी से चिल्लाया, और उसने अपना तीर ऐसे सन्धाना कि निशाने पर गिरे।

हसन-बेग की क्रुद्ध आवाज़ सुनाई दी, वह किसी को धमकी देता-सा लग रहा था ... किसे? ख़ैर! अरे यह गोली तो नली में जाती ही नहीं! दूसरी डालूं ... जल्दी ... काश नाव निकल जाती! वह हल्की भी तो है! हुं-ह ... फिर बारूद ... ओफ़!

फिर आग चमकी और फिर किनारे पर चीखें सुनाई दीं।

इवान लप्शोव घुटनों के बल बैठ गया और चलते-फिरते घुड़सवारों पर तीर बरसाने लगा। पहले पहल जब उसने तातारों के तीरों की सनसनाहट सुनी तो उसके हाथ कांप उठे। लेकिन जब उसने देखा कि निकीतिन कैसे गोलियां चला रहा है, उसके साथी दुश्मनों पर कैसे हमला कर रहे हैं, तो उसकी भी हिम्मत बंधी और उसने एक के बाद एक तीर बरसाने शुरू किये। उसका सारा डर जैसे हवा हो गया। उसे डरने का समय ही न था। वह बराबर तीर बरसाये जा रहा था, तातारों को निशाना बनाने की कोशिश कर रहा था। वह बराबर ज़ोर से कमान की डोरी खींच रहा था।

ऐसा लग रहा था कि रूसियों की गोलियां और तीर निशाने पर बैठ रहे हैं–किनारे से बराबर दर्दनाक चीखें सुनाई दे रही थीं। इससे इवान को आसुरी आनन्द हो रहा था।



"लो, चखो, अब चखो मज़ा!" वह चीखा और उसका तीर हवा में सनसनाता हुआ निशाना भेदने पहुंच गया। फिर खतरे पर जैसे बिल्कुल ध्यान न देता हुआ वह खड़ा हो गया। यह उसके लिए सुविधाजनक था...

उसे पीड़ा की कोई अनुभूति न हुई। बस लगा कि वह चिल्ला न सकेगा। उसे यह देखकर विस्मय हो रहा था कि एक बहुत बड़ा और चमचमाता हुआ चांद जहाज़ पर उतरा, फिर उसके हाथों के नीचे कोई चीज़ खड़खड़ायी और उसे कोई हल्की-सी चें चें सुनायी दी – यह तो बाज़ों का पिंजड़ा था। ओलेना काशीना उसे शराब का जाम दे रही थी, किन्तु उसका हाथ पिंजड़े की तीलियों से ही चिपका रहा। उसकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया, उसके मुंह पर हल्की-सी मुस्कराहट दौड़ गयी और उसका सिर नाव के एक ओर झुक गया। अब उसे न कुछ दिखाई दे रहा था, न सुनाई पड़ रहा था। एक तीर ने उसका हृदय बेधा था और दूसरे ने उसका गला ...

"हम उनके चंगुल से छूट रहे हैं!" अफ़नासी को कपिलोव की आवाज़ सुनाई दी।

निकीतिन ने गोली चलानी बन्द कर दी और पीछे देखने लगा। बायें किनारे पर एक चौड़ी-सी सहायक नदी शुरू हो गयी थी। जहाज़ उसी की ओर बढ़ गया। बायें किनारे पर खड़े हुए तातारों के दस्ते की जैसे मति कट गयी थी – लग रहा था कि आगे जाने के उनके सारे रास्ते बन्द हो गये।

"बढ़े चलो!" निकीतिन तेज़ी से चिल्लाया, "बढ़े चलो, पाल उठाओ! हवा हमारी ही दिशा में चल रही है!"

उठे हुए पाल में कई तीर घुस चुके थे। पर जहाज़ तेजी से आगे बढ़ रहा था और पीछे से आती हुई चिल्ल-पों और भी पीछे छूटती जा रही थी।

"नाव कहां रह गयी?" निकीतिन चिल्लाया।

किसी ने कोई जवाब न दिया। उसने फिर वही प्रश्न किया और जहाज़ के पिछले हिस्से से यूसुफ़ उसके पास आ गया। वह नंगे सिर था और उसके घुंघराले बाल उड़ उड़कर उसके चेहरे तक आ रहे थे।

"नाव तो छिछले में धंस गयी," वह गहरी सांस लेते हुए बोला।

"क्या?" निकीतिन उठ पड़ा, "झूठ है!" और तभी उसकी निगाह कपिलोव के चेहरे पर पड़ी।

"इवान ..." सेरेगा बोला।

निकीतिन की निगाहें डेक की ओर घूमीं और उसे जहाज़ के किनारे से लटकता हुआ इवान का शरीर दिखाई पड़ा। अफ़नासी ने अपनी बन्दूक़ एक तरफ़ छोड़ी और उसके पास दौड़ा चला आया।

"इवान! इवान!"

मगर इवान ने कोई जवाब न दिया। निकीतिन ने उसके शिथिल पड़े हुए शरीर को अपने हाथों में उठाया और उसके चेहरे की ओर देखने लगा। इवान के अधखुले ओंठों पर एक घबड़ाई-सी मुस्कराहट जैसे चिपककर रह गयी थी, उसकी खुली आंखों में चांद प्रतिबिम्बित हो रहा था।

कपिलोव ने बड़ी सावधानी से लाश में हाथ लगाया और उसे डेक पर लिटालने में निकीतिन की सहायता करने लगा और उसकी पलकें बन्द कर दीं।

"अब हम इसकी कोई मदद नहीं कर सकते," वह बोला, "बहादुर की मौत पायी है इसने।"



निकीतिन एक ठंढी सांस लेकर रह गया और घूम पड़ा। कपिलोव ने अफ़नासी के कन्धे पर हाथ रख दिया-

"अफ़नासी, यह तुम्हारा पहला सफ़र तो नहीं है ... तुम्हीं सोचकर बताओ कि हमें अपनी नाव का क्या करना चाहिए?"

"ओह, कैसा नौजवान था ... यह मेरा ही अपराध है!"

"सिर्फ़ तुम्हीं को उसका अफ़सोस नहीं है। हमें उनकी चिन्ता करनी चाहिए जो ज़िन्दा हैं! हम तो निकल आये हैं और हमारे आदमी वहां हैं ..."

निकीतिन को जैसे होश आया। जहाज़ हिलता-डुलता आगे बढ़ता रहा। लोग एक स्वर में चिल्लाते हुए पूरी ताक़त से डांड़ चला रहे थे। घनी झाड़ियों वाले किनारे पीछे छूट रहे थे और जहाज़ झटकों के साथ आगे बढ़ रहा था।

"अब हम लौट भी कैसे सकते हैं?" अफ़नासी ने कपिलोव से पूछा, "फिर तो हमें इस जहाज़ से भी हाथ धोना पड़ेगा ... शायद नाव भी तातारों के पंजे से निकल भागे।"

कपिलोव चुप रहा; फिर जहाज़ के किनारे के पास बैठकर पिंजड़े पर सिर रखकर कहने लगा—

"इसके माने हैं, बरबादी," और दांत पीस लिये।

हसन-बेग जल्दी में था, उसने डांड़ चलानेवालों को बदला और सुबह होने तक एक बार भी डेक पर से न हटा। आखिर ऐसा लगा कि वे इतनी दूर निकल आये हैं कि अब ख़तरे से बाहर हो गये हैं।

अभी भोर का प्रकाश फैला ही था कि एक ऐसी घटना हो गयी

जिससे सभी के छक्के छूट गये। जहाज़ दहाने में बढ़ रहा था कि सहसा छिछले में धंस गया और ऐसा लगा कि वह एकदम ऊपर उठा और फिर बायें बल लुढ़क पड़ा। पिंजड़े भड़भड़ाये और आदमी गिरने और चीख़ने-चिल्लाने लगे। दाहिनी ओर के डांड़ हवा में लटके-से दिखाई पड़ने लगे। डांड़ियों ने दो बार और डांड़ चलाये। जहाज़ उस घायल पक्षी की भांति था जो एक पंख फड़फड़ाता हुआ दर्द से तड़प रहा हो।

"नाव छिछले से बढ़ाओ! पानी में चलो!" डेक पर से लोग चिल्लाये। किन्तु वे यह न कर पाये। सहसा तातारों का एक दस्ता चुपचाप किनारे पर आ धमका। ऐसा लग रहा था जैसे वह कहीं गया ही न हो।

कपिलोव ने पहले पहल तातारों को देखा और हाथ लटका दिये... तातारों ने, तीर-कमान का भय दिखाते और कोड़े सटकारते हुए, जहाज़ घेर लिया और लोगों को हंकाते हुए किनारे पर ले आये। फिर उन्होंने रस्से जहाज़ में लपेटे और घोड़ों की मदद से उसे धारा की उल्टी दिशा में खींचने लगे।

रूसियों और शेमाखा निवासियों को घोड़ों की सहायता करने के लिए विवश किया गया।

"तुम लोग भाग क्यों आये?" ज़ीन पर झुकते हुए एक तातार ने निकीतिन से पूछा। उसके माथे पर घाव का एक लाल निशान था। निकीतिन ने इस तातार को तुरन्त पहचान लिया। यही उनका मार्गदर्शक था। "मैंने कहा था न कि मछलियों की तरह आगे बढ़ोगे ... और जानते हो मछलियां जाल में घुसती हैं!"

तातार ही-ही कर हंस दिया। उसे अपने मज़ाक़ पर ख़ुशी हो रही थी। फिर उसने अपना कोड़ा उठाया और क्रोध से निकीतिन के सिर पर जमा दिया ...

जहाज़ उन्हें देर तक नहीं खींचना पड़ा। तातारों को मुख्य टुकड़ी के पास जाने का सबसे छोटा रास्ता मालूम था। वहीं उनकी दूसरी नाव भी खड़ी थी। यह नाव मछली पकड़ने के लिए लगाये गये बल्लियों के बाड़े में फंस गयी थी। तातारों ने इस नाव को पहले ही लूट-खसोट लिया था। किनारे पर घास के बीच कुछ फटे-चिथे बोरे पड़े थे और कुछ खाली संदूक़। बन्दियों को एक जगह इकट्ठा किया गया था। और अब वे एकसाथ खड़े थे। ख़ून से सना र्‌याबोव फुसफुसा रहा था–

"सब कुछ लूट लिया गया ...हम समझते थे कि शायद तुम लोग निकल गये ..."

हसन-बेग ने मांग की कि उसे तातारों के ख़ान से मिलाया जाये और अपना फ़रमान बढ़ा दिया। रईसाना फ़र-कोट पहने हुए एक तातार एक क्षण के लिए रुका, उसने राजदूत की बात सुनी, फ़रमान हाथ में लिया, उसे उल्टा पकड़ा और उसे फाड़-चीड़कर टुकड़े हवा में उड़ा दिये।

"क्या देख रहे हो?" पैर पटकते हुए तातार ने पहरेदारों से कहा, "पकड़ लो!"

हसन-बेग को तुरन्त ही ज़मीन पर पटक दिया गया और उसका सब कुछ ले लिया गया – फ़र-कोट, उसके नीचे का बख़्तर, बूट और पगड़ी। सिवा भनभनाने के राजदूत से और कुछ करते-धरते न बन पड़ा। एक ही क्षण बाद वह अकेली एक बनियाइन पहने, नंगे पैर, भीगी हुई घास पर बैठा दिखाई दिया। उसकी क़ीमती अंगूठियां भी उतार ली गयी थीं। वह पानी से निकली हुई मछली की भांति तड़प रहा था – कभी मुंह खोलता, कभी बन्द करता। दूसरे तातार रूसियों और शेमाख़ा के लोगों की जेबें टटोल रहे थे, उनके सीनों में हाथ डाल डालकर देख रहे थे, तो कुछ उनके कोट और चोग़े उतार रहे थे।

राजदूत के जहाज़ पर से क़ालीन, बक्से, चिड़ियों के पिंजड़े ग्रौर थैले ग्रादि सभी कुछ उतार लिये गये थे।

इवान को लाश पानी में फेंक दी गयी थी, जो ग्रब एक हल्की-सी छपाक के साथ किनारे के पास ग्रा लगी।

जब निकीतिन से ग्रोलेना की दी तावीज़ भी छीना जाने लगी तो वह ग्रपने पर क़ाबू न रख सका ग्रौर उसने तातार के हाथ पर एक चोट की, परन्तु उसे तुरन्त ही ज़मीन पर पटक दिया गया ग्रौर उसपर मार पड़ने लगी। पर तावीज़ ग्रफ़नासी के पास ही पड़ी रही।

सहसा वास्का की चीख़ सुनकर तातारों का ध्यान उस ग्रोर ग्राकृष्ट हुग्रा।

लग रहा था जैसे वास्का पागल हो गया है। लड़ाई के समय ग्रौर निकल-भागने के समय वह ग्रपनी चिड़ियों की ही चिन्ता कर रहा था, पर इस समय तो उसका दिमाग़ सचमुच ख़राब हो रहा था। वह पिंजड़े ले जानेवाले तातारों पर टूट रहा था ग्रौर ग्रपनी चिड़ियां छीन रहा था; लेकिन तातारों ने उसे इतना पीटा कि बेचारा ग्रधमरा हो गया।

शीघ्र ही लूट-खसोट बन्द हुई ग्रौर रईसाना फ़र-कोटवाला तातार फिर बन्दियों के पास ग्रा धमका। उसने घोड़े पर चढ़े चढ़े उनके इर्द-गिर्द एक चक्कर लगाया ग्रौर एक एक रूसी के सीने पर उंगली रखते हुए इशारा करने लगा।

जिन लोगों की ग्रोर उसने इशारा किया था उन्हें एक तरफ़ हटा लिया गया। इनमें से तीन ग्रादमी मास्कोवाले थे ग्रौर एक था इल्या।

फिर तातार टूटी-फूटी रूसी में चिल्लाकर बोला—

"काफ़िरो, तुमने हमारे एक भाई को मारा है... हम तुम्हारे चार लिये जा रहे हैं... बहाव की दिशा में भाग जाग्रो, हम तुम्हें उल्टी दिशा में न जाने देंगे... हम तुम्हें सराय में ख़बर पहुंचाने का मौक़ा न देंगे।"

"हमारी नावें तो दे दो!" किसी ने कहा।

"नावें नहीं देंगे, नाव हम खुद ले जायेंगे, तुम्हें हम डोंगे देंगे। ले लो! भाग जाग्रो!"

"हम ग्रपने मरे हुए साथी को भी ले जायें न..."

"ले जाग्रो, भाग जाग्रो!"

बन्दियों के दल में से इल्या की चीख़ सुनाई पड़ी –

"मेरी पत्नी से कह देना... बेटे से भी! दोस्तो! कह देना... हो सकता है, मदद..."

तातार, हो-हल्ला मचाते हुए, बन्दियों को हंका ले गये। कुछ घोड़े व्यापारियों की दोनों नावें खींचते हुए उन्हें ग्रस्तरख़ान की ग्रोर ले चले। कुछ ही क्षणों बाद बाक़ी घुड़सवार भी रफ़ूचक्कर हो गये। ग्रब वहां रह गये केवल वे, जिनका सब कुछ लुट चुका था... निकीतिन का ध्यान इवान के संदूक़ की ग्रोर ग्राकृष्ट हुग्रा। संदूक़ के पास दो प्रतिमाएं पड़ी थीं ग्रौर कुछ चिथड़े। ग्रफ़नासी ने प्रतिमाएं उठा लीं। एक को तो वह पहले ही देख चुका था। दूसरी वह थी जिसकी प्रशंसा गेनोग्रावासी ने की थी। इस प्रतिमा पर उसने ग्रोलेना का कोमल मुस्कुराता हुग्रा चेहरा देखा...

यहां, वोल्गा से कुछ दूर, बहुत-से टीले ग्रस्तरख़ान के स्तेप तक चले गये थे। ऐसे ही एक टीले पर इवान की क़ब्र खोदने का निश्चय किया गया। वहां की धरती सख़्त थी ग्रौर उसे खोदना

कठिन था। पहले इसे पेड़ की डालें लेकर ढीला करना ज़रूरी था। यह कार्य बहुत धीरे धीरे चलता रहा। मिकेशिन ने अफ़नासी की आस्तीन पकड़कर खींची –

"दोस्तो, ज़रा जल्दी करो! अगर शेमाख़ावाले अकेले चले गये तो हम कहां जायेंगे?"

अफ़नासी चुपचाप खोदता रहा, किन्तु सेरेगा कपिलोव अपने पर क़ाबू न रख सका। वह चीख़ पड़ा –

"क्या हम अपने साथी को कौओं और कुत्तों के लिए छोड़ जायें?"

मिकेशिन चलते-फिरते बुदबुदाता रहा –

"मैं तो तुम्हारी भलाई के लिए कह रहा हूं!"

इस समय तक काफ़ी रोशनी फैल चुकी थी। टीले के शिखर पर से प्रातःकाल के प्रकाश में पास के नदी-तट की अस्पष्ट-सी रूप-रेखाएं दिखाई पड़ रही थीं। और तलहटी में बेंत की धूमिल-सी झाड़ियां, भूरा स्तेप और खड़े हुए लोगों के कुछ दल नज़र आ रहे थे। दूसरे व्यापारी भी चुपचाप पास आ गये। मत्वेई र्याबोव, कपिलोव से कहने लगा –

"तुम थक गये होगे। हटो, मैं खोदूंगा।"

यूसुफ़, निकीतिन की जगह पर आ गया। उसने अपना हाथ फैलाया और अफ़नासी ने चुपचाप उसे डाल पकड़ा दी।

निकीतिन टीले से नीचे उतर आया। वह क़ब्र के लिए कुछ घास तोड़ना चाहता था। उसे ऐसी जगह भी मिल गयी थी जहां गझी हुई घास लगी थी। वह पहले तो उसे हाथ से, फिर छड़ी की सहायता से उखाड़ने लगा। पर नतीजा कुछ न निकला। उसने कमर सीधी की और उसके सीने पर लटका हुआ सलीब छाती से

टकराया। निकीतिन ने यंत्रवत् उसे छुआ और ठीक कर लिया। उसका सलीब तांबे का था और भारी भी। वह कुछ देर तक चुपचाप शान्त खड़ा रहा। फिर ओंठ भींचे, सलीब उतारा, उसे हाथ में लिया और घुटनों के बल बैठ गया। सलीब से घास अच्छी तरह कटने लगी।

इवान को क़ब्र में सावधानी से रख दिया गया। उसके दोनों हाथ उसकी छाती पर जमा दिये गये।

"मिट्टी छोड़ो!" अफ़नासी ने आज्ञा दी।

"सलीब काहे से बनाया जाये!" मत्वेई र्‌यावोव ने गहरी सांस लेते हुए कहा।

अफ़नासी वोल्गा के पास उतरा, मिट्टी से सने हाथ धोये, मुंह धोया और नदी का टंढा ठंढा पानी पीता रहा, पीता रहा।

"अब हमें क्या करना है?" उसे कपिलोव की आवाज़ सुनाई दी।

सूर्य चढ़ आया। वोल्गा का जल उसकी किरणों के नीचे बीसियों धाराओं में फूटता और अनेकानेक द्वीपों के बीच होता हुआ सरकंडे और झाड़ियों के बीच इठलाने लगा।

"जाकर हसन-बेग से बात करूंगा..."

राजदूत पूरी तरह निराश हो चुका था। उसकी बायीं आंख के नीचे नील पड़ गया था, उसके कपड़े चिथड़े चिथड़े हो रहे थे।

"अब क्या किया जाये?" निकीतिन उसके पास आकर पूछने लगा।

हसन-बेग ने चेहरा ऊपर उठाया और फिर लटका लिया। अब वह अपने नंगे पैरों की ओर टकटकी लगाये देख रहा था। दुष्टों ने ज़ार इवान तृतीय के भेंट किये हुए बढ़िया और क़सीदेवाले बट तक लूट लिये थे।

"तुम लोग क्या देख रहे हैं ?" निकीतिन ने कठोरता से पूछा। इस समय तक शेमाखा के लोग राजदूत के इर्द-गिर्द जमा हो चुके थे। "अपने राजदूत के लिए एक जोड़ा बूट भी तुम लोग न जुटा सके ?"

सभी जैसे अपनी अपनी बात कहने लगे–

"राजदूत के पैर बहुत बड़े हैं। किसी के भी जूते उन्हें न होंगे।"

निकीतिन ने सांस ली, अपने बूट उतारे और राजदूत को देते हुए कहने लगा–

"शायद ये आपको हो जायें? पहनकर देखिये।"

बूट उसके पैरों में ठीक हुए। हसन-बेग के पिटे हुए चेहरे पर एक मुस्कान-सी दौड़ गयी।

"शुक्रिया। मेरा ख़्याल है अब चलना चाहिए। बैठो, हम सब मिलकर सोचेंगे–किधर चला जायें।"

सीने के पास से राजदूत ने एक मोटा-सा काग़ज़ निकाला। लुटेरों से वह बच कैसे गया, यह सचमुच बड़े आश्चर्य की बात थी।

"इधर देखो!" हसन-बेग बोला, "यह रहा दरबंद, यह रहा शेमाखा..."

निकीतिन ने नक़्शे पर तुरन्त ही वोल्गा नदी, ख्वालीन समुद्र और काकेशिया का किनारा पहचान लिया। समुद्र से थोड़ी ही दूर धूमिल पड़ती हुई पहाड़ियां थीं। जहां ये पहाड़ एक स्थान पर किनारे से मिलते थे वहीं नक़्शे में दरबंद का क़िला दिखाया गया था। बाकू के पास एक दूसरा क़िला था, शेमाखा का। यही शेरवानशाह का नगर था।

राजदूत के कहने के अनुसार वे तट वीरान थे, और वहां बन्जारे तक बहुत कम आते-जाते थे। लेकिन अच्छा ही है यदि उनसे



भेंट न हो। काकेशिया के समुद्र के किनारे जाना बहुत ही खतरनाक है! वहां कैटक जाति के डाकू रहते हैं। यद्यपि उनके राजा का विवाह शेरवानशाह की सबसे बड़ी पत्नी की बहन से हुआ है...

"हां," निकीतिन बोला, "ओ-हो! तो, आपके सगे-सम्बन्धी भी उसी तरह दोस्ती निभाये रहते हैं जैसे हमारे... और फिर दूसरा कोई रास्ता भी तो नहीं।"

"तुम चिन्ता मत करो," हसन-बेग ने निकीतिन का हाथ पकड़ा, "तुमने अच्छी बहादुरी दिखायी है, मैं शाह से तुम्हारे बारे में बातचीत करूंगा। वह तुम्हारी मदद करेगा।"

"ज़रूर हमारी मदद कीजिये!" निकीतिन लम्बी सांस लेते हुए बोला, "भगवान भला करेगा... चलो देखें डोंगे?"

डोंगे रूसी जैसे न थे–नासिका चौड़ा, बगलें बाहर निकली हुई, पिछला हिस्सा संकरा। एक डोंगे पर मछली मारने का जाल रखा था। निकीतिन दोनों डोंगों के इर्द-गिर्द घूमा और उन्हें चारों ओर से देखने लगा। मुसीबत के समय ये डोंगे भी बड़े काम के थे। अजीब लकड़ी की कीलों से वे जोड़े गये थे। डोंगे राल से मढ़े होने

के कारण काले लग रहे थे। बेशक इनपर यात्रा की जा सकती थी। यूसुफ़ ने बताया कि ख्वालीन समुद्र पर ऐसे डोंगे 'मछलियां' कहलाते हैं।

"देखो न," उसने उंगली से डोंगे की ओर इशारा किया, "सिर कितना बड़ा है, पेट कितना गोल और दुम कितनी पतली... मछली ही तो है!"

उन्होंने अंदाज़ लगाया और मालूम हुआ कि डोंगों में सभी लोग बैठ सकते हैं।

कपिलोव ने निकीतिन को पुकारा–

"तो हम शेमाखा जा रहे हैं? है न?"

"और जायेंगे कहां?"

"क्यों रूस नहीं?"

"जायेंगे क्या लेकर? जाड़ा आ रहा है। और कौन जाने लोग हमें रास्ते में ही मार डालें!"

नदी पर हल्का हल्का धुआं-सा उठ रहा था। पानी के ऊपर घना कुहरा था जो बराबर क्षीण पड़ता जा रहा था। ऊपर उठकर वह घूम पड़ता और उसके धीरे धीरे उठते हुए पुंजों के बीच कभी तो दाहिनी ओर कटावदार ढालू नदी-तट, कभी निकट के द्वीप पर लगी बेंत की झाड़ियां और कभी ऊंची ऊंची घासवाले दुर्गम जंगल दिखाई पड़ने लगते।

सूर्य निकल रहा था और प्रातःकाल की अद्‌भुत शान्ति के बीच ऐसा लग रहा था मानो चारों ओर से मधुर ध्वनियां सुनाई पड़ रही हों। तरह तरह की घासें, ओस-कण और दूर दूर तक फैला हुआ गुलाबी आकाश–सभी में मादकता थी।

किनारे के पास ही कहीं पानी की कलकल-छलछल और जमीन

के कटाव के कारण हवा में लटकी-सी दिखाई पड़नेवाली वलूत की जड़ों पर पड़ती हुई पानी की छपाक सुनाई पड़ रही थी।

दाहिनी ओर से भी पानी की छपाक कानों में पड़ रही थी– एक मोटा-सा जल-चूहा पानी में कूदा था, जो वहां देर तक तैर चुकने के बाद, पानी के ऊपर गर्दन उठाता, चारों ओर निगाह डालता और मूंछें नचाता हुआ फिर ग़ायब हो गया था।

सहसा, और बिजली जैसी तेज़ी से, बत्तखों का एक झुंड निकीतिन के सिर के पास से होकर निकल गया–बत्तखें चारा खाकर लौट रही थीं।

ऊंचे आकाश में हंस उड़ रहे थे और कोई चिड़िया गाने का प्रयत्न कर रही थी। यह कौनसा पक्षी था इसे निकीतिन न समझ सका। पक्षी की आवाज़ भी सहसा टूट गयी और वह जैसे शर्म के मारे चुप हो गया।

पृथ्वी पर प्रकाश बिखरता जा रहा था। अब दिन के समय के रंग दिखाई देने लगे थे–हरे, नीले, पीले। कोहरा बराबर छंटता जा रहा था और पहली जैसी गुलाबी छटा सभी वस्तुओं पर छिटकती हुई इस बात की याद दिला रही थी कि अभी सवेरा है, शान्ति का समय।

और जब निकट के तालाब पर से हवा कोहरे को सहसा उड़ा ले जाने लगी और उसके स्थान पर गुलाबी-से पक्षी दिखाई पड़ने लगे तो निकीतिन को कोई आश्चर्य न हुआ। शुरू शुरू में उसे लगा कि वे पक्षी बगुले हैं, किन्तु वे बगुले न थे। उनके परों और पीठ का रंग एक जैसा था। वह दुम के पास गहरा था और अब सुबह के समय लाल दिखाई दे रहा था। ये फ़्लामिंगो पक्षी थे और मछलियों की टोह में अपनी टेढ़ी और कुछ कुछ काली चोंचें वोल्गा के पानी में डाले, लाल लाल पैरों के सहारे आगे बढ़ रहे थे।

इसके बाद हरी हरी और घनी झाड़ियों के बीच अफ़नासी ने एक लोमड़ी की सुनहरी खाल, उसके सतर्क कान और काली काली आंखें देखीं। लोमड़ी पानी में उतरी, उसने पानी पिया और फिर सतर्क हो गयी। नहीं, यहां कोई ख़तरा नहीं! लोमड़ी एक पतली-सी आवाज़ में चिंचियायी। और तभी उसके पास उसके तीन बच्चे और आ गये, चुपचाप। फिर उन्होंने, एक दूसरे को धकियाते हुए, अपने सिर पानी में डाले और प्यास बुझाने लगे। उनकी मां अपने बच्चों पर एक सतर्क-सी निगाह रखती हुई उनकी रक्षा के लिए वहीं खड़ी रही।

"कैसे सुन्दर बच्चे हैं, ये!" निकीतिन ने उन्हें देखते ही समझ लिया था।

उसने ये शब्द ज़ोर से, किन्तु काफ़ी उदासीनता से कहे थे, इसलिए कि अब भी उसकी चेतना का कोई न कोई अंश जिन्दगी के उतार-चढ़ाव को देख सकता था और समझ सकता था कि जीवन का क्रम, बीती बातों की ओर से उदासीन, पूर्ववत् चल रहा है।

निकीतिन बुझी हुई आग के पास पालथी मारे बैठा था और अपने सोते हुए मित्रों को देख रहा था। उसका मन उदास था। उनपर जो मुसीबत आयी थी उसने उनकी रही-सही उम्मीदों पर भी पानी फेर दिया था। यह दुर्घटना कितनी दुखदायी थी, इसे अफ़नासी ने अच्छी तरह समझ लिया था। उसने जो माल उधार लिया था उसके दाम वह वर्षों में भी अदा न कर सकेगा। फिर कोड़े पड़ेंगे? या ग़ुलामी करनी होगी? और होगा ही क्या? रूस में और आशा ही क्या की जा सकती थी? काशीन अपना क़र्ज़ माफ़ करने से रहा। और फिर क्यों माफ़ करे? अफ़नासी उसका है कौन? तो किया क्या जाये? उसकी एक ही आशा थी–शेमाखा में सामान बेचना

श्रौर काशीन का क़र्ज़ पाटने के लिए उसे रुपया भेजना, श्रौर फिर खुद श्रागे बढ़ना... उसने शून्य नेत्रों से, चढ़ते हुए दिन की श्रोर देखा श्रौर श्रपनी शान्ति श्रौर स्थिरता के कारण उसे सब कुछ शत्रुवत् मालूम हुश्रा। उसे लगा कि मैं वोल्गा में पड़ी हुई बालू के एक कण से भी छोटा हूं, शरद की एक पत्ती से भी श्रधिक एकाकी, गया-बीता।

दुनिया पर छा जानेवाली सुबह, जल की कलकल-छलछल, लोमड़ी-मां का चिंचियाना—सभी कुछ भगवान के इशारों से होता है।

हमेशा से ऐसा ही होता श्राया है श्रौर होना भी चाहिए। किन्तु यह बात श्रफ़नासी के गले तले न उतरी कि जो दुनिया कल के पहले थी वह श्राज के बाद भी वैसी ही बनी रहेगी।

निकीतिन ने माथा मल दिया।

खैर जो कुछ कल हो चुका है उसमें श्रौर श्राज की बातों में कोई तालमेल नहीं, कोई तारतम्य नहीं। भाग्य की चट्टान के श्रागे, भगवान की मर्ज़ी के श्रागे, उसकी श्रपनी कमज़ोरियों ने उसे निराश कर रखा था। फिर भी उसे श्राशा की एक किरण दिखाई दे रही थी।

उसके साथियों को किस पाप की सज़ा दी गयी है? भगवान क्यों उनकी इतनी कड़ी परीक्षा ले रहा है? श्राखिर उन्हें श्रौर क्या क्या देखना बदा है? बेशक यह सब कुछ जानना तो श्रसम्भव था, लेकिन इस विचार से उसे सन्तोष ज़रूर हो रहा था। भगवान इन श्रभागों पर दया भी कर सकेगा।

सूर्य कुछ श्रौर चढ़ चुका था। प्रातःकाल के रंगों के स्थान पर धरती श्रौर श्राकाश दिन के सोने से नहा गये थे। निकीतिन ने

तालाब की ओर देखा और जड़वत् खड़ा रह गया। बालू, पानी, लिली की पत्तियां – चारों ओर सभी कुछ पूर्ववत् था। लेकिन वे पक्षी, जिन्हें वह जिन्दगी में पहली बार देख रहा था, अब भी प्रातःकालीन सौन्दर्य से मुंह न मोड़ पा रहे थे और उनके एक एक पंख में प्रभाव की मनोरम गुलाबी प्रतिबिम्बित हो रही थी।

कपिलोव जग चुका था और अब सर्दी से ठिठुरता हुआ ज़मीन पर बैठा था।

"तुम नहीं सोये?"

"चुप!" अफ़नासी ने उत्तर दिया, "देखो कैसा सुन्दर पक्षी है।"

किन्तु फ़्लामिंगो, मनुष्यों की आवाज़ से डरकर, पंख फड़फड़ाते हुए समुद्र की दिशा में उड़ गये।

"भाग्य ने हमें कहां लाकर पटक दिया!" कपिलोव बोला, "यहां पक्षी तक रंग बदलते हैं..."

निकीतिन खड़ा हो गया। वह अपने चलते-फिरते साथियों की ओर देख रहा था। यहां उसकी आंखों के सामने न जाने कितनी ज़िन्दगियां बर्बाद हो गयी थीं, न जाने कितने बदक़िस्मती के शिकार हो गये थे!

और, जैसे सहसा, दृढ़ता से उसने कपिलोव को उत्तर दिया –

"कोई बात नहीं, शेमाख़ा में हम शाह और वसीली पापीन से मिन्नतें करेंगे, उनसे मदद लेंगे। सेरेगा, हम डूबेंगे नहीं!"

चौथा अध्याय

निकीतिन और उसके साथी लगातार तीन दिन और तीन रात भयानक तूफ़ानों से लड़ते रहे...

आंखें बन्द करते ही 'मछली' की नाक, और हाहाकार करती

हुई समुद्र की अनन्त लहरें उठती-गिरती दिखाई पड़ती हैं। 'मछली' लहरों के सिरों पर चढ़कर पानी की गहराइयों में धंसती है और जैसे मृत्यु का आलिंगन करने के लिए आगे बढ़ती है। दूसरे ही क्षण जब वह किसी चमत्कारवश, ऊपर उठकर आकाश की ओर बढ़ने लगती है तो यात्रियों का अन्तर तक दहल जाता है... उनसे जो कुछ बन पड़ता है, वे करते हैं – अपनी सारी शक्ति लगाकर डोंगे को लहरों के मुक़ाबले साधे रहते हैं।

दूसरे डोंगे के लोगों की तो हिम्मत ही टूट गयी। भयंकर लहरों ने उसपर आक्रमण किया और मास्को के लोग चीख़ते-चिल्लाते अंधकार में समा गये। किन्तु निकीतिन के साथियों को इन लोगों पर ध्यान देने का समय ही न मिला। अब-तब लहरें उठतीं और उन्हें ढक लेतीं, और वे डोंगे से चिपके हुए किसी प्रकार ऊपर उठते, डांड़ चलाते और नाव में से पानी फेंकने लगते। उनके ताज़े पानी की मसक और खाना सब समुद्र के गर्भ में समा गया था।

अली कुछ विचित्र ढंग से घूमा और डोंगे से गिरते गिरते बच गया। निकीतिन को लगा कि एक ही क्षण में उसके उन हाथों के पुट्ठे फट-चिथ जायेंगे, जिनसे उसने अली को पकड़ रखा था या फिर वह स्वयं उसके साथ पानी में समा जायेगा। यूसुफ़ भी अली को पकड़े रहने में पूरा ज़ोर लगा देता है। आख़िर अली ख़तरे से बाहर हो जाता है...

दूसरों की ही तरह हसन-बेग भी डांड़ चला रहा है। उसकी लाल दाढ़ी का रंग धुल चुका है और वह सफ़ेद निकल आयी है। किन्तु बूढ़ा नमकीन पानी थूकता हुआ, और निकीतिन के बूटों में अपने पैर 'मछली' के तले पर जमाये, पूरी ताक़त से डोंगा खे रहा है। डांड़ चलानेवाले जब-तब बदले जा रहे हैं, क्योंकि उनकी शक्ति पल

पल पर क्षीण हो रही है। वहां खाने-पीने की कोई चीज़ नहीं जो उनकी क्षीणता दूर कर सके। और फिर, सबसे ख़तरनाक है नींद।

दूसरे चौबीस घंटों में उन्हें बुरी तरह नींद सताती है। वह तो प्यास से भी अधिक तेज़ है। प्यास उन्हें समुद्र का नमकीन तीखा पानी पीने को विवश करती है। वे उलटी करते हैं, लेकिन फिर वही पानी पीते हैं। सोना हराम है–सोये कि पानी की लपेट में आ गये। सभी अपनी पूरी ताक़त लगाकर थकान और नींद का मुक़ाबला कर रहे हैं।

कभी कभी अफ़नासी को लगता है कि अपनी चेतना और इच्छा के बावजूद उसके हाथ और पैर सुन्न हो रहे हैं, जैसे सो रहे हैं।

जब शरीर का कोई अंग सोता है और सिर का कहना नहीं मानता, तो स्थिति भयंकर हो जाती है।

वह आखिर तक हिम्मत नहीं हारता। फिर समझ लेता है–उसे लोग एक बेंच के साथ रस्सी से बांध रहे हैं, और आखिरी गांठ लगते लगते सो जाता है। उसने गरजती हुई लहरों, 'मछली' के नीचे के बर्फ़ जैसे ठंडे पानी और तूफ़ान के हाहाकार के प्रति आंखें मूंद ली हैं। 'मछली' के तल में पानी आता-जाता है, फिर भी लगता है मानो वह गुदगुदे गद्दे पर सो रहा है।

वह नहीं जानता कि उसके पहले सभी लोग बारी बारी से सो चुके हैं, उसकी बारी तो अन्त में आयी है।

वह जगता है और उसे दिखाई देता है वही आकाश, वही हहराती हुई लहरें–पर कहीं कुछ परिवर्तन ज़रूर हुआ है, लेकिन क्या? वह कुछ भी नहीं समझ पाता। फिर वह अनुमान लगाता है–डोंगे पर कोई क़हक़हा लगा रहा है। यह तो माज़न्द्रान का निवासी

है जो अपनी सफ़ेद सफ़ेद आंखों से घूरता और अपनी सूजी हुई ज़बान बाहर निकालता हुआ ज़ोर से क़हक़हा लगा रहा है। वह पागल हो गया है। उसे डोंगे के पिछले भाग में बांध दिया जा रहा है। वह यह नहीं चाहता और हर तरह हाथ-पैर पटककर विरोध करता है। यदि उसकी घुटी हुई चांद पर डांड़ न जमा दिया जाता तो उसकी इस खटपट से डोंगा उलट ही जाता।

'मछली' उठती है, गिरती है। और उन्हें अपने चारों ओर सिवा गरजती हुई लहरों के और कुछ नहीं दिखाई देता।

पानी उनकी आंखों को अंधा-सा कर देता है, उन्हें बहरा-सा बना देता है। वह उनके मुंह में घुस जाता है जिससे प्रार्थना के स्वर गले में ही अटके रहते हैं। ऊपर-नीचे, भीतर-बाहर सभी जगह जल ही जल! आखिर उन्हें ऐसा लगता है जैसे आसमान आसमान नहीं, एक काली-सी लहर है जो सारी दुनिया को घेरे है।

अफ़नासी देखता है कि हसन-बेग डांड़ फेंक देता है और भद्दे ढंग से मुंह खोलता है, बन्द करता है। उसका सिर हिलने-डुलने लगता है। उसी क्षण डांड़ पानी के भंवर में समा जाता है। डोंगे की दिशा बदल जाती है और अब उसका पार्श्व-भाग लहरों के सामने आ जाता है। बस, अब सब कुछ समाप्त – मौत मुंह खोले सामने खड़ी है।

उसी क्षण यूसुफ़ और कपिलोव निकीतिन से आगे बढ़कर हसन-बेग के पास आ जाते हैं। यूसुफ़ के चेहरे से लगता है जैसे वह गुस्से से तिलमिलाया जा रहा है। वह राजदूत को एक ओर हटा देता है। कपिलोव शेमाखावासी के हाथ से डांड़ ले लेता है। डोंगे-भर में अकेला यही डांड़ बचा है। अब वह डोंगे को ठीक दिशा में लाने का प्रयत्न कर रहा है।

उनके पास अकेला यही डांड़ रह गया है, अकेला यही डांड़! डोंगे की नासिका फिर लहरों के सामने आ जाती है।

तीसरा दिन शुरू होता है। लगता है कि सब कुछ अस्वाभाविक है। उन्हें थकान इस हद तक घेर लेती है कि उनकी चेतना भी जड़ हो जाती है। जब वे अपने को देखते हैं तो उन्हें लगता है जैसे वे कोई और हैं। अब उन्हें अपनी मौत का ध्यान भी नहीं आता।

पानी, पानी, पानी और चारों ओर तूफ़ान का हाहाकार। बस, और कुछ नहीं। वे पूरी ताक़त से डोंगा पकड़े हैं, उसे उलटने से बचा रहे हैं।

तूफ़ान जिस तेज़ी से शुरू हुआ था वैसी ही शीघ्रता से शान्त भी हो गया। लहरों का आकार घटने लगा। आकाश पर प्रकाश बिखरने लगा और शीघ्र ही डोंगा समुद्र की हरी सतह पर स्थिर-सा हो गया। दाहिनी ओर पहाड़-से दिखाई पड़ रहे थे। बादलों को भेदती हुई सूर्य की किरणें नीचे आ रही थीं। एक घंटा और—ख्वालीन समुद्र शान्त हो जाता है, पहचाना तक नहीं जाता। वह सूर्य की किरणों में चमचमा उठता है, डोंगे के पास कलकल करता है, उसे दुलारता है, वैसे ही जैसे कुत्ता अपने पिटे हुए पिल्ले को चाटता है, प्यार करता है।

यूसुफ़ हाथों से मुंह ढांपते हुए उकड़ूं बैठ जाता है। उसकी सूजी हुई अंगुलियों पर उसके आंसू बह रहे हैं। कपिलोव डोंगे की दीवाल पर गिर पड़ता है और उसकी सारी शक्ति जवाब दे जाती है। अली, निकीतिन को बड़े ध्यान से देखता है और लगता है कि वह कुछ कहना चाहता है, लेकिन कह नहीं पाता।

निकीतिन के ओंठों पर एक थकी-सी मुस्कुराहट बिखर जाती है।

"तुमने मेरी जान बचायी!" अली कह उठता है।

"खत्म हो गया!" उसकी बात न सुनता हुआ निकीतिन कहता है, "भगवान की दया है!"

चारों ओर शांति, धूप, गर्मी!

शाम होते होते जब सूर्य पहाड़ियों के पीछे छिपने लगता है उस समय डोंगा किनारे की ओर बढ़ता है। दरबंद! वे लोग इसी नगर का इन्तज़ार कर रहे थे। नगर पत्थर की दो दीवालों के बीच बसा था और ये दीवालें समुद्र में चली गयी थीं। दूर से वहां के मकानों की चौरस छतें और शाम के समय धुंधली-सी मीनारें दिखाई पड़ रही थीं।

मछुआ-नावें अपने जाल खींच रही थीं। खुले हुए घाट पर तुर्कमनी डोंगियां, गोल और छोटी पालदार फ़ारसी नावें और वोल्गा के जहाज़ खड़े थे।

"हमारे लोग नहीं दिखाई दे रहे हैं यहां!" कपिलोव इधर-उधर देखता हुआ जैसे निश्चित ढंग से कह उठता है।

"वह रहा पापीन का जहाज़!" उत्तेजित होकर वास्का चिल्ला पड़ता है, "वह, वह रहा, जो सबसे बड़ा है!"

वह मुस्करा देता है, पापीन के बारे में कुछ कहता है और अपने साथियों की आस्तीनें पकड़ लेता है। दूसरे साथी भी खुश हो जाते हैं। अरे यहां तो हमारे अपने आदमी हैं, रूसी! वे हमारा साथ देंगे।

डोंगा जहाज की ओर बढ़ता है। फ़ारस की तथा दूसरी नावों पर बैठे हुए सांवले चेहरों वाले लोग इन यात्रियों की ओर देख देखकर या तो अपने सिर हिलाने लगते हैं, या जीभ चटखारने लगते हैं, या किसी को पुकार पुकारकर उससे कुछ पूछने लगते हैं। पापीन के जहाज़

के डेक पर काली दाढ़ीवाला एक आदमी दिखाई पड़ता है। वह विचारशील मुद्रा में, टूटी-फूटी-सी 'मछली' और अपनी ओर बढ़ते हुए नाविकों के फैले हुए हाथों की ओर देखता हुआ पहले तो कुछ सोचता है फिर सहसा बोल पड़ता है–

"हां, राजदूत होगा? अरे वास्का, मामला क्या है? अरे बुद्धू, बाज़ कहां हैं?"

सबसे पहले तो वे लोग ताज़े पानी पर टूटे। खाते और बातें करते करते समय जल्दी जल्दी बीतता गया। यूसुफ़ नगर में जा चुका था और अब हसन-बेग के कपड़े और घोड़ा लिये लौट रहा था। राजदूत ने बूट उतारकर निकीतिन को दे दिये।

"कल मुझसे मिलना!" रईसाना चोग़ा पहनते हुए वह कहने लगता है।

यूसुफ़ सभी को कारवां-सराय में ले आता है। सराय का मालिक आनन-फ़ानन गद्दे लाता है, सूखी घास के लिए नौकर को भेजता है और मेहमानों को पुलाव खाने के लिए बुलाता है।

इस वक़्त पुलाव कैसा! नींद के मारे तो आंखें नहीं खुलतीं! निकीतिन सूखी घास पर लेट जाता है और यूसुफ़ को किसी से बातें करते सुनता है। शायद यूसुफ़ उसी से कुछ कह रहा है–

"हसन-बेग का ख्याल है कि मास्कोवालों की नाव कहीं तारका के पास डूबी है। अब वे लोग कैटकों के हाथों में पड़ गये होंगे!"

वह यूसुफ़ की बात का जवाब देने का असफल प्रयास करता है और सो जाता है।

नींद बचपन जैसी है–न कोई फ़िक्र, न परेशानी।

सुबह होते ही आदमी नयी नयी चिन्ताओं में फंस जाता है।



सुबह का आरम्भ होता है गधे के रेंकने से। गधा मूंड़ा हुआ है, लेकिन उसके पैर झबरे हैं। वह पैर फैलाये और लम्बे कानों वाला सिर झुकाये अहाते के बीचों बीच खड़ा है और हींस रहा है। तभी कहीं से कोई गधा हांकनेवाला फटा-पुराना भूरा लबादा पहने वहां आ जाता है। अब दोनों रेंकने लगते हैं। गधा उस आदमी को देखकर रेंकता है, और आदमी गधे को देखकर। इसी समय एक गोल-मटोल आदमी आ जाता है। वह बैंगनी-पीला धारीदार चोग़ा पहने है। वह गधा हांकनेवाले को गालियां देने लगता है और उसे धकियाने लगता है। इस आदमी के मोटे-से ओंठों पर फेन ही फेन दिखाई दे रहा है।

निकीतिन को कारवां-सराय के फाटक पर देखकर वह धारीदार चोग़ेवाला आदमी गाली-गलौज बन्द कर देता है और सिर झुका देता है। वह मुस्कराता है जिससे उसका चेहरा चपटा-सा लगने लगता है।

यह कारवां-सराय का मालिक, मुहम्मद, है। वह शायद ओस है, शायद तातार।

"आपको नींद तो अच्छी आयी है?" मुहम्मद सिर झुकाकर पूछने लगता है। "इस शैतान के बच्चे ने आपके आराम में खलल डाला है? मुहम्मद जिन्हें प्यार करता है, उनके क़दमों में पड़ा रहता है। गधे हांकनेवाले इस शैतान को मुहम्मद अच्छा मज़ा चखायेगा। आप इस ग़रीबख़ाने को अपना ही घर समझें। मुहम्मद तो आपका गुलाम है ..."

मुहम्मद समझता है कि निकीतिन उन रूसियों में से एक है

जिनके बारे में यूसुफ़ ने कहा था कि वे राजदूत के पास ग्राये हैं। इसी लिए वह चिड़िया की तरह चहचहाने लगता है।

यद्यपि निकीतिन फटी-पुरानी क़मीज़ ग्रौर पुराने जूते पहने था, फिर भी सराय के मालिक ने उसे बड़ा सौदागर ही समझा। सोचा, मुसीबत किस पर नहीं ग्राती।

मुहम्मद तातारी बोलता है, फिर भी यह सुनकर ग्राश्चर्य होता है कि वह तातारों को उन्हीं की भाषा में गालियां देता है, बुरा-भला कहता है।

गर्मी पड़ रही है ग्रौर यह गर्मी ग्राती है नगर के इर्द-गिर्द खड़े पहाड़ों से, बाग़-बगीचों से ग्रौर उस हरे हरे समुद्र से जो निकटतम मकान की चौरस छत से ही शुरू हो जाता है। इस मकान की छत पर एक दरबंद निवासी ग्रपनी क़मीज़ की पर्तों में से जूं बीन बीनकर मार रहा है।

कारवां-सराय में जैसे जिन्दगी ग्रा जाती है, चिल्ल-पों शुरू हो जाती है। लोग एक एंक करके फिर समूहों में दिखाई पड़ने लगते हैं—कोई चोग़ा पहने है तो कोई बुरक़ा, कोई तुर्कमनी टोपी में है तो कोई खोपड़ी-टोपी में। उनकी बातों में कंठ्य वर्णों की प्रचुरता है। प्रायः सभी हथियारबन्द हैं—किसी के पास कटार है, तो किसी के पास तलवार। कुछ लोग ऊंटों ग्रौर घोड़ों को पानी पिला रहे हैं ग्रौर कुछ मवेशियों के पास बैठे हुए विचित्र गोल रोटियां ग्रौर सूराख़ों वाली सफ़ेद पनीर खा रहे हैं ग्रौर मसक से खोखले सींगों ग्रौर प्यालों में पानी उड़ेल उड़ेलकर पी रहे हैं।

मुहम्मद निकीतिन ग्रौर कपिलोव को पुकार रहा है। छोटे ग्रौर ठंढे मकान में एक क़ालीन बिछा है जिसपर तकिये रखे हैं। क़ालीन पर थालियां रखी हैं। उनमें कुछ खाने की चीजें हैं—पीले रंग का हलुग्रा

जिसमें अखरोट या दूसरे मेवों की गिरियां पड़ी हुई हैं, अंगूर और आटे से बनी कुछ मिठाइयां। क़ालीन के बीचोंबीच एक गोल और लम्बी टोंटीवाला कंटर रखा है।

मुहम्मद सिर झुकाकर यात्रियों से अनुरोध करता है कि वे उसके यहां जो कुछ भी रूखी-सूखी है, खायें।

इन मिठाइयों के स्वाद के आदी न होने के कारण व्यापारियों को मज़ा न आ रहा है। वे अपने ख़ाली पेट में ताज़ी शराब डाल लेते हैं जो उनके सिर में चढ़ जाती है।

"अगर हमें काली रोटी और कुछ दूध मिल जाता!" दांतों से चिपचिपी मिठाई खोदते और लम्बी सांस लेते हुए कपिलोव कह उठता है, "ये लोग यह खाना खाते कैसे हैं? हां, शराब ज़रूर अच्छी है..."

मुहम्मद बड़ी उत्सुकता से अपरिचित रूसी भाषा सुनता है और मुस्कराते हुए निकीतिन से पूछता है–

"क्या? क्या?"

"मेरा दोस्त तुम्हारी शराब की तारीफ़ कर रहा है!" अफ़नासी उसकी भाषा में जवाब देता है।

मुहम्मद मक्खन की तरह पिघल जाता है, गदगद हो जाता है। वह ज़ोर से ताली बजाकर चिल्ला पड़ता है–

"हुसेन!"

एक घुटी चांदवाला नौकर आकर सिर झुकाता है और एक कंटर में शराब, सलाख़ों में पिरोये हुए भुने मांस के टुकड़े ले आता है।

"खाना तो इसी से शुरू करना था!" कपिलोव बुदबुदाया।

मुहम्मद देखता है कि मेहमान अधिक पी गये हैं, और चापलूसी की बातें शुरू कर देता है। उसे यही आशा है कि जब तक ये मेहमान दरबंद में रहेंगे तब तक वे उसी की सराय में रहेंगे। बेशक वे अपने

इस ग़ुलाम को कभी न भूलेंगे। यह ग़ुलाम अपने इन ज़र्रानवाज़ मेहमानों के लिए अपनी हक़ीर ज़िन्दगी तक क़ुर्बान कर सकता है। मुहम्मद अपनी बातों में रस घोलता है, कपिलोव शान से सिर झुकाता है और निकीतिन उत्तेजित हो उठता है।

आख़िर सराय के मालिक से पिंड छुड़ाकर अफ़नासी सेरेगा से कहने लगता है –

"शायद उसने हमें कोई राजा-महराजा समझ लिया है। यह तो बुरा हुआ।"

"क्यों? बुरा क्यों हुआ?" कपिलोव आपत्ति करते हुए कहता है, "मुहम्मद अच्छा आदमी है, दरबंद भी अच्छा है और समुद्र भी... हम तो यहीं रहेंगे ... गधा ख़रीदेंगे, पहाड़ ख़रीदेंगे ..."

अच्छी तरह सो चुकने पर कपिलोव सोचता है, "सराय के मालिक की ग़लती, हमारे लिए बड़ी नुक़सानदेह हो सकती है।"

"वह खाने का और सूखी घास का ज़्यादा पैसा ले लेगा!" कपिलोव सोचता है।

सूर्य और भी अधिक चढ़ आया है। कारवां-सराय में यूसुफ़ कपड़ों का एक गट्ठर लेकर आता है।

"हसन-बेग ने भेजे हैं, तुम्हारे लिए।" वह निकीतिन से कहता है।

गट्ठर में रेशम के दो बढ़िया चोग़े, नीचे पहनने के कुछ कपड़े, चौड़े चौड़े विचित्र पैजामे और बढ़िया मुलायम बूट थे।

निकीतिन और कपिलोव ने अपने रूसी कपड़े उतारे और नये कपड़े बदल लिये। इन कपड़ों में ये लोग पहिचाने तक न जा रहे थे।

"एकदम मशरिक़ियों की तरह!" यूसुफ़ खुशी से मुस्करा दिया।

यूसुफ़ के खिले हुए चेहरे पर अपने नये दोस्तों और हसन-बेग

के प्रति खुशी के भाव झलकने लगे थे। हसन-बेग ने इन दोस्तों की पूरी पूरी मदद जो की थी।

अली, हंसता हुआ, सिर हिलाने लगता है –

"अच्छा! अच्छा!"

"हसन-बेग कहां है?" निकीतिन पूछता है, "हमें उसके पास ले चलोगे न?"

"चलो न। चाहो तो अभी चलो।"

"अली," निकीतिन कह उठता है, "उस नाव में तुम्हारे दो आदमी थे न?"

"हां, दो।"

"अच्छा... तो चलो, यूसुफ़।"

मुहम्मद ने निकीतिन को रेशमी चोग़ा पहने देखा और मुंह बाकर देखता ही रह गया।

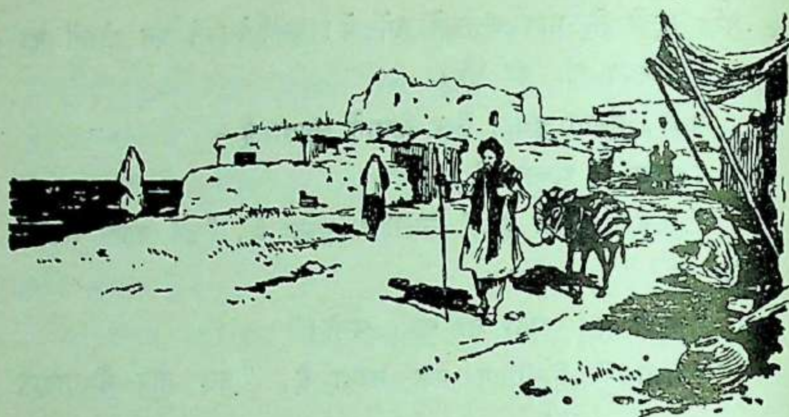
शहर में आबादी कम थी और कई मकान खाली पड़े थे। इधर-उधर खड़े बाड़े भी खंडहर हो चले थे। वहां के खंडहरों की मिट्टी देखकर ही पता चलता था कि कभी वहां मकान रहे होंगे। वहां थोड़ी-सी दूकानें थीं। छोटे छोटे चौराहे थे, जहां कुछ उदास-से हौज़ थे जिनमें पानी न था।

"यहां थोड़े-से ही लोग रहते हैं!" निकीतिन यूसुफ़ से कहता है।

"ऊपरी शहर में ज़्यादा आबादी है," यूसुफ़ उत्तर देता है, "हां, अब तो नावें बाकू जाती हैं, जहां एक अच्छा-सा घाट और मज़बूत क़िला है। वहां ज़िन्दगी गुज़ारना आसान है। इसी लिए दरबंद खाली ख़ाली-सा लगता है। यहां बाज़ार भी छोटा है।"

"तुम यहीं के बाशिंदे हो क्या?"

"नहीं, मेरे रिश्तेदार शेमाखा में रहते हैं।"



राजदूत का मकान दूसरे मकानों को देखते हुए अधिक बड़ा था, कुछ अधिक शानदार। उसके चारों ओर मिट्टी की नहीं, पत्थर की एक दीवाल थी जो काफ़ी दूर तक फैली हुई मस्जिद के अहाते तक चली गयी थी। फाटक पर धनुषाकार तलवारें लिये कुछ चौकीदार टहल रहे थे।

राजदूत का मकान एक बाग़ के बीचोंबीच था। बर्फ़ की तरह सफ़ेद और चारों ओर से एक लम्बे बरामदे से घिरा हुआ। बरामदे में कोई जंगला न था। मकान की खिड़कियां और दरवाज़े संकरे थे।

अंग-रक्षकों से घिरा हुआ हसन-बेग रईसाना पोशाक पहने हुए एक व्यक्ति से बातचीत कर रहा था। वे दोनों बाग़ में आनेवालों की ओर मुड़े।

फ़ौवारों वाले एक तालाब का चक्कर लगाता हुआ निकीतिन हसन-बेग के मकान के पास पहुंच गया।

यूसुफ़ सिर झुकाये जहां का तहां जड़वत् खड़ा रह गया था। निकीतिन ने पहले तो धरती छूकर हसन-बेग को प्रणाम किया, फिर सीधा खड़ा हो गया।

हसन-बेग सिर ऊंचा किये शान से खड़ा था, एक बड़े अधिकारी की भांति। उसके शरीर पर सोने के काम का लाल चोग़ा और सिर पर मूल्यवान रत्नवाली पगड़ी थी।

पापीन के बाल काले थे। उसकी आंखें चंचल थीं। उसकी पोशाक में भी मोती और क़ीमती रत्न जड़े थे। उसका एक हाथ उसकी दाढ़ी पर था।

"शुक्रिया, मालिक," निकीतिन कहता है, "आपकी भेजी पोशाक मुझे ठीक होती है।"

हसन-बेग अभी अभी रंगी हुई अपनी दाढ़ी हिलाता है। और कुछ न बोलते हुए बड़ी बड़ी अंगूठियों से भरे हाथ के संकेत से ही बता देता है कि "अजी रहने भी दीजिये!"

यह शेमाख़ा निवासी इस समय वैसा कायर न लग रहा था जैसा अस्तरखान के पास था और न वैसा कमज़ोर ही जैसा डोंगे में था। अब कौन कह सकता था कि इसपर कभी यूसुफ़ बरसा था या सेरेगा ने उसे हटाकर एक ओर कर दिया था।



"तुम लोग त्वेर के हो?" पापीन ने प्रश्न किया।

"हां, त्वेर के," अफ़नासी ने पुष्टि की, "हम आपकी मदद चाहते हैं! हमें अपने उन साथियों को बचाना है जो नाव

उलट जाने से मुसीबत में पड़ गये हैं। कहते हैं कि वे कैटकों के हाथ पड़ गये हैं।"

"वहां हैं कौन कौन?" पापीन ने पूछा।

"चार हैं मास्कोवाले और एक हमारा त्वेर का साथी, मिकेशिन, और दो पूर्व के व्यापारी।"

"बेग, हमें कुछ न कुछ करना चाहिए।" पापीन बोला, "मदद करो!"

हसन-बेग सिर एक ओर झुकाते हुए कहता है—

"मेरा ख्याल है हमें दरबंद के शासक पोलाद-बेग के पास कोई हरकारा भेजना चाहिए। अगर हम बिना उससे प्रार्थना किये कुछ करेंगे तो वह नाराज होगा। व्यापारी दरबंद आ रहे थे—उनकी चिन्ता पोलाद-बेग को ही करनी थी न। लेकिन वह तो नगर में है ही नहीं।"

"तो कब तक हम उसका इन्तज़ार करेंगे?"

"कौन जाने?" प्रश्नसूचक ढंग से हसन-बेग उत्तर देता है, "मैं तो उसे हुक्म दे नहीं सकता ... जहां इस समय पोलाद-बेग रह रहा है वहां तक पहुंचने में आधा दिन लग जायेगा, फिर हरकारे को उत्तर का इन्तज़ार करने में भी कुछ समय लगेगा ... फ़ैसले के इन्तज़ार में दो दिन तो लग ही जायेंगे।"

"हमें मुसीबत में न छोड़ें, सरकार!" निकीतिन कहने लगता है, "याद है न आपके लिए हमने अपनी ज़िन्दगी तक की चिन्ता न की थी।"

"वहां है क्या तिजारती सामान?"

"सामान तो हमारा सब लुट गया," निकीतिन उत्तर देता है, "मुझे अपने साथियों की चिन्ता है..."

"हुं-ह!" आंखें सिकोड़ते हुए पापीन बोल उठता है, "सब कुछ लुट गया?"

"सब कुछ। कोई चीज़ नहीं बची।"

"तो अब?"

"सिवा आपके अब हमारा कोई सहारा नहीं।"

"लेकिन मैं तुम लोगों की कोई मदद नहीं कर सकता। तुम्हारे अलावा ही मेरी चिन्ताएं कौन कम हैं।"

"हमें यों न छोड़ें, सरकार। हमें मौक़ा दीजिये कि हम आपकी ज़िन्दगी की ख़ैर मनाते रहें। दुष्टों ने तो हमें भिखमंगा बनाकर छोड़ दिया।"

"लेकिन तुमसे कहा किसने था कि इतनी दूर का सफ़र करो। नहीं, मेरे पास कुछ भी नहीं! मुझसे कुछ न कहो।"

निकीतिन चुपचाप अपने घुटनों के बल पड़ गया—

"सरकार मैं अपने लिए ही नहीं कहता ... सबके लिए कहता हूं। अब हम जायें भी तो किस के पास?"

पापीन की त्यौरियां चढ़ गयीं—

"कह तो दिया ... जाकर शाह से अर्ज़ करो। मैं ख़ुद यहां परदेशी हूं ... अच्छा अब जाओ! हम कैटकों के बारे में जो कुछ फ़ैसला करेंगे वह तुम्हें बाद में बता दिया जायेगा।"

निकीतिन उठता है और अपने घुटनों की धूल झाड़ने लगता है—

"वसीली, मुझे माफ़ करना। हमें अकेले आपका ही भरोसा था..."

पापीन चुप हो गया। निकीतिन का हृदय दुख और निराशा से भर गया।

"ज़िन्दगी तो ढकेलनी ही है!" निकीतिन भारी आवाज़ में कह उठता है, "भगवान के नाम पर मैं आपसे थोड़ी मदद चाहता हूं। यहां तो खाने तक का पैसा नहीं। जब तक शाह के पास जायें तब तक के लिए तो कुछ चाहिए ही..."

"अच्छा, तो कुछ भेज दूंगा ..." काफ़ी देर तक चुप रहने के बाद अनिच्छा से पापीन कह उठता है, "अब जाओ।"

अंगरक्षकों के चेहरे बिल्कुल भावहीन थे। हसन-बेग अंगूठियों को रोशनी में नचा रहा है जिससे अंगूठियों से निकलनेवाली किरणें उसके हाथ पर पड़ रही हैं। अफ़नासी, पापीन के मुंह की ओर नहीं अपितु उसके बूटों के नीचे लगी चांदी की नाल की ओर देखता है। वह चुपचाप अपना क्रोध पी जाता है और सिर झुकाकर फाटक की ओर चल देता है।

ये हैं अपने लोग ...

कपिलोव उदासीनता से उसकी बातें सुनता है—

"कितना भेजेगा, यह नहीं बताया?" वह पूछता है।

"नहीं।"

अली, निकीतिन का दुखी चेहरा देखता है और उसके पास बैठकर अपना हाथ उसके कन्धे पर रख देता है।

"बुरी बात है? है न?"

"बुरी बात है, अली। हम इससे बुरी बात की कल्पना भी नहीं कर सकते।"

"मैं तुम्हारी मदद करूंगा। तुमने मेरे प्राण बचाये हैं।"

"यह मत कहो! प्राण बचाये हैं! तुम्हें बचाता नहीं तो ढकेल देता क्या? तुम हमारी मदद कैसे कर सकते हो? तुम भी तो हमारे साथ ही लुट चुके हो!"

"मैं क़रीब क़रीब घर के पास हूं। मेरे साथ मेरे घर चलो। वहां माज़न्द्रान में तुम कुछ तिजारत कर लोगे।"

"अली, सचमुच तुम्हारा दिल बहुत बड़ा है। शुक्रिया। लेकिन मैं अपने साथियों को नहीं छोड़ सकता। और न जाने तुम्हारे यहां काफ़ी

तिजारत भी कर सकूं या नहीं। जानते हो मुझे कितना क़र्ज़ा पाटना है? एक हज़ार रूबल से ज़्यादा! समझे?"

अली मुंह लटकाकर उसके पास ही बैठ जाता है और आंखें नीची कर एक ठंढी सांस लेता है। बेशक एक हज़ार रूबल, यह तो बहुत हुआ ...

इसी समय कारवां-सराय का मालिक यह पता चलाने आता है कि उसके प्यारे मेहमानों को क्या क्या भोजन चाहिए। लेकिन उससे पिंड छुड़ाने के लिए निकीतिन, कपिलोव और अली नगर की ओर चल देते हैं। काली आंखों वाले नंगे नंगे बच्चे चीख़ते-चिल्लाते गन्दे पानी में नहा रहे हैं और पालतू बत्तख़ें उड़ा रहे हैं, भगा रहे हैं। एक दूकान से निहाई पर पड़नेवाली चोटों और घंटी की आवाज़ सुनाई पड़ रही है और देहलीज़ पर फटे-चिथे कपड़े पहने एक बूढ़ा सो रहा है। कहीं चलते हुए ऊंटों के गलों में बंधी हुई घंटियों की टुन टुन भी सुनाई पड़ रही है। बड़े, देखने में भयानक कुत्ते आदमियों को देखकर दुम दबाये भाग रहे हैं।

वीरान बगीचे में नाशपाती और सेवों की भरमार है। अली बेहिचक उन्हें पत्थर मार मारकर गिराने लगता है। व्यापारी फलों को अपनी जेबों और छाती के पास रखते हैं और समुद्र की ओर बढ़ जाते हैं। फिर एक बलूत की छाया में बैठकर उन्हें खाने लगते हैं।

"तुम्हारा शहर है कहां?" निकीतिन अली से पूछता है। वह प्रश्न करता है इसलिए कि मौन टूट जाये और बातों का सिलसिला चल पड़े।

अली दाहिनी ओर और सामने की तरफ़ इशारा करता है– क़िले की दीवालों के उस पार, उठती हुई सफ़ेद लहरों के उस पार।

"और शेमाखा का शाह कहां रहता है?"

"या तो बाकू में या पहाड़ों पर। आजकल वह पहाड़ों पर है। अभी तो गर्मी ही चल रही है न। जाड़ों में अपने महल में रहेगा।"

"जाड़े यहां सख्त होते हैं क्या?"

"तुम्हारी खिज़ां की तरह।"

कपिलोव खाने के बाद बचा हुआ सेब का टुकड़ा ज़मीन पर फेंक देता है।

"शायद शाह हमारी मदद करे!"

"शाह मालदार है!" अली ने हामी भरते हुए कहा।

"नहीं, वह मदद नहीं करेगा," निकीतिन कह उठता है, "हमसे उसे क्या लेना-देना!"

"लेकिन उसे महसूल मिलता है तिजारत से ही!" कपिलोव आपत्ति करते हुए कहता है, "उसे चाहिए कि हमारी मदद करे ..."

निकीतिन उपहास-सा करता हुआ मुस्करा देता है। उसकी मुस्कराहट में कटुता की झलक है।

कुछ दिनों तक व्यापारी आशा और निराशा के बीच झूलते रहे। पापीन ने उन्हें थोड़ा-सा ही पैसा भेज दिया – जैसे ऊंट के मुंह में जीरा। इतने पैसे से तो वे आधा पेट खा भी नहीं सकते। कारवां-सराय के मालिक को उनकी कंगाली की गन्ध मिल चुकी थी। अब वह उन्हें अपने पास तक नहीं फटकने देता, बल्कि वह तो गद्दे भी धीरे धीरे हटाये ले रहा है।

"शैतान समझे उसे! ख़ैर हमें पैसा भी तो कम ही देना पड़ेगा!" कपिलोव थूकते हुए कहने लगता है।

मुहम्मद रूसियों की ओर निगाह उठाकर भी नहीं देखता और व्यापारियों को भी उसका लाल लाल मोटा-सा चेहरा बड़ा नामाक़ूल लगता है।

भगवान भला करे उस मुहम्मद का! व्यापारियों को उससे अधिक आश्चर्य हुआ था शाह फ़रुख-यासार की हरकतें देखकर, जो शेमाखा का हुक्मरां होने के साथ ही साथ पृथ्वी पर अल्लाह का बन्दा समझा जाता था। यूसुफ़ ने बताया था, जैसे ही शाह ने पोलाद-बेग के हरकारे की बात सुनी कि तुरन्त एक हरकारा कैटकों के राजा खलील-बेग के पास दौड़ा दिया, कहलाया तारका के पास जो नाव उलट गयी है, वह रूसी है और मेरे पास आ रही थी।

यह कहानी सुनकर निकीतिन को हंसी आ गयी। हो सकता है हरकारे ने बात ठीक से न कही हो, हो सकता है शाह ने ठीक ठीक न समझा हो, किन्तु ऐसा लगता था कि फ़रुख-यासार को सबसे ज़्यादा दिलचस्पी अपने पास लाये जानेवाले माल के बारे में थी जो उसकी राय में कैटकों ने लूट लिया था। शाह ने कहलाया था कि व्यापारियों को रिहा करके, उन्हें, मय उनके सारे सामान के, उसके पास दरबंद भेज दिया जाये। शाह ने वादा किया था कि वह खलील-बेग की हर समय मदद करने को तैयार है।

खलील-बेग ने व्यापारियों को छोड़ दिया लेकिन माल के बारे में कहला दिया कि उनके पास फूटी कौड़ी तक नहीं है। उसने तो यह भी शिकायत की कि इतने लोगों के खिलाने-पिलाने पर उसे काफ़ी खर्च आया है और इनसे उसे नुक़सान ही उठाना पड़ा है।

व्यापारी दरबंद आ गये। किसी प्रकार मिकेशिन भी आ पहुंचा। वह हांफ रहा था, आहें भर रहा था। उसने सूंघ लिया था कि पापीन ने उनकी मदद की है। इसी लिए अपना हक़ भी मांगने लगा।

"तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा," निकीतिन बीच ही में बोल उठा, "अभी सब पंचायती है।"

"गधा कहीं का! अरे तुम्हें तो हमारा अहसानमन्द होना चाहिए था कि हमने तुम्हारी मदद की!" कपिलोव ने क्रोध दिखाते हुए कहा।

"तुम्हारे बिना भी वे लोग मुझे छोड़ देते!" मिकेशिन भौंक पड़ा, "मैंने तो तुमसे कहा नहीं था कि मेरी फ़िक्र करो। मैं पापीन से शिकायत करूंगा कि तुम मुझे भूखा मार रहे हो। मैं जानता हूं तुमने पैसा छिपा रखा है।"

"दुष्ट कहीं का," मुट्ठी भींचते हुए कपिलोव बोला, "अगर हमें शाह से कुछ मिलेगा भी तो भी तुझे एक कौड़ी न दूंगा। दूं, तो मुंह पर थूक देना!"

व्यापारी शाह की मेहरबानियों पर आस लगाये रहे। उसकी कृपा प्राप्त करने के लिए वे हसन-बेग और पापीन के साथ फ़ीत-दाग़ की पहाड़ी पर शाह के ग्रीष्मकालीन शिविर की ओर चले। हसन-बेग ने घोड़ों का प्रबन्ध कर दिया था। इससे व्यापारियों को आशा भी बंधने लगी थी – इसके माने हैं कि हसन-बेग समझता है कि शाह रूसियों की सहायता करेगा!

पूर्व के व्यापारी दरबंद में ही रह गये। चलते समय अली ने निकीतिन से कहा –

"मैं एक हफ़्ते यहां तुम्हारा इन्तज़ार करूंगा।"

शाह का ग्रीष्मकालीन शिविर – कोईतूल – दरबंद के दक्षिण-पश्चिम में था। रास्ता पहाड़ों, अंगूर के बाग़ों और बादाम के जंगलों से होकर जाता था। मार्ग के दोनों ओर अखरोट और बलूत के घने वन, एस्प और मैपिल के वृक्ष और सेब और नाशपाती के जंगल थे। वनों के भीतर भी जगह जगह पीले और काले आलूचों और मुट्ठी मुट्ठी बराबर सन्तरई बिही के छोटे छोटे जंगल दिखाई पड़ रहे थे। वहां लोगों से डरी हुई सी चिड़ियां वृक्षों में लपटी हुई लताओं से टकरातीं और लताएं सरसरा उठतीं।

मार्ग जितना ही अधिक ऊंचाई पर होकर जाता, इर्द-गिर्द वातावरण उतना ही सुनसान होता जाता और घोड़ों की टापें कभी उन स्थानों पर पड़तीं जहां का पानी सूखा होता, और कभी सूखी हुई घास पर। धीरे धीरे वनों के स्थान पर झाड़ियां आने लगीं – और झाड़ियों का स्थान भूरी नंगी चट्टानों ने लिया।

चारों ओर हरी, नीली, धुएँली पहाड़ियां थीं, जिन्हें देखकर लगता जैसे लोगों को लौटने का रास्ता ही न मिलेगा।

उदास मत्वेई र्‌यावोव घोड़े पर सवार निकीतिन के पास आया। उस संकरे-से मार्ग पर दोनों की रकावें एक दूसरे से टकरायीं। कुछ दूर तक दोनों चुपचाप बढ़ते रहे।

"मैंने तुम्हारे बारे में पापीन से बात की थी," र्‌यावोव धीरे से बोला, "कहता था कि ख्वालीन तक के लिए तुम्हारी मदद चाहता हूं।"

निकीतिन ने कोई जवाब न दिया और पहाड़ी रास्ते की ओर देखता रहा।

"हमने उस नाव की भी चर्चा की जो छोड़ दी गयी थी, और तातारों से हुई लड़ाई की भी ..." हाथ हिलाते हुए र्‌यावोव बोला – "सुनो, अफ़नासी, हमारे साथ मास्को चलो। फिर कुछ सोचेंगे ..."

"तुम आगे नहीं जाओगे क्या?" तिरछी नज़रों से र्‌यावोव को देखते हुए निकीतिन ने कहा, "आगे का रास्ता नहीं देखोगे?"

"पापीन ने मुझे आगे जाने की आज्ञा नहीं दी! और खुद हम भी नहीं चाहते। आखिर रास्ते भी कैसे हैं! यही बात हम बड़े राजा से कह देंगे। कहेंगे कि ख्वालीन के उस पार जाना सम्भव भी नहीं। वहां तो डाके पड़ते हैं। समुद्र के उस पार तो और भी गड़बड़ी है ... तो फिर? मास्को?"

"देखूंगा," उदासीनता से निकीतिन ने उत्तर दिया, "देखूंगा कि शाह जवाब क्या देता है।"

...शेमाखा के बड़े शाह के पास व्यापारियों को जाने की अनुमति नहीं दी गयी। पापीन ने रूसी व्यापारियों का लिखित प्रार्थना-पत्र फ़रुख-यासार को दे देने का वचन दिया और उसने वह वचन निभाया भी। किन्तु पूरे तीन दिनों तक इन्तज़ार कर चुकने के बाद कहीं शाह का उत्तर आया कि वह कोई मदद नहीं कर सकते—व्यापारियों की संख्या अधिक है।

उत्तर सुनते ही उन्हें लगा जैसे फ़ीत-दाग़ की पहाड़ी, बुर्ज, पत्थर का क़िला, बाग़-बगीचे, चौकीदार—सभी कुछ उदास हैं, सभी कुछ नीरस। उनकी अन्तिम आशा भी टूट चुकी थी।

पापीन ने मत्वेई र्याबोव की मार्फ़त कहला भेजा कि उसे शीघ्र ही रूस लौटना है, जो लोग उसके साथ जाना चाहें, जा सकते हैं। मत्वेई र्याबोव अफ़नासी के पास आकर कहने लगा।

"लगता है कि पापीन की बात बनी नहीं। शाह नाराज़ है इसलिए कि उसे दी गयी सौग़ात उसतक नहीं पहुंची। उसने ख़ुद भी कुछ नहीं भेजा। लगता है कि राजदूत और शेमाखा के लोगों की कुछ बनी नहीं।

यह बात ठीक भी लग रही थी। शाह के चाकरों ने रूसियों को ऐसे देखा मानो उनकी खिल्ली उड़ा रहे हों, और उन्हें क़िले के पास तक भी न जाने दिया।

कूच का समय निकट आता जा रहा था। र्याबोव, मिकेशिन और एक और मास्कोवासी ने पापीन का इन्तज़ार करने का निश्चय किया। दो मास्कोवासियों ने शेमाखा जाने का फ़ैसला किया।

शाह का उत्तर जानकर कपिलोव निकीतिन को पहाड़ों पर ढूंढने

गया। उसे आश्चर्य हो गया – निकीतिन का चेहरा शान्त था। वह ज़मीन पर पड़ा पड़ा घास चबा रहा था और मुस्कराता जा रहा था।

"चलो, चलें!" कपिलोव ने पुकारा।

निकीतिन ने, जैसे उसकी बात न मानते हुए, अपना सिर हिलाया और हथेली से घास थपथपाते हुए कहने लगा –

"बैठो... आखिर हम बरबाद ही हो गये, न?"

कपिलोव ज़मीन पर बैठ गया। उसने कोई उत्तर न दिया।

"शाह ने हमारी कोई मदद नहीं की। मैं कहता था न," निकीतिन बोला।

"तुम्हारे इस ठीक कहने को लेकर हम चाटें क्या?" कपिलोव ने आपत्ति की, "तुम्हारे कहने से हमारा पेट भरता है क्या?"

घास थूकते हुए अफ़नासी ने अपने दुखी साथी की ओर देखा।

"हां, पेट भरता है," वह बोला, "अब कम से कम हमें किसी के आगे सिर तो नहीं झुकाना है।"

"कहना आसान है!" उत्सुकता से सेरेगा बोला, "तुम ठहरे टुटरूं-टूं लेकिन मेरे लिए तो मेरी बीवी और बच्चे रो रहे होंगे।"

"इल्या की हालत तो और भी ख़राब है!" अफ़नासी ने उसे याद दिलाते हुए कहा।

"बेशक, उसके लिए हम कुछ भी नहीं कर सकते। इसलिए हमें उसके बारे में बात नहीं करनी चाहिए," सेरेगा ने बात काटते हुए कहा, "बेकार ही मुझे डांटो-फटकारो मत, कहो यह कि अब किया क्या जाये?"

उसने सिर उठाकर अफ़नासी की ओर देखा। कपिलोव की आंखें प्रतीक्षा के कारण थकी थकी-सी और व्यथित-सी लग रही थीं। निकीतिन को भी दुख हो रहा था कि उसने अपने मित्र को क्यों कड़ुई बात कह दी।

"सेरेगा, सुनो," अफ़नासी ने अपने साथी का घुटना छूते हुए कहा, "मैं तुम्हें थोड़े ही कुछ कहता हूं। मेरे दिमाग़ में एक विचार आ रहा था ..."

कपिलोव के कान खड़े हो गये। उसकी छोटी छोटी काली आंखों में अब भी अविश्वास झलक रहा था।

"हमारे लिए अब भी एक रास्ता है," धीरे धीरे अफ़नासी ने कहना शुरू किया।

"राजदूत के साथ रूस जाने का?"

"रूस? नहीं ... रूस के दरवाज़े तो हमारे लिए बन्द हो चुके हैं। मैं वहां भिखारी बनकर या कोड़े खाकर मरना नहीं चाहता – मेरी ज़िन्दगी इसके लिए नहीं है ... नहीं, रूस नहीं! समुद्र के उस पार।"

कपिलोव ने हाथ हिला दिया।

"अली के साथ? कुछ तिजारत कर भी सकोगे? और फिर रूस लौट सकोगे? मैं तो कहता हूं मेरे लोग मेरा इन्तज़ार कर रहे हैं।"

"कोई मेरा भी ... इन्तज़ार कर रहा है ..." निकीतिन ने अपने मित्र की आंखों में आंखें डालते हुए कहा और कपिलोव तुरन्त समझ गया कि निकीतिन का इशारा किधर है। "तुम तो मेरी बात जानते ही हो। मुझे भी त्वेर जल्दी ही जाना है। लेकिन जाऊं कैसे और क्या लेकर? अगर काशीन अपना क़र्ज़ माफ़ भी कर दे तो भी मैं वहां खुश न रह सकूंगा। लोग मुझे उधार देंगे नहीं – किस बूते पर देंगे, मेरे पास बचा ही क्या है! फिर क्या ग़ुलाम बन जाऊं या दुनियादारी छोड़कर मठ में रहने लगूं? या फिर ओलेना की मुसीबतें देखा करूं और उंगलियां चबाया करूं? या हर एक के आगे हाथ फैलाऊं-गिड़गिड़ाऊं? मैं यह सब नहीं करना चाहता! नहीं करूंगा!"

कपिलोव ने निकीतिन को ऐसी मानसिक स्थिति में पहली बार देखा था। वह जानता था – निकीतिन बहादुर है, तत्काल निश्चय कर सकता है, लड़ाई में भी टिक सकता है, लेकिन उसने उसके चेहरे पर ऐसी नाराज़गी कभी न देखी थी। उसकी ठुड्डी आगे निकली थी, गाल की हड्डियां हिल-डुल रही थीं – लग रहा था मानो वह अपने सबसे भयानक शत्रु को घूर रहा हो।

निकीतिन ने अपने चोग़े को ज़ोर से झटका दिया।

"हर आदमी को अपनी क़िस्मत ढूंढनी चाहिए। मैं रूस में कुछ न कर सका तो फिर समुद्र के उस पार तक़दीर आज़माऊंगा। अली! अली का क्या? वह मेरी कब तक सहायता कर सकता है – यही पहले कुछ दिन। मुझे तो और आगे जाना है, भारत।"

कपिलोव को तुरन्त कोई जवाब न सूझा। फिर उसपर से आंख हटाते हुए बुदबुदाने लगा –

"भगवान भला करे, अफ़नासी! तुम कहते क्या हो?"

"ठहरो," निकीतिन ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "मेरी तरफ़ देखो। मेरा दिमाग़ ठीक है। मैं पागल नहीं हूं। क्या भारत के नाम से तुम्हें डर लग रहा है? लेकिन तुम उसके बारे में जानते क्या हो? हां? तुमने उसकी कहानियां सुनी हैं? लेकिन मैंने कहानियां ही नहीं सुनीं, उसके बारे में पढ़ा भी है। लोग वहां से माल लाते हैं? मरते नहीं? नहीं, वे नहीं मरते। माल बीसियों हाथों से होता हुआ आता है, इसी लिए तो जो माल हम तक पहुंचता है वह सोने से ज़्यादा महंगा होता है। हां। लेकिन लिखी गयी और कही गयी इन कहानियों में और भले ही कुछ हो, एक बात ज़रूर सच है – भारत देश बड़ा अद्भुत है। वहां सब कुछ है। यही बात मैंने अली और दूसरे दोस्तों से कही थी। फिर ख़ैर, भारत से नज़दीक नहीं है। माज़न्द्रान में ऐसे

व्यापारी होते हैं जिनमें बहुत-से ऐसे भी होंगे जो लगभग भारत तक गये होंगे, जिन्होंने भारत के लोगों के साथ व्यापार किया होगा। समुद्र पार करना ही है। लेकिन मैं उसे देखकर रुकूंगा नहीं – वह मेरा रास्ता नहीं रोक सकता। मैं तो समझता हूं – भारतीय हमारी ही तरह रोज़ काम ग्रानेवाली चीज़ों का इस्तेमाल करते हैं फिर हमें उनसे डरने की कोई ज़रूरत नहीं। वे हम जैसे ही तो हैं।"

कपिलोव ने ग्रनमनेपन से ग्रांख बिचकायी ग्रौर कुछ कहने के लिए मुंह खोला, लेकिन निकीतिन ने उसे इसका मौक़ा ही न दिया –

"ज़रा ठहरो! तुम पहले शेमाख़ावासियों के बारे में कुछ जानते थे? नहीं! तुम्हें तो उनके पास तक जाने में डर लगता था? हां, ऐसा ही लगता था! तो क्या हुग्रा? ग्रादमी तो ग्रादमी हैं। यहां यूसुफ़ जैसे ग्रच्छे लोग भी रहते हैं ग्रौर मुहम्मद जैसे बदमाश भी ...मैं समझता हूं भारत में भी ऐसा ही होगा।"

"सचमुच? यह बातें गम्भीरता से कह रहे हो?" ग्राख़िर कपिलोव को बोलने का कुछ मौक़ा मिल ही गया।

"ज़रूर! मैं तुमसे कहता हूं – सिवा भारत के ग्रौर कोई जगह भी तो नहीं जहां हम जा सकें। हमें एक बार फिर ख़तरा उठाकर ग्रपना भाग्य ग्राज़माना चाहिए। ग्रौर ग्रगर कामयाबी मिली तो बड़े ग्रादमी बन जाग्रोगे ग्रौर फिर दूसरों के ग्रागे सिर झुकाना भूल जाग्रोगे।"

"हे भगवान! लेकिन भारत में भी क्या धरा है? ग्रगर तुम रूस नहीं जाना चाहते तो फिर यहीं कुछ धंधा कर लो। भारत जाने की इतनी जल्दी भी क्या है! ग्रौर वहां जाने का कोई रास्ता भी तो नहीं है ... वह देश यहां से दूर, बहुत दूर है ... ग्रौर कौन जाने इस नाम का कोई देश न भी हो ... ग्रफ़नासी ... बेकार ही तुम मेरा सिर चाट रहे हो?"

सेरेगा ने निकीतिन के चेहरे पर एक पैनी दृष्टि डाली।

"ओफ़!" अफ़नासी ने सिर उठाया, "मैं देखता हूं कि मेरी बातें तुम्हारे दिमाग़ में नहीं बैठतीं। अच्छा तो चलो।"

"तो तुमने कब भारत जाने का फ़ैसला किया है?" कपिलोव ने अनमनेपन से पूछा।

"फ़ैसला तो मैंने न जाने कब का कर लिया," निकीतिन शान्ति से बोला, "मैंने उसके बारे में बहुत कुछ सुना है, अब उसे देखना चाहता हूं!"

"तुम बात तो ऐसी करते हो जैसे कोई पड़ोस के गांव में जा रहे हो।"

निकीतिन ने कपिलोव को ऊपर से नीचे तक देखा—

"तो हमेशा घर का ही चक्कर काटते रहें क्या! कुछ लोगों को नगर से गांव तक जाना पहाड़ हो जाता है और कुछ ऐसे भी हैं जो भारत तक का सफ़र करना खेल समझते हैं। तुम भी मेरे साथ चलो। हम लोग ज़रूर वहां तक पहुंच जायेंगे।"

"भगवान तुम्हारी मदद करे, अफ़नासी। मास्कोवासियों की तो नानी मरती है ख्वालीन के उस पार जाने में, और तुम हो कि ..."

... यह कब की बात थी? हाल ही की तो। बस, इतना ही समय हुआ! आखिरी रात सब साथी साथ साथ रहे। कल विदाई की घड़ी जो थी। कोईतूल से सारे रास्ते-भर, दरबंद में हर समय और दरबंद से बाकू जाते वक़्त भी कपिलोव बराबर निकीतिन के साथ रहा था। निकीतिन कपिलोव की घबड़ाहट पर कभी तो गुस्सा हो जाता और कभी मुस्करा देता।

निकीतिन को चारों ओर निराशा ही निराशा दिखाई पड़ रही थी और कोई रास्ता न सूझ रहा था। तभी, अन्ततः, उसने पक्का निश्चय कर लिया कि वह भारत ज़रूर जायेगा।

निकीतिन शाह के पास जाने के इन्तज़ार में था। ऐसे में एक दिन वह ऊपरी शहर की ओर निकल गया। वह अकेला था और अंगूरों के ढेरों, शराब और ठंढे पानी की मसकों तथा पनीर और मिठाइयों के बाज़ार से होता हुआ आख़िर वहां पहुंच गया जहां क़ालीन बिकते थे। बेशक, उसके पास पैसा न था लेकिन उसे दूर देशों की, समुद्र पार से आयी हुई चीज़ों में दिलचस्पी तो थी।

क़ालीन ख़ूबसूरत थे और सस्ते भी। बढ़िया बढ़िया डिज़ाइनों के दो-तीन क़ालीन रूस ले जाइये और मालदार बन जाइये।

कारीगर ऐसी ऐसी सुन्दर डिज़ाइनें क़ालीनों में बना कैसे लेते हैं? उन्हें इतने अद्भुत रंग मिल कहां से जाते हैं?

इन क़ालीनों में उसे एक क़ालीन विशेष रूप से आकर्षक लगा—देखने में बड़ा, लाल रंग का, जिसकी काली, सफ़ेद और नीली डिज़ाइनें एक दूसरी में इस ख़ूबसूरती से गुथी-मिली थीं कि आंख उन्हीं पर लगी रह जाती। क़ालीन का एक एक रेशा जैसे उसकी निगाहों में बसता जा रहा था।

एक ख़रीदार उसे ख़रीद रहा था—एक बदशक्ल मुल्ला, अपने पिचके हुए पेट पर हाथ बांधे सांवले चेहरेवाले व्यापारी से क़ालीन के दाम कम करने के लिए सौदेबाज़ी कर रहा था।

व्यापारी क़ालीन पर कुछ मुनाफ़ा कमाने के चक्कर में था। लेकिन मुल्ला को यक़ीन था कि वह उसे और किसी के हाथ न बेचेगा क्योंकि वह ख़ुदा के बन्दे को नाराज़ करके उसे कभी ख़ाली हाथ वापस न जाने देगा। शायद इसी लिए मुल्ला उसे मनमानी क़ीमत देने की ज़िद कर रहा था।

"अमां, दे भी दो, वरना वह मुफ़्त के दामों ख़रीद लेगा!" किसी न व्यापारी से मज़ाक़ करते हुए कहा।

"अरे बेच भी लो न। अगर ऐसा कुछ अच्छा काम करो तो किसी हूर का चुम्बन मज़े में मिल जायेगा!" किसी दूसरे ने राय दी।

कुछ निठल्ले, मुल्ला और व्यापारी के इर्द-गिर्द जमा होकर क़हक़हे लगा रहे थे।

"तुम इसका क्या चाहते हो?" व्यापारी को आंख मारते और भीड़ में से घुसते हुए निकीतिन ने प्रश्न किया।

वहां खड़े हुए काले और नाटे पहाड़ियों के बीच निकीतिन एक दैत्य जैसा लग रहा था। उसे धकियाकर हटा देने की किसी की हिम्मत न हुई।

व्यापारी निकीतिन का मतलब समझ गया। उसने दस तमग़े – पांच रूबल – मांगे।

"चार रूबल दूंगा!" उसके आगे हाथ बढ़ाते हुए निकीतिन बोला, "आठ तमग़े लो और ढूंढ लो अपनी हूर को इसी दुनिया में। चलो लपेटो क़ालीन।"

मुल्ला ने क़ालीन थाम लिया।

"सौदा अभी खत्म नहीं हुआ! ए, सौदागर यह न भूलना कि मैं खुदा का बन्दा हूं। और पहले आया था!"

"सरकार, मुझे अल्लाह के नाम की याद न दिलायें! क़ालीन मैं उसके हाथ बेचूंगा जो मुझे ज़्यादा पैसे देगा ... नौ तमग़े!"

"आठ, आठ!" निकीतिन शान्ति से बोला, "इतने तमग़ों में तो तुम्हारे मुहम्मद ने भी क़ालीन न खरीदा होगा।"

"कुधर्मी!" मुल्ला फुसफुसाया, "उनके नाम को अपवित्र न करो!"

"क़ालीन लपेट दो!" मुल्ला की ओर कोई ध्यान न देते हुए निकीतिन क़ालीन में उंगलियां गड़ाने लगा, "हूरें इन्तज़ार कर रही हैं।"

सभी लोग उस बदशक्ल और निरीह की तरह इधर-उधर देखते हुए मुल्ला पर हंस पड़े।

"तुम तो भले आदमी हो! उसे किसी कुधर्मी के हाथ दे दोगे क्या?"

"ए मुल्ला, इस क़ालीन पर वह अपने ख़ुदा की इबादत करेगा। कुछ और दाम बढ़ा दो न!"

"मैं क़ालीन बेचता हूं," व्यापारी बोला, "अल्लाह गवाह है, वह ज़्यादा क़ीमत दे रहा है।"

"अच्छा, मैं भी आठ तमग़े दूंगा," हाथ ऊपर उठाते हुए मुल्ला बोला, "दूंगा, लेकिन क़ालीन नहीं जाने दूंगा। क़ालीन मेरा है। मैं पहले आया था।"

"अजी मुल्ला जी! यह नहीं होगा," क़ालीन पर हाथ रखते हुए निकीतिन कहने लगा, "आठ तमग़े, यह मेरा दाम है। क़ालीन मेरा है।"

"तो तुम क़ालीन किसी कुधर्मी को दे दोगे?" मुल्ला ने व्यापारी से कहा, "थू है तुम पर।"

"लेकिन वह ठीक कहता है, दाम तो पहले उसी ने लगाया था..."

"तुम मुझसे ज्यादा मांगते हो? एक तमग़े के लिए तुम अपना ईमान बेच रहे हो, कैसे सौदागर हो तुम!"

"यहां ईमान का क्या सवाल?" निकीतिन ने आपत्ति करते हुए कहा, "अरे ख़ुदा के बन्दे, अपनी मस्जिद बाज़ार में तो मत घुसेड़ो। यहां सभी एक ही ख़ुदा की इबादत करते हैं।"

"तुम सुन रहे हो, सुन रहे हो न, वह क्या कह रहा है?! फिर भी क़ालीन तुम उसी को दोगे?!"

मुल्ला ग़ुस्से से कांप रहा था और लोग क़हक़हे लगाकर हंस

रहे थे। व्यापारी सकुचा रहा था। उसकी समझ ही में न आ रहा था कि वह क्या करे। आखिर निकीतिन ने ही उसकी मदद की।

"अच्छा अच्छा, तुम्हारे रुतबे का लिहाज़ करके मैं हट जाता हूं। तुम्हीं देखो बाज़ार में भी मैं दूसरों के मज़हब की क़द्र करता हूं। नहीं, नहीं, शुक्रिये की कोई ज़रूरत नहीं," उसने ऐसी मुद्रा बनायी जैसे वह कृतज्ञता प्रकट करने से उसे रोक रहा हो, "हो सकता है कि उस दुनिया में मुझे इन आठ तमग़ों का फल मिल जाये।"

"तुम्हें फल मिलेगा सिर्फ़ तुम्हारी गालियों का और चुगलियों का," पैसा गिनते हुए मुल्ला क्रोध से भनभनाया।

जब मुल्ला क़ालीन लेकर जाने लगा तो पीछे से लोगों ने छींटेकशी की और सीटियां बजानी शुरू कर दीं। बाज़ार के लोग तो यों भी ऐसे ऐसे तमाशे देखने के उत्सुक होते हैं। वे इस भूरी दाढ़ीवाले परदेशी की साहसिकता और तेज़ ज़बान पर मुस्करा रहे थे। लोग उसके कंधे और पेट थपथपाकर उसे शाबाशी दे रहे थे।

व्यापारी बड़ा ख़ुश था, आकर निकीतिन से बोला –

"मेरी दूकान पर चलो। मेरे पास क़ालीन ही नहीं, कुछ और भी है।"

निकीतिन ने दोनों हाथ झुला दिये –

"दोस्त, अगर मेरे पास पैसा होता, तो इस क़ालीन को हाथ से न जाने देता! यह क़ालीन है कहां का?"

"बुखारा का। अफ़सोस कि तुम्हारे पास पैसा नहीं। मैं तुम्हारे हाथ एक चीज़ बेचना चाहता हूं ... अच्छा, आओ मेरे साथ कुछ कुमीस * पियो।"

---

* कुमीस – घोड़ी का दूध।

"शुक्रिया। क्या चीज़ है वह?"

"तुम्हारे पास तो पैसा ही नहीं।"

"तो इसके माने हैं कि तुम उसे बेचकर नुक़सान उठाने का ख़तरा मोल नहीं लेते!"

"बात तो ठीक है!" दूकानदार हंस दिया, "पर तुम्हें बड़ी निराशा होगी। चीज़ सुन्दर है।"

"तो क्या सुन्दर चीज़ को देखकर निराशा होती है?"

"बेशक, अगर वह चीज़ न मिले तो।"

"यह जानकर ख़ुशी ही हो कि ऐसी चीज़ दुनिया में है तो।"

"हुं-ह!" दूकानदार ने उत्तर दिया, "दरवेश के लिए शाह की प्रेमिका से क्या लेना-देना? बेचारा उसकी सुन्दरता की सराहना-भर कर सकता है और मन ही मन दुख कर सकता है कि वह शाह क्यों नहीं हुआ।"

"तो उसे चाहिए कि शाह बने, कोशिश करे।"

"दरवेश हैं हज़ार और शाह–एक ही," दूकानदार लम्बी सांस लेता हुआ बोला, "कोई न कोई तो हमेशा दुखी रहता ही है... अच्छा, अच्छा, मैं वह चीज़ तुम्हें दिखाऊंगा।"

दोनों दूकान में घुस गये। वहां दूकानदार ने बक्से नहीं खोले अपितु छाती के पास से एक थैली निकालकर उसमें से एक अख़रोट निकाला। दरबंद की सड़कों पर ऐसे ढेरों अख़रोट मिलते थे। उसने अख़रोट अपनी हथेली पर रख लिया।

"कभी ज़िन्दगी में ऐसी चीज देखी है तुमने?" ओंठों पर हल्की-सी मुस्कराहट बिखेरते हुए उसने कहा, "ऐसी ख़ूबसूरती, ऐसा हुनर कभी ही कहीं देखने को मिलता है? हुं-ह? इसे ज़रा ध्यान से देखो! यह है एक ख़ज़ाना!"

"क्या!" निकीतिन ने सावधानी से कहा, "ज़रा हाथ में तो देना..."

"लो।"

निकीतिन कुछ भी न समझ सका। मामूली-सा अखरोट, लेकिन ज़रूर वह कोई साधारण अखरोट न होगा। अगर ऐसा होता तो दूकानदार मुस्कराता नहीं। आख़िर इसमें राज़ क्या है? शायद उसके भीतर कुछ हो? लेकिन भीतर क्या हो सकता है? वह इतना हल्का जो है।

"मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आता!" निकीतिन ने स्वीकार किया, "सौदागर, तुम मज़ाक़ कर रहे हो!"

"इसकी सुन्दरता ने तुम्हें चौंधिया दिया है!" दूकानदार मज़े ले लेकर कहने लगा, "तुम्हारी आंखों की रोशनी तक छीन ली है! ज़रा ध्यान से देखो इसे!"

"यह लो अपना अखरोट," निकीतिन बोला, "मुझे बनाओ मत। झूठ मत बोलो।"

दूकानदार ने अखरोट ले लिया और एक बार फिर हथेली पर उछाला।

"अरे, क्या मैं झूठा लगता हूं ... इसे ज़रा ठीक से देखो। अच्छी तरह ... एक, दो ... देख रहे हो?"

दूकानदार के हाथों में अखरोट के दो टुकड़े हो गये और उसमें गरी की जगह पिस्तई रंग के रेशम का एक छोटा-सा गोला निकल आया।

"अरे, यह क्या है?" निराशा-से मुस्कराते हुए निकीतिन बोला, "यह है क्या, और किसलिए?"

"तुम्हें पसन्द नहीं?" कृत्रिम खेद से व्यापारी ने पूछा, "मैं तो तुम्हें खुश करना चाहता था! लेकिन अफ़सोस! बेशक, इसकी

ज़रूरत किसे पड़ सकती है? इसे तो फेंक देना चाहिए... इस तरह... इस तरह ..."

इतना कहकर व्यापारी हाथ से वह गोला उछालने लगा। प्रत्येक उछाल के साथ हवा में धीरे धीरे पिस्तई रंग का एक नर्म धुग्रां-सा उठने-गिरने लगा। धुएं की एक लपेट दूसरे के ऊपर बह-सी रही थी। एक ही मिनट में सारी दूकान हरी हरी-सी धुन्ध से भर गयी।

अफ़नासी साश्चर्य इधर-उधर देखने लगा। कितने हाथ लम्बा कपड़ा होगा यह? और यह बनाया किसने है? यह तो मकड़ी के जाले से भी महीन है!

"लो, हाथ में लेकर देखो!" व्यापारी ने उसे कपड़ा देखने की अनुमति देते हुए कहा, "इसे खींचकर देखो, खींचकर! डरो मत! चाहो तो ज़ोर से खींच सकते हो।" निकीतिन ने डरते डरते उस मुलायम कपड़े को खींचा। कपड़ा मज़बूत था। उसने और तेज़ी से खींचा—कपड़ा नहीं फटा। अब उसने उसे चीरने की कोशिश की, फिर भी वह टस से मस न हुआ!

"इसे नापना चाहते हो?" दूकानदार ने पूछा, "अन्दाज़ लगाओ कितना लम्बा होगा?"

"ओफ़!" बीस हाथ तक नाप चुकने के बाद निकीतिन विस्मित होकर कहने लगा, "कितनी आश्चर्यजनक बात ... अगर यह बात किसी ने मुझसे कही होती तो मैंने विश्वास न किया होता। यह कपड़ा आता किस काम है?"

"रईस लोग इसकी पगड़ी बनाते हैं और नयी-नवेलियां—पोशाक।"

"इसकी क़ीमत क्या होगी?"

"सारे अखरोट की? सौ तमग़े।"

"सौ-उ-उ?"

"सौ! ऐसी चीज़ कहीं देखने में भी आती है। यह अखरोट भारत की कला है।"

निकीतिन के दिमाग़ में एक विचार कौंध गया। सौ तमग़े–पचास रूबल। यह क़ीमत यहां है। और मास्को में–दस गुनी ... पांच सौ ... एक अखरोट के लिए, जो मुट्ठी में आ सकता है!

"तुम भारत के हो?"

"अरे नहीं! यह अखरोट मैंने करमान में खरीदा था।"

रेशमी कपड़ा लपेटते हुए दूकानदार ने किसी और चीज़ के बारे में भी कहा, कुछ छींटेकशी भी की, किन्तु निकीतिन ने कुछ न सुना।

"और अगर ..." वह सोचने लगा। उसने यह विचार अपने मस्तिष्क से निकाल बाहर करना चाहा, लेकिन वह और भी दृढ़ता से उसके दिमाग़ में जड़ जमाने लगा–"तुमने तो भारत जाने का इरादा कर ही लिया है," उसकी चेतना जैसे कह उठी–"तुम तो हमेशा ही विदेशों की ओर खिंचते रहे हो? उन्हें देखने की इच्छा भी तुम्हारे मन में उठती रही है? तो अब तुम्हें क्या हो गया?"

"लेकिन वह समय और था," तुरन्त उसकी आत्मा ने आपत्ति की, "तब मैंने खाली हाथ जाने का इरादा नहीं किया था। लेकिन अब तो मैं दो टके का हो गया हूं!"

"तो क्या हुआ!" तुरन्त उसे उत्तर मिला, "अगर तुम्हारे पास माल होता और तुम पहले की ही तरह लूट लिये जाते? तो क्या होता? लौट आते क्या? और लौटकर जाते कहां? किसलिए? नहीं, आगे जाता! सचमुच, अफ़नासी, तुम्हारे लिए भारत ही वह देश है, जहां तुम अपनी हालत सुधार सकते हो।"

निकीतिन दूकान से बाहर चला ग्राया। वह चिन्तित था – "भारत! भारत!" उसके दिमाग़ में एक यही शब्द चक्कर लगाता रहा। ऐसा लग रहा था जैसे ज़िन्दगी स्वयं उसे दु:साध्य प्रयत्नों की ग्रोर ढकेल रही है ग्रौर वह यह भी भूल रहा था कि उसे हर क़दम फूंक फूंककर रखना चाहिए।

शेरवानशाह के उत्तर ने ग्रन्ततः उसकी ग्राखिरी हिचकिचाहट भी दूर कर दी। उसने लोगों से इस ग्रद्भुत देश का रास्ता भी पूछ लिया था ग्रौर उसकी जान-पहचानवाले व्यापारियों, उसके दोस्त ग्रली ग्रौर क़ालीन बेचनेवाले सौदागर ने भी उसे यही बताया था कि यह रास्ता ख्वालीन के पार, माज़न्द्रान प्रदेश के चपाकुर ग्रौर ग्रामुल नाम के नगरों ग्रौर वहां से ख़ुरासान होते हुए करमान, तारुम ग्रौर होर्मुज़ से सीधे हिन्द महासागर तक जाता है। उसके बाद जाना होता है पानी के जहाज पर। उन्होंने यह भी बताया था कि भारत में ऐसी बहुत-सी चीज़ें हैं जो रूस के लिए बड़े काम की हैं।

"तो फिर?" ग्रफ़नासी ने मन ही मन प्रश्न किया – "यह ठीक है कि हममें से कोई भी वहां नहीं गया। इसके माने हैं वहां जानेवाला मैं ही पहला ग्रादमी हूंगा . . . निकीतिन, हिम्मत बांधो! शायद, तुम्हारे पीछे दूसरे लोग भी जायेंगे! रूस के लोग भी भारत भूमि के दर्शन करेंगे।"

कोईतूल से लौटने पर ग्रफ़नासी पहले पहल ग्रली से मिला।

"तुम्हारे साथ चलूंगा!" उसने ग्रली से कहा, "तुमने मुझे ग्रपने साथ ले चलने का इरादा तो नहीं बदल दिया?"

ग्रली ख़ुशी से उसका हाथ थपथपाने लगा।

"लेकिन हमें समझौता करना होगा!" निकीतिन ने उसे सचेत करते हुए कहा, "मुफ़्त तुमसे मैं कुछ भी न लूंगा। ग्रगर चाहते हो तो मुझे काम दे दो।"

अली ने बहस करने की कोशिश की, बिगड़ा भी, लेकिन अफ़नासी अपनी बात पर अड़ा रहा। अन्ततः अली को हार माननी पड़ी। आखिर यह निश्चय किया गया कि अफ़नासी अली के व्यापार में उसकी सहायता करेगा और अली. उसे छः तमग़े महीना वेतन और खाना-पीना भी देगा। इस ऊंची तनख्वाह का हठ स्वयं अली ने ही किया था।

कपिलोव ने ये सारी बातें सुन ली थीं। उसका चेहरा मुरझा गया था।

"उसने भारत जाने का पक्का इरादा कर लिया है!" उसने भारी आवाज़ में अली से कहा, "शायद तुम्हीं उसके दिमाग़ से यह विचार निकाल सको!"

"ओह?" अली ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "सचमुच? रास्ता ख़तरनाक है ... हम आमुल में काम करेंगे। वहां शान्ति है!"

"मालिक, तुम इसकी चिन्ता मत करो!" निकीतिन हंस दिया, "तुम्हारा काम है—मुझसे काम लेना!"

कपिलोव अकेले ही बड़बड़ाता रहा—

"म्लेच्छ के यहां गुलामी करोगे ... इससे तो अच्छा है रूस लौट चलो ..."

"कैसी ग़ुलामी?" निकीतिन आंखें सिकोड़ता हुआ बोला, "मुंह से बात निकालने के पहले सोचते-विचारते भी हो। मैं अली का ग़ुलाम नहीं हूं। जब चाहूंगा—चला जाऊंगा। मैं उसके साथ कुछ आगे जाऊंगा, थोड़ा पैसा कमाऊंगा और अपने रास्ते चल पड़ूंगा। अगरचे वह हमारे मज़हब का नहीं, फिर भी भला आदमी है। पापीन को देखो। कहने को तो हमारे ही मज़हब का है लेकिन उसका हिया पत्थर से भी अधिक कठोर है। हमें कैसी मुसीबत में छोड़ दिया उसने।"

ज़मीन की ओर देखते हुए कपिलोव ने दुराग्रहपूर्वक आपत्ति की—

"वहां तुम्हारा धर्म चला जायेगा ... तुम मेरे लिए पराये नहीं हो, समझे!"

अफ़नासी का कलेजा ठंढा हो गया। अपने मित्र की चिन्ता से वह द्रवित हो उठा।

"डरो मत!" निकीतिन ने धीरे से उत्तर दिया, "रूस को मैं सबसे अधिक प्यार करता रहा हूं और करता रहूंगा। तुमने मेरे लिए जो चिन्ता प्रकट की है उसके लिए धन्यवाद। बस मुझे एक ही दुख है कि तुम मेरे साथ नहीं जाना चाहते।"

"मेरे वहां जाने का कोई मतलब नहीं!" कपिलोव ने दृढ़ता से कहा।

"तो फिर हमारे रास्ते अलग अलग हैं ..."

निकीतिन के पक्के निश्चय को देखकर सेरेगा ने उसे आगे समझाने-बुझाने की कोई कोशिश न की और न निकीतिन ने भी यह प्रयत्न किया कि वह अपना इरादा बदल दे। अब दोनों, अलग अलग, अपने अपने रास्ते जाने की तैयारी कर रहे थे।

व्यापारियों को तातारों से जो 'मछलियां' मिली थीं वे बेच डाली गयीं। हसन-बेग ने यूसुफ़ के हाथ उस नाव के दाम भी भेज दिये जो अस्त्रूवा में छोड़ दी गयी थी। बेग की आत्मा की पुकार का ही यह फल था। यह सारा पैसा निकीतिन ने अकेले कपिलोव के साथ बांट लिया। दोनों को पांच पांच रूबल मिल गये। अब उन्हें मायूसी से लड़ते रहने की कोई ज़रूरत न रही थी ...

आखिरी रात वे साथ साथ रहे। कारवां-सराय के अधखुले दरवाज़े में से आलूचे की एक काली डाल और टिमटिमाता हुआ एक सितारा दिखाई दे रहा था। बाहर जलनेवाली आग की हल्की हल्की रोशनी कमरे में आ रही थी। ऊंट और घोड़े दीवाल के पीछे पैर पटपटा रहे

थे। आग के पास कुछ लोग गा रहे थे। उनका भाग्य भी इसी विदेशी भाषा के गाने की तरह दुर्बोध ...

"सो रहे हो?" निकीतिन पूछता है।

"नहीं," कपिलोव उत्तर देता है।

"तुमसे कुछ कहना चाहता हूं।"

"कहो। जो कहोगे, करूंगा।"

"जब त्वेर लौटना तो ओलेना से मेरा नमस्ते कहना। कहना मैं निकल गया हूं सुख की तलाश में।"

"कह दूंगा।"

"कुछ और भी... यह भी कहना कि मैंने उसे उसके दिये हुए वचन से मुक्त कर दिया है। वह अब अपनी ज़िन्दगी बरबाद न करे। बस मुझे अपनी प्रार्थनाओं में न भूले। और मैं भी उसे न भूलूंगा।"

"कह दूंगा।"

दरबंद, ख़्वालीन, शेरवान–सभी जगह रात का अंधेरा था। कपिलोव ने दांत भींच लिये। मित्र मौत के मुंह में जा रहा है लेकिन मैं उसे नहीं बचा सकता।

दरबंद से सराय, और फिर सराय से काज़ान तक राजदूत पापीन पानी के रास्ते चलता रहा। काज़ान के आगे पानी का सफ़र असम्भव हो गया था, क्योंकि वोल्गा पर धीरे धीरे बर्फ़ जम चुकी थी। दूतावास के लोग और राजदूत के साथ साथ चलनेवाले व्यापारी स्लेज-गाड़ियों पर बैठकर आगे की यात्रा करने लगे।

पापीन चिन्ताग्रस्त लग रहा था। अस्तरख़ान के विरुद्ध शेरवानशाह से कोई भी समझौता न किया गया था। अस्तरख़ान के निकट जो डकैती हुई थी उसमें रूसियों का काफ़ी नुक़सान हुआ था। पापीन को डर था कि इससे बड़े राजा का सारा क्रोध उसपर ही उतरेगा।

नोवगोरद तक मिकेशिन, पापीन के साथ यात्रा करता, भूरे चूहे की तरह स्लेज-गाड़ी में लदे हुए भेड़ की खाल के कोटों के नीचे पड़ा पड़ा अपनी जान की ख़ैर मनाता और बच निकल आने की अपनी सफलता पर मन ही मन भगवान को धन्यवाद देता रहा। सचमुच मनुष्य यह अनुमान नहीं लगा सकता कि कहां उसे लाभ होगा, कहां हानि।

नीज्नी नोवगोरद में निकीतिन के साथ कहासुनी हो जाने के बाद मिकेशिन को बराबर डर बना रहा था इसलिए कि उसने अफ़नासी से काशीन को धोखा देने की बात चलायी थी। वह जानता था कि मौक़ा पड़ने पर निकीतिन सब कुछ वसीली से कह देगा। तब तो मिकेशिन की ज़िन्दगी ही बरबाद हो जायेगी!

रास्ते में लुट जाने से तो सभी कुछ बदल गया था। लेकिन निकीतिन के किसी अज्ञात भारत देश में चले जाने से मिकेशिन को नयी आशा बंधने लगी थी।

मिकेशिन ने आनन-फ़ानन यह निश्चय कर डाला कि वह काशीन से क्या क्या कहेगा। कहेगा कि वह सराय में नहीं ठहरा था, बल्कि सबों के साथ शेमाखा गया था क्योंकि, जैसा पहले से ही तय हो चुका था, उसे निकीतिन पर निगाह रखनी थी। कहेगा कि अफ़नासी किसी न किसी प्रकार उससे निगाह बचाकर निकल जाना चाहता था लेकिन उसकी एक न चली! अस्तरख़ान में जो मुसीबत आयी थी उसके लिए वह निकीतिन को ही ज़िम्मेदार ठहरायेगा। यदि वे लोग सराय के आगे न जाते तो कुछ भी न होता। निकीतिन ने सभी को बहला-फुसलाकर और मुनाफ़े का लालच दे देकर आगे जाने के लिए विवश किया था। वह रूस नहीं आया क्योंकि वह जानता था कि वह अपराधी है। उसने नाव के लिए

हसन-बेग द्वारा दिया गया पैसा भी हड़प लिया और फिर काफ़िरों से जा मिला।

मिकेशिन की बात कौन झूठी ठहरायेगा? अकेला कपिलोव ही ऐसा कर सकता है। लेकिन वह उसे भी झूठ ठहरायेगा। वह भी जान लेगा कि मिकेशिन का मज़ाक़ उड़ाने का उसे कैसा मज़ा मिलता है। वह कहेगा कि यही कपिलोव निकीतिन की हां में हां मिलाता हुआ चिल्ला रहा था—शेमाखा, शेमाखा! वह मालिक के फ़ायदे की नहीं, अपने फ़ायदे की बात सोच रहा था। वह सामन्तों को गाली दे रहा था, हमारे राजा को गाली दे रहा था। फिर देखूंगा कैसे वह अपने को सच्चा साबित करता है। लोग अपराधी का विश्वास नहीं करते!

मिकेशिन को पूरा विश्वास था कि सब ठीक हो जायेगा। नोवगोरद आकर वह दूतावास के लोगों से अलग हो गया और दो हफ़्तों में त्वेर पहुंच गया।

दिसम्बर का महीना था। मन को उबा डालनेवाला दिन। झीनी झीनी बर्फ़ पड़ रही थी और जो सड़क प्रायः गन्दी रहती थी वह आज सफ़ेदी में नहा रही थी।

दूर से नगर कटे हुए वन की तरह लग रहा था। मकान सफ़ेदी के नीचे काले पड़ते हुए ठूंठों के समान दिखाई पड़ रहे थे।

मिकेशिन को अपनी गाड़ी में ले जानेवाला गाड़ीवान, एक पुराने कोट में लपटा, चुपचाप बैठा गाड़ी चला रहा था। उसका घोड़ा जैसे-तैसे चल रहा था। कभी कभी वह पूंछ उठा लेता और चाल धीमी कर देता।

वे गांव पार कर शहर में आ गये। मिकेशिन जान-पहचान वालों को पहचान रहा था। वे भी उसे पुकार रहे थे। किन्तु

मिकेशिन मुंह लटकाये वैसे ही गाड़ी में बैठा रहा, मानो क़ब्रिस्तान से लौटा हो।

लोग रुक रुककर उसकी स्लेज-गाड़ी को परेशानी से देखने लगते।

मिकेशिन ने गाड़ी सीधे काशीन के यहां ले चलने की श्राज्ञा दी। "अच्छा हो, सब कुछ तुरन्त कह दूं, काशीन को पता चले कि ज़रा भी श्राराम न किये मैं उसे ख़बर पहुंचाने के लिए दौड़ श्राया हूं।"

फाटक खुल गया श्रौर गाड़ी खंभे से रगड़ खाती हुई श्रहाते में श्रा गयी। ड्योढ़ी का दरवाज़ा भी खुला श्रौर श्रोलेना बिना बांहों की जैकेट पहने रेलिंग पर श्रा गयी।

"लौट श्राये?!" वह चिल्लायी। मिकेशिन ने टोपी उतार ली।

श्रोलेना के पीछे पीछे काशीन भी श्रा गया। वहीं श्रग्राफ़ेना भी दिखाई पड़ने लगी थी। घर के लोग इधर-उधर दौड़ रहे थे।

"बाक़ी लोग कहां रह गये?" रास्ते में ही काशीन ने पूछा, "श्रपने श्रपने घर पर हैं क्या? बोलो न? चुप क्यों हो? इधर श्राश्रो..."

"श्रकेला मैं ही श्राया हूं," सिर लटकाते हुए मिकेशिन बोला, "श्रापने कुछ नहीं सुना? हम तो लुट गये थे..."

वसीली काशीन कमरे में चहलक़दमी करता रहा। ऊपर से रोने की श्रावाज़ बराबर उसके कानों में पड़ती रही। श्रग्राफ़ेना, मुंह बाये, श्रंगीठी के पास बैठी बैठी, श्रपने पति को भावहीन श्रांखों से देखती श्रौर उसके क्रोध का श्रन्दाज़ लगाती रही। श्राख़िर पत्नी को देखकर काशीन, क्रोध से उसके सामने श्राकर, एकदम रुक गया।

"चली जाओ यहां से!"

काशीन ने धीरे धीरे अपने कंधे से खिसकते हुए फ़र-कोट को झटके से ठीक कर दिया। उसकी निगाह फ़र्श पर पड़ी दरी की एक परत पर जम गयी। उसने उसे ठोकर मारकर कोने में कर दिया और फिर तब तक उसे कुचलता रहा जब तक थक न गया। कोट बाधा डाल रहा था। उसने उसे फ़र्श पर पटका और उसपर थूक दिया। फिर कांपते हुए ओंठ आस्तीन से पोंछते हुए उसने ज़ोरों से एक गाली दी।

और आखिर बेंच पर बैठकर ठंढी सांस लेने लगा।

"अफ़नासी..." वह ज़ोर से बोला, "बदमाश, तुझे भिखारी बनाकर छोड़ूंगा!"

मिकेशिन ने जो बातें बतायी थीं उनसे बूढ़े व्यापारी को इतना क्रोध आ गया कि अगर उसका बस चलता तो मिकेशिन की जान ले लेता। उसने उसपर जो छड़ी फेंकी थी उससे वह किसी प्रकार बच गया था।

"बदमाश!" काशीन ने सोचा, "सराय तक तो आराम से पहुंच गया। फिर भी जैसे वह उसके लिए काफ़ी न था। मुझे धोखा देना चाहता था, मुझसे पैसा ऐंठना चाहता था! शेमाखा चला गया! तुझे शेमाखा का मज़ा दिखाऊंगा!"

यदि निकीतिन सही-सलामत आ जाता और उसे लाभ हुआ होता तो निश्चय ही काशीन एक शब्द भी मुंह से न निकालता। वह यह बात खुद जानता था। इस विचार से उसके दिमाग़ में और भी गर्मी चढ़ गयी।

वह कोस रहा था उस घड़ी को जब उसने निकीतिन के साथ इक़रार किया था। अगरचे अग्राफ़ेना मूर्ख थी, फिर भी उसने उसे



चेतावनी तो दी ही थी। लेकिन वह था कि उसने निकीतिन पर विश्वास कर लिया!

काशीन को लग रहा था कि उसे बहुत अधिक हानि उठानी पड़ी है, उससे कहीं अधिक जितनी उसे वास्तव में हुई थी।

"चोर! डाकू!" काशीन बुदबुदाया।

ऊपर से सिसकियों की आवाज़ बराबर आती रही।

"हे भगवान! यह भी ख़ुशी की ही बात है कि इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी बरीकोव ने ओलेना से विवाह करने का प्रस्ताव किया," काशीन ने सोचा, "उन्होंने नगर-भर में फैली हुई इन अफ़वाहों पर भी ध्यान न दिया कि ओलेना अफ़नासी के यहां भाग गयी थी... अब चिल्ला, चिल्ला, डाइन! दो ही हफ़्ते में तेरा ब्याह कर दूंगा। तब पता चलेगा कि ख़सम के मुक्के अक़्ल कितनी जल्दी ठिकाने करते हैं।"

काशीन कुछ शान्त हो गया। बेटी का ब्याह कर दूंगा, अफ़नासी के मकान और उसके सारे सामान पर कब्ज़ा कर लूंगा और फिर मिकेशिन की ख़बर लूंगा। उसे मैं माफ़ न करूंगा। उसे ग़ुलाम बनाऊंगा, हल में जोतूंगा! और कपिलोव! अगर वह भी मेरा क़र्ज़ नहीं पाटता तो उसकी भी वही गत करूंगा। फिर बहायें पसीना हल में जुते जुते!

वसीली ने फ़र्श पर एक गन्दे ढेर के रूप में पड़े हुए अपने फ़र-कोट पर एक निगाह डाली। उसने उसे उठाया, उसपर से थूक पोंछा, उसे झाड़ा और कंधे पर डाल लिया।

"बदमाशों ने काशीन को धोखा देने की ठानी थी," उसने छत की ओर मुक्का दिखाते हुए धमकी-सी दी, "तुझे भारत के दर्शन मैं कराऊंगा, बदमाश!"

ऊपर से आती हुई सिसकियां बराबर तेज़, और तेज़, होती जा रही थीं...

काशीन हठी था। मिकेशिन के आने के दो हफ़्तों के भीतर ही भीतर सारे घर ने वर, उसके संबंधियों और इष्टमित्रों से मिलने की तैयारी में जैसे आसमान सिर पर उठा लिया था।



दूसरा भाग

पहला अध्याय

दूर वनों में ज़ाफ़रानी प्रकाश फैलने लगा था। वायु शीतल थी और वसन्तकालीन सलोनी मिट्टी की भीनी भीनी गन्ध और सड़कों के निकट उगनेवाले शहतूत उसे और भी मादक बना रहे थे। क्षितिज के उस पार सूर्य की लाल लाल पट्टी दिखाई पड़ने लगी थी। शीघ्र ही लाल रंग सुनहरे-सन्तरई में बदल गया। छितरे हुए पेड़ों की परछाइयां चमचमाती हुई लाल-सी मिट्टी पर पड़कर वीरान सड़क के आरपार पहुंच रही थीं। एक क़ाफ़िला सड़क पर चला जा रहा था। परछाइयां क़ाफ़िले के ऊंटों और घोड़ों पर ऐसे पड़तीं मानो उन्हें गिन रही हों।

क़ाफ़िला बहुत बड़ा था। बीस ऊंट और सौ मज़बूत तुर्कमनी घोड़े बन्दर के प्राचीन मार्ग पर फ़ारस की खाड़ी की ओर बढ़ते चले जा रहे थे।

घोड़ों और ऊंटों की गर्दनों में बंधी हुई घंटियां बराबर टुनटुना रही थीं। उनपर लदी हुई गठरियां कभी इधर झुकतीं, कभी उधर। खुरों की आवाज़ भी धीमी धीमी सुनाई पड़ रही थी...

थोड़े-से पहरेदार जम्हाइयां ले रहे थे। उन्हें रात में उठना पड़ा था। जैसे-तैसे उन्होंने नाश्ता कर लिया। लोग उदास थे, चुप थे। वे क़ाफ़िले के सरदार से रुष्ट थे, क्योंकि उन्हें लग रहा था कि इतनी रात में कूच करना बिल्कुल वाहियात है। आख़िर ऐसी भी जल्दी क्या थी! पर करते क्या? रोटी चाहते हो तो मालिक का कहना मानो—बड़े-बूढ़े हमेशा यही कहा करते हैं। तो, जब सफ़र पर निकल ही पड़े तो फिर ज़ीन पर मज़े से जमिये, अनजाने उसपर झपकियां लें और बस।

ख़ुदा के बन्दो, धीरज रखो, मन में बुरे विचार मत लाओ! कब कूच करना चाहिए, कब रुकना चाहिए—यह बातें सरदार ही ठीक समझता है। उसपर ख़ुदा की बरकत है—वह मालदार है, ताक़तवर है। उसके फ़रमांबरदार नौकर-चाकर इनाम-इकराम के लिए उसका मुंह जोहते हैं। और इनाम में उन्हें मिल सकता है—सोना। सोना लीजिये और बन्दर के बाज़ार में काने सलीम की दूकान में अफ़ीम खाइये, या फिर प्रसिद्ध नगर बन्दर की किसी अंधेरी दूकान में मीठी शराब की चुस्कियां लीजिये। क़ाफ़िले के सरदार, हमें ले चलो, हमें ले चलो! हम अल्लाह की बरकत जानते हैं। नम्रता ग़रीबों की शोभा है। ला अल्लाह इल्ला-अल्लाह!

क़ाफ़िले का सरदार पूरा फ़ारसी था—मोटा शरीर, लाल लाल दाढ़ी, शरीर पर बुख़ारा का कामदार चोग़ा, घोड़े पर कीमख़ाब की ज़ीन। सारे क़ाफ़िले में अकेला वही एक आदमी था जो ऊंघ नहीं रहा था।

सरदार की तेज़ निगाहें देखकर कोई भी समझ सकता था कि उसे वसन्त के इस प्रभात का कोई विश्वास नहीं। वह चिन्ताग्रस्त लग रहा था।



सरदार स्वयं पूरे विश्वास से नहीं कह सकता था कि वह क्यों चिन्तित है, उसे चिन्ता में डालनेवाले विचार उसके दिमाग़ में उठ क्यों रहे हैं? लार की कारवां-सरायों में तरह तरह के लोग आते हैं। और वे स्वाभाविक ही उसके नौकरों-चाकरों से पूछ सकते हैं कि क़ाफ़िला कब आगे जायेगा? पता नहीं क्यों सरदार की आंखों के सामने, धारीदार चोग़ा पहने एक नाटे-से तुर्क की आकृति आकर खड़ी हो जाती – धीरे धीरे मुस्कराते हुए ओंठ, अस्थिर-सी निगाहें।

यह तुर्क लार में कई बार उससे मिला था। वह जिस अप्रत्याशित ढंग से उसके पास आता, वैसे ही चुपचाप ग़ायब भी हो जाता। पता नहीं उसने उसके नौकरों से क्या बातचीत की थी। सरदार के मातबर नौकर हसन ने अपने मालिक को बताया था कि इस अपरिचित आदमी को रेशम के कपड़ों में दिलचस्पी है। छोड़ो भी रेशम की बात! यह आदमी व्यापारी-सा नहीं लगता।

क़ाफ़िले के सरदार ने अपने दिमाग़ से भयानक घबड़ाहट को दूर करने की कोशिश की पर बन्दर के इर्द-गिर्द डाकुओं, डकैतियों और लूट-खसोट के बारे में जो बातें चल रही थीं वे बराबर उसके दिमाग़ में चक्कर काटती रहीं।

कारवां-सराय में ऐसी ऐसी बातें सुनने में आयी थीं कि अमुक अमुक व्यापारी ऐसे ग़ायब कर दिये गये कि फिर उनका पता ही न चला... लोग तो यह भी कहते थे कि डाकू सबसे पहले भारत के साथ व्यापार करनेवाले सौदागरों पर ही हमले करते हैं।

इस विचार से सरदार कांप उठा था। यदि डाकुओं को उसकी असलियत का पता चल गया तो फिर उसका बुरा हाल हो जाता। किन्तु कौन उनसे कहेगा कि ख़ज़ानची मुहम्मद यहां कहां से और क्यों आया, कि उसकी पेटी में अब भी वे बहुमूल्य रत्न हैं जो उसे वज़ीरे आज़म महमूद गवान के ख़ज़ानची ने भारत में दिये थे?

अकेले हसन को छोड़कर बाक़ी सभी ऐसे हैं, जो या तो बन्दर के हैं या होर्मुज़ के। ये वे लोग हैं जिन्होंने कभी भारत की ज़मीन पर पैर तक नहीं रखा। तो शायद सचमुच उसके ये सारे डर बेबुनियाद हैं? व्यर्थ ही वह अपने को इस वासन्ती प्रभात के आनन्द से वंचित रख रहा है?

क़ाफ़िले को चलते चलते दो घंटे हो चुके थे और उसके साथ कोई दुर्घटना नहीं घटी थी। यदि डाकुओं को कुछ ख़बर चल भी गयी होती तब भी उन्हें यह आशा तो हो ही नहीं सकती थी कि क़ाफ़िला इतनी जल्दी कूच करेगा। अल्लाह का शुक्र है कि मुहम्मद के दिमाग़ में रात रहते ही चल देने की बात आ गयी थी। अब वह आराम से बन्दर तक पहुंच जायेगा।

मार्ग अनन्त लग रहा था। धूप में गर्मी बढ़ गयी थी। परछाइयां गहरा चुकी थीं। घोड़ों के पसीने, शहतूत के वृक्षों और गर्म धूल की गन्ध एकाकार हो गयी थी। ऊंटों की घंटियां टुनटुना रही थीं। ऐसे में खजानची मुहम्मद के विचार कहां से कहां पहुंच गये। उसके मस्तिष्क में निकट भविष्य के चित्र घूमने लगे—बन्दर या होर्मुज़ में आरामदेह मकान, ठंढा शरबत, दीनारों की खुशनुमा खनखनाहट... खजानची खतरों को भूल अपने सपनों में खो गया। उसने आंखें बन्द कर लीं। एक ही क्षण में उसके सामने उसका सारा जीवन घूम गया—वह बग़दाद के एक कुम्हार

का बेटा था और अपने ग़रीब और बूढ़े मां-बाप को निर्धनता की गोद में छोड़कर, क़ाफ़िलों के बड़े बड़े रास्तों पर नियामतों की तलाश में निकल पड़ा था। वह कहां कहां नहीं गया था – तुर्की की पहाड़ियों पर, मिस्र के स्फ़िंक्स के पास। लेकिन उसकी तक़दीर पलटी थी भारत जाकर। हां, तक़दीर पलटी थी? दिल्ली पहुंचते पहुंचते वह बहुत कुछ जान-समझ चुका था। वह पहले ही समझ चुका था कि ज़िन्दगी कितनी निर्दय होती है, कि सफलताओं की प्राप्ति के लिए अपनी अनुभूतियों पर नियंत्रण रखना कितना आवश्यक है, कि विजेता जो कुछ कहता है सच कहता है ... और जब उसे मौक़ा मिला तो उसने उससे लाभ उठाने में संकोच नहीं किया।

उसकी अमीरी दूसरों के दुखों पर पली थी। अमीरी ऐसे ही पलती है, इसमें कोई नयी बात नहीं। और क्या उसने बाद में यह अनुभव नहीं किया था कि लोग कितने अहसान-फ़रामोश होते हैं, क्या उसे दिल्ली से इसलिए नहीं भागना पड़ा था कि वह अमीर से अपनी जान बचाना चाहता था जिसने उसपर सूदखोरी का आरोप लगाया था?

उसी समय वह बीदर पहुंचा।



बाद में मुहम्मद के जीवन में जो कुछ भी हुआ, उसे जो भी सफलताएं मिलीं उसका श्रेय अकेले उसी को था – उसने होनेवाले परिवर्तनों की पहले से ही कल्पना कर ली थी...

वह १४६२ का ज़माना था। बीदर की गद्दी पर नाबालिग़

निज़ाम-शाह विराजमान था। निज़ाम-शाह हाल ही में मरे हुए एक निर्दय शासक सुलतान हुमायूं का बेटा था। उड़ीसा और तिलंगाना के हिन्दू राजे और मालवा का सुलतान उसपर हमले करने की धमकी दे रहे थे। उनकी फ़ौजें सलतनत में आ आकर हमले कर रही थीं, वहां के सीमा प्रदेशों को नष्ट-भ्रष्ट कर रही थीं, वहां के लोगों को बन्दी बना रही थीं और व्यापारियों का माल-असबाब लूट रही थीं। और बीदर में ठीक राजसिंहासन के पास घमासान युद्ध हो रहा था।

यह वह समय था जब सुलतान के चंगुल से मुक्ति पाने के लिए दक्खनी भारत के पुराने रईस और अधिक ताक़त के साथ उठ रहे थे।

अभिमानी सुन्नी तरफ़दारों को जिनमें खोजा-ए-जहां नाम का एक शक्तिशाली वज़ीर भी था, बराबर सौ साल पुरानी घटनाएं याद आ रही थीं, और याद आ रही थी देवगिरि के अमीराने-सदह की वह बग़ावत, जो दिल्ली के सुलतान की पराधीनता से मुक्ति पाने की दिशा में पहला क़दम थी।

एक बार शिकार के समय जलाल नामक एक अमीर ने अल्पवयस्क शासक के सामने खुले आम यह कह दिया था—

"हमारे दादा-परदादा ने तुम्हारे दादा को इसलिए सिंहासन पर बिठाया था कि वह उनकी सेवा करे। यह मत समझना कि ज़माना बदल गया है!"

फिर यह अफ़वाह भी उड़ी कि जागीरदारों ने राज बदल डालने का निश्चय कर लिया है और कोई तरफ़दार बीदर की गद्दी हथिया लेना चाहता है।

पुराने जागीरदारों ने सुलतान की मां की परेशानियों और उसके गद्दीधारी बेटे की असहायता से फ़ायदा उठाकर जो चाहा सो कर

दिया। यह बेटा पूरी तरह खोजा-ए-जहां के वश में था। नतीजा यह हुआ कि खज़ाने में टैक्सों की आमदनी समय से न पहुंच पाती थी। अब उनकी रक़म भी पहले से कम हो गयी थी। सुलतान के हुक्म रद्दी की टोकरी में फेंके जाते थे। सेना में भी गड़बड़ी पैदा हो चुकी थी। आम जनता ने जागीरदारों की स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध सिर उठाया था।

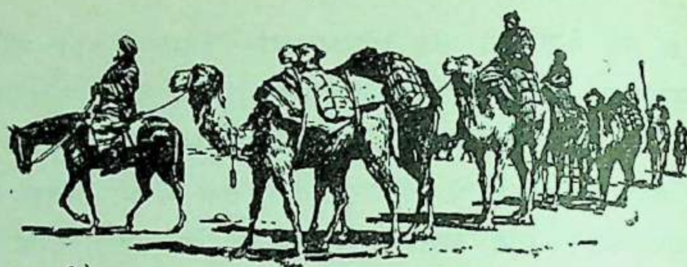
लग रहा था कि इस सलतनत के दिन इने-गिने ही रह गये हैं।

ऐसे समय एक ऐसा व्यक्ति सामने आया जिसने इस पतनोन्मुख एवं जर्जर सलतनत में एक नयी ज़िन्दगी फूंकी। इस व्यक्ति का नाम था वज़ीर महमूद गवान।

खज़ानची मुहम्मद इस व्यक्ति के नाम की पूजा करता था। वह गवान के क़दम चूमता था। वह अपनी जी-हुज़ूरी में सबसे अव्वल था। उसे उस समय भी महमूद गवान में पूरी आस्था थी जब सत्ता के लिए चल रही लड़ाई अभी खत्म न हुई थी और यह कहना मुश्किल था कि किस पक्ष की विजय होगी। जो तूफ़ान बीदर पर चल रहा था उसमें खज़ानची की स्थिति रेत के एक कण के समान थी। किन्तु इस कण ने खुद ही हवा का रुख चुन लिया था और हवा की कुछ ताक़त पी ली थी।

महमूद गवान! वह भी खज़ानची और दूसरे सैकड़ों मुसलमानों की तरह एक परदेसी था जो भारत में पनाह और लाभ की खोज में पहुंचा था। वह जानता था कि लोगों की ज़रूरतें क्या होती हैं। वह हमेशा लोगों का ख्याल रखता था।

...बन्दर जानेवाले मार्ग की लाल-सी धूल के ऊपर, चलनेवाले घोड़े की ज़ीन में हिलते-डुलते, खज़ानची मुहम्मद अपने गये-बीते दिनों में खो-सा गया था।



बीदर में आकर उसे अनुकूल परिस्थितियां नहीं मिलीं।

उसके सामने एक जबरदस्त सवाल था। किसका पक्ष लूं—सुन्नियों का जो ख़ोजा-ए-जहां के पक्ष में थे, या शियों का जिन्होंने महमूद गवान का अनुकरण किया। इस गुत्थी को वह बहुत समय तक न सुलझा पाया था।

पुराने जागीरदारों—सुन्नियों—का विचार था कि अल्लाह की आध्यात्मिक शक्ति के अनुसार पृथ्वी पर सुलतान की नियुक्ति होती है। इस धार्मिक तर्क की आड़ उन्होंने इसलिए ली थी कि वे ऐसे सुलतान को गद्दी से उतार सकें जो उनके मनोनुकूल न हो।

शियों का तर्क था कि यह आध्यात्मिक शक्ति पृथ्वी पर पीढ़ी-दर-पीढ़ी अवतरित होती है। ये लोग सुलतान की शक्ति को मज़बूत बनाने और जागीरदारों का प्रभाव कम करने के पक्ष में थे।

किन्तु जो लोग झगड़े की जड़ में केवल धार्मिक तर्कों को देखते थे वे मूर्ख थे।

मुहम्मद की निगाह में दोनों ही तर्क एक जैसे थे। उसे तो हवा का रुख़ पहचाना था, इसी लिए उसने महमूद गवान का पक्ष लिया था।

जन-साधारण की अन्तश्चेतना ने जैसे उसे बता दिया था कि सामन्तों से किसी प्रकार के लाभ की आशा करना व्यर्थ है। दिल्ली के अभिमानी जागीरदारों के 'आभार' का उसे अच्छा अनुभव था।

कुछ समय तक तो खज़ानची के पैर डगमगाते रहे, क्योंकि बीदर के जागीरदार बड़े शक्तिशाली थे और उनकी जीत होने से उस उद्दण्ड शिया के रास्ते में अनेकानेक कठिनाइयां आ सकती थीं।

उसने दूसरे पक्ष पर भी ध्यान दिया था – स्थिति यह थी कि जो यह पूर्वकल्पना कर सकता था कि किस पक्ष की विजय होगी वही सब कुछ बन सकता था। अवसर चूक जाने पर सिवा ज़िन्दगी-भर हाथ मलने के और होता भी क्या। उसने निश्चय कर लिया। नगर के जिस भाग में मुहम्मद रहता था वहां शीघ्र ही वह सबसे बड़ा शिया माना जाने लगा। एक बार सुन्नियों के साथ हुई लड़ाई में खज़ानची को अपने माल-असबाब और दूकान तक से हाथ धोना पड़ा था।

जब अज्ञात अपराधियों द्वारा निज़ाम-शाह को ज़हर देकर मौत के घाट उतारा गया और उसका छोटा भाई मुहम्मद-शाह गद्दी पर बैठा, जब खोजा-ए-जहां के षड्यन्त्र का भंडाफोड़ हुआ और उसे उसके जागीरदार साथियों के साथ मौत की सज़ा दी गयी, तो खज़ानची की क़िस्मत का सितारा भी चमका। आरम्भ में उसे बीदर के कोतवाल के एक सहायक के रूप में काम पर लगाया गया।

उसके ज़िम्मे कई काम थे – नगर के जिस भाग में वह रहता था वहां दस्तकारी के कामों की देख-रेख रखना, यह निगरानी रखना कि कोई चुपचाप शराब न बनाये, चोरी के माल का लेन-देन न करे, दुराचार न करे। इसके अतिरिक्त उत्तराधिकार के समस्त मामले पर भी उसी को कार्यवाही करनी होती थी।

इन सारे कर्त्तव्यों का उसने पूरी ज़िम्मेदारी से पालन किया।

फिर घूस देकर वह ऐसी जगह पर नियुक्त हो गया, जहां उसकी चलती भी थी और उसे कोई खास काम भी न करना पड़ता था। उसे एक जागीरदार के महल के हल्क़े में टैक्स वसूल करने का काम मिल गया।

यहां रहकर उसने यह सावित करने के लिए अपने काम में सारी शक्ति लगा दी कि उसके स्थान पर जो आदमी पहले काम करता था वह निकम्मा था। अब मुहम्मद के प्रयासों के फलस्वरूप ख़ज़ाने की आमदनी बढ़ने लगी और पहले से काफ़ी अधिक हो गयी।

टैक्स वसूल करनेवाले इस ईमानदार आदमी की ख़बर महल में भी पहुंच गयी।

पिछले वसन्त में, सेना के लिए घोड़े ख़रीदनेवालों का चुनाव करते समय महमूद गवान ने खज़ानची मुहम्मद का नाम भी उन लोगों की सूची में लिख लिया जिनपर वह भरोसा कर सकता था।

तब से आज तक एक वर्ष हो चुका था। क्या महमूद गवान ने अपने चुनाव में कोई ग़लती की थी? बीदर की सेना के लिए मुहम्मद सैकड़ों घोड़े खरीद चुका था। अब उसे घोड़ों की आखिरी खेप भेजनी बाक़ी रह गयी थी।

अल्लाह की मरज़ी, भारत की ज़मीन घोड़े पैदा करने के लिए अनुकूल न थी। वहां अच्छे घोड़े बड़े महंगे मिलते थे, इसलिए घोड़ों के दलालों की जेबें काफ़ी गरम हो जाती थीं। और, अगर उन्हें घोड़े खज़ाने द्वारा निश्चित किये गये दामों से सस्ते मिल जाते थे तो उनकी और भी चांदी रहती थी। सभी जानते हैं कि घोड़ों के दलालों को अच्छा लाभ होता है। लेकिन अगर उन्हें लाभ होता है तो इसमें किसी का क्या इजारा? सुलतान को इससे कोई नुक़्सान तो

होता नहीं। इन सब चीज़ों का ख़र्च बरदाश्त करती है उसकी ईमानदार प्रजा। वह होती ही इसी लिए है!

बस इस आख़िरी क़ाफ़िले को बन्दर तक पहुंचाना था। बाक़ी सब कुछ मुश्किल न रह गया था। पांच सौ बढ़िया घोड़े भेजना कोई हंसी खेल तो है नहीं। कभी न कभी मुहम्मद का भी अपना महल होगा। वह अभी बूढ़ा नहीं हुआ है। क्या वह किसी जागीरदार, मसलन निज़ामुल-मुल्क, की बेटी से शादी नहीं कर सकता? और कौन जाने वह घड़ी भी आ जाये जब उसे ख़ज़ाने का ही अधिकारी बना दिया जाये? सब कुछ सम्भव है! इन सुखद विचारों में मुहम्मद इतना खो गया कि घोड़े पर बैठा बैठा सिर हिलाने लगा। उसने अपनी कत्थई बरौनियों वाली सूजी हुई पलकें बन्द कीं और मुस्करा दिया।

पर, दूसरे ही क्षण ख़ज़ानची की मुस्कराहट पथरा-सी गयी। पास के वन से कुछ घुड़सवार निकलकर उनपर टूट पड़े। इन घुड़सवारों में ख़ज़ानची ने तुरन्त ही धारीदार चोग़ा पहने हुई उस परिचित आकृति को भी पहचान लिया।

ख़ज़ानची चिल्ला पड़ा। उसने तलवार निकाल ली।

तीर की सनसनाहट सुनाई दी। एक ऊंट चिंघाड़ता हुआ बग़ल में आ गया। क़ाफ़िला तितर-बितर हो गया। ख़ज़ानची ने अपना घोड़ा पिछले पैरों पर खड़ा किया और उसकी मुठभेड़ धारीदार चोग़ेवाले के घोड़े से हो गयी। पर शीघ्र ही ख़ज़ानची को घोड़े पर से नीचे ढकेल दिया गया और उसके ज़ख़्मी हाथ से उसकी तलवार गिर गयी। घोड़े ने उसके सिर पर एक लात जमायी।

ख़ज़ानची की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। वह नाक के बल गिरा और उसके जड़ ओंठ ज़मीन से बज उठे। उसकी पगड़ी के नीचे से ख़ून की धार बह चली।

खज़ानची मुहम्मद को धीरे धीरे होश ग्रा रहा था। उसे माथे में सर्दी लग रही थी। किसी ने उसके ग्रागे पानी का एक लोटा बढ़ाया। उसने कुछ घूंट पी लिये ग्रौर चोग़े की ग्रास्तीन से ग्रांखों से ख़ून ग्रौर धूल पोंछी ग्रौर एकटक ज़मीन की ग्रोर देखने लगा। वह ग्रब भी पूरे होश में न था। वह डर रहा था कि कहीं उसपर ग्रौर मुसीबत न ग्राये।

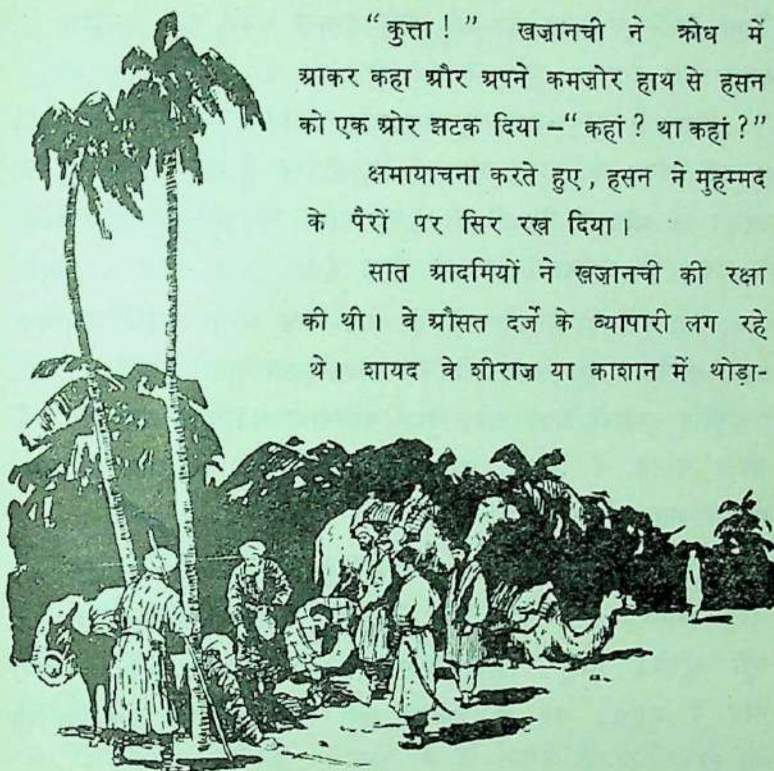
उसे लगा कि वह एक पेड़ के सहारे बैठा है ग्रौर उसके ग्रासपास कई लोग खड़े हैं।

खज़ानची को उबकाइयां ग्रा रही थीं। उसने ग्रपने चारों ग्रोर देखा ग्रौर कै कर दी। बड़ी देर तक उसका सारा शरीर कांपता रहा। ग्राखिर उसका जी ठिकाने हुग्रा ग्रौर, मुश्किल से सांस लेते हुए, उसने ग्रांसुग्रों से भरी ग्रपनी धूमिल ग्रांखें ऊपर उठा दीं।

"ग्रल्लाह का शुक्र है कि ज़िन्दा बच गये!" खज़ानची के ऊपर झुकते हुए एक व्यक्ति ने दर्दभरी ग्रावाज़ में कहा। यह ग्रादमी करमानी बूट ग्रौर फटा-पुराना चोग़ा पहने था। बूटों के रंग हल्के पड़ रहे थे, किन्तु यह ज़रूर लगता था कि कभी वे चमचमाते रहे होंगे। "खोजा, पानी पियो। पियो न, तबीयत ठीक हो जायेगी।"

खज़ानची ने सिर उठाया ग्रौर धीरे धीरे उसे याद ग्राने लगा कि वह कहां है। चारों ग्रोर उत्तेजित सहयात्रियों की एक भीड़-सी लगी थी। वे हाथ हिला हिलाकर ग्रपरिचितों को कुछ समझाने का प्रयत्न कर रहे थे। जो घोड़े लड़ाई के समय इधर-उधर भाग गये थे वे कुछ ही दूर पर घूमते हुए दिखाई दे रहे थे।

स्वामिभक्त ग़ुलाम हसन, घुटनों के बल बैठ गया। वह भय से मालिक के चेहरे की ग्रोर ताक रहा था।



"कुत्ता!" खज़ानची ने क्रोध में आकर कहा और अपने कमज़ोर हाथ से हसन को एक ओर झटक दिया–"कहां? था कहां?"

क्षमायाचना करते हुए, हसन ने मुहम्मद के पैरों पर सिर रख दिया।

सात आदमियों ने ख़ज़ानची की रक्षा की थी। वे औसत दर्जे के व्यापारी लग रहे थे। शायद वे शीराज़ या काशान में थोड़ा-बहुत व्यापार करते थे। आदमी तो आदमी है। जिस आदमी ने ख़ज़ानची को लोटा दिया था उसकी चमड़ी एकदम सफ़ेद थी, और आंखें वर्षा के बाद जंगलों के ऊपर दिखाई पड़नेवाले आकाश की भांति नीली।

"अल्लाह तुम्हारी सारी मुसीबतें मुझे दे दे!" सफ़ेद चमड़ीवाले की ओर मुखातिब होते हुए खज़ानची बोला, "तुमने मेरी जिन्दगी बचायी है और मेरा माल-असबाब। मैं कैसे तुम्हारा बदला चुकाऊं?"

"अल्लाह तुम्हें लम्बी उम्र दे, खोजा!" व्यापारी बोला,

"हम किसी के काम ग्रा सके यही हमारा सबसे बड़ा बदला है, सबसे बड़ा इनाम। तुम तो ग्रब ठीक हो न?"

व्यापारी का ग्रसाधारण उच्चारण ख़ज़ानची के कानों से छिपा न रह सका। इस तरह लोग न तो शीराज़ में ही बोलते हैं, न त्रबज़न में ग्रौर न रेय में ही। इस तरह का उच्चारण तो फ़ारस के उत्तर में रहनेवालों का ही होता है।

"तुम्हें तो ग्रल्लाह ने ही मेरे पास भेजा है!" ग्राभार प्रकट करने के लिए व्यापारी की ग्रोर मुड़ता हुग्रा मुहम्मद बोला, "ग्रल्लाह तुम्हारी मदद करे, तुम्हें कामयाबी दे। मुझे बताग्रो न मैं ग्रपनी नमाज़ में किसका नाम दुहराया करूं? मेरा बेटा किसकी बरकत मनाया करे?"

"ख़ोजा, तुम ग्रब भी कमज़ोर हो। बैठे रहो। ग्रभी हम तुम्हें हाथ-मुंह धोने को पानी देंगे ग्रौर तुम्हारे घावों की मलहम-पट्टी करेंगे। तुम्हें ज्यादा बातचीत नहीं करनी चाहिए। मेरा नाम है यूसुफ़। पर मैं ग्रकेला नहीं हूं, यह तो तुम देख ही रहे हो।"

मुहम्मद के पास एक ग्ररब लाया गया, जिसे लोगों ने लड़ाई में पकड़ा था।

"हुज़ूर, क्या हुक्म है? इसके साथ क्या किया जाये?" हसन ने पूछा, "इस कुत्ते को मौत के घाट उतार दूं?"

चारों ग्रोर सन्नाटा छा गया। सारे क़ाफ़िले की निगाहें खज़ानची पर जम गयीं।

मुहम्मद ने डाकू के पैरों पर थूका ग्रौर हसन को संकेत करते हुए कहने लगा–

"इसे छोड़ दो... खज़ानची मुहम्मद कमज़ोरों और निहत्थों से बदला नहीं लेता।"

दोनों क़ाफ़िलों का रास्ता एक ही था। दोनों बन्दर जा रहे थे। मुहम्मद उत्तेजित था। उसने शुरू शुरू में बड़ी बातें कीं। हसन ने उसे बताया कि यही सफ़ेद चमड़ीवाला आदमी सबसे पहले उनकी मदद को आया था। शायद इसी लिए खज़ानची दूसरों की अपेक्षा इस अजनबी से अधिक बातचीत कर रहा था। उसने यह भी मालूम कर लिया था कि उसकी जान बचानेवालों का यह क़ाफ़िला तारुम से आ रहा है, और वह सफ़ेद चमड़ीवाला तो और भी दूर से आ रहा है—आमुल से।

"मैंने भी यही सोचा था!" खोपड़ी के दर्द से तड़पता हुआ खज़ानची सिर हिलाते हुए कहने लगा, "तुम तो गीलानवालों की तरह बात करते हो। बन्दर जा रहे हो?"

"नहीं। और भी आगे। भारत जाना चाहता हूं, पानी के रास्ते।"

"सचमुच, हम यहां अल्लाह के ही फ़ज़ल से मिले हैं!"

अजनबी ने खज़ानची की आंखों में आंखें डालकर देखा। खज़ानची उसकी मंगलकामना-सी करते हुए मुस्करा दिया।

"तुमने महमूद गवान के बारे में सुना है?"

"नहीं।"

"हुं-ह। वह भी गीलान का ही रहनेवाला है। अब वह भारत में बीदर के शक्तिशाली सुलतान का वज़ीरे आज़म है।"

"तो, इससे क्या?"

"मुझे यहां महमूद गवान ने ही भेजा है। अल्लाह की क़सम मैं तुम्हें इनाम दिलवाऊंगा!"

मुहम्मद को सहसा एक बार फिर लगा जैसे वह सचमुच बहुत बड़ी मुसीबत से बचा है। उसका चेहरा भूरा पड़ गया और वह बड़ी मुश्किल से घोड़े की रासें थामे रहा।

जिस व्यक्ति ने अपना नाम यूसुफ़ बताया था, उसने अपनी आंखें फेरीं और एक ओर देखने लगा।

जब से उसने माज़न्द्रान की ज़मीन पर पैर रखा था तब से आज तक, यानी इन डेढ़ वर्षों में, उसका न जाने कितने लोगों से साबिक़ा पड़ चुका था। यहीं, माज़न्द्रान की इसी ज़मीन पर ही तो उसने अपना नाम बदला था। उसका पुराना नाम, अफ़नासी निकीतिन, एक साधारण नगर चपाकुर के एक छोटे-से झोंपड़े में छूट गया था। और जब उसने आमुल में क़दम रखा उस समय तक वह यूसुफ़ बन चुका था—खुरासान का रेशम और फ़ीरोज़े का एक व्यापारी। इसका नया नामकरण उसके मित्र अली ने किया था। अफ़नासी ने कोई आपत्ति न की थी। यह नाम आसानी से लिया जा सकता था। इससे न तो किसी के मन में शक ही हो सकता था और न उत्सुकता ही। अपने प्रति लोगों का ध्यान आकृष्ट करने के बजाय उसे स्वयं दूसरों को देखना और नयी नयी धरती पर क़दम रखना कहीं अच्छा लगता था। अली की सलाह से उसने अपनी दाढ़ी भी रंग ली थी ताकि दूसरे लोग उसके प्रति आकृष्ट न हों।

आधा साल तक अफ़नासी ख़्वालीन सागर के तट पर चपाकुर में अली के साथ रहा था। और अली वहां अपने भाई के साथ रह रहा था। अब अली का कारबार भी ठीक-ठाक चलने लगा था। अली का भाई अभी हाल ही में त्रवज़न से लौटा था। उसे अपने सफ़र में सफलता मिली थी। आते ही उसने ऊंट पर से फ़ीरोज़े की एक गठरी उतारी थी। अली ने अपने हाथ में मुट्ठी-भर फ़ीरोज़े

लेकर ऐसा मुंह बनाया था मानो इन क़ीमती रत्नों को देखकर उसका अन्तस् तक कराह उठा हो। फिर फ़ीरोज़े गठरी में डालते हुए उसने कहा –

"बस, काफ़ी है!"

"बेशक काफ़ी है!" उसका भाई हंस दिया, "अब बाकू या काशान जाना चाहिए।"

"बस, यह आना-जाना बन्द!" अली ने धीरे से आपत्ति करते हुए कहा, "बहुत हो चुका। मैंने इस पागलपन को पहले ही बन्द कर दिया है। मैं ज़िन्दा रहना चाहता हूं। मैं तातारों के फंदों, तुर्कमनी तीरों, समुद्र में एकाएक हहरा उठनेवाले तूफ़ानों, या रेगिस्तान की प्यास का शिकार, या पहाड़ों पर रहनेवाले शेर-चीतों के मुंह का निवाला नहीं बनना चाहता। मैं यह नहीं चाहता, नहीं चाहता!"

"तुम इस डकैती से डर गये?" आंखें सिकोड़ते हुए उसके भाई ने कहा, "मुझे देखो, मैं भी तो उज़ून-हसन की ज़मीन पर से ही होकर आ रहा हूं।"

निकीतिन ने पहले ही सुन रखा था कि माज़न्द्रान से लेकर तुर्की तक का और हिन्द महासागर तक का सारा प्रदेश अक्कोइयूलू क़बीले – 'श्वेतभेड़' तुर्कमन – के सरदार, उज़ून-हसन के हाथ में है।



उत्तर के स्थान पर, अली मुट्ठी-भर फ़ीरोज़े लेकर उसकी नाक में जैसे ठूंसते हुए चिल्लाया –

"इन टके की चीज़ों के लिए मैं मरना नहीं चाहता! इन्हें

देखकर शाह की महबूबा भले ही यह समझे कि उन्हें छाती पर या पैरों में पहनने से उसे ख़ुशी होगी, लेकिन इन पत्थरों से मुझे और तुम्हें केवल दुख मिलेगा, केवल दुख! इन्हीं पत्थरों के मोह में पड़कर मैं अपना घर-बार तक भूल जाऊंगा। इन्हीं के कारण मुझे अभी तक यह पता नहीं कि मेरी पत्नी ने मुझे उपहार में बेटा दिया है या बेटी। और क्या यह सन्तान मेरी है?! पूरा एक साल हो गया कि मेरे कानों में मेरी अपनी भाषा के शब्द नहीं पड़े।"

कुछ फ़ीरोज़े बेचकर अली रुई और गेहूं खरीदने चल दिया। निकीतिन ने इस काम में उसकी सहायता की। वे पास के गांवों और पहाड़ों की ओर गये। माज़न्द्रान में जाड़े की ऋतु थी। हल्की हल्की सर्दी पड़ रही थी। कटे हुए खेत रूसी खेतों की याद दिला रहे थे। फिर भी उन्हें कुछ न कुछ नया नया-सा, विचित्र जैसा, लग रहा था। वन तक नये थे। वहां कदली, शाहबलूत के पत्रहीन वृक्ष सिर उठाये खड़े थे। समुद्री तट पर सरो के वृक्ष काली काली मोमबत्तियों जैसे लग रहे थे। तटवर्ती नदियों के पास लगी झाड़-झंखाड़ की झाड़ियों में से जंगली जानवरों की चीखें सुनाई पड़ रही थीं। एक बार तो अफ़नासी और अली का सामना एक शेर से हो गया। शेर पदचिह्नों को सूंघता हुआ, घने वन में ग़ायब हो गया था। और यद्यपि कोई आवश्यकता न थी, फिर भी अली ने पागल की तरह घोड़ा मोड़ा और घर जाकर ही दम लिया।

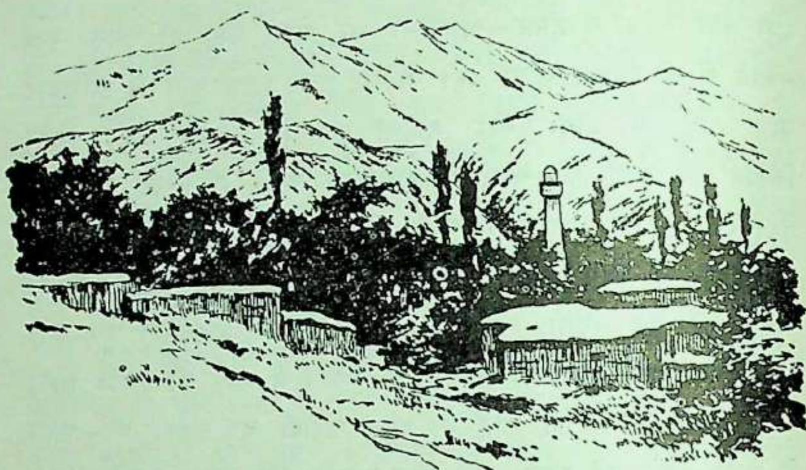
अली ने दूर के इलाक़ों के साथ व्यापार न करने का निश्चय कर लिया था। इसी लिए उसन वहां काम करना शुरू किया जहां तक वह आसानी से पहुंच सकता था। माज़न्द्रान के गांव ग़रीब थे। वहां के संकुचित आंखों वाले किसान जब व्यापारियों को देखते तो बड़ी विनम्रतापूर्वक अपना सिर झुका देते। ऐसा लग रहा था कि

यहां कोई लाभ न होगा – गांववालों का सारा पैसा तो उनका क़र्ज़ चुकाने में ही निकल जाता था। लेकिन अली अपने काम में होशियार था। गांव में प्रायः कोई गठीला पाठा-बैल, कोई ऊंट, किसी किसान की पत्नी की चोटी में बजनेवाले चांदी के सिक्के या कोई नई-नवेली दिखाई पड़ती... अली लोगों को क़र्ज़ देने लगा, अगली फ़सल तक के लिए। क़रीब क़रीब एक वर्ष के लिए। वह चूल्हे के पास पड़ी हुई किसी चटाई पर या फ़र्श पर चमचमाते हुए कुछ सिक्के रख देता था। इन गोल गोल सिक्कों में जादू की शक्ति छिपी थी। इनसे दुनिया की कोई भी चीज़ ख़रीदी जा सकती थी – पत्नी के कपड़े, नये नये बकरे, गधे और मज़बूत और कम उम्रवाले ऊंट! कितनी ज़बरदस्त थी यह ताक़त! किसानों के सामने पूरा एक वर्ष पड़ा था – अल्लाह ने चाहा तो फ़स्ल में सोना बरसेगा, अन्न के अम्बार लग जायेंगे। और फिर यह क़र्ज़ अपने आप चुक जायेगा, अपने आप।

किसान अली द्वारा लिखे गये काग़ज़ पर अंगूठा लगाते और चांदी के चमचमाते हुए सिक्के जेब में रख लेते।

अफ़नासी प्रायः एकान्त में निकल जाया करता और देर देर तक पहाड़ों को घूरा करता। तलहटी पर उगे हुए वनों सहित पहाड़ ऐसे लगते मानो बड़े बड़े और काले-हरे खंडों के रूप में ज़मीन से फूटे हों। बहते हुए झरनों के कारण टेढ़ी-मेढ़ी दरारें ऐसी लगतीं मानो पहाड़ों को विभाजित कर रही हों। दूर पर हिमावृत पर्वत-शिखर सीधे बादलों में घुसते हुए नज़र आते। उसने ज़िन्दगी में पहली बार यह देखा था कि हरियाली और बर्फ़ साथ साथ रह सकती हैं।

निकीतिन जानता था – उसका रास्ता एलबुर्ज़ पर्वत के उस पार है और उसके मार्ग में पत्थर और बर्फ़ की बाधा है। पर वह



तो शीघ्र से शीघ्र पहाड़ों और बर्फ़ से मोर्चा लेने को आतुर हो रहा था, अपनी शक्ति आज़माना चाहता था।

वह उत्तेजित घर लौट आया और शीघ्र आगे बढ़ने के लिए अली से आग्रह करने लगा। किन्तु अली को अभी काम था और निकीतिन अकेला आमुल जाना न चाहता था क्योंकि एक तो उसे भाषा न आती थी और दूसरे वहां उसका कोई परिचित न था।

समय बरबाद न करने की दृष्टि से वह माज़न्द्रानी भाषा के शब्द सीखने लगा। इसके अलावा अली से उसने शतरंज खेलना भी सीख लिया। शतरंज वह प्रायः शाम को खेला करता। इस खेल में उसे बड़ा मज़ा आता। उसे मुश्किल चालें देखकर आश्चर्य होता और इस बात की ख़ुशी होती कि वह स्वयं भी जटिल चालें सोच सकता है, चल सकता है, अपने विपक्षी की चालें विफल बना सकता है, उनकी योजनाएं धूल में मिला सकता है, उन्हें शाह-मात की धमकियां दे सकता है।

एक बार, फ़र्ज़ी पिटा देने का खतरा उठाकर निकीतिन अली से बाज़ी जीत गया। किन्तु इस बार उसने हमेशा की तरह अली का मज़ाक़ नहीं उड़ाया, वरन् विचारपूर्ण मुद्रा के साथ कहने लगा—

"देखते हो न खेल भी एक ज़िन्दगी ही है—जो ताक़तवर है वही जीतता है!"

"यह सब वाहियात बात है!" क्रोध से अली ने आपत्ति की, "सिर्फ़ भाग्य! सिर्फ़ इत्तिफ़ाक़! खतरा कभी नहीं मोल लेना चाहिए।"

"नहीं, यहां हर चाल समझ-बूझकर चली जाती है। ज़रूर, जब अन्तिम बार निर्णय किया जाता है तो जोखिम उठानी ही पड़ती है। हो सकता है कहीं कोई चूक हो जाये? लेकिन अगर निर्णय ठीक है तो खतरा ज़रूर उठाना चाहिए। तभी जीत तेरी होगी।"

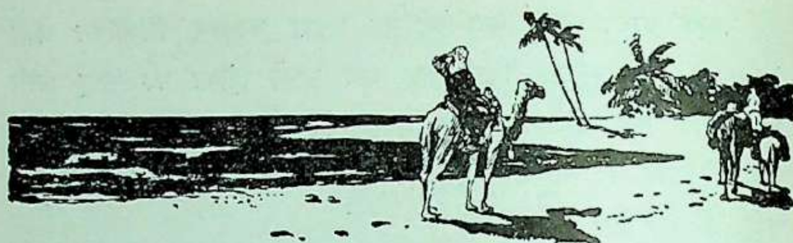
"ख़ैर देखना है तुम्हारा निश्चय कैसा है। भारत जाना चाहते हो? फिर फ़र्ज़ी पिटाना पड़ेगा? तैयार हो?"

"तैयार हूं!" गम्भीरता से निकीतिन ने उत्तर दिया।

उसके बाद सारी और आमुल के रास्ते सामने आये—मन को उबा डालनेवाले नगर, जिनके बाज़ार चपाकुर से कुछ ही बड़े थे। दमावन्द तक का मार्ग तो और भी कठिन था। यहां अथाह खड्डों के ऊपर जानेवाले पहाड़ों पर बने हुए संकरे रास्ते क़ाफ़िले के लिए बड़े दुखदायी सिद्ध हो रहे थे। इस रास्ते पर सहसा धुआंधार बारिश हुई और क़ाफ़िला फिसलते फिसलते बच गया। दमावन्द में अफ़नासी ने अली से विदा ली। अली ने उसे वेतन में अड़तालीस सोने के सिक्के दिये और एक ऊंट की रास पकड़ाते हुए कहने लगा—

"मेरी ओर से भेंट।"

बाह्यतः दोनों ने शान्ति से एक दूसरे से विदा ली। दोनों ने एक दूसरे से हंसी-मज़ाक़ किया। पर जब अफ़नासी कुछ आगे



बढ़कर पीछे घूमा तो क्या देखता है कि अली सिर के ऊपर हाथ उठाये एकटक उसकी ओर देख रहा है। वह अपना पार्ट अदा कर चुका था। पर अफ़नासी का पार्ट अभी भी जारी था। इस खेल में पग पग पर ग़लतियां कर बैठना आसान था किन्तु विपक्षियों के इरादों को भांप सकना उतना ही कठिन। सभी तो उसके विपक्षी थे—प्रकृति, परदेसियों के रीति-रिवाज, नयी भाषा, दूसरों का धर्म। अपने पक्ष में अकेला वही था और थी उसकी कट्टरता, उसकी दृढ़ता और मनुष्य में उसका अखंड विश्वास। उसने निश्चय किया कि यह सब उसके लिए काफ़ी है।

क़ाफ़िला समुद्र के पास पहुंच रहा है। हे भगवान! डेढ़ साल! याद है इन डेढ़ सालों में क्या क्या हो चुका है। मिकेशिन और सेरेगा इतने समय से त्वेर में ही हैं। ओलेना... हाय मेरी क़िस्मत! शायद उसकी मंगनी हो चुकी हो। क्या वह कुछ समझती भी है? और इवान की क़ब्र पर भी दुबारा हरी घास जम चुकी है... वह भी उसे प्यार करता था। काश मैं उसकी रक्षा कर सकता! लेकिन नहीं हुई... अब रूस में क्या हो रहा है? शायद तातार लोग नगरों में आग लगा रहे हों। काश ओलेना को बचाया जा सकता! काश मास्को दुख की घटाओं में भी चट्टान की तरह खड़ा रह सकता!

खज़ानची मुहम्मद के ग़ुलाम हसन ने देखा कि भूरी दाढ़ी वाला यह ख़ुरासानी सौदागर किन्हीं विचारों में खो गया है।

"खोजा!" हसन ने धीरे से पुकारा, "समुद्र! बन्दर!"

ख़ुरासानी सौदागर ने सिर उठाया और ऊंट रोक दिया। उसके सामने क्षितिज तक विचित्र नीलिमा फैली हुई थी जो आकाश का आलिंगन कर रही थी। ताड़ों के वन उसे ढांक न पा रहे थे और वह दूर दूर तक जगमगा रही थी। यह नीलिमा उसे अपनी ओर आकृष्ट कर रही थी और कुछ अनपेक्षित चीज़ों की प्राप्ति का आश्वासन-सा दे रही थी... और इस नीलिमा के उस पार था–भारत!

खज़ानची ने पीछे मुड़कर देखा। ख़ुरासानी सौदागर की आंखों से आंसू बह रहे थे, झरझर, झरझर...

दूसरा अध्याय

घोड़ों, खजूर और रेशम से लदी हुई नाव धीरे धीरे जल-डमरूमध्य पार कर रही है। उसके इर्द-गिर्द और भी दर्जनों छोटी छोटी नावें चल रही हैं। सूर्य की जलती-सी किरणों के नीचे नीला नीला गर्म जल चमचमा रहा है। जल नाव से टकरा टकराकर ऐसी ध्वनि पैदा कर रहा है मानो हज़ारों तालियां एक साथ बज रही हों। अधनंगे और भूरे रंग के मल्लाह सामने से आनेवालों को पहचान पहचानकर, दांत निकाले, एक दूसरे को पुकार रहे हैं और क्रोध का प्रदर्शन किये बिना एक दूसरे को खरी-खोटी सुना रहे हैं।

इस सुनहली नीलिमा, पुरमज़ाक़ महौल और शरीर को कमज़ोर बना डालनेवाली गर्मी के बीच, समुद्र के ऊपर से होर्मुज़

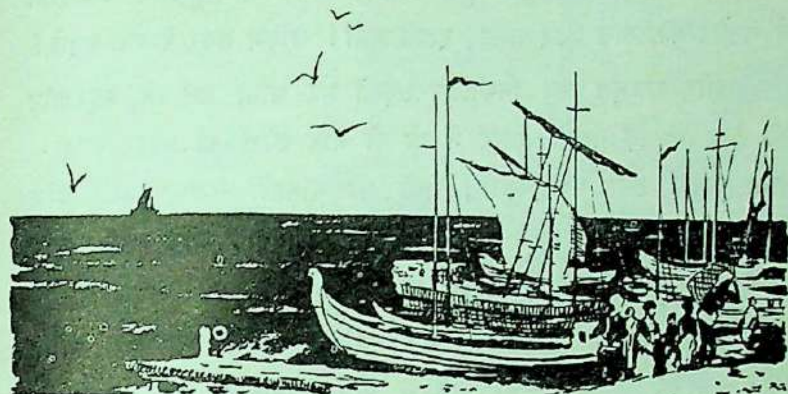
ऐसा उठता हुआ सा लगता है मानो भंवर में से फेन उठ रहा हो— फेन, जिसने पत्थर की शक्ल अख़्त्यार कर ली हो।

दूर से उसकी बर्फ़ जैसी सफ़ेद दीवालें, मीनारें और बुर्ज दिखाई पड़ते हैं और नज़दीक से रंग-बिरंगे पालों वाली सैकड़ों नावें, नीले और सुनहरे गुम्बद और भूरी सीधी दीवालों जैसी चट्टानें...

मल्लाहों जैसे ही अधनंगे चुंगीवाले, तट से नाव तक लगे हुए तख्ते के पास, सामानों की जांच-पड़ताल कर रहे हैं। वे व्यापारियों से पैसा ले लेकर उन्हें तट पर जाने देते हैं। आखिर आ पहुंचे!

निकीतिन साथ आये हुए एक घोड़े पर चढ़कर, खज़ानची मुहम्मद के पीछे पीछे चलता हुआ, बड़ी उत्सुकता के साथ इधर-उधर नज़र दौड़ा रहा है। एक संकरे-से मार्ग पर जैसे कोई हहराती हुई जन-सरिता क़िले के फाटक की ओर चली जा रही है। भूरे, काले चेहरे, रंगीन चोग़े, बुरनूसें, लबादे, लंगोट, रेशम, बरतनों के गट्ठर, मसकें, घोड़ों के गुस्सैल मुंह, गाड़ी हांकनेवालों की चिल्ल-पों, अभिवादन के रूप में सुनाई पड़नेवाली आवाज़ें, घोड़े हंकाने के लिए की जानेवाली पुचकारें, हंसी-क़हक़हे—यह सब के सब भिन्न भिन्न रूप-रंगों में पहाड़ी पर चढ़-उतर रहे थे, जिन्हें देखकर कल्पना के सामने नये नये चित्र आ जाते थे।

वह रहा एक ऊंचे क़द का हबशी, बाकू के तेल की तरह काला। उसकी आंखों की सफ़ेदी चमक रही है। वह सड़क के एक ओर खड़ा हुआ निकीतिन के सफ़ेद चेहरे को बड़े आश्चर्य से देख रहा है। वह रहा एक फ़ारसी लड़का। गधा हांक रहा है। गधे पर दो इतनी बड़ी बड़ी मसकें लदी हैं कि उनके सामने लड़का और गधा दोनों ही मक्खियों जैसे लग रहे हैं। एक तरफ़ चार नंगे पैर, नंगे आदमी पालकी उठाये जा रहे हैं। पालकी में एक लाल आवरण के नीचे



एक मोटा-सा आदमी बैठा है – शरीर पर चोग़ा, पैरों में बूट। और वह – पता नहीं मर्द है या औरत। लम्बी-सी चोटियां, पीला मुंह, छोटी छोटी आंखें।

लग रहा था जैसे क़िला लोगों को निगले जा रहा है, वैसे ही जैसे भंवर चिप्पी को निगलती है। यह जन-समूह एक मोटी-सी दीवाल में बने दुर्ग-द्वार से होता हुआ एक संकरी और गर्म सड़क पर चलता चला जा रहा था। सड़क के दोनों ओर बिना खिड़कियों वाले मकान थे, जिनकी छतें चौरस थीं, जिनके पीछे वीरान अहाते थे। अहातों में हरियाली का नामोनिशान तक न था। कारवां-सराय ज़रूर एक बड़ी इमारत थी – लम्बी, दुमंज़िली। यहां व्यापारियों के लिए अलग अलग कमरे थे और मवेशियों और घोड़ों के लिए अस्तबलवाले खाने। इतना होते हुए भी पशुओं के लिए काफ़ी जगह न थी। व्यापारी और नौकर-चाकर इधर-उधर भाग-दौड़ रहे थे, धूल और लीद में बच्चे खेल और लड़ रहे थे। बीच बीच में "आब! आब!" की आवाज़ सुनाई पड़ती थी।

एक ठंढे, और कुछ कुछ अंधेरे, कमरे में पहुंचकर अफ़नासी ने सन्तोष की सांस ली। ओफ़, इतनी गर्मी! लेकिन नगर के क्या कहने!

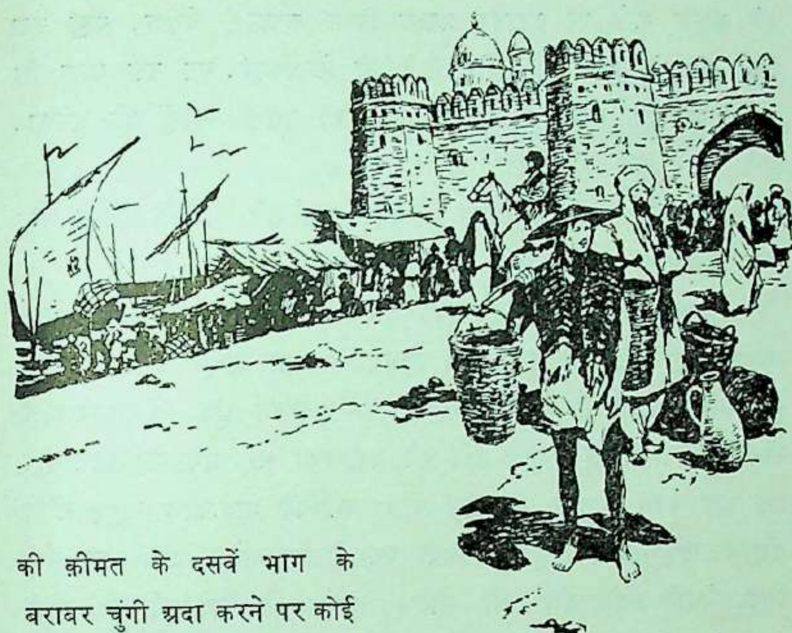
और सचमुच जब निकीतिन सड़कों पर आया तब तो वह और भी हैरत में पड़ गया। शहर में दो दो बार ज़ोरों की ज्वार आती—पानी समुद्री तटों पर चढ़ता, क़िले की दीवालों तक पहुंचता और लगता जैसे सब कुछ इसी में विलीन हो जायेगा, और गर्मी और प्यास से लोग पागल हो उठेंगे!

ईस्टर के दिन थे। यहां की गर्मी के सामने रूस का प्योत्र दिवस—(१६ जुलाई)—भी कुछ न था। होर्मुज़ में ताज़े पानी के कोई स्रोत न थे। यहां पानी नावों पर लाद लादकर बन्दर से लाया जाता। मकानों के अहातों के गड्डों में यही पानी भर दिया जाता और जब तेज़ गर्मी पड़ने लगती तो लोग नंग-धड़ंग उन्हीं गड्ढों में बैठ जाते।

होर्मुज़ की ज़मीन जल द्वारा उन प्रदेशों से कटी हुई थी, जो चिन्ताओं और लड़ाई-झगड़ों के केन्द्र थे। इसके इर्द-गिर्द दीवालें थीं जो पहाड़ों की चट्टानों से सटाकर बनायी गयी थीं। नगर की अपनी नौसेना थी जिसमें तीन सौ युद्ध-पोत थे। निकीतिन को लगा जैसे यह नगर व्यापारियों के लिए अच्छी पनाहगाह है।

उसे नगर की सड़कों पर अग्निपूजक पारसी, पेकिंग के बौद्ध और जेरूसलम के ईसाई दिखाई दिये। उसे लगा कि यहां के भिन्न भिन्न लोगों ने इस द्वीप को जो 'दारुल-अमन' का नाम दिया है वह सार्थक है।

लगता था कि नगर में किसी प्रकार का धार्मिक प्रतिबन्ध न था—मज़हब के मामले में सभी स्वतंत्र थे। बाहर से लाये हुए माल



की क़ीमत के दसवें भाग के बराबर चुंगी अदा करने पर कोई भी आराम से रह सकता था। डेढ़ वर्ष में पहली बार निकीतिन को ऐसा लगा जैसे अपने ईसाई होने पर उसे कोई चिन्ता नहीं।

उसने यहां जवाहरातों की दूकानें, लोगों की रईसाना पोशाकें और नगर निवासियों के गहने-ज़ेवर देखे, और उसे यह कहावत याद हो आयी – "दुनिया अगर अंगूठी है तो होर्मुज़ उसका मोती!"

अफ़नासी होर्मुज़ की चिलचिलाती धूप का अभ्यस्त न हो सका। हां, रातों में, जब सांस लेना आसान हो जाता, वह देर देर तक सड़कों पर घूमता और आकाश में बिखरे हुए मोतियों को घूरा करता। यह आकाश रूस के आकाश की अपेक्षा कुछ नीचा लग रहा था। यहां का तारक मंडल – राशि समूह – तक उसका जाना-पहचाना न था। वह यहां के निवासियों की खुशी और उनके रहस्यपूर्ण जीवन

की झलक पाने का बराबर प्रयत्न किया करता। बेशक, यहां रूस जैसी ही हंसी-खुशी थी और वैसी ही सिसकियां, पर उसे लगा कि यहां, मृगशिरा नक्षत्र के नीचे, आंसू भी दूसरी जगहों की अपेक्षा, हल्के और कम पीड़ादायी होंगे।

यह सब चीज़ें तो भारत में प्रवेश करनेवाले द्वार के समान थीं। उसका दम-सा घुटने लगा...

वसन्त की ऋतु थी। अभी हाल ही में मार्च के समुद्री तूफ़ान समाप्त हुए थे। इन तूफ़ानों ने होर्मुज़ से लेकर शत्तुल-अरब तक सब कुछ एक प्रकार से नष्ट कर डाला था। जिस धुंध ने फ़ारस के वीरान और निचले समुद्री तटों को ढक रखा था अब वह धीरे धीरे छंट रहा था। वसन्त की ऋतु थी। प्रतिदिन प्रातःकाल मछुए मोती की तलाश में अपनी पुरानी नावों पर निकल जाते। नावों पर सीपें निकालनेवाले ग़ोताखोर भी होते। होर्मुज़ के इर्द-गिर्द जो मोती निकाले जाते वह केवल वहां के शासक के लिए ही होते। किन्तु, कारवां-सरायों में प्रायः ऐसे लोग भी दिखाई पड़ जाते जो चलते-चलाते व्यापारियों से छुटपुट बातें करते और चुपके से उनके कमरों में घुस जाते। और फिर भीड़ में मिल जाया करते।

खज़ानची मुहम्मद ने कहा कि वे चोरी चोरी सस्ते दामों पर मोती बेचते हैं। यद्यपि यह फ़ारसी अपने कामों में व्यस्त था फिर भी अपने रक्षक को न भूला था। उसने कई मुसलमान व्यापारियों से निकीतिन का परिचय करवाया था और हसन को अफ़नासी की नौकरी में मुक़र्रर कर दिया था। अफ़नासी ने इससे इन्कार किया पर फ़ारसी अपनी बात करके ही रहा। गुलाम हसन, हर समय निकीतिन की परछाईं बना रहता और उसकी हर इच्छा पूरी करने को तैयार रहता। निकीतिन अब उसकी सहायता का अभ्यस्त हो



चुका था। उसने मोतियों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। उसने सीप बटोरनेवाले ग़ोताख़ोरों को देखने की इच्छा प्रकट की। अतः एक दिन प्रातःकाल वह द्वीप के ही निकट के एक टीले पर पहुंच गया। यह भाटे का समय था, इसलिए द्वीप पर सब कुछ साफ़ साफ़ दिखाई पड़ता था। वह खड़ा खड़ा नावों की ओर देखने लगा। एक नाव पास आकर खड़ी हो गयी। नाव के पिछले भाग में एक आदमी पगड़ी लगाये बैठा था। उसने कोई आज्ञा दी और एक नंगा काला मछुआ उठ खड़ा हुआ। उसकी छाती से एक थैली और कमर से एक चाकू लटक रहा था। उसने नाव पर पड़ा और रस्सी से मज़बूती से बंधा हुआ एक पत्थर उठाया। फिर सीधा हुआ, एक गहरी सांस ली और समुद्र में कूद पड़ा ... कुछ सेकंड बीत गये। नाव पर खड़े हुए लोग बराबर रस्सी छोड़ते जा रहे थे। अनुभवी हाथों में रस्सी मज़े मज़े सरक रही थी। ग़ोताख़ोर पानी के भीतर जा चुका था ... सहसा वह पानी के ऊपर निकला और गहरी गहरी सांसें लेने लगा। उसने कांपते हुए हाथों से नाव पकड़ ली। और पत्थर उठा लिया। अब एक दूसरा मछुआ उठा, उसने पत्थर थामा, सीधा हुआ, वैसी ही गहरी सांस ली और नाव से कूद पड़ा। अब पहलेवाला ग़ोताख़ोर चाकू से सीपें खोलने लगा। यह सीपें उसकी थैली में भरी थीं। पांच, छः, सात – सभी सीपें नाव से होकर समुद्र में समाती गयीं। किन्तु ग्यारहवीं सीप ने मछुए का ध्यान अपनी ओर खींचा, और पगड़ीवाले व्यक्ति ने सीप लेने के लिए हाथ फला दिया। सीप उसके हाथों में चली गयी।

"इसमें है!" निकीतिन के कान के पास एक फुसफुसाती-सी आवाज़ सुनाई दी।

यह हसन की आवाज़ थी। वह शायद डर गया था कि उसने मालिक की शान्ति में वाधा पहुंचायी है। इसी लिए शीघ्रता से समझाने लगा—

"खोजा, इसे मोती मिल गया है... मैंने दखल दिया है, मुझे माफ़ करें।"

"नहीं, नहीं, कोई बात नहीं। यह पगड़ीवाला है कौन?"

"पगड़ीवाला—यह दारोग़ा है। वही सारे मोती इकट्ठा करता है।"

"और वे कौन हैं जो मोती निकालते हैं?"

"मामूली ग़ुलाम।"

निकीतिन ने नाव पर एक दृष्टि डाली और कहने लगा—

"लगता है यह पगड़ीवाला दारोग़ा तुम्हारे मालिक के पास आया था..."

"मैंने नहीं देखा खोजा!" हसन ने तड़ से जवाब दिया, "मैं कुछ नहीं जानता।"

निकीतिन, उन नंगे और अस्वाभाविक ढंग से उभरी हुई पसलियों और पिचके हुए पेटवाले मछुओं की ओर देखता हुआ उत्सुकता से हसन से पूछ बैठा—

"तुम यहां पहली बार आये हो?"

"हां, पहली बार।"

"तुम भारत में रहते हो?"

"हां, खोजा।"

"तुम्हारे मां-बाप भी वहीं हैं?"

हसन ने बहुत धीरे से उत्तर दिया—

"हुज़ूर, मेरे मां-बाप थे ही नहीं।"

अफ़नासी ने सिर घुमाया—

"क्या? मर गये क्या?"

हसन ने ग्रांखें झुका लीं ग्रौर भूरी ग्रंगुलियों से एक जलता हुग्रा पत्थर छू लिया—

"नहीं जानता... वे थे ही नहीं।"

"ख़ैर, यह तो बताग्रो," निकीतिन बोला, "तुम मुहम्मद के हाथों में कैसे पड़े?"

"मेरे पहले मालिक ने मुझे उनके हाथ बेच दिया था।"

"तो तुम पहले मालिक के यहां बड़े हुए थे?"

"नहीं, उन्होंने भी मुझे खरीदा था।"

"किससे?"

"एक दूसरे मालिक से।"

"शैतान!" निकीतिन क्रोध से बोला, "ग्राखिर कहीं तो बड़ा हुग्रा ही होगा?"

"हां, हुज़ूर, लाहौर में।"

"तो सचमुच तुम्हें किसी की याद नहीं?"

"याद है। बड़ा-सा ख़ूबसूरत मकान। ढेरों नौकर-चाकर। हम बच्चे ईंधन के लिए कंडे पाथा करते थे। सारे दिन यही एक काम था। या फिर पानी लाते थे। हमारा रसोइया बड़ा सख़्त था, हुज़ूर। वह गुस्से से खांसने लगता ग्रौर फिर हमें मारने पर जुट जाता। बस उसी की याद है। हां, उस गाय की भी याद है जिसके पास मैं सोता था। लाल रंग, सफ़ेद पीठ। बस, ग्रौर कुछ याद नहीं ग्राता।"

"हुं-ह ..." निकीतिन के मुंह से इतना ही निकल सका।

इसी समय उसे एक चीख़ सुनाई दी। नाव के लोगों में हलचल-सी मच गयी। उन्होंने रस्सा खींचना शुरू किया ग्रौर ग्रपने डांड़ संभाल

लिये। पानी में से एक ग़ोताख़ोर निकलकर नाव में चढ़ा ही था कि उसके पास ही कोई भूरी-सफ़ेद चीज दिखाई दी।

"शार्क मछली ..." हसन ने समझाया। उसका चेहरा पीला पड़ रहा था। "उस मछली ने तो अभी इस ग़ोताख़ोर के टुकड़े ही कर दिये होते। यहां ढेरों शार्क मछलियां हैं। मोती बटोरना बड़ा ख़तरनाक काम है।"

"फिर भी लोग यह काम करते हैं और नहीं डरते।"

"खोजा, आदमी समुद्र में रहकर ज़िन्दा रह सकता है, लेकिन उसका मालिक उसपर कभी रहम नहीं करता।"

इस दुर्घटना और हसन के साथ हुई बातचीत ने निकीतिन को चिन्तित कर दिया।

और जब निकीतिन ने सफ़ेद, गुलाबी, काले और अतिदुर्लभ हरे मोती दूकानों में देखे, तो उसके मन में उनके प्रति वैसी ही घृणा पैदा हो गयी जैसी ज़ालिम शार्क को देखते हुए हुई थी। इस अनुभूति को दिमाग़ से निकालना उसके लिए असम्भव हो रहा था। बहरेन के प्रसिद्ध टापू और अज्ञात लंका के समुद्र, जिनके बारे में कहा जाता था कि वहां मोतियों की बहुतायत है, उसे होर्मुज़ की चट्टानों की ही तरह नीरस और पाषाणवत् लगने लगे। उसे लगा जैसे वहां के पानी में सिर्फ़ शार्क मछलियां हैं—प्राणघातक, भयंकर मछलियां।

इठलाती हुई वायु समुद्र पर से बह रही थी। पानी पर छोटी छोटी तरंगें उठ रही थीं। होर्मुज़ के शासक के पत्रवाहक कबूतर अपने रंग-बिरंगे बुर्ज से ऊपर उड़कर क़िले की दीवारों की आड़ में उतर रहे थे। गर्मी से बचने के लिए मकानों की छतों के ऊपर चादरें तान दी गयी थीं, जो हवा के स्पर्श से लहरों की भांति उठती-गिरती दिखाई

दे रही थीं। कारवां-सराय के तालाबों के पानी में हिलोरें-सी उठ रही थीं। चौराहों पर गर्म धूल उड़ रही थी और भिश्तियों के ऊंट दिखाई पड़ रहे थे। होर्मुज़ के छैलों के घुंघराले बाल हवा में लहरा रहे थे। औरतों के बुरक़ों की नक़ाबें निर्लज्जता से उड़ी जा रही थीं और लग रहा था जैसे वायु औरतों की इज़्ज़त का मखौल उड़ा रही है। वह समुद्र पर से बह रही थी और जहाज़ों के पाल अधिकाधिक स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। कुछ जहाज़ों पर से भारी भारी गट्ठर उतारे जा रहे थे। गर्मी से बचने के लिए सड़कों पर बिछाई गयी चटाइयों पर मल्लाह लोग झूमते हुए चल रहे थे। सख्त मेहनत के बाद अब वे आराम की तलाश में थे। शामों को सरायों में से मनचले गाने सुनाई पड़ते और नशे में धुत्त लोग बोरों की तरह निकाल बाहर किये जाते। जो लोग पहरेदारों से लुटते लुटते बच जाते, वे चोरों के हत्थे चढ़ जाते। सरहद पर बने मिट्टी के बाड़ों के पीछे से औरतों की ही-ही ही-ही सुनाई पड़ती और वे बाड़ों में बने झरोखों में से मुसाफ़िरों की आस्तीनें पकड़ पकड़कर उन्हें अपने चेहरे दिखाने लगतीं। उनके कानों में भारी भारी कर्णफूल झूमा करते। कर्णफूलों के बोझ से कइयों के कान तो कंधों तक लटक आये थे। ये औरतें जवान थीं, ख़ूबसूरत थीं और थीं महंगी। नाविकों की संख्या अधिक थी। हवा समुद्र पर से बह रही थी। क्षितिज में, एक के बाद एक, ढेरों पाल दिखाई पड़ रहे थे।

"जायफल ले लो, जायफल, मलाबार के जायफल!"

"लौंग, दालचीनी, लौंग, दालचीनी!"

"नील, नील, दुनिया का सबसे ज़्यादा चमचमाता हुआ नील!"

"हीरों को चमकानेवाला पत्थर!"

"अपनी माशूक़ा के लिए शाही ताफ़्ता ले लो, ताफ़्ता!" बाज़ार में भारतीय व्यापारी ऐसे ही चिल्ला रहे थे। हवा में मसालों की तेज़

गन्ध उड़ रही थी, पारदर्शी वस्त्र सरसरा रहे थे, सोने के ज़ेवर झमक रहे थे। भारत! भारत! यहां भारत का अनुभव हो रहा था, एक जीवित, गर्म शरीर की भांति। लेकिन भारत का रहस्य छिपा किसमें है? भारत के चमचमाते हुए कामदार सुन्दर वस्त्रों में, या हसन के दुर्भाग्य में? क्या है यह रहस्य?

ख़ज़ानची की सलाह से निकीतिन ने एक घोड़ा ख़रीदने का निश्चय किया।

वह घोड़ों के बाज़ार में गया, घोड़े देखे और उनका मूल्य मालूम किया।

घोड़े सभी तरह के थे। अच्छे घोड़े भी थे। लेकिन व्यापारी उनके बहुत अधिक दाम मांगते थे। रूसी रूबलों में घोड़ा कोई सत्तर रूबल का पड़ता था।

"अगर भारत में बेचो तो तुम्हें इसी के दस गुने, पन्द्रह गुने दाम मिल जायें," ख़ज़ानची ने समझाया, "भारत में घोड़े नहीं पैदा होते। वहां सबसे फ़ायदे का सौदा है–घोड़ा।"

निकीतिन के पास इतना पैसा तो था ही कि एक अच्छा घोड़ा ख़रीद सकता था और रास्ते का ख़र्च निकाल सकता था। उसने ख़ज़ानची की सलाह पर चलने का निश्चय किया।

दिन गुज़रते गये। प्रतिदिन प्रातःकाल मुहम्मद को जल-डमरूमध्य होकर बन्दर तक जाना पड़ता था। वहां घोड़ों पर मुहरें लगायी जाती थीं। ख़ज़ानची परेशान हो गया था और जल्दी मचा रहा था। शीघ्र ही उसके घोड़ों के लिए बड़ी बड़ी नावें आनी थीं, किन्तु घोड़ों पर मुहरें लगाने का काम धीरे धीरे चल रहा था।

"यूसुफ़, तुम्हें घोड़ों की जानकारी भी है?" ख़ज़ानची ने एक बार निकीतिन से प्रश्न किया, "तो फिर मेरी मदद करो न।"

मुहम्मद ने खरीदे हुए घोड़ों में से कुछ तो सरायों के सायबानों में रख दिये थे और कुछ बन्दर की सरहद पर बने हुए मिट्टी के बाड़ों के पीछे। इनमें से अधिकतर घोड़े खज़ानची के नौकरों की देख-रेख में चरा करते थे।

मुहम्मद, निकीतिन को एक छोटे-से बाड़े में ले गया जहां फटे-पुराने चोग़े और मैली-कुचैली, चौकोर टोपियां चांद पर रखे कुछ लोग उनका इन्तज़ार कर रहे थे। उनका रंग सांवला था मगर धूल ने उनपर काली परत चढ़ा दी थी।

सभी एक ही शक्ल-सूरत के लग रहे थे। सभी एक ही ढंग से झुकते और एक ही तरह से दौड़ते थे। वे कोने में बनी अंगीठी में कोयला फूंक रहे थे और घोड़ों की लगामें हिलाते-डुलाते हुए इस बात पर बहस कर रहे थे कि घोड़ों को कौन हांकेगा, कौन उनपर मुहर लगायेगा।

मुहम्मद वहीं से चिल्ला उठा और लोग ऐसे खिसक गये मानो हवा उन्हें उड़ा ले गयी हो। बस एक आदमी बच रहा। वह बड़ी मेहनत से धौंकनी चला रहा था। आग की लपटें उठ रही थीं और कालिख झड़ रही थी। ऊन से ढकी हुई ज़मीन घोड़ों के खुरों से जगह जगह खुदी हुई थी और सारे का सारा वातावरण मूत्र से गन्धा रहा था।

"यहां हम घोड़े पर मुहरें लगवाते हैं," मुहम्मद बोला, "इस बात पर ध्यान देना है कि कहीं बूढ़े और बीमार घोड़ों पर मुहर न लग जाये। तुम्हें ऐसे घोड़ों को अलग कर देना है। मेरा अनुमान है कि ऐसे घोड़े अधिक न होंगे। लेकिन, घोड़ों के दलाल हमें झांसा दे सकते हैं। इन फटे-हालों का भी कोई विश्वास है? ये लोग तुम्हें धोखा देने की कोशिश करेंगे, मेरे खरीदे हुए अच्छे घोड़ों को अपने निकम्मे और अड़ियल घोड़ों से बदल लेंगे ... बोलो तुम यह काम कर सकोगे?"

"तुम जाकर अपना काम करो," अफ़नासी ने उत्तर दिया, "यहां का काम मैं संभाल लूंगा।"

दो घोड़ों पर मुहर लग जाने तक मुहम्मद इन्तज़ार करता रहा। फिर उसने सभी को आदेश दिये कि वे ख़ोजा यूसुफ़ का हुक्म मानें, और स्वयं जल्दी से घोड़ों का मुआइना करनेवाले दूसरे लोगों के पास चला गया। अफ़नासी अकेला रह गया।

घोड़ों पर मुहर लगाने का काम इस प्रकार होता रहा – घोड़े को बाड़े में ले जाया जाता, अफ़नासी उसका मुआइना करता, फिर घोड़े के पैर बांधे जाते, उसे बग़ल के बल गिराया जाता, और उसके पुट्ठे पर जलती हुई मुहर दाग़ दी जाती। घोड़े का मांस जलने लगता और वह तड़पता हुआ भागने की कोशिश करता और भय से चीख़ पड़ता।

चौदह या पन्द्रह घोड़ों के बाद अफ़नासी इतना थक गया मानो सुबह से दोपहर तक कुल्हाड़ी से लकड़ी काटता रहा हो। चिलचिलाती हुई धूप से बचने के लिए उसे सिर छुपाने की भी जगह न मिली। उसके सूखे हुए ओंठों पर हल्की-सी मुस्कराहट बिखर गयी और वह सोचने लगा कि सचमुच मेरी अपनी दशा इन दग़नेवाले घोड़ों से अच्छी नहीं। दूसरे लोग भी बुरी तरह थक चुके थे। किन्तु निकीतिन ने ख़ज़ानची के लौटने तक काम करते रहने का निश्चय किया। ख़ज़ानची ने दोपहर तक लौटने का वादा किया था।

कार्य, अविराम, चलता रहा। निकीतिन घोड़ों की जांच-पड़ताल करता और वहां के लोगों पर नज़र रखता। निश्चय ही वे भिन्न भिन्न शक्ल-सूरत के थे। पर अजीब यह था कि निकीतिन को पहली नज़र में ऐसा लगा जैसे उनमें कोई फ़र्क़ नहीं। धौंकनी पर काम करनेवाले बूढ़े के हाथ में एक लम्बा-सा चिमटा था जिसमें वह घोड़ों पर



लगानेवाली मुहर साधे था। इस व्यक्ति का शरीर दुबला-पतला और नाक टेढ़ी थी। उसकी आंखें सूजी हुई थीं। लग रहा था जैसे उनमें जलते हुए आंसू भरे हों। वहीं दूसरों से अधिक चतुर एक दूसरा आदमी था। यह तुर्कमन था। देखने में जवान, आंखों का तेज़। गुस्सा तो उसकी नाक पर धरा रहता। चीखना-चिल्लाना जैसे उसका स्वभाव था। उसका घुटा हुआ सिर उसकी भरी-पूरी और छोटी-सी गर्दन पर कसकर जमा हुआ दिखाई पड़ रहा था। जब वह घोड़े की ओर बढ़ा, तो वह हिनहिनाने लगा और कुछ क़दम पीछे हट गया। तुर्कमन ने इशारे पर न चलनेवाले घोड़े के माथे पर भारी भारी मुक्कों की बौछार शुरू कर दी और उसे इतना पीटा कि वह बिल्कुल गिरने को हुआ।

"ए भाई, ज़रा धीरे से!" निकीतिन ने उसे रोका। तुर्कमन ने निकीतिन को ऐसे देखा जैसे उसका मखौल उड़ाना चाहता हो और अपने दोस्तों से जल्दी जल्दी कुछ कह गया। वे सब हंसने लगे। तुर्कमन ने फिर हाथ उठाया मानो अपने अगले शिकार की खबर लेना चाहता हो।

निकीतिन ने तुर्कमन का हाथ पकड़कर ज़ोर से दबाया। फिर एक क्षण तक दोनों खड़े खड़े एक दूसरे की आंखों में आंखें डालकर देखते रहे। तुर्कमन का हाथ पूरी ताक़त से पकड़े रहने के कारण अफ़नासी के पुट्ठों में पीड़ा होने लगी पर सांस खींचकर आखिर उसने उसका हाथ मोड़ ही दिया।

सहसा तुर्कमन मुस्करा दिया और हाथ झटककर क्रोध से अपने उन सहायकों पर चिल्ला पड़ा जो काम छोड़कर तमाशा देख रहे थे –

"घोड़े को गिराओ न! रुक क्यों गये?"

लोग तुरन्त अपने काम में लग गये और फिर दुपहर तक कोई घटना न घटी। हां, कभी कभी निकीतिन ने इस बात पर अवश्य ध्यान दिया कि तुर्कमन कनखियों से उसकी ओर देखता है और रूखी हंसी हंस देता है।

दोपहर होते होते खज़ानची आ पहुंचा। उसके शरीर पर गर्द-ग़ुबार जम गया था और गला बैठ गया था। उसने घोड़ों की जांच की, खुश हुआ और निकीतिन से आराम करने को कहा।

मुहम्मद, निकीतिन को किसी मुसलमान के घर ले गया जहां दोनों एक ठंढे कमरे में जम गये। यहां निकीतिन ने पानी मिली खड़ी शराब पी, अपने जलते हुए चेहरे पर हाथ फेरा और गहरी सांस ली। अब उसकी जान में जान आयी और गर्मी तथा थकान से कुछ राहत मिली। उसकी आंखों के सामने घोड़ों के सिर, पुट्ठे, चौंधिया देनेवाली ज़मीन और अलाव के ऊपर कांपती हुई सी हवा थी और उसके कानों में सुनाई पड़ रही थीं घोड़ों की हिनहिनाहट, वहां के लोगों की आपसी डांट-फटकार।

"इन लोगों को इकट्ठा कहां से कर लिया?" उसने खज़ानची से पूछा, "यह जवान कहां का है, जिसकी आंखें जंगलियों जैसी हैं?"

"सभी बन्दर के हैं!" खज़ानची धीरे से बोला – उसका गला बैठ गया था, "सभी चोर, बदमाश, उठाईगीरे हैं। लेकिन इनसे अच्छे मिलते भी नहीं। इसी लिए तो कम पैसों में मिल जाते हैं। क्यों, क्या बात है? कुछ हुआ तो नहीं?"

"नहीं। मैंने यों ही पूछा था," निकीतिन ने उत्तर दिया।

खाना अफ़नासी की हलक़ से न उतरा। किन्तु, खज़ानची खाने के बाद तुरन्त क़ालीन पर पड़ा रहा और खर्राटे भरने लगा। वह पूरे दो घंटे तक सोता रहा। उसने मुंह और नाक पर बैठती हुई मक्खियों की भी चिन्ता न की। पर निकीतिन को नींद न आयी। वह गरदन के नीचे हाथ रखे पड़ा रहा – चुपचाप, शान्त। उसके मस्तिष्क में तरह तरह के विचार उठ रहे थे। पास ही खर्राटे लेते हुए मुहम्मद ने भी उसके मन में एक विचार पैदा कर दिया था – क्या सचमुच भारत की भूमि आश्चर्यजनक है, अद्भुत है?

उसने अपना पैसा गिना। बेशक, इतने में वह घोड़ा खरीद सकता है और कुछ बचा सकता है। लेकिन उसे एक डर भी था। अगर वह घोड़ा ले जाये तब तो खैर अच्छा ही है, पर यदि वह मर गया तो? लोग कहते हैं प्रायः यही होता है। इतनी दूर, परदेस में, बिना पैसे के माने हैं मौत। इसके माने हैं रूस का रास्ता हमेशा के लिए बन्द!

रूस! अफ़नासी का दिल तड़प उठा। उसने सिर के नीचे से दोनों हाथ निकाले और उठकर बैठ गया। उसने दांत पीसे। घर छोड़े उसे कोई दो वर्ष हो चुके थे। वह अकेला, मातृभूमि से दूर, बहुत दूर चला आया था। उसने जितना सोच रखा था, मार्ग उससे अधिक दुष्कर सिद्ध हुआ। तो क्या इतना चल आने के बाद, इतना सब कुछ अनुभव कर चुकने के बाद, वह अब घुटने टेक दे? या शायद वह भारत पहुंचेगा ही नहीं? भारत पहुंचना उसके भाग्य में ही नहीं?

सहसा उसके हृदय में एक हूक-सी उठी – उसके कान अपनी मातृभाषा, मंडली में बैठी हुई लड़कियों के हंसी-क़हक़हे सुनने को ललक उठे। वह बचपन की परिचित दुनिया में पहुंचना चाहता था जहां की एक एक झाड़ी उसे मित्र-सी लगती थी।

उसने त्वेर की गली में खड़ी हुई ओलेना को देखा। सेबल की टोपी पहने और उसपर शाल कसे थी। उदास-सी मुस्कराहट उसके अधरों पर बिखर गयी थी। और यहां, बन्दर के एक छोटे-से मकान में उसे त्वेर में पिघलती हुई बर्फ़ की गन्ध मिल रही थी। वहां के गिरजे के घंटों की घनघनाहट, स्लेज-गाड़ियों की सरसराहट, गिरजों के क्रॉसों के ऊपर उड़नेवाले कौओं की पटर पटर उसके कानों में पड़ने लगी। सहसा उसे अग्राफ़ेना काशीना की आवाज़ भी साफ़ साफ़ सुनाई देने लगी – "निकम्मा आदमी, बिल्कुल निकम्मा!" और फिर मिकेशिन की ही-ही भी . . .

निकीतिन ने माथे पर हाथ फेरा और ख़ज़ानची को पुकारने लगा –

"ख़ोजा, उठने का वक़्त नहीं हुआ क्या? अरे भाई, सोओगे तो खोओगे!"

बाक़ी दिन वह एक क्षण के लिए भी चैन से न बैठा। ख़ुद भी थका और काम करनेवालों को भी थका डाला। गरमी से थके हुए होने के बावजूद उसने लोगों को जल्दी से जल्दी काम करने को कहा। शाम होते होते मुहम्मद की आशंका सत्य दिखाई पड़ी। एक बूढ़ा घोड़ा अफ़नासी के गले पड़ा। उसने उंगलियों से घोड़े के दांत टटोले – दांत रिते हुए थे। निकीतिन अपने चारों ओर देखने लगा। बाज़ जैसी आंखों वाला आदमी रस्सी हिला रहा था, टेढ़ी नाकवाला बूढ़ा जलती हुई मुहर लिये था और दो अन्य बन्दरवासी उस निकम्मे अड़ियल घोड़े की पिछली टांगें बांध रहे थे और अजीब ढंग से एक दूसरे को डांट-फटकार रहे थे।

"इस घोड़े को हटा ले जाओ! इसपर मुहर नहीं लगेगी!" निकीतिन चिल्लाया, "इसे यहां बांध दो।"

जो बन्दरवासी घोड़े की टांगें बांध रहे थे उन्होंने तुरन्त ही डांट-फटकार बन्द की और उछलकर एक ओर खड़े हो गये।

"क्यों ?"

"इसे क्यों हटा रहे हो ?"

"यह तुम्हारा घोड़ा है !"

वे धड़धड़ाते हुए निकीतिन के पास चले आये और अपनी दुबली-पतली, गन्दी बांहें झुलाने लगे। उनकी लहसुन से गन्धाती हुई सांसें अफ़नासी को सुनाई पड़ रही थीं और वे अपनी काली और छोटी आंखें इधर-उधर नचा रहे थे।

अफ़नासी ने कोई उत्तर न दिया और घोड़े की रास पकड़कर उसे द्वार से दूर, कोने में, एक खंभे से बांध दिया। बन्दरवासी तुरन्त चुप हो गये। बाज़ जैसी आंखों वाले तुर्कमन ने धीरे से सीटी बजायी।

"घोड़े लाओ !" कठोरता से निकीतिन ने आज्ञा दी, "शाम को देखा जायेगा। तो ले आओ ! जल्दी करो !"

उन्होंने डेढ़ डेढ़ साल की दो घोड़ियों पर चुपचाप मुहरें लगायीं। जब लोग तीसरे और चौथे घोड़े को लेने गये तो बूढ़ा निकीतिन के पास आकर पोपलाते हुए कहने लगा –

"इन लोगों की ग़लती माफ़ कर दो, खोजा।"

"यह ग़लती नहीं है !" निकीतिन बोल उठा।

"मालिक उन्हें निकाल देगा।"

"उन्होंने हरकत ही ऐसी की है।"

"ऐं! हरकत ... सिर्फ़ अल्लाह बेगुनाह है, खोजा। इन लोगों के खानदान हैं, बाल-बच्चे हैं। भूखों की रोटी तो न छीनो, खोजा।"

बूढ़े ने एक गहरी सांस ली और धौंकनी की ओर लौट गया। बन्दरवासी उदास मन से घोड़े ले आये। बाज़ जैसी आंखों वाला आदमी बराबर सीटी बजाता रहा। एक घंटा और बीत गया। अब अंधेरा हो चला था। कोने में बंधा हुआ घोड़ा गहरी सांसें ले रहा था।

जब अगले घोड़े पर मुहर लग चुकी तो अफ़नासी ने अभागे घोड़े की ओर देखते हुए सिर हिलाया –

"इसे ले जाओ ..."

बन्दरवासी उसका अर्थ न समझ सके।

"मैंने इसे नहीं देखा!" क्रोध से अफ़नासी बोला, "और तुमने भी नहीं देखा। बस। इसे यहां से ले जाओ! बदमाश कहीं के!"

बूढ़े ने पीठ सीधी की और मुस्करा दिया। बन्दरवासियों में भी जैसे जान में जान आ गयी। बाज़ जैसी आंखों वाले ने निकीतिन को कनखियों से देखा और अपनी मूछों पर हाथ फेरने लगा।

"जल्दी करो, जल्दी करो!" अफ़नासी कठोरता से कहता गया, "अंधेरा होते होते हम पांच घोड़ों पर और मुहर लगवा लेंगे ..."

बन्दरवासी निकीतिन के आगे झुकते हुए चले गये। अब निकीतिन बाड़े से निकलकर उस गली में आ गया जहां से मुहम्मद को आना था।

बाज़ जैसी आंखों वाला तुर्कमन चुपचाप उसके पास चला आया। दोनों झुटपुटे में खड़े थे। दोनों एक दूसरे का चेहरा ठीक से न देख सकते थे। तुर्कमन ने जैसे रहस्यपूर्ण ढंग से कहना शुरू किया –

"तुमने उन्हें माफ़ कर दिया, बड़ा अच्छा किया।"

अफ़नासी हंस दिया –

"मुझे धमकी देते हो? लेकिन मैं डरनेवाला नहीं।"

"हाथ लाओ," तुर्कमन बोला, "ऐसे। अब तुम मेरा हाथ मोड़ो। मोड़ो, मोड़ो ... कसकर मोड़ो।"

तुर्कमन ने आसानी से निकीतिन के सारे प्रयत्नों को विफल कर दिया और बिना किसी कठिनाई के उसका हाथ जमीन तक मोड़ दिया।

"यह रही!" तुर्कमन बोला, "देख रहे हो, ज़िन्दगी में क्या क्या होता है? खोजा, मैं चाहता हूं तुम सुनहले सपनों में झूलो ..."

इतना कहकर वह रात के अंधेरे में ग़ायब हो गया।

होर्मुज़ की ओर, समुद्री रास्ते से जाते समय, निकीतिन कुछ विशेष प्रसन्न लग रहा था। उसे रात में गहरी नींद आयी थी।

घोड़ों पर मुहर लगाने का काम पूरा हो रहा था। बन्दरवासी निकीतिन से हिलमिल गये थे और प्रायः अपने कठोर जीवन और कम पैसों का रोना रोते थे। निकीतिन ने उनसे वादा किया था कि वह उनकी सिफ़ारिश ख़ज़ानची से करेगा। और सचमुच उसने ख़ज़ानची से कहा भी था। किन्तु ख़ज़ानची उत्तर में अपना सिर हिलाते हुए बोला था –

"ये सब झूठे हैं, मैं इन्हें काफ़ी पैसा देता हूं।"

निकीतिन ने ख़ज़ानची का उत्तर उन्हें सुना दिया, जिसे सुनकर बूढ़ा तो उदास हो गया लेकिन जवान तुर्कमन ने ज़ोरों से थूक दिया। फिर पैर के पास पड़े हुए पत्थर को ठुकराते हुए पूछने लगा –

"देख रहे हो? और पूछते थे कि मैं क्रोध क्यों करता हूं। अजी जेब तो इजाज़त ही नहीं देती कि हम सख़ावत बरतें।"

"उसे छोड़ जाओ," निकीतिन ने सलाह दी, "तुम जवान भी हो और मज़बूत भी।"

"हां, दूसरों का बोझ हमेशा हल्का लगता है," जाते हुए तुर्कमन बड़बड़ाया।

"उसके बीमार मां है और एक छोटी बहन," टेढ़ी नाकवाला बूढ़ा बोला, "बेचारी अभी लड़की है, लेकिन लोग अभी से उसका दाम पूछ रहे हैं। पर मुज़फ़्फ़र नहीं चाहता कि वह आगे चलकर कुलच्छनी बने।"

"तो फिर उसे ब्याह दे।"

"किसके साथ? शायद कोई पैसेवाला बूढ़ा आयेगा और उसे ले

जायेगा। ऐसे लोग ग़रीबी का ख़्याल नहीं करते ... होता है ऐसा। क़िस्मत ईमानदारों का साथ कम ही देती है, खोजा!"

शीघ्र ही मुहर लगाने का काम समाप्त हो गया। मुहम्मद सन्तुष्ट था। उसने निकीतिन को पचीस सोने के सिक्के और बाक़ी सबों को कुल मिलाकर बारह सोने के सिक्के दिये थे। मुहर लगानेवालों ने पैसा लिया और सिर झुका दिया। किन्तु जब खज़ानची चला गया तो वे उसे पेट भर भरकर गालियां देने लगे।

खज़ानची ने अफ़नासी को कभी कभी शाम के खाने पर बुलाया। नौकर-चाकर मिठाई, शराब और मसालेदार भुना हुआ गोश्त ले आये। मुहम्मद ने ज़बान चटखारी और खाने की तश्तरियों की ओर हाथ बढ़ा दिया। खाना उसे पसन्द आया और वह उंगलियां तक चाटने लगा। उसने घूंट घूंट कर शराब भी पी, किन्तु बहुत पी। इस समय उसे अल्लाह के कलाम तक बिसर गये। पहली शाम अफ़नासी ने इसकी चर्चा चलायी।

"एक अच्छा चुटकुला सुनो," आंख मारते हुए ख़ज़ानची ने जवाब दिया, "एक था मुल्ला। बराबर अपने हम-मज़हबियों को समझाया करता कि पीना गुनाह है। जो पीते हैं उनपर अगले जन्म में तरह तरह के क़हर ढाये जाते हैं और जो नहीं पीते उन्हें लम्बे पैरों और गुलाबी छातियों वाली हूरें गले लगाती हैं। पीनेवालों को शैतानों के पंजे दबोचते हैं, लोहे की सलाखों पर लटकाया जाता है, आग में भूना जाता है। सुननेवाले स्तम्भित हो गये। वे मुल्ला का उपदेश सुनकर मस्जिद से बाहर चले गये। उनके दिमाग़ में मुल्ला की बातें गूंज रही थीं, छलक रही थीं शराब से भरे प्याले की तरह! लेकिन एक ही घंटे बाद उन्होंने अपने मुल्ला को बाज़ार की सड़कों पर लोटते देखा। उसमें उठने तक की

ताक़त बाक़ी न रही थी। उसके मुंह से वैसी ही गंध निकल रही थी जैसी शराब के कनस्तर से निकलती है।

"'खोजा!' लोगों ने साश्चर्य उससे प्रश्न किया, 'यह क्या? तुम्हीं तो हमें अभी अभी सीख दे रहे थे और अब?'

"'मेरे बेटो!' मुल्ला हिचकियों के बीच किसी तरह कह पाया, 'भगवान के अलावा कोई भगवान नहीं!.. हिक ... मेरे बेटो, सब ठीक है। मैंने ठीक कहा था ... अरे शैतान के बच्चो, मुझे उठाओ तो ... हिक ... सब ठीक है ... ओ मज़हब पर ईमान लानेवालो, याद रखो – सच्चाई मेरे कहने में है, करने में नहीं!'"

और शराब की चुस्कियां लेते हुए मुहम्मद ने अपनी बात पूरी की –

"और भारत में काफ़िर यह समझते हैं कि पीनेवाले मरने के बाद गधों का जन्म लेते हैं।"

अफ़नासी हंस दिया।

"जो वहशियों की तरह पीता है वह जानवरों की योनि में पैदा होने से डरेगा नहीं ..."

निकीतिन ने खज़ानची से भारत के बारे में कुछ सुनाने का अनुरोध किया।

"क्यों," खज़ानची ने उसे तंग करने की ग़रज़ से कहा, "सब कुछ खुद ही देख लोगे और जल्दी ही ..."

लेकिन अन्ततः उसने कहना शुरू किया – इतनी घनघोर वर्षा होती है कि गांव के गांव बह जाते हैं, ऐसे ज़हरीले सांप होते हैं कि अगर आदमी को सूंघ लें तो वह तुरन्त ढेर हो जाये, इतनी जल्दी जल्दी उगनेवाले बांस के वन होते हैं कि अगर शाम को उसकी एक क़लम लगाकर सो जाओ तो सुबह जगने पर तुम्हारी बग़ल में एक ऊंचा-सा

तना दिखाई देगा, ऐसी भयंकर महामारियां होती हैं कि सारे के सारे इलाक़े को मौत की नींद सुला देती हैं ...

एक बार मुहम्मद को अमीर खुसरो की याद आयी, जिसने देवल देवी के सौन्दर्य का गुणगान किया था।

"हां," वह बोला, "उनकी औरतें तो माशा-अल्लाह ग़ज़ब की खूबसूरत होती हैं। देवल देवी को ही देखो। उसके लिए खून की नदियां बह गयी थीं। वह एक राजा की लड़की थी। सुलतान अला-उद्दीन उसे अपने बड़े बेटे हज़र-खान की बीवी बनाने के लिए उठा ले गया। और जानते हो उसकी मां भी सुलतान के हरम में ही रहती थी। हज़र-खान तो देवल देवी का दीवाना ही बन गया था, पर उससे हज़र-खान को सुख न मिला। कुतुबुद्दीन मुबारक देवल देवी का आशिक़ था। उसने हज़र-खान को मौत के घाट उतार दिया। फिर मुबारक भी मार डाला गया ... इस हसीना की खूबसूरती पर कितने परवाने मर मिटे। समझ रहे हो न! भारत की नाज़नीनें दुनिया में सबसे खूबसूरत होती हैं।"

"दिल्ली के ही पास एक और शहर है तुग़लकाबाद," दूसरी बार मुहम्मद ने कहा, "इसे कोई डेढ़ सौ साल पहले ग़ियासुद्दीन ने बसाया था। ग़ियासुद्दीन अपने बेटे जौन-ख़ान के हाथों मारा गया था। इस शहर में सुलतान ने अपनी सारी दौलत सुरक्षित रखी थी। शहर में सुलतान के महल की दीवालें सोने से मढ़ी हुई थीं। आदमी सुलतान के इस महल की ओर देर तक न देख सकता था – उसकी आंखें चौंधिया जाती थीं। ग़ियासुद्दीन को हमेशा लड़ाइयां ही लड़नी पड़ती थीं। इन्हीं लड़ाइयों में उसने ढेरों गुलाम पकड़े और काफ़ी लूट तुग़लक़ाबाद ले आया। सुलतान लालची था। उसने एक बहुत बड़ा तालाब बनवाया जिसमें उसने अपना सारा सोना, गुलामों से चुपचाप गलवा गलवाकर

भर दिया। कहते हैं कि सारा तालाब सोने से नाक तक भर गया। फिर उसने सभी गुलामों को फांसी दे दी ताकि सोने के तालाब का किसी को पता न चल सके..."

"हां तो?" अफ़नासी के मुंह से निकल गया।

"सुलतान मर गया और शहर लुट गया ... लेकिन उस सोने का आज तक पता न चला।"

इन क़िस्से-कहानियों ने अफ़नासी की उत्सुकता और भी बढ़ा दी। कही गयी घटनाओं में सत्य का कोई न कोई अंश तो होगा ही – मुहम्मद भारत ही में रहता है। और अगर ऐसा है तो अफ़नासी का आना बेकार नहीं हुआ।

"अच्छा, तुम्हीं बताओ, पानी के रास्ते किधर सफ़र करना ठीक होगा?" निकीतिन ने पूछा, "माल कहां मिल सकता है? घोड़ा कहां बिक सकता है?"

"मेरे साथ बीदर चलो," खज़ानची ने उसे सलाह दी, "वहां सुलतान बड़ा ताक़तवर है और तिजारत का भी बोलबाला है। वहां जाकर तुम रईस बन जाओगे, मशहूर हो जाओगे। मालिक-अत-तुजार महमूद गवान विदेशियों की क़द्र करता है, उनका विश्वास करता है।"

"और कहां कहां जाया जा सकता है?"

"हुं-ह ... गुजरात – वहां से होकर तो हम गुज़रेंगे ही। पंजाब, मालवा और जौनपुर भी ... लेकिन नहीं, सौदागरों के लिए ये जगहें ठीक नहीं हैं। बहामनियों का इलाक़ा सबसे बड़ा और सबसे मालदार है। बस हिन्दुओं के पास मत जाना – तुम न उनकी भाषा जानते हो न उनके रीति-रिवाज।"

"उनके साथ भी व्यापार किया जा सकता है?"

"बेशक ... उनका सबसे मालदार शहर है विजयनगर। वहां महाराजाधिराज विरूपाक्ष का शासन है।"

"तुम गये थे वहां?"

"नहीं ... शायद साथ साथ चलेंगे। मालिक-अत-तुजार न जाने कब से वहां चढ़ाई कर देने की सोच रहा है। जब हमारी नावें आयेंगी, चढ़ाई हुई है या नहीं यह तब हम जान लेंगे ..."

"लगता है अभी तक तुम लोग शान्ति से रह रहे थे?"

"शान्ति से? भारत तो यह शब्द न जाने कब का भूल चुका है। अच्छा सुलतान लड़ाई के मैदानों में लगे हुए तम्बुओं में रहता है। भारत–सोने की चिड़िया है। और सोना है–युद्ध!"

मुहम्मद की बातें सुनकर अफ़नासी इस नतीजे पर पहुंचा कि उसके लिए एक ही रास्ता है–उसके साथ बीदर जाये। वह इसे जानता है और उसका विश्वास है कि बीदर का इलाक़ा सबसे अच्छा इलाक़ा है। तो बीदर ही सही।

नावें आ गयीं। लम्बाई कोई दस फ़ुट और चौड़ाई भी अच्छी-खासी। उनके पाल चौकोर थे। पालों और डांड़ों को देखते हुए वे गेनोआ की नावों जैसी लग रही थीं। एक नाव से एक गठीला जवान निकलकर किनारे आया। वह दस नावों का सरदार था। उसका नाम था सुलेमान। उसने मुहम्मद को बताया कि उसके पीछे दूसरी नावें आ रही हैं, लेकिन खुद जल्दी में था। मालिक-अत-तुजार ने शंकर राजा पर हमला बोल दिया है। अब वह खेलना के क़िले पर चढ़ाई कर रहा है। राजा ने अपनी सहायता के लिए कोंकन के राजाओं को न्योता दिया है। यह असली लड़ाई है, मजाक़ नहीं। सुलेमान के पास खज़ानची के लिए एक पत्र है ...

पत्र पढ़कर खज़ानची नें चेहरा लटका लिया किन्तु उसे देखने से

साफ़ पता चलता था कि उसे इस खबर से गर्व भी हो रहा है और खुशी भी।

"तो तुम जल्दी ही लौट जाओ!" खज़ानची ने गम्भीरता से कहा, "नावों पर घोड़े लादने का काम हम आज ही से शुरू कर देंगे। मैं अभी यहीं रहूंगा। मुझे होर्मुज़ के शासक से मिलना है।"

"तो इसके माने हैं तुम यहीं ठहरोगे?" अफ़नासी ने पूछा।

"अगर चाहो तो मेरा इन्तज़ार कर लो।"

"तुम्हें ज्यादा वक़्त लगेगा यहां?"

"यह बात शासक पर निर्भर है। शायद एक दिन लगे, शायद दो हफ़्ते लग जायें।"

"ओह!" निकीतिन आश्चर्य प्रकट करते हुए कहने लगा। "इतने दिन! नहीं, मैं चलूंगा! मुझे बीदर तक के हमसफ़र तो मिल जायेंगे न?"

"मिल जायेंगे..."

निकीतिन उसी समय घोड़ा खरीदने चल दिया। नोवगोरद के व्यापारी खरीतोन्येव ने उसे घोड़े पहचानने के जो गुर सिखाये थे वे यहां उसके काम आ सकते थे। जब उसे ये गुर सिखाये जा रहे थे, काश उस समय उस व्यापारी को मालूम होता कि अफ़नासी को हिन्द महासागर के बीच अरबी घोड़ों के दांतों की जांच करनी होगी! इस समय उसकी छोटी छोटी आंखें आश्चर्य से फटी की फटी रह गयीं।

निकीतिन ने कोई तीस घोड़े देखे और आखिर एक बर्फ़ जैसे सफ़ेद घोड़े को देखकर ठिठक गया। घोड़ा कोई दो साल का था। गठी हुई काठी। सूखे हुए ऊंचे ऊंचे पैर। लाल लाल डोरों वाली काली काली आंखें। छोटे छोटे चमचमाते हुए रोएं। हिलती-डुलती, पतली-लम्बी मांसपेशियां। बात बात पर उसके कान खड़े हो जाते

ग्रौर वह क़ायदे से गठे हुए खुर पटपटाने लगता। वह ग्रपने बड़े गुलाबी नथुनों से गहरी सांसें ले रहा था ग्रौर कनखियों से इधर-उधर देख रहा था।

बूढ़े ग्ररब ने घोड़े की रास उसके नये मालिक को थमायी ग्रौर घोड़े का मुंह चूम लिया। ज़ाहिर था कि घोड़ा उसके मालिक को बड़ा प्यारा था ग्रौर मालिक ने उसे पैसों की ज़रूरत से मजबूर होकर बेचा था।

"घोड़े का नाम क्या है?" निकीतिन ने पूछा।

ग्ररब ने सिर हिला दिया ग्रौर दोनों हाथ छाती पर रख लिये –

"मैंने तुम्हारे हाथ घोड़ा बेचा है, उसका नाम नहीं। ग़ुस्सा मत हो, दोस्त। नाम सुनकर बेचारे को वतन की याद ग्रायेगी। यह याद दिलाकर उसपर क्यों ज़ुल्म करो? तुम जो चाहो कहकर पुकारो उसे।"

ग्रौर इतना कहकर बूढ़ा चला गया।

घोड़े ने सिर घुमाकर ग्रपने पुराने मालिक को देखा ग्रौर जैसे दुख से हिनहिनाने लगा। उसकी यह दशा देखकर ग्रफ़नासी का दिल भी उदास हो गया। वह उदास मन कारवां-सराय लौट ग्राया।

खज़ानची ने घोड़ा देखा ग्रौर उसकी तारीफ़ की।

"इसे खिलाना-पिलाना जानते हो?" उसने पूछा।

ग्रफ़नासी ने कंधे झुला दिये।

"जानता हूं!"

"नहीं, तुम कुछ नहीं जानते। हसन! ग़फ़ूर! इस घोड़े को भी हमारा ही चारा खिलाग्रो – वह उसका ग्रादी तो बने... घोड़ा तुम इन्हीं लोगों को दे दो ग्रौर कैसे खिलाना-पिलाना चाहिए इसे

अच्छी तरह समझ लो। और हां, यह भी जान लेना कि रास्ते के लिए घोड़े के वास्ते क्या क्या लेना है।"

अफ़नासी को शीघ्र ही पता चल गया कि घोड़े का खिलाना-पिलाना अच्छा-खासा सिरदर्द है। भारत में घोड़े चावल खाते हैं, गाजर खाते हैं, चना खाते हैं। उन्हें दूसरा खाना नहीं दिया जाता। यहां वे घास खाते थे, खजूर खाते थे। नतीजा यह हुआ कि उन्होंने नये खाने से मुंह मोड़ लिया।

घोड़ों की खिलाई दिन में तीन बार होती थी और हर बार इसमें बड़ी परेशानी हो जाती थी। हसन और ग़फ़ूर दबे पांव घोड़े के पास आते। एक घोड़े की ओर हाथ फैला देता और उसे टिटकारने लगता, और दूसरा भीगे हुए चने या मक्खन और अंडे मिले चावल के लड्डुओं वाली थैली, पीठ पीछे छिपाये, उसके आगे आ जाता। घोड़ा परेशानी से अफ़नासी का मुंह ताका करता। हसन घोड़े का मुंह पकड़ता, उसकी मोटी-सी जबान बाहर खींचता और ग़फ़ूर पर बरस पड़ता। ग़फ़ूर चने और चावल घोड़े के मुंह में ठूंसता और हसन पर चिल्ला पड़ता। घोड़ा पैर पटपटाता हुआ पिछले पैरों पर खड़ा हो जाता। ऐसे मौक़ों पर अस्तबल में क़यामत बरपा हो जाती। दूसरे घोड़े चिल्ल-पों मचाने लगते और सईस भागते हुए अस्तबल में आ जाते। लेकिन इस ऊधम से घबड़ाहट किसी को न होती।

रास्ते के लिए खाने की चीज़ें खरीदने और उन्हें नाव पर लादने-लदाने में निकीतिन के पैर बोल गये। एक बार जब वह कारवां-सराय लौटा तो उसने अस्तबल के पास बाज जैसी आंखों वाले मुज़फ़्फ़र को बैठे देखा, उसी के पास नाक तक भरी हुई दो गठरियां भी पड़ी थीं।

"सलाम!" तुर्कमन बोला, "मैं यहां तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा हूं। मुझे भी भारत ले चलो न।"

"फिर तुम्हारी मां और बहन का क्या होगा?" निकीतिन को आश्चर्य हो रहा था।

"मां को अल्लाह ने अपने पास बुला लिया। और जुलेखा अपने बाबा के पास है। मैं भी तक़दीर आज़माने चलूंगा। मेरी मदद करो। नाव पर एक आदमी की जगह मुझे भी दिला दो।"

"पैसा है तुम्हारे पास?"

"दो सोने के सिक्के हैं।"

"ये कम हैं..."

"तो मुझे क़र्ज़ दे दो। मैं सुलतान की फ़ौज में भरती हो जाऊंगा और तुम्हारा क़र्ज़ चुकता कर दूंगा।"

"ख़ैर, कहूंगा सुलेमान से। अगर ले जायेगा तो चले चलना।"

सुलेमान ने तुर्कमन को जगह दे दी। मुज़फ़्फ़र तुरन्त अपनी चीज़ें ले आया और डेक के नीचे जम गया।

"तुम डरो मत, घोड़ा ठीक से पहुंच जायेगा!" उसने उत्साहित होकर निकीतिन को विश्वास दिलाया।

नावों पर सभी घोड़े चढ़ा दिये गये, खाने का सामान लाद दिया गया, पानी से भरी मसकें रख दी गयीं और व्यापारी और दूसरे लोग डेक पर जम गये। सभी दूर की यात्रा पर जा रहे थे। सारी जगहें भर गयी थीं, आने-जाने के रास्ते तक बन्द हो गये थे और नाविक लोगों को एक जगह से दूसरी जगह खदेड़ रहे थे।

मुहम्मद, अफ़नासी को छोड़ने आया। "यात्रा मंगलमय हो। तुम्हारे साथ हसन जा ही रहा है। वह सब जानता है। सुलेमान का कहना मानना। मैंने उसे सब कुछ समझा दिया है। वह तुम्हारी

मदद करेगा। जब चौल पहुंचना तो वहां मेरा इन्तज़ार करना।"

चौकोर पाल झटके से मस्तूलों पर चढ़ाये जा रहे थे। डांड़ चलने लगे और नावें, एक दूसरी से टकराती और चरमराती हुई किनारे छोड़ने लगीं। घोड़े हिनहिना रहे थे, खुर पटपटा रहे थे। हवा बराबर बहती जा रही थी। अफ़नासी मुहम्मद की ओर देखता हुआ हाथ हिलाने लगा। उसके पीछे छूटती जा रही थीं होर्मुज़ की सफ़ेद मीनारें और वह धरती जिसे वह शायद हमेशा के लिए छोड़ रहा था। चुपके से उसने सलीब का निशान बनाया।

तीसरा अध्याय

यात्रियों को होर्मुज़ से भारत के पहले बन्दरगाह देगू तक जाने में दो हफ़्ते लग गये। उन्हें अरबी बन्दरगाह मस्क़त होकर जाना पड़ा था। इसके बाद गुजरात और खम्भात के नगर पड़े। सुलेमान अपनी नावों को चौल लिये जा रहा था। वहां पहुंचते पहुंचते उसे छः हफ़्ते लग गये।

जब समुद्र के बीचोंबीच तट तक अफ़नासी की आंखों से ओझल हो गये थे, उस समय उसके दिल में एक भय-सा बैठ गया था। लेकिन अब उसका वह भय उसे मखौल लग रहा था। भारतीय नाविक अपने कार्य में बड़े पटु थे। वे बिना सितारों की ओर देखे हुए भी अपनी नावों को खुले समुद्र में, पूरे विश्वास के साथ ले गये थे। सुलेमान के कमरे में एक गोल घड़ी थी जिसमें एक सुई लगी थी। सुई हमेशा एक विशेष दिशा की ओर संकेत करती थी। इस घड़ी को लोग कुतुबनुमा कहते थे। कुतुबनुमा भारत की एक



अलौकिक चीज़ थी। ये थीं भारत की अद्‌भुत चीज़ें जो भारतीयों की प्रतिभा की प्रतीक थीं।

उनकी बड़ी बड़ी नावें यद्यपि होशियार कारीगरों द्वारा बनायी गयी थीं, फिर भी अच्छी न थीं। वे रस्सों, खूंटों और पच्चड़ों की सहायता से जोड़ी गयी थीं। वे वैसे ही चरमराती थीं जैसे बुरे मौसम में पुराना पेड़। और जब नावें तेज़ी से डगमगातीं तो उनके जोड़ फैल जाते और वे रस्से रगड़ खाने लगते जो नाव को मजबूती से बांधे हुए थे। यह देखकर दहशत-सी होने लगती। नाव के पेंदे में हमेशा पानी ही पानी छलछलाया करता। इसके कारण घोड़े के खुरों में बीमारी लगने का भय बराबर बना रहता। नीचे समुद्र का अथाह जल देखकर भी डर लगा करता। यदि इस अनन्त नीले-हरे समुद्र के बीच कोई दुर्घटना हो गयी तो मदद कौन करेगा? फिर तो कुछ करते-धरते न बनेगा और समुद्र सबको अपने गर्भ में समेट लेगा। उसने त्वेर से लाया हुआ तांबे का एक पुराना बटन समुद्र में फेंक दिया। वह देर तक यही देखता रहा कि बटन कैसे डूबता है। आख़िर उसका सिर चकराने लगा। कौन जाने इस हिन्द महासागर में तल है भी या नहीं? किसी ने कभी उसकी गहराई नहीं नापी। कोई उसके बारे में कुछ नहीं कह सकता।

सुलेमान अपने कमरे में मानो डर की कोई बात ही न हो, गाने लगा। बड़ा विचित्र आदमी है यह सुलेमान भी! कहता है पृथ्वी गोल है और यदि उसका विश्वास करो तो वापस जाने के

बजाय सीधे आगे बढ़ने से ही जल्दी रूस पहुंचा जा सकेगा। और अगर उससे पूछो कि दाहिने हाथ पर, समुद्र के उस पार क्या है तो वह नहीं जानता। वहां कोई नहीं गया। वे डरते हैं कि कहीं दाहिनी ओर से पाल के दर्शन न हों और वे जलदस्युओं के हत्थे न चढ़ जायें। कहते हैं कि वहां, दाहिनी ओर से महाराजा के आदमी जहाज़ों को लूटते हैं और उन्हें पकड़कर अपने बन्दरगाह कालीकट ले जाते हैं।

अफ़नासी मुसीबत में नहीं पड़ना चाहता था। अगर वे उसे मौत के घाट न भी उतारें तो भी उसका घोड़ा और पैसा तो छीन ही लेंगे। वह अपने को मुसलमान कहता था – अपनी निश्चिंतता के लिए ही नहीं, वरन् अपनी ज़िन्दगी के खातिर। उसने सुलेमान से उन ईसाई व्यापारियों के बारे में पूछा जिन्हें उसने होर्मुज़ में देखा था – "ये लोग भी भारत जाते हैं ?"

"नहीं, मैंने तो कभी नहीं सुना कि वे भारत गये हों। सलतनत में सभी लोगों को मुसलमान बनाया जाता है। इसी लिए ईसाई डरते हैं... हम चाहते भी नहीं कि परदेशी भारत के बारे में कुछ जानें भी..."

निकीतिन का दिल टूट गया। उसने पीछे मुड़कर देखा, उस अथाह जलराशि पर जिसके उस ओर होर्मुज़ छूट चुका था। तो यह बात है! फिर अब? अगर किसी ने सूंघ भी लिया कि वह रूसी है तो मुसीबत ही समझो। फिर लोग उसे न छोड़ेंगे!

किन्तु नावें तो वापस नहीं की जा सकतीं, और वह समुद्र में भी छलांग नहीं लगा सकता। बस एक ही रास्ता है – चुप रहो और किसी को खबर न लगने दो।

अफ़नासी सतर्क हो गया। जब कभी प्रार्थना करता तो ओंठों

में फुसफुसा लेता, ग्रौर जब सलीब का निशान बनाता तो डेक के नीचे के घने ग्रंधकार में, रात के समय।

वह जैसे ग्रपने ही धर्म से इनकार कर रहा है। वह एकदम ख़राब बन गया है। एक बार रात में, ऐसे ही विचार उसके मस्तिष्क में उठ रहे थे। वह यह सोचकर कि सब सो रहे हैं, घुटनों के बल बैठकर डेक के सूराख़ में से दिखाई पड़ते हुए ग्राकाश की ग्रोर सिर उठाकर फुसफुसाने लगा –

"हे सर्वशक्तिमान! हे स्वर्ग के ग्रधिष्ठाता! मुझ पापी को क्षमा करो! मैं उस रास्ते पर चल रहा हूं, जहां ग्रभी तक कोई नहीं गया। मुझ पापी को घृणित की तरह छिपकर रहना है। लेकिन, हे भगवान, मैं तेरा नाम लेकर निकला हूं, सारे ईसाई संसार की भलाई के लिए निकला हूं। ग्रपने इस दास पर दया करना, उसे परदेशियों की ज़मीन पर तबाह न होने देना। मेरी ग्रोर से ग्रांखें न चुराना।"

ग्रौर वह इतना उत्तेजित हो उठा कि उसकी ग्रावाज़ तेज़ हो गयी ग्रौर वह पेंदे के नम तख़्ते से सिर पीटने लगा।

ग्रौर उसने इस बात पर ध्यान न दिया कि बोरे पर से किसी का उनींदा, सतर्क ग्रौर ग्रंधेरे से ढका हुग्रा सिर कब ग्रौर कैसे उठा ग्रौर किस तरह कोई सांस रोककर उसकी ग्रपरिचित भाषा सुनने लगा...

चिन्ताग्रों के साथ ही साथ सुलेमान के शब्दों ने उसे यह विश्वास भी दिला दिया था कि उसकी यह यात्रा व्यर्थ न होगी। यदि परदेशियों से भारत की बातें छिपायी जाती हैं तो इसका ग्रर्थ है कि वहां छिपाने योग्य बहुत-सी बातें होंगी।

प्रार्थना के बाद ग्रफ़नासी का दिल हल्का हो गया। उसने हसन से हंसी-मज़ाक़ किया ग्रौर सुलेमान से भारत के व्यापार के

बारे में पूछ-ताछ की। उसने अपने सहयात्रियों पर एक उदार-सी दृष्टि डाली और हमेशा चुप रहनेवाले मुज़फ़्फ़र से भी बातचीत छेड़ दी। जब से मुज़फ़्फ़र नाव पर चढ़ा था तभी से, अपने बोरे के लिए जगह बना लेने के बाद, या तो वह घोड़े के पास रहता या अकेले डेक के आखिरी किनारे पर खड़ा खड़ा समुद्र की ओर आंखें गड़ाये रहता। वह बैठकर मुंह से सीटी बजाया करता या उतरकर गुलाम-मल्लाहों के पास पहुंच जाता। वह इन लोगों की बात नहीं समझ सकता था – उनकी भाषा जो दूसरी थी। लेकिन वह प्रायः उनके पास आ जाया करता। और जब सुलेमान मल्लाहों पर इसलिए कोड़े बरसाता कि वे नाव जल्दी जल्दी चलायें तो मुज़फ़्फ़र उदास हो जाता और उसका गला घरघराने लगता।

नाव के बाक़ी यात्रियों के साथ उसका व्यवहार रूखा था। लोगों को धक्का दे देना या उन्हें बुरा-भला कहना जैसे उसके बायें हाथ का खेल था। जिस अफ़नासी ने मुज़फ़्फ़र की मदद की थी उसके साथ भी मुज़फ़्फ़र का वर्ताव बड़ा रूखा था।

व्यापारी हुसेन दूसरे ही ढंग का आदमी था। वह भी भारतवासी था, जुन्नर का रहनेवाला था। यह नगर राजधानी बीदर के रास्ते में पड़ता था। हुसेन बड़ा हंसमुख था, रहमदिल था और जब पानी के लिए क़तार में लगता तो पीछेवालों को पहले पानी ले लेने देता। मिलनेवाले को पहले खुद सलाम करता। उसने सुलेमान से सुन रखा था कि खज़ानची मुहम्मद की जान कैसे बची थी। जुन्नर तक साथ साथ जाने का प्रस्ताव उसने स्वयं ही किया था। हुसेन भारत के जंगलों, खज़ानों और गुप्त तहखानों में रखे हुए हीरे-मोतियों की कहानियां मज़े ले लेकर सुनाया करता और मुज़फ़्फ़र, खीसें निकाले, नाव के बाहर थूका करता। हुसेन को

तुर्कमन की हरकतें पसन्द न थीं। वे एक दूसरे के पास से होकर वैसे ही निकल जाया करते जैसे दो मुर्गे।

दिन बीतते गये, बीतते गये। न काम, न धाम। ज़बरदस्ती लादी हुई काहिली – घोड़े को पांच बार मालिश करो, चाहे छः बार, हुसेन की भी बातें सुनो, सुलेमान के साथ तेज़ चाय – चीनी पेय – पियो, हसन के दर्दभरे गानों का मज़ा लो, फिर भी रात नहीं होती, घंटों उसका इन्तज़ार करना पड़ता है।

नाव चर्रमर्र करती है, पाल लहराते हैं, बेंचों से बंधे हुए गुलाम-मल्लाह डांड़ मारते हैं, लहरें उठती हैं, गिरती हैं। भारत का रास्ता लंबा और खतरनाक है।

नाव देगू से किनारे किनारे आगे बढ़ी। लोगों में खुशी की लहर छा गयी। नावें किसी भी बन्दरगाह पर एक दिन से अधिक न ठहरीं। अफ़नासी ने ज़मीन पर क़दम न रखा। किन्तु निकट आते हुए ताड़ के पेड़, नज़र पड़ते हुए पहाड़ और रास्ते में मिलनेवाली नावों को देखकर उसके दिल में यह विश्वास ज़रूर जमने लगा था कि वह अपनी मंज़िल पर पहुंच रहा है।

गुजरात में आकर भारत का परीदेश फिर एक बार उसकी आंखों के सामने घूम गया और एक क्षण के लिए मोरों के सुनहले पंख उसके सामने नाच गये। उसे नाव पर से सुलतान के बाग़-बगीचे, और नीले और सुनहले गुम्बदों के नीचे सफ़ेद सफ़ेद मीनारें दिखाई पड़ने लगीं। लोग कहते थे कि गुजरात का शासक महमूद-शाह-बिगर्रा बड़ा मालदार और बहादुर है। उसकी सेना में बीस हज़ार जवान हैं और पचास हाथी प्रतिदिन प्रातःकाल उसके महल के सामने उसे सलामी देने आते हैं... यह महमूद-शाह बचपन से ही ज़हर पीता है। अब तो उसका सारा शरीर ही ज़हर हो गया है।

अगर किसी पर थूक दे तो आदमी मर जाये। उसके चार हज़ार बेग़में हैं और जिस बेग़म के साथ वह रात बिताता है, वह शाह की विषैली सांसों के कारण सुबह होते होते चल बसती है। शाह के पास इतना सोना और इतने जवाहरात हैं कि उनसे सारा गुजरात इतना ढक जाये कि उसमें घुटनों तक पैर धंस जायें... लेकिन यह तो भारत का श्रीगणेश है। भारत – वह तो अभी और आगे है और उसकी मशहूर चीज़ें यहां कहां। असली भारत तो शुरू होता है चौल से।

वह भारत के दर्शन के लिए इतना उत्सुक था कि उसकी नींद तक जाती रही। वह नाव के अगले भाग में खड़ा खड़ा बाईं ओर का पहाड़ी किनारा देखता रहा। शायद यहां कहीं? अभी नावें मोड़ने का समय नहीं आया?

सुलेमान पीछे से उसके पास आया, और नाक मलते हुए, जैसे उदासीनता से कहने लगा –

"शाम होते होते हम पहुंच जायेंगे।"

रंगों और लाख की जन्मभूमि खम्भात से चले हुए यह पांचवां दिन था।

एक क्षण के लिए अफ़नासी के दिल की धड़कन बन्द हो गयी। क्या सचमुच मैं पहुंच गया? क्या सचमुच मैं भारत की ज़मीन अपनी आंखों से देख सकूंगा? मेरे सपने सच हो रहे हैं और मेरे सामने आ रही हैं वे सब बातें, जो मैंने अन्धे भिखारियों से सुनी थीं या फिर त्वेर की तूफ़ानी रातों में मोमबत्तियों की झिलमिलाती हुई रोशनी में किसी पुस्तक में पढ़ी थीं।

"भारत, तुम्हें मेरे प्रणाम! इस रूसी को स्वीकार करो! उसे धोखा न दो!"

किनारे की नावें और पास दिखाई दीं। उनके रस्से, मस्तूलों पर लगी एक दूसरे को काटती हुई शहतीरें, नावों के बीच बीच चलनेवाली तेज़ डोंगियां, सुनहरी बालू, ताड़ के पेड़ों की लम्बी और टेढ़ी-मेढ़ी पत्तियां, विचित्र कोणदार निर्माण, वनों से ढके हुए और सीढ़ीदार चोटियों वाले गुलाबी मन्दिर, चौकोर खेत...

सभी बाहर डेक पर निकले और उत्तेजित हो होकर बातें कर रहे थे। हसन मुस्करा दिया – किसका जी वतन को देखकर नाच नहीं उठता।

सामने शहर था और वहीं, कुछ दूरी पर, वनों से ढके हुए सीढ़ीदार नीले-से पहाड़। उनके पार भी जाना होगा। मस्तूलों की छाया नावों के आगे, लहरों को काटती हुई अन्ततः रेत में प्रवेश करती-सी दिखाई देती है। नावों पर से किनारे तक पटरे बिछाये जा रहे हैं। किनारे पर ढेरों लोग जमा हैं।

"घोड़ा निकालूं?" हसन पूछता है।

"निकालो!" निकीतिन कहता है। उसका गला घरघरा उठता है। वह उत्तेजित दिखाई पड़ता है।

किन्तु मुज़फ़्फ़र ने घोड़ा पहले ही निकाल लिया है। वह उसकी रासें मजबूती से पकड़े है।

अफ़नासी के ओंठों पर मुस्कराहट थी। वह जैसे अपने आसपास के वातावरण से बेख़बर था। लोगों की चिल्ल-पों उसके कानों में पड़ भी रही थी, नहीं भी पड़ रही थी। वह हिलते-दबते पटरे पर से किनारे की ओर बढ़ रहा था।

चौल बन्दरगाह पर लोगों की बड़ी भीड़ थी। चारों ओर के शोरोगुल के कारण कान धरे आवाज़ न सुनाई पड़ रही थी। यहां सभी जगहों से नावें आया करती थीं और सभी जगहों का तरह तरह का

सामान – कहीं सूई की शक्ल की डोंगियों से क़ीमती चीनी मिट्टी के बरतनों के बक्से बड़ी सावधानी से उतारे जा रहे हैं, तो कहीं चाय के बोरे, कहीं इटली की अद्भुत शराब के बड़े बड़े कनस्तर नावों से लुढ़काये जा रहे हैं, तो कहीं चीनी रेशम के वे बड़े बड़े गट्ठर गिराये जा रहे हैं जिन्हें पहाड़ों और रेगिस्तानों के रास्ते अरब के समुद्री तटों तक पहुंचते पहुंचते पांच वर्ष लग गये हैं। यह रेशम हरमों में रहनेवाली सुन्दरियों का शृंगार है। इतना ही नहीं, इसी बन्दरगाह पर शासकों और सेनाधिपतियों के मनबहलाव के लिए दूर देशों से खरीदी हुई सुन्दरियां भी लायी जाती हैं – गोरी गोरी और कातर आंखों वाली।

बन्दरगाह पर खड़े लोगों में तमाशबीन भी होते हैं। वे आयी हुई नावों के लोगों के पास दौड़कर जाते हैं, जीभ चटकारते हैं, ताल ठोंकते हैं, अगर मौक़ा लग गया तो कुछ सौदेबाज़ी कर लेते हैं, टुकुर-टुकुर दूसरों की विलासिता की वस्तुएं देखते हैं और मुट्ठी-भर चावल के लिए कुछ पैसे पैदा कर लेने की ताक में लगे रहते हैं।

लेकिन आज जो लोग चौल बन्दरगाह पर एकत्र हुए थे उनके आश्चर्य का कोई ठिकाना न था।

जो भी तट पर था बस एक ही दिशा में दौड़ता जा रहा था, उधर जिधर समुद्र की सफ़ेद बालू पर खड़े हुए लोगों की भीड़ चिल्ल-पों मचा रही थी। वह देखो किसी की सब्ज़ियों की टोकरी किसी की ठोकर से उलट गयी। सब्ज़ियां गिर गयीं। टोकरीवाला उन्हें उठाने झुका किन्तु लोगों की भीड़ ने उसे एक ओर ढकेल दिया और कोई कुछ चीखा-चिल्लाया। अपनी खाली टोकरी लेकर टोकरीवाला खुद भी लोगों के पीछे चल दिया। उसके सेम और

केलों के गुच्छे मिट्टी में मिल गये। लोग नंगे पांवों से उन्हें रास्ते से हटाते हुए दौड़ते रहे।

बड़ा-सा रंगीन छाता लिये हुए एक मोटा-ताज़ा मुसलमान सड़क पर फिसला, कुछ बड़बड़ाया और फिर संभलते-हांफते आगे बढ़ने लगा। एक औरत जिसका सिर खुला था और चमकदार बालों वाली चोटियां क़ायदे से गुंथी थीं, चट से उसके आगे निकल गयी। घघरा और कांसे जैसी कलाइयों में चूड़ियां चमक उठीं। एक बूढ़े कुली ने भी चिल्ल-पों सुनी, सिर पर रखा हुआ बोझ ज़मीन पर फेंका, किसी एक को फिर दूसरे को पुकारकर कहा और उनका जवाब समझे बिना ही रेत पर लोगों के पीछे भागने लगा।

नंगधड़ंग बच्चे, मछुए, नाई, बढ़ई, मल्लाह और मिठाईवाले सभी उस ओर भाग रहे थे। भीड़ में सभी की आंखें चमक रही थीं, ओंठ मुस्करा रहे थे और सांवले चेहरों में से मोती जैसे दांत चमचमा रहे थे। पीछेवाले आगेवालों से भी आगे जाने के चक्कर में थे, कुछ लोग झुक झुककर आगे बढ़ रहे थे और कुछ पंजों के बल खड़े खड़े उचककर देख रहे थे।

एक व्यक्ति के चारों ओर बहुत-सी भीड़ जमा थी। उसकी चमड़ी अत्यधिक सफ़ेद थी, आंखें नीली थीं और दाढ़ी सुनहली। यहां ऐसे आदमी को किसी ने कभी न देखा था।

निकीतिन लोगों के बीच से होकर बढ़ रहा था। वह मुस्करा तो रहा था किन्तु घबड़ा गया था। उसने इसकी कभी आशा न की थी। उसने सोचा था कि वह भारत की अजीबोग़रीब चीज़ें देखेगा लेकिन वह तो लोगों के लिए खुद ही एक अजीबोग़रीब चीज़ बन गया।

उसकी आंखों के सामने तरह तरह के चेहरे और कांसे जैसे रंग के नंगे शरीर थे। कुछ लोगों के शरीर पर तो प्रायः कोई

वस्त्र न था। जवान लड़कियां तक वैसी ही नंगी दिखाई पड़ रही थीं। चारों ओर चिल्ल-पों मची हुई थी। उसके पास ही मुस्कराता हुआ हुसेन चल रहा था। उसने कुछ कहा भी था, किन्तु निकीतिन सिर्फ़ एक ही बात समझ सका–ये हैं हिन्दू।

भीड़ के पास ही उसने मटमैले रंग का एक बड़ा-सा ज़िन्दा पहाड़ देखा–कान सूप जैसे, आंखें सिकुड़नों में छिपी हुईं और छोटी छोटी और नाक पेड़ के तने जैसी। उसने तुरन्त अनुमान लगा लिया–यह हाथी है।

भीड़ के बीच से उसने वोरों के पास एक टट्टू देखा। देखने में घोड़े जैसा, पर क़द में गधे की तरह। टट्टू खड़ा खड़ा मज़े में अपना अयाल डुला रहा था। ऐ, मेरे प्यारे...

लोग सांवले थे। इकहरे बदन के। स्वागतशील। सांवले होने पर भी सुन्दर। औरत सुडौल। प्रायः सभी के अंगों पर आभूषण थे–कानों में बालियां, गले में हार, हाथों में चूड़ियां। उनके मस्तक पर भांति भांति की बिन्दियां लगी थीं–नीली, लाल। उनकी आंखें तो क़यामत ढाती थीं–बड़ी, काली काली और मस्त बना देनेवाली! ओफ़, कहां से मिला है इन्हें यह हुस्न! फ़ारस के बाद पहली बार उसने बिना बुरक़ेवाली औरतें देखी थीं। कैसा अद्भुत देश है यह!

हुसेन उसे एक धर्मशाला की ओर ले गया। वे संकरी गलियों में से जा रहे थे। तीसरे पहर का समय था। पर काफ़ी गर्मी थी। ताड़ के पेड़ों, मिट्टी के सफ़ेद मकानों और बांसों के बने हुए और पत्तियों के छप्परों वाले मकानों के पास से होकर आगे बढ़ रहे थे। आदमियों की भीड़ की भीड़ उनके पीछे चली आ रही थी। बहुत-से उत्सुक लोग, अपने अपने आंगनों से भागते हुए, पास आकर देखने लगते। बहुत-से लोग तो मकानों की छतों पर चढ़ चढ़कर उसे घूरा करते।

घुंघराले बालों वाला एक साहसी छोकरा हिम्मत कर निकीतिन के पास आया और उसकी पीठ छूकर भागने की कोशिश करने लगा, किन्तु तभी अफ़नासी ने उसे उठा लिया और उसे हवा में प्यार से उछालते हुए कहने लगा—

"लो, यह लो!"

पहले तो बच्चा चुप रहा, लेकिन तुरन्त ही खुशी से मिमियाने लगा।

जब निकीतिन ने बच्चे को उछाला था, तब एक क्षण के लिए सारी भीड़ सन्नाटे में आ गयी थी, किन्तु अब सभी चिल्ला चिल्लाकर प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे।

एक जगह आकर सारी भीड़ एक क्षण के लिए रुक गयी। सड़क के बीचोंबीच सफ़ेद बालों वाला बूढ़ा, चारों खाने चित पड़ा, ऐसे खर्राटे ले रहा था मानो घर में पलंग पर सो रहा हो। लोग उससे कतराते हुए निकल रहे थे। आगे रास्ते में एक गाय मिली। उसे किसी ने भी नहीं छेड़ा। वह शोर मचाते हुए चलनेवालों की ओर बैंगनी आंखों से देखती हुई सूखी घास चबाती रही। आख़िर उसने एक आह भरी और किनारे खड़ी हो गयी, मानो कह रही हो—"अच्छा, निकल भी जाओ।" भारतीयों को यह बात अच्छी लगी और कभी वे निकीतिन की ओर, तो कभी गाय की ओर देखते हुए आपस में बतियाते रहे।

धर्मशाला ताड़ के वृक्षों के बीच बनी थी। उसके चारों ओर एक बेंत का बाड़ा लगा था। पीछे आनेवाले लोग फाटक पर ही रुक गये। निकीतिन फाटक के भीतर आया और आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगा। उसके सामने, ज़मीन पर, मोर फुदक रहे थे। मोरों ने रंग-बिरंगे और चमकीले चांद जैसे वृत्तों वाले अपने पंख खोल दिये थे।

घोड़े को एक दूर के सायबान में ले जाया गया। वहां श्रौर भी घोड़े खड़े थे।



दहलीज़ पर पगड़ी तथा सफ़ेद छोटा पैजामा पहने घुंघराली दाढ़ीवाला एक श्रादमी श्राकर खड़ा हो गया। उसने दोनों हाथ जोड़कर श्रौर कुछ झुककर निकीतिन का श्रभिवादन किया।

"जूते उतार दो," हुसेन बोला, "श्रौर वहीं दरवाज़े पर रख दो।"

श्रफ़नासी ने जूते उतार दिये श्रौर जब वह सीधा खड़ा हुश्रा तभी कहीं से काली चोटीवाली एक लड़की तसला लिये वहां श्रायी, उसके सामने झुकी श्रौर उसके पैर धोने के लिए हाथ फैला दिये।

निकीतिन शर्म से लाल पड़ गया।

"नहीं, नहीं, मैं ख़ुद कर लूंगा।"

लोगों में चख-चख शुरू हो गयी थी। कोई उसकी श्रोर शून्य दृष्टि से देख रहा था, कोई श्राश्चर्य से, कोई द्वेष से। मालिक के मुंह पर नाराज़ी के लक्षण दिखाई पड़ने लगे थे। लड़की भी पानी के तसले के पास झुकती हुई सिसकियां भर भरकर रोने लगी।

"मुझसे कुछ ग़लती हो गयी है क्या?" निकीतिन ने हुसेन से पूछा।

"हां, हम लोग हिन्दुओं के बीच में हैं। तुमने उन्हें बेहद नाराज़ किया है, उनका अपमान किया है।"

"मैं नहीं चाहता था ..."

"हर देश के रीति-रिवाज होते हैं। इस लड़की को पैर धोने से मत रोको। पैर धोने से उसे खुशी होती है।"

"बिटिया!" लड़की का सिर थपथपाते हुए निकीतिन फुसफुसाया, "मुझे माफ़ करना ..."

"वह कहता है लड़की पैर धो ले!" हुसेन बोला।

लड़की को जैसे बल मिला और वह जल्दी जल्दी आंसू पोंछती और परदेसी की सफ़ेद त्वचा को हल्के हल्के छूती हुई उसके पैर धोने लगी। फिर मस्त आंखों वाला चेहरा ऊपर उठाती हुई धीरे से मुस्करा दी। निकीतिन भी मुस्करा दिया। उसे किसी अन्य प्रकार से कृतज्ञता-प्रदर्शन करने में भय लग रहा था।

धर्मशाला का मालिक, हाथ जोड़े झुका झुका, पीछे हटता गया। उसने मुसाफ़िरों को धर्मशाला में ठहरने के लिए निमंत्रित किया और प्रत्येक को एक एक बड़ा-सा और ठंढा कमरा दे दिया।

धर्मशाला के लोग अफ़नासी के लिए क़ालीन और तकिये ले आये। उसने विनम्रतापूर्वक उन्हें स्वीकार किया, किन्तु अन्दाज़ लगाता कि यह सब कितने का होगा।

इधर खाना तैयार हो रहा था और उधर अफ़नासी, गठरी में से तौलिया निकाल, हाथ-मुंह धोने गया।

उसने चोग़ा उतारा। सामने एक लड़की खड़ी थी—नौकरानी। जवान, सुडौल, क़रीब क़रीब नंगी। अफ़नासी उसे नंगी देखकर घबड़ा गया। लड़की जैसे मंत्रमुग्ध उसके सफ़ेद कन्धों और चौड़ी छाती को देखती ही रही।

"ओफ़ कैसी मुसीबत!" अफ़नासी ने एक आह भरी, "अरे, पानी डालो न, क्या ..."

उसने हाथ-मुंह धोया और जब तरो-ताज़ा होकर सीधा खड़ा हुआ तो बाड़े के पीछे से कुछ उत्सुक निगाहें उसे घूरती-सी दिखाई दीं।

"भाई!" शरारत भरे लहजे में अफ़नासी बोल उठा—"मैं कोई हाथी तो हूं नहीं। फिर आप लोग मुझे घूर क्यों रहे हैं?"

जवाब में उसे उत्सुक-सी चिल्ल-पों और हंसी-क़हक़हे ही सुनाई दिये।

सबसे अद्भुत बात तो अभी आगे आनी थी। दिन समाप्त हो रहा था और रात आ रही थी—अंधेरी, उष्णकटिबन्धवाली रात। निकीतिन अपने कमरे में आ गया। उसे यह देखकर बड़ी हैरत हुई कि धर्मशालावालों ने उसकी कटार मांगकर अपने पास रखी और उसका पता-ठिकाना पूछकर लिख लिया। कमरा साफ़ था, ठंडा था। सिरहाने एक दिया टिमटिमा रहा था। अफ़नासी लेट गया और उसे दिन की घटनाएं याद आने लगीं। समुद्र का किनारा, लोग ... कोई नंगा है, किसी का पारदर्शी चादरा खिसककर कन्धों पर आ गया है ... ढाल लिये हुए कुछ नंगे-पैर योद्धा एक पालकी लिये जा रहे हैं, और पालकी में सोने के आभूषणों से मढ़ा हुआ कोई रईस बैठा है ... हाथी लट्ठे लिये जा रहे हैं .... गुलाबी मन्दिर, जहां सुलेमान ने जाने की मनाही की थी ... विचित्र रीति-रिवाज हैं यहां के।

सहसा दरवाज़ा खुला। वह झटके से उठ बैठा। एक औरत धीरे धीरे क़दम रखती हुई उसके पास आ.ी। पारदर्शी साड़ी उसके कन्धों से ढरक रही थी। उसके लंबे और अद्भुत पैरों में कड़े झनझना रहे थे। उसके हाथ साड़ी के बाहर थे और उनमें कलाई से लेकर कुहनी तक सोने की ढेरों चूड़ियां थीं। वह एक थाल लिये थी।



थाल उसने अफ़नासी के सामने रख दिया। उसके सुन्दर-से मुंह पर मुस्कराहट खेल रही थी। उसके सुडौल जवान शरीर से फूलों जैसी गन्ध आ रही थी। उसकी आंखें काली थीं और बरौनियां गझी हुई।

लड़की ने अपनी भाषा में कुछ कहा और अफ़नासी के पैरों के पास बैठ गयी। अफ़नासी उसकी बात बिल्कुल न समझ सका।

निकीतिन झट एक ओर झुक गया।

"शुक्रिया," उसने फ़ारसी में कहा, "अब जाओ।"

बात उसकी समझ में न आयी। उसने विचारशील मुद्रा में भौंहें ऊपर उठायीं और उसका चेहरा किसी विचार से खिल उठा।

उसने हंसते हुए, प्याले में कोई पेय उड़ेला और उसे उसके ओंठों के पास लाती हुई, मुद्राओं से यह संकेत करने लगी कि परदेशी उसे पिये।

निकीतिन ने पेय पिया। पेय तेज़ पर स्वादिष्ट था। फिर लड़की ने खाने के लिए संकेत किया।

"शायद, यहां का यही रिवाज हो!" उसने सोचा।

जब तक वह खाता रहा, लड़की उसे उत्सुक दृष्टि से देखती रही। अफ़नासी ने इस बात पर भी ग़ौर किया कि उसके पतले पतले नथुने कुछ कुछ कांप-से रहे हैं।

"सुन्दर है," अनचाहे ही उसके मन में यह विचार आया। उसपर पेय का असर हो रहा था।

लड़की धीरे धीरे कुछ गाने लगी। और यद्यपि अफ़नासी को वह भाषा न आती थी फिर भी उसने अटकल से गाने का अभिप्राय समझ लिया था। और कैसे न समझता – उसमें कितना अनुराग छिपा हुआ था!

"तो," अफ़नासी ने दबी ज़बान से कहा, "प्यारी, अच्छा हो कि तुम चली जाओ।"

और उसने दरवाज़े की ओर इशारा किया। लड़की ने उसकी बात न समझी और निराशा से उसके इशारे की दिशा में देखने लगी, फिर धीरे से हंसी और उदास-सी होकर कुछ पूछने लगी।

"हे भगवान! मैं तुम्हारी बात नहीं समझता," जैसे कराहते हुए अफ़नासी ने कहा, "आखिर आयी क्यों?"

और लड़की ने पास आकर उसकी गरदन पर अपने गर्म गर्म हाथ रख दिये ...

और, काफ़ी हिचकिचाहट के बाद, अफ़नासी ने रात की यह घटना हुसेन को सुनायी।

उसने सब कुछ सुना। पर उसके मुंह पर आश्चर्य की ज़रा भी झलक न दिखाई दी। फिर वह सिर हिलाने लगा।

"यहां का यही रिवाज है," शान्त होते हुए उसने कहा, "लड़कियां हर मेहमान के पास जाती हैं और इस प्रकार अपने देवताओं की सेवा करती हैं।"

उस दिन के बाद अफ़नासी के सामने और भी अजीबो-ग़रीब बातें आयीं।

उसने निश्चय किया कि वह सभी ज़रूरी घटनाओं को अपनी डायरी में लिखेगा – कहीं वह भूल न जाये। यह काम ज़रूरी है – जब डायरी पढ़ी जायेगी तो सभी बातें पानी के बुलबुले की भांति सतह के ऊपर आ जायेंगी।

उसने पाउडर से स्याही तैयार की, मोर के पंख का क़लम बनाया और लिखने बैठ गया। उसने सभी पिछली बातों की याद की और संक्षेप में सब कुछ लिख लिया – कहां से आया और कौन कौन-से नगरों से होकर गुज़रा। और जब तातारों की लूट-मार तक की दास्तान लिख चुका तो एक गहरी सांस ली। क़लम की स्याही सूखने लगी थी और काग़ज़ हवा में फड़फड़ा रहे थे ...

हसन ने कमरे में झांककर देखा और दो बार पुकारा –

"सरकार ... सरकार ..."

अफ़नासी ने आंखें ऊपर उठायीं और ऐसे देखा जैसे वह पहचान न रहा हो –

"आं? क्या?"

"ख़ोजा सुलेमान आये हैं। ख़ोजा हुसेन आपको बुला रहे हैं। वे बाज़ार जा रहे हैं। आप भी जायेंगे उनके साथ?"

अफ़नासी ने डायरी बन्द की और छिपाकर झोले में रख ली। सोचा बाद में ख़त्म कर लूंगा। हां शहर तो मैंने अभी तक देखा ही नहीं। मुझे देखना चाहिए।

सुलेमान कुछ परेशान लग रहा था। उसने चुपके से अफ़नासी को बताया – लड़ाई में फ़िलहाल कोई सफलता नहीं मिली है। महमूद गवान राजा का मुख्य क़िला न हथिया सका। वह तो हिन्दुओं को भूखा ही मारना चाहता था, लेकिन उन्होंने घुटने नहीं टेके। और फिर वर्षा भी शीघ्र ही शुरू होगी। निश्चय ही वर्षा के समय बीदर की फ़ौज अपने नगर चली जायेगी। हां, यह ख़तरा ज़रूर है कि कहीं चौल पर हमला न बोल दिया जाये। जैसी कि अफ़वाह है उनके जहाज़ कहीं दूर नहीं हैं। उसे, यानी सुलेमान को तो यहीं रहना चाहिए। कौन जाने क्या हो जाये। उसका कर्त्तव्य है कि वह हर चीज की चेतावनी देता रहे ...

"यहां क्यों बैठे हो?" हुसेन मुस्कराया, "कल क़ाफ़िला जुन्नर जायेगा। मैं जाऊंगा। तुम भी सामान तैयार करो, चलो। जुन्नर ऐसी जगह है जिसपर तुम भरोसा कर सकते हो।"

"बेशक," सुलेमान ने पुष्टि की, "श्रौर बीदर का रास्ता वहां से होकर जाता है।"

"वहां सौदागरी की चीज़ें भी हैं?" निकीतिन ने पूछा, "अगर कोई फ़ायदा न हो तो जाना बेकार है। मुझे तो ज़रूरत है खास खास मंडियों में जाने की। अगर मैं ऐसी जगह गया तो घोड़ा बेचकर कुछ पैसे कमा लूंगा वरना ढोल से खाल भी जायेगी।"

सुलेमान हंस दिया श्रौर हुसेन ने दोनों हाथ ऊपर उठा दिये –

"अल्लाह गवाह हैं, अगर जुन्नर श्रौर बीदर में व्यापार नहीं तो फिर होगा कहां?"

सुलेमान ने सलाह दी कि यहां से काली मिर्च श्रौर लौंग खरीदी जाये। यह चीजें यहीं से देश-भर में जाती हैं। हुसेन ने हामी भरी श्रौर एक क्षण बाद फुसफुसाकर कहने लगा –

"सिवा अफ़ीम के श्रौर कुछ मत लेना। बस चुपचाप ..."

अफ़नासी चौकन्ना हो गया।

"क्यों?"

"इसकी खुली बिक्री की मनाही जो है मगर पैसा ज़्यादा मिल जाता है ... श्रौर यह मिलती कहां है – यह मैं बता दूंगा।"

प्रस्ताव ज़रूर आकर्षक था श्रौर अगर कल ही कूच करना था तो उसे तुरन्त ही कोई न कोई निश्चय कर लेना चाहिए था।

निकीतिन हिचकिचा रहा था।

"डरो मत," जुन्नरवासी ने उसे समझाया, "इसमें ज़्यादा खतरा नहीं। मैं खुद अफ़ीम ले जाऊंगा।"

मगर अफ़नासी ने इनकार कर दिया। खतरे भी तो कई तरह के होते हैं। सिर्फ़ पैसे के पीछे पड़ने से बरबादी का मुंह भी तो देखना पड़ता है। बस मसाले ही लूंगा और उससे जो कुछ मिल जायेगा उसी पर सन्तोष करूंगा। पहले तो देश के बारे में ही सब कुछ जानना ज़रूरी है।

वे बाज़ार की ओर गये। मुज़फ़्फ़र भी आकर उनसे मिल गया और सुलेमान से पूछने लगा कि मुझे कहां जाना चाहिए।

"अगर चाहो तो यहीं रह जाओ। यहां भी फ़ौजियों की ज़रूरत है। चाहो तो बीदर चलो," सुलेमान ने रुखाई से जवाब दिया, "तुम्हारे जैसे लोग इस समय यहां बहुत हैं ..."

मुज़फ़्फ़र चुप होकर एक ओर हट गया।

"फ़ौजी! मुफ़्तखोर!" हुसेन ने धीरे से झिड़का, "बस, अब-तब टैक्स दो, ताकि इन फ़ौजियों का पेट भरता रहे।"

"कुछ भी हो, वे हमारी रक्षा तो करते हैं!" सुलेमान ने उत्तर दिया।

इन लोगों के पास फिर भीड़ जुट गयी। सभी अफ़नासी को घूर रहे थे।

"सचमुच तुम्हारी सूरत-शकल बड़ी विचित्र है," सुलेमान ने स्वीकार किया।

"हमारे मुल्क में तो सभी ऐसे होते हैं!" उदासीनता का बहाना-सा करते हुए निकीतिन बोला, यद्यपि दिल में वह चिन्तित था।

वे बाज़ार से कोई दोपहार तक लौटे। चिलचिलाती हुई गर्मी पड़ रही थी, किन्तु होर्मुज़वाली गर्मी की अपेक्षा इसे बर्दाश्त करना आसान था। वे समुद्र की ओर चले, नहाये, नावों की ओर देखा और इस बात पर ग़ौर किया कि हाथी कैसे नहलाये-धुलाये जाते हैं।

"तो फिर? तुम्हें भारत पसन्द आया?" नारियल का दूध पीते हुए सुलेमान ने पूछा।

"हां, अभी तो यही कह सकता हूं।" निकीतिन हंस दिया, "देखूंगा आगे क्या होता है। जवाहरात मैंने अभी भी नहीं देखे।"

"ओह," सुलेमान ने उत्तर दिया। "जवाहरात के लिए तो तुम्हें वहां जाना होगा," और यह कहकर उसने पहाड़ों की ओर इशारा किया।

"कल सुबह चलेंगे!" हुसेन ने जवाब दिया।

सब कुछ क़ायदे से चलता गया। निकीतिन ने सुलेमान से विदाई ली, उससे कहा कि वह ख़ज़ानची मुहम्मद को उसका सलाम कह दे, दूसरे व्यापारियों से मिला, किसी से सामान गाड़ी पर ले जाने की बात पक्की की और उत्सुकता से शाम का इन्तज़ार करने लगा – कल जिस लड़की से मुलाक़ात हुई थी वह आयेगी या नहीं? उसने उसे अंगूठी भेंट करने का निश्चय किया था। किन्तु तभी मुज़फ़्फ़र ने आकर सब गुड़ गोबर कर दिया। वह आकर उकड़ूं बैठ गया और कहने लगा –

"तुम्हारे साथ जुन्नर चलूं।"

"जैसी मर्ज़ी हो ..."

मुज़फ़्फ़र चुप रह गया और आंखें झुकाकर धीरे से इतना और कह गया –

"तुम मुसलमान नहीं हो।"

निकीतिन ने उसपर एक उदास-सी दृष्टि डाली।

"क्या कहते हो?"

"मैंने तुम्हारी इबादत देखी थी।"

कुछ उत्तेजित होते हुए अफ़नासी ने पूछा –

"तो तुमसे मतलब?"

"कुछ नहीं। अकेले मैंने थोड़े ही देखा था।"

"और किसने देखा था?"

"मैं समझता हूं हुसेन ने भी देखा था।"

"तो फिर?"

"कोई बात नहीं। तुम मुसलमानों के मुल्क में हो।"

"हुसेन अच्छा आदमी है!" निकीतिन बीच में बोल उठा, "उसके बारे में कोई ऐसी-वैसी बात न कहो। मेरे मज़हब से तुम्हें क्या लेना-देना?"

तुर्कमन की गालों की हड्डियों में हरकत शुरू हो गयी। उसने दांत निकाले और उठ खड़ा हुआ—

"नींद-भर सोओ, खोजा।"

दुष्ट मुज़फ़्फ़र ने सारा मिज़ाज ख़राब कर दिया था। अफ़नासी बिस्तरे पर करवटें बदलता रहा, तकिया गींजता रहा और देर तक जगता रहा। उसके दिमाग़ में चिन्ताएं उठ रही थीं।

प्रातःकाल धर्मशाला के सामने जुती हुई बैल-गाड़ियां और बड़े बड़े टपदार छकड़े खड़े थे। व्यापारी भाग-दौड़ रहे थे, एक दूसरे से बातें कर रहे थे।

"चलो, चलने का समय हो गया!" हुसेन बोल उठा।

अफ़नासी हसन की मदद से बोरे लाया और गाड़ी में रख दिये। मुज़फ़्फ़र घोड़ा ले आया।

"रात-भर रुकने के लिए किसे पैसा दिया जाये?" निकीतिन ने हसन से पूछा।

"धर्मशाले में पैसे नहीं दिये जाते," गुलाम बोला।

कोड़ा सरसराया और गाड़ी के पहिये चरमरा उठे।

शायद यहीं ठहर जाऊं—उसने सोचा। लेकिन शीघ्र ही यह विचार हवा हो गया। नहीं, चला ही जाऊं। मुझे किसी का डर नहीं।

और वह पूरे विश्वास के साथ क़ाफ़िले के साथ साथ चलने लगा।

पाली एक छोटा-सा नगर था जो घाट की तलहटी पर बसा था। यहां अफ़नासी ने सिर मूंड़वाया और दाढ़ी सुनहरी मेंहदी से रंगा ली। उसे काफ़ी देर तक नाई के पास बैठा रहना पड़ा। नाई ने उसके चेहरे पर बन्दगोभी के पत्ते रख दिये थे और उसकी दाढ़ी क़ायदे की बन गयी थी। एक तो धूप से तप्त चेहरा, फिर लाल दाढ़ी – वह मुसलमान से बहुत भिन्न न लग रहा था। हुसेन ने दोनों हाथ पीछे फेंके और आंखें बन्द कर लीं –

"तुम्हें कोई नहीं पहचान सकता!"

अफ़नासी हुसेन को बहुत ध्यान से देख रहा था लेकिन उसे उसके चेहरे पर ज़रा भी मक्कारी न दिखाई दे रही थी।

मुज़फ़्फ़र कुछ कटुता से मुस्करा दिया। और किसी तरह वह मुस्करा न सकता था।

अकेला हसन बहुत ख़ुश था। उसे अफ़नासी की नयी शक्ल बहुत अच्छी लगी थी। हर समय अपने मालिक की ओर लोगों का घूर घूरकर देखना हसन को अच्छा न लगता था।

जब अफ़नासी पाली से आगे बढ़ा तो बड़ा ख़ुश था यद्यपि यहीं से सबसे कठिन मार्ग आरम्भ होता था।

उन्हें घाट पार करना था।

रास्ता संकरा था और पहाड़ों के साथ साथ आगे बढ़ रहा था। नीचे एक घाटी थी जिसमें नुकीले पत्थर जैसे सिर उठाये खड़े थे। पत्थरों की कठिनता से दिखाई पड़नेवाली दरारों में, रास्ते के ऊपर, कुछ झाड़ियां उगी हुई थीं। पत्थरों पर पहिये खड़खड़ा रहे थे। गाड़ियां बुरी तरह भड़भड़ कर रही थीं। लग रहा था कि यदि एक धक्का और लगा तो वे टुकड़े टुकड़े हो जायेंगी।

बैल पसीने पसीने हो रहे थे और थककर हांफ रहे थे। ऐसा लगता था कि जुए में से अब गिरे, तब गिरे। क़ाफ़िला बराबर ऊपर चढ़ता गया। लगता था कि वह नीले आकाश तक चढ़ जायेगा।

उन्हें सफ़र आरम्भ किये चौथा दिन था। घोड़ा थक न जाये इस लिए अफ़नासी उसपर से उतरकर पैदल चल रहा था। गर्मी और चढ़ाई के कारण उसका जी मिचला रहा था। गाड़ियां अक्सर पत्थरों में फंस जातीं और तब लोग उन्हें कन्धों से, या पहिये पकड़ पकड़-कर, उठाने लगते। शुरू शुरू में जो रास्ता चौड़ा, घास और पेड़ों से परिपूर्ण था, वही अब हर घंटे संकरा और अंधकारपूर्ण होता जा रहा था। पहाड़ों की चोटियों पर प्राय: चौकसीवाली मीनारें दिखाई पड़ती थीं।

तो अब आयी सबसे खतरनाक जगह। इसे बहामनी सलतनत की कुंजी कहा जाता है। कहते हैं कि कभी यहां बीस मुसलमानों ने राजा की सारी सेना रोक ली थी। बात ठीक हो या ग़लत लेकिन यहां घात में बैठे रहना बहुत ही सुविधाजनक था। बेशक इस पगडंडी पर दो गाड़ियां आमने-सामने से नहीं निकल सकतीं। ऐसी हालत में सेना की रचना के लिए स्थान मिले कहां से?

हुसेन ने बताया कि इस मार्ग के अलावा पहाड़ों से होकर तीन रास्ते और हैं किन्तु ये तीनों बहुत दूरी पर हैं और इससे अच्छे भी नहीं हैं।

कुछ समय पहले यह मराठों की भूमि थी। मराठा आज़ादीपसन्द और योद्धाओं की क़ौम है। वे मुसलमानों पर हमले बोलते थे, उन्हें लूटते थे और मौत के घाट उतारते थे। किन्तु मराठों पर भी बहुत समय तक ज़ुल्म किये गये और उनके क़िलों पर अधिकार किया गया। अब यह रास्ता खतरनाक नहीं रह गया है। हां, जब कभी मूसलाधार

पानी बरसता है और उसकी हहराती हुई धार ऊपर से चट्टानें बहाकर लाती है उस समय अवश्य वहां आना-जाना एक समस्या बन जाती है। पर वैसे तो कोई बात नहीं। बेशक आदमी को सतर्क रहने की ज़रूरत है।

बस पहाड़ों पर चार घंटे चढ़ लीजिये कि सारे विचार छू-मन्तर हो जायेंगे। दिमाग़ में सिर्फ़ एक ही बात घूमती रहेगी – लेटिये और छककर पानी पीजिये।

अफ़नासी गरदन ताने, तेज़ पत्थरों से कतराता हुआ चल रहा था। दूसरे लोग भी इसी प्रकार चुपचाप और थके हुए से आगे बढ़ रहे थे।

सहसा कड़कड़ाहट की कोई आवाज़ लोगों के ऊपर से होती हुई पहाड़ों पर में गूंज गयी। अफ़नासी के सामने की गाड़ी एकदम ठप हो गयी थी और वह उससे टकरा गया था। उसकी थकान जैसे हवा हो गयी। वह दौड़ा दौड़ा क़ाफ़िले की पहली गाड़ी के पास गया – उसी तरफ़ से तो कड़कड़ाहट सुनाई दी थी। उसने देखा – गाड़ी का पिछला पहिया खड्ड में गिर रहा है और गाड़ी एक ओर झुक गयी है। हिन्दू गाड़ीवान गाड़ी का एक किनारा कसकर पकड़े है और, नंगे पैरों को पत्थरों पर जमाये, उसे ऊपर उठाने की कोशिश कर रहा है लेकिन स्वयं गाड़ी के साथ ही, नीचे चला जा रहा है और उसके सामने, नीचे की ओर, बड़े-से पत्थरों पर ढेरों छोटे छोटे कंकड़-पत्थर पड़े हैं।

अफ़नासी दौड़ता हुआ गाड़ी तक आया और गाड़ीवान के पास ही गाड़ी पकड़ ली। फिर पूरा ज़ोर लगाते हुए चिल्ला उठा –

"हसन! मुज़ ..."

उत्तेजना के कारण उसकी आवाज़ टूट गयी। गाड़ी उसे भी अपने साथ ही लिये हुए नीचे खिसक रही थी।

फिर और लोग भी वहीं दौड़ आये, फिर और, फिर और ... उसने अपनी सारी ताक़त लगा दी, लेकिन सहसा देखा कि गाड़ीवान



एक ओर हट गया। अफ़नासी ने भी, पीछे झुककर हाथ छोड़े और एक तरफ़ लुढ़क पड़ा।

गाड़ी चरमरायी और धम्म से नीचे गिर पड़ी। गाड़ी के जुए ने बैलों की गरदनें तोड़ दी थीं। ठीक उसी समय बैल डर से चिग्घाड़े और गर्त में समा गये।

इसके बाद एक हल्की-सी धमक सुनाई दी। बैलों की चिग्घाड़ बन्द हो चुकी थी। रास्ते के कगार पर धूल जम रही थी।

गाड़ीवान दोनों हाथों से सिर थामे उदास बैठा था। उसके पास खड़ा हुआ हुसेन उसे मुक्के दिखा दिखाकर गालियां दे रहा था।

मुज़फ़्फ़र ने खड्ड में एक नज़र डाली और सिर हिलाते हुए एक ओर हट गया।

पास ही खड़े हुए दूसरे गाड़ीवान नीची और भीरु-सी आवाज़ में बातचीत कर रहे थे।

अफ़नासी उठा। उसने अपनी चुटीली हथेली पर एक निगाह डाली और चोग़े में हाथ पोंछ लिया।

"सरकार, सरकार!" हसन उसे भयभीत दृष्टि से देख रहा था – "आपको कुछ हुआ तो नहीं? चोट तो नहीं आयी?"

"शैतानो," हांफते हुए अफ़नासी बोला, "अगर तुम सब एकसाथ तभी दौड़ आते तो हमने गाड़ी बचा ली होती ... मुंह बा रहे थे ... हुं-ह!" हसन का चेहरा देखते ही अफ़नासी समझ गया कि उसके पल्ले कुछ भी नहीं पड़ा। अब उसकी समझ में आया कि गुस्से में वह रूसी बोल गया था। वह तुरन्त शान्त हो गया। उसने दर्द से तिलमिलाता हुआ हाथ झटका और मुंह सिकोड़ते हुए पूछने लगा—

"क्या हुआ था?"

हसन ने गाड़ीवानों से बातें कीं। उन्होंने, एकसाथ सड़क, गाड़ी और हुसेन के सामने बैठे हुए गाड़ीवान की ओर संकेत करते हुए कुछ समझाना शुरू किया।

हसन सारी बातों का तर्जुमा करता गया।

"उस हिन्दू का कोई क़सूर नहीं। बैल रास्ते में एक सांप आ जाने से भड़क गये थे, पहिये के नीचे से पत्थर खिसक गया था और गाड़ी नीचे चली गयी थी ... ये लोग यही कहते हैं। गुरु के पास कुछ भी नहीं बचा। बस यही बैल सारी जमा-जथा थे और यही एक गाड़ी। और कुछ नहीं।"

"गुरु? यह आदमी जो बैठा है?"

"हां, सरकार।"

"यह तुमने क्या किया!" निकीतिन ने आह भरी, "गाड़ी पर तो हुसेन का बहुत-सा सामान लदा था। उसे हम कैसे समझायें?"

हुसेन बराबर गाड़ीवान को गालियां दिये जा रहा था, जूते के पंजे से उसे ठोकता जा रहा था और उसके सिर पर थूकता जा रहा था।

"कुत्ता कहीं का! तुझे नीचे जाकर मेरा सारा सामान वापस लाना होगा! मैं तेरी खाल उधेड़ दूंगा! बदमाश कहीं का,

जानबूझकर बैल नीचे गिरा दिये! दुष्ट! मां के पेट में ही क्यों न मर गया! पाजी कहीं का!"

"खोजा, सचमुच बड़े दुख की बात है," हुसेन के पास आकर निकीतिन बोला, "बड़े दुख की बात। लेकिन इस गाली-गलौज से क्या होगा...यहां है उतरने की जगह कोई?"

"जगह कैसी?" हुसेन चिनचिनाया, "उतरने की जगह? और अब वहां रह ही क्या गया होगा? इसे तो मार ही डालना चाहिए! इसका गला घोंट देना चाहिए, आंखें निकाल लेनी चाहिए!"

"शान्त हो जाओ! आदमी बनो, खोजा।"

हुसेन सहसा चुप हो गया। उसकी सांस में कुछ घरघराहट-सी हुई और उसने चाकू निकाल लिया। अफ़नासी ने जूते के पंजे से चाकू उसके हाथ से गिरा दिया। हुसेन झपटने के लिए झुका ही था कि संभल न सकने के कारण गिर पड़ा, परन्तु तभी निकीतिन के सामने आ खड़ा हुआ। उसकी सांस भारी हो गयी थी और उसमें से सीटी जैसी आवाज़ सुनाई पड़ रही थी। उसकी छोटी छोटी आंखें इस्पात की तरह चमक रही थीं। उसके ओंठों के किनारों का थूक सूख चुका था।

"तुम ..." हुसेन बड़बड़ाया, "तुम कुत्ते ...तुम भरोगे दाम ..."

मुज़फ़्फ़र ने हुसेन का कंधा पकड़ा और हसन निकीतिन को अपने पीछे करता हुआ, दोनों व्यापारियों के बीच खड़ा हो गया।

"मेरे रहते तुम उसे मौत के घाट नहीं उतार सकते," मुट्ठी बांधकर तथा हसन को एक ओर ढकेलते हुए निकीतिन बोला, "गुण्डों की तरह बरताव मत करो, हुसेन।"

"तुम दोगे दाम!"

हुसेन नफ़रत से कांप रहा था। अब वह गाड़ीवान को भूल चुका था।

"बस, चलो, चलो!" अफ़नासी बीच ही में बोल उठा, "तुम से ज़बान लड़ाने के लिए मेरे पास समय नहीं। हसन, गाड़ीवानों से कहो आगे बढ़ें!"

हसन ने गाड़ीवानों को पुकारा और वे अपने बैलों को बुलाने के लिए चिल्लाने और तालियां बजाने लगे।

"ओ-ओ... हो-हो!"

हुसेन मुज़फ़्फ़र के हाथों के नीचे से होता हुआ हट गया और आस्तीन से माथा पोंछते, तथा बिना किसी की ओर देखे हुए एक ओर चला गया...

पड़ाव पर नौकर ने हुसेन के लिए एक अलग अलाव जला दिया। निकीतिन ने हसन को हुसेन के पास भेजा – उससे कहना हमारे पास आ जाये। किन्तु हसन मुंह लटकाये लौट आया।

"उसने कहा है नहीं आऊंगा। और..."

"हां, हां, और क्या?"

"वह आपको धमकियां दे रहा है।"

"यह बात है... इसके माने हैं कि ख़ोजा हुसेन कंजूस ही नहीं, बेवक़ूफ़ भी है। धमकी देता है! देने दो। अब हम आराम करें। हसन, दरी तो देना..."

रात में निकीतिन की नींद टूटी। अलाव के पास ही हसन भी बैठा बैठा अंगारों की ओर देख रहा था।

"तुम क्यों नहीं सोते, हसन?" अफ़नासी बोला।

हसन चौक पड़ा और अंधेरे में मुस्कराते हुए, फुसफुसाकर कहने लगा –

"कोई बात नहीं। यों ही! सरकार, आप आराम से सोयें।"

"वह कुछ नहीं कर सकता!" अफ़नासी बोला, "चलो लेट जाओ।"

हसन, निकीतिन के पास आया।

"खोजा, हुसेन गाड़ीवान से बदला लेना चाहता है। वह आपके बारे में भी कुछ जानता है और आपको भी धमकी देता है।"

"वह जान भी क्या सकता है?" धीरे से अफ़नासी ने पूछा, "जानने के लिए है ही क्या? और फिर क्या कर सकता है वह?"

"लेकिन गुरु को कुछ हो जाये। अगर हुसेन शिकायत कर दे कि गुरु ने जानबूझकर बैलों को ढकेल दिया है तो उसे फांसी हो सकती है।"

"कौन उसकी बात का विश्वास करेगा?"

"हां, अगर आप सब कुछ ठीक ठीक कह दें तो कोई न करेगा।"

"किससे कह दूं?"

"क़ाज़ी से ..."

निकीतिन ने तुरन्त कोई जवाब न दिया। पहाड़ी चरागाह पर चारों ओर से झुटपुटा छा रहा था और जगह जगह पर जलनेवाली आग में ठंढे पड़ते हुए अंगारे आंखमिचौनी खेल रहे थे। घोड़ा हिनहिना रहा था। एक कुत्ता, सिर उठाये, कान खड़े कर रहा था। निकीतिन ने कुत्ते की गरदन सहलायी और बोला–

"सुनो हसन ... उस गाड़ीवान को ढूंढो। उससे कहो भाग जाये। यही ठीक होगा।"

हसन ने धीरे से अपना मुंह खोला, कुछ एतराज करना चाहा, फिर जल्दी से सिर हिलाता हुआ बोल उठा–

"अच्छा, अच्छा ..."

प्रातःकाल गाड़ीवानों में गुरु का कोई पता न था। हुसेन ओंठ भींचे अफ़नासी के पास से गुज़र गया। मुज़फ़्फ़र सीटी बजाता रहा।

दोपहर होते होते लोग एक चौड़ी-सी घाटी में आ गये। अब पहाड़ नीचे पड़ गये थे और हरी हरी तथा मन को प्रफुल्लित कर देनेवाली वादियां दिखाई पड़ने लगी थीं।

उतार शुरू हो गया था। लोग उमरी नामक एक क़स्बे के निकट पहुंच रहे थे। यहां से जुन्नर का रास्ता छः दिन का रह गया था।

हुसेन उमरी में एक दूरस्थ सराय में ठहर गया और अपने साथ तीन बैल-गाड़ियां रख लीं।

हसन जैसे घबड़ा गया। उसने निकीतिन को सलाह दी कि वे जल्दी ही यहां से निकल जायें। वे वहां सिर्फ़ एक रात रहे और फिर आगे बढ़ गये। इतने थोड़े समय में वे नगर देख भी कैसे सकते थे? उमरी की मटमैली-सी हरियाली पीछे छूट गयी। अब वे दक्खनी पहाड़ियों में थे। हसन मस्ती में गा उठा। वह एक बढ़िया हिन्दुस्तानी गीत गा रहा था। निकीतिन आश्चर्य करने लगा। उसने तो सपने में भी न सोचा था कि हसन इतना अच्छा गा सकता है।

"क्या गा रहे हो? काहे के बारे में है गाना?" उसने पूछा।

हसन मुस्कराया और हाथ झटकार दिये।

"यह है ज़मीन। शीघ्र ही इसपर वर्षा होगी। मन नाच उठेगा। धान लहलहायेंगे, गेहूं की बालियां फूटेंगी, लड़कियां खिल उठेंगी। लेकिन मेरे मन की कली तो एक से बिंधी होगी–बस एक से। और अगर वह मेरा साथ न देगी तो फिर दुनिया में मुझे किसी की चाह नहीं–मुझे वर्षा नहीं चाहिए, धान नहीं चाहिए। लेकिन वह मेरा साथ देगी! इसलिए वर्षा, तू रिमझिम रिमझिम आ, रिमझिम रिमझिम आ!"

"सुन्दर गीत है!" निकीतिन बोला, "और गाओ ..."

"अच्छा सुनो," आंख मटकाते हुए हसन बोला, "बड़ा सुन्दर गीत है यह, सचमुच बड़ा सुन्दर!"

हसन चुप हो गया, फिर सिर उठाकर चुटकी बजायी और लय के साथ गाने लगा –

"ओ-ओ . . . हो-हो ! "

गाने की धुन बदल गयी।

गाड़ीवानों ने मुड़कर देखा। वे खीसें निकाल रहे थे। उनके पैर थिरक रहे थे। उनका दिल झूम रहा था। निकीतिन की आंखों के आगे नीले नीले हल्के-से बादल, ऊंची ऊंची घास, सिर उठाये हुए पहाड़ घूम गये . . . और जब हसन चुप हुआ तो निकीतिन की इच्छा हुई कि वह और गाये, और गाये।

"और यह किसके बारे में था ? "

"यह . . . हां। राजा के पास पांच सौ हाथी हैं, हज़ारों की फ़ौज। वह सोने के पलंग पर सोता है, सोने की तश्तरियों में खाना खाता है। लेकिन मैं ज़मीन पर सोता हूं और मिट्टी के बरतन में मटर उबालता हूं, पेट भरता हूं। मेरे पास हाथी तो हाथी, कुत्ता भी नहीं। ओह, मैं बड़ा ग़रीब हूं, बड़ा ग़रीब। एक इन्सान जिसे ख़ुशी नसीब ही नहीं हुई। मैं सड़कों पर मारा मारा फिरूंगा और तोते मेरी हां में हां मिलायेंगे। मैं चाहता हूं – दाहिने जाऊं, मैं चाहता हूं – बायें जाऊं। तालाब में मछलियां देखता हूं, कपास के डोंड़ों का स्पर्श करता हूं, एक लड़की को देखता हूं – उसे प्यार करता हूं। ओफ़, बेचारा राजा ! तेरे पास दौलत है, ताक़त है, लेकिन मैं, एक आज़ाद इन्सान, जो कुछ अनुभव करता हूं उसका अनुभव तू नहीं कर सकता, कभी नहीं कर सकता ! "

"कितना अच्छा गीत है ! " निकीतिन बोल उठा, "तुमने यह क्या कहा – 'मैं चाहता हूं – दाहिने जाऊं, मैं चाहता हूं – बायें जाऊं'?"

हसन ने एक बार फिर वही गीत गाया और अफ़नासी सीटी बजाता हुआ कई कई वाक्यों को याद करता और दुहराता रहा।

और वह हुसेन को जैसे भूल ही गया। अब फिर वही थका डालनेवाला सफ़र। उसके सारे विचार बस एक ही बात पर जम गये – किसी तरह जल्दी जुन्नर पहुंचूं।

यहां, घाटों के उस पार, दक्खिनी पठारों में मुसलमानों के बहुत-से गांव पड़े। वहां का जीवन, हिन्दुओं की तुलना में, अधिक अच्छा न था। लेकिन यहां मांस मिल सकता था और मांस निकीतिन ने बहुत समय से न खाया था। हिन्दू लोग तो मांस खाते नहीं। पहले पहल अफ़नासी इसका कारण उनकी ग़रीबी समझता था, किन्तु अब उसे पता चला कि मांस न खाना तो उनका धर्म है।

एक गांव में उन्हें पता चला – अभी हाल ही में जुन्नर का शासक असद-खान यहीं से होकर गुज़रा था। वह फ़ौज के पड़ाव से आ रहा था। मुसलमान शंकर राजा को हराने में कामयाब न हो सके थे और अब अपना घेरा हटा रहे थे।

पांचवें दिन आसमान में बादल दिखाई पड़ने लगे, गड़गड़ाहट सुनाई पड़ने लगी। हिन्दुस्तान की भयानक आंधी शुरू हो गयी थी। बिजली से आंखें चौंधिया रही थीं। इसी आंधी-तूफ़ान में सारा क़ाफ़िला एक अज्ञात गांव तक पहुंच गया। तूफ़ान रात-भर चलता रहा।

निकीतिन डर गया – शायद यह बारिश खत्म ही न हो। किन्तु प्रातःकाल बादल छंटे और सूर्य के दर्शन हुए।

गांव में बैल सड़कों पर दिखाई पड़ने लगे। अधनंगे किसान बैलों को हलों में जोत जोतकर जुताई के लिए निकल रहे थे।

मौसम सुहावना था। सारा क़ाफ़िला, जल्दी जल्दी, अपने मार्ग पर बढ़ने लगा। रास्ते में उन्होंने कोई पड़ाव न डाला।

और जब आसमान पर फिर बादल मंडराये तो डर की कोई बात न रही – दूर की पहाड़ियों पर मकान, और ढालू चट्टान पर जुन्नर की दीवालें साफ़ साफ़ दिखाई पड़ने लगी थीं। हवा इतने ज़ोरों की थी कि लोगों की पगड़ियां उड़ रही थीं और चोगे और घोड़ों के अयाल फड़फड़ा रहे थे। निकीतिन घोड़े की गरदन पर झुका और गाने लगा – "मैं चाहता हूं – दाहिने जाऊं, मैं चाहता हूं – बायें जाऊं..."

किन्तु भाग्य में तो कुछ और ही बदा था।

जुन्नर – अर्थात – 'पुराना नगर'। कभी यह नगर राजाओं का था। किन्तु बहुत समय पहले ही मुसलमानों ने उसपर क़ब्ज़ा कर लिया था और वे सारे निशान मिटा डाले थे जो उसके अतीत के सूचक थे – उन्होंने मन्दिरों को नष्ट करके उन्हीं की नींवों पर मसजिदें खड़ी की थीं और वहां के निवासियों को मुसलमान बना लिया था।

अतीत के जुन्नर का एक ही चिन्ह रह गया था – वहां के क़िले की दीवालें।

ये दीवालें बड़ी अद्‌भुत थीं। उनके ऊपर के कगार और मीनारें सीधी चट्टानों पर लटकी-सी लग रही थीं। दीवालों तक एक छोटी-सी पगडंडी जाती थी। इस पगडंडी के नीचे एक भयानक खड्ड था। पगडंडी पर दो घुड़सवार तक एकसाथ न निकल सकते थे। इस क़िले के निर्माण में न जाने कितने वर्ष लग गये थे। बड़े बड़े पत्थर पहुंचाने और उनसे दुर्ग और महलों का निर्माण करने में लाखों ग़ुलामों का ख़ून-पसीना एक हुआ था।

ये सारी बातें निकीतिन के दिमाग़ में घूम रही थीं। वह बरसते हुए मेंह में से नगर का दृश्य देख रहा था।

व्यापारियों ग्रौर ग्रन्य यात्रियों को क़िले में जाने की ग्रनुमति न थी। पहाड़ी की तलहटी पर स्थानीय जनता के मिट्टी ग्रौर बांस के मकान थे। इन्हीं मकानों के बीच में सरायें थीं। यात्री इन्हीं सरायों में ठहर गये। हसन नगर से परिचित था। उसने एक शान्त जगह ढूंढ निकाली। मुसाफ़िर रात में सोने की व्यवस्था करने लगे। सराय मुसलमानों की थी, किन्तु वहां भी कुछ हंसमुख, ख़ुशदिल ग्रौरतें ग्रा गयीं। वे मुसाफ़िरों के हाथ-मुंह धोने के लिए पानी लायीं ग्रौर तकिये गींजने लगीं।

"यहां के लोग कितने ग्रजीब हैं!" निकीतिन ने गरदन हिलायी, "हसन, यह ठीक नहीं। इनसे कहो यहां से चली जायें।"

हसन ने सिर हिलाकर एतराज़ किया—

"एक ही बात है। उनके लिए ग्रापको पैसा तो देना ही होगा, खोजा। यह धर्मशाला नहीं है। सुलतानों की सरायों में ग्रौरतों से टैक्स लिया जाता है।"

"ग्रौर ग्रगर मुझे इनकी ज़रूरत नहीं?"

"तो भी कोई बात नहीं। इन्हें कुछ तो देना ही होगा। वे ग्रापकी सेवा करती हैं।"

निकीतिन बुरी तरह थक चुका था। कमरे की खिड़कियों के उस ग्रोर से सुनाई पड़ती हुई तेज़ पटपट में उसकी ग्रांख लगी ग्रौर एक ही नींद में सबेरा हो गया। दीवालों के पीछे पानी की पटपट ग्रौर छलछल ग्रब भी वैसी ही हो रही थी। खिड़की में से भूरा ग्राकाश दिखाई पड़ रहा था। गर्मी के बाद मौसम कुछ ठंडा लग रहा था। निकीतिन ने चोग़ा पहना ग्रौर ग्रपने घोड़े की खबर लेने

चल दिया। अहाते में पानी के कारण सांस तक लेना मुश्किल हो रहा था। जिस छत के नीचे घोड़ा खड़ा था वहां तक भागकर जाने में निकीतिन की हड्डियां तक भीग गयी थीं। घोड़े ने सिर घुमाया और हिनहिनाने लगा। छत ताड़ की पत्तियों की थी जिसमें से पानी टपक रहा था। घोड़ा पूरी तरह भीग चुका था और कांप रहा था। अफ़नासी अपने कपड़ों से देर तक घोड़े की मालिश करता रहा और उसे थपथपाता और चारा खिलाता रहा। फिर वह कपड़े बदलने के लिए अपने कमरे में लौट पड़ा। और जैसे ही कमरे में पहुंचा कि ठिठककर पीछे हट गया–जिस क़ालीन पर वह सोया था उसी पर एक सांप कुंडली मारे बैठा था और दूसरा खिड़की की चौखट से फुफकार रहा था।

हसन और पास-पड़ोस के कमरों से दूसरे लोग दौड़ते हुए वहां आ गये। उन्होंने लाठियों से एक सांप तो मार डाला और दूसरे को अहाते में गिरा दिया।

और जब लोगों ने ग़ौर से देखा तो कोनों में ढेरों कनखजूरे और बिच्छू दिखाई दिये। अफ़नासी के तो यही सोचकर रोंगटे खड़े हो गये कि वह मज़े में सो रहा था और ये दुष्ट उसी के पास रेंग रहे थे।

"ये आते कहां से हैं?" उसके मुंह से निकल पड़ा।

"बरसात के कारण!" हसन ने संक्षिप्त उत्तर दिया, "जब पानी बरसता है तो ये भी आ जाते हैं। डरने की कोई बात नहीं। बरसात में ये कीड़े-मकोड़े शान्त रहते हैं।"

"इन्हें मार डालो!" निकीतिन कठोरता से बोला, "मार डालो न! हर रात को यों ही रेंगते रहेंगे।"

हसन चुप हो गया और जब लोग वहां से हट गये तो गहरी सांस लेता हुआ कहने लगा –

"बिच्छुओं को तो बुहार डालूंगा। वे खतरनाक नहीं होते। अल्लाह से दुआ मांगो, खोजा कि कहीं हुसेन से भेंट न हो जाये।"

"हम यहां से चले जायेंगे।"

"नहीं, हम जल्दी नहीं जा सकते। चारों ओर पानी और कीचड़ है। कोई रास्ता खुला नहीं। जब तक पानी बन्द नहीं होता तब तक हमें यहीं रुकना होगा।"

इस वर्ष बरसात का मौसम कुछ बाद में शुरू हुआ था और पानी देखकर ऐसा लग रहा था मानो मानसून अपनी पिछली कमी पूरी कर रहे हों। कई दिनों और रातों तक जुन्नर के आकाश में बिजली कड़कती रही, बादल गरजते रहे। फिर पानी की झड़ी शुरू हुई। यह ताज़गी और शीतलता को जन्म देनेवाली रूसी बरसात न थी। यह थी भारत की वर्षा कि जब झड़ी लगती तो कान धरे आवाज़ न सुनाई पड़ती, ताड़ की पत्तियों से ढकी हुई छतें बरसा करतीं, सड़कों और गलियों में पानी भर जाया करता, मकान तक डूब जाते, किन्तु गर्मी से निजात फिर भी न मिलती। ऐसी दशा में सड़कों पर निकलना सम्भव ही कब था।

निकीतिन सुबह से शाम तक सराय में ही बना रहता – कभी कमरे में रेंग आनेवाले सांपों, बिच्छुओं और खनखजूरों से मोर्चा लेता, तो कभी घोड़े की देख-रेख के लिए दौड़ता-भागता। इस गर्मी में घोड़ा भी दुबला हो गया था।

यहीं एक अप्रिय घटना घटी।

एक दिन जब अफ़नासी कमरे में बैठा बैठा डायरी में अपनी यात्रा की घटनाएं लिख रहा था तभी उसके कान में मुज़फ़्फ़र की तेज़ आवाज़ और हसन की चीख सुनाई दी –

"सरकार! सरकार!"

अफ़नासी दौड़ता हुआ अहाते में आ गया। वस्त्रों और हथियारों से सिपाही लगनेवाले पांच आदमियों ने अहाते में उसके घोड़े को घेर रखा था और मुज़फ़्फ़र और हसन को ढकेलते हुए वे उसे फाटक की ओर लिये जा रहे थे।

अफ़नासी दौड़ा दौड़ा सिपाहियों के पास आया और घोड़े की लगाम पकड़कर चिल्ला पड़ा –

"ठहरो! कहां लिये जा रहे हो इसे? यह मेरा घोड़ा है।"

एक सिपाही ने निकीतिन को अपनी म्यान से पीटा और उसका हाथ लटक गया। मुज़फ़्फ़र ने उसपर प्रहार किया और सिपाहियों ने चाकू निकाल दिये।

"मुज़फ़्फ़र!" निकीतिन चिल्लाया – "ठहरो! घोड़ा क्यों लिये जा रहे हो?"

"तुम कौन हो?" लाल पगड़ीवाले सिपाही ने रुखाई से पूछा।

"खुरासान का सौदागर, यूसुफ़..."

"अच्छा! तो तुम हो! हमें तुम्हारी ही तो ज़रूरत है! चले आओ हमारे पीछे पीछे।"

"कहां? क्यों?"

"जुन्नर के हुक्मरां, आलीजाह, काफ़िरे-मल्कुलमौत असद-खान ने हुक्म दिया है कि तुम्हें और तुम्हारे घोड़े को पकड़ लाया जाये। चलो! चलो यहां से! कुत्ते कहीं के!"

हसन ने हाथ डाल दिये। उसका चेहरा फक पड़ गया और वह निकीतिन की ओर ताकने लगा। मुज़फ़्फ़र गाल की हड्डियां नचाता हुआ दो क़दम पीछे हट गया। उत्सुक लोग फाटक के सामने से ग़ायब होने लगे।

"चलो!" सिपाही ने फिर कहा और निकीतिन की पीठ में धक्का देकर उसे आगे ढकेल दिया।

"मुझे छुओ मत... मैं ख़ुद ही चलूंगा!" भौंहें सिकोड़ता हुआ निकीतिन बोला।

उसने पीछे देखा और अपने सहयात्रियों से अभिवादन करना चाहा, किन्तु सिर्फ़ सिर-भर हिलाकर रह गया और फाटक की ओर बढ़ गया।

उस दिन पानी कुछ धीमा पड़ गया था और सूर्य बादलों की ओट से दिखाई देने लगा था। जुन्नर की सड़कों पर लोगों की भीड़ लगी थी। सिपाही, सांभर झील के नमक विक्रेता, उड़ीसा के निवासी, सिन्धु तट के बाशिन्दे, हिमालय से आये हुए लोग— यानी वे सब जो वहां का मौसम बिगड़ जाने के कारण वहां रुक गये थे, अब सुहावने मौसम का आनन्द ले रहे थे।

जैसे ही अफ़नासी के कान में चीख़ पड़ी कि वह बिना जूतों और बिना पगड़ी के निकल पड़ा। सड़कों पर कीचड़ था। इसके अलावा फाटक के पास किसी ने उसे धकेल दिया और गन्दे पानी के गड्ढे में उसके पैर घुटनों तक धंस गये। उसके चोग़े, उसके मुंह और उसकी दाढ़ी पर कीचड़ ही कीचड़ जम गयी।

किस रास्ते से जाये, किससे न जाये इसका निश्चय करना अफ़नासी के हाथ में न था—सिपाही उसे सड़क के सबसे गन्दे भाग से लिये जा रहे थे। कीचड़ उसके पैरों में लगकर छपछपा रहा था।

लोग घूम पड़े और मुस्कराते हुए एक दूसरे को आंखें मारने लगे। कुछ ऐसे भी थे जो उसके साथ साथ जाने के इच्छुक भी लग रहे थे।

"चोर!"

"घोड़ा चुराया है! चोर!" अफ़नासी के कानों में कुछ आवाज़ें पड़ीं।

मिट्टी का एक लोंदा उसकी छाती पर पड़ा और दूसरा उसके गाल पर।

"दुष्ट कहीं के!" उसने दांत भींचते हुए कहा। उसके हृदय में टीस-सी उठ रही थी और लोगों की इस भीड़ के समक्ष, अपनी असहायता की कल्पना मात्र से, उसकी सांस तक भारी हो रही थी। क्रोध के कारण उसकी आंखों के आगे धुंध-सा छा रहा था। फिर भी वह सिर उठाये चला जा रहा था।

सिपाही उसे नगर के बीचोंबीच से होकर ले गये। आखिरी मकानों के पास आकर सब लोगों ने उसका साथ छोड़ दिया। वहीं से क़िले की चढ़ाई शुरू होती थी। एक मुसलमान घोड़े के साथ साथ आगे आगे चल रहा था। बाक़ी सब आगे-पीछे एक क़तार में बढ़ रहे थे। निकीतिन बीच में था।

"यह कारगुज़ारी हुसेन की है," अफ़नासी ने उत्तेजित होते हुए सोचा, "यह भी अच्छा हुआ कि मैंने मोर्चा नहीं लिया और भागा भी नहीं, वरना ये लोग मुझे मार डालते। और बिना घोड़े के मैं जाऊं भी तो कहां? मैं तो कहीं का न रहूंगा... बड़ी गम्भीर समस्या है। देखो न, कैसे मेरा जुलूस निकालते हैं। आखिर कोई रास्ता तो निकालना ही चाहिए! और अगर मैं यह दिखाऊं कि इन लोगों की हरकत से मुझे कितनी पीड़ा हुई है तो? लेकिन इससे क्या होगा! और झूठ बोलना भी तो ठीक नहीं। नहीं, मैं कुछ न छिपाऊंगा। जो होना हो, हो जाये। पर मैं लोगों को मज़ाक़ उड़ाने का मौक़ा न दूंगा। कभी न दूंगा।"

टेढ़ा-मेढ़ा पहाड़ी रास्ता ऊपर जा रहा था। ज़रा भी पैर फिसला या ग़लत क़दम पड़ा कि धड़ाम से नीचे पत्थरों पर गिर पड़े। रात में यहां से कोई नहीं निकलता...

गुम्बददार संकरे फाटक के पास कुछ चौकीदार चौपड़ खेल रहे थे। उन्होंने लोगों को आते देखा और खेल बन्द कर दिया। वे निकीतिन को घूरते हुए उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गये।

निकीतिन ने देखा – एक मोटी-सी दीवाल में दुहरा फाटक लगा था जिसमें लोहे के मोटे मोटे क़ब्ज़े थे। उसने चौकीदारों पर निगाह तक न डाली और नम और गन्धाते हुए गुम्बद के नीचे चला गया।

धूप से उसकी आंखें चौंधिया गयी थीं और उसका मिट्टी से मैला मुंह और गन्दा चोग़ा चमक उठा था।

"ठहरो!" उसे हुक्म सुनाया गया।

लाल पगड़ी वाला चौकीदार अपनी तलवार संभालता कहीं भाग गया। अफ़नासी ने सामने एक निगाह डाली। तरह तरह के रंगों वाले संगमरमर के पत्थरों के एक सीधे रास्ते के दोनों ओर ताड़ के पेड़ लगे थे। रास्ता मोज़ेक से सुशोभित एक तिमंज़िले महल को जा रहा था। महल में लच्छेदार और जटिल कारीगरीवाली कई मीनारें सिर उठाये खड़ी थीं। महल के सामने कई इकधारे फौवारे थे। सफ़ेद संगमरमर के तालाबों में दस शक्तिशाली इन्द्रधनुषी धारें गिर रही थीं। महल की खिड़कियों पर बढ़िया कारीगरीवाले जंगले लगे थे। रंगीन संगमरमर की सड़क पर मोर चल रहे थे।

पगड़ीवाला सिपाही बाहर आया और दूसरों को संकेत करके बताया कि "इसे यहां ले आओ!"

अफ़नासी को महल की ओर नहीं, बल्कि दाहिनी ओर एक

मामूली सड़क पर से ले जाया गया। वहां, पता नहीं बगीचा था या झाड़ियां थीं।

वहां एक छोटा-सा चौक था। चौक के इर्द-गिर्द, रंग-बिरंगे जालों और झूलों से सुशोभित घोड़े घुमाये जा रहे थे। एक एक सईस एक एक घोड़े की रास पकड़े था। सईस जमीन तक सिर झुकाये, घोड़े को एक आलीशान मंडप तक लाता और तब तक सीधा न खड़ा होता जब तक उसे यह हुक्म न मिल जाता –

"जाओ!"

अफ़नासी को धक्का देकर उसी मंडप के आगे कर दिया गया। आदमियों और घोड़ों का घेरा जैसे एक क्षण के लिए निश्चेष्ट खड़ा रह गया। हरे जालवाली एक घोड़ी ने घोड़े की ओर देखा और प्यार से हिनहिना दी। घोड़ा भी इस प्यार के जवाब में हिनहिना दिया और मौज में आकर पैर पटपटाने लगा।

लाल पगड़ीवाला सिपाही बड़ी विनम्रतापूर्वक झुका और छाती पर दोनों हाथ रखते हुए मंडप की ओर बढ़ा। अफ़नासी भी आंखें सिकोड़ते हुए सीधा हुआ और सिपाही के पीछे पीछे चलने लगा।

मंडप में क़ालीनों से ढके हुए गद्दों के टीले पर, पालथी मारे एक आदमी बैठा हुआ था। काली दाढ़ी, सीधी भौंहें, बड़ी नाक, मोटे मोटे ओंठ। पैरों में सोने के जूते।

रईसों की ही तरह यह व्यक्ति भी पिश्तई रंग की क़मीज़ और नीली तथा क़सीदेवाली सफ़ेद-पीले रंग की मिर्ज़ई पहने था। उसके सिर पर हरे रंग की एक पगड़ी थी जिसपर एक लाल पर लगा था। उसके बायें कान में एक बड़ा-सा रत्नजड़ित कर्णफूल था। छोटी छोटी उंगलियों वाले उसके बड़े बड़े हाथों में पहुंचियां भी थीं और अंगूठी भी।

इस व्यक्ति के पास ही कोई दस वर्ष की उम्र का एक मोटा-सा लड़का बैठा हुआ था। घुंघराले बाल, चारों ओर नीले रंग से रंगी हुई बड़ी बड़ी आंखें। लड़का नीरस उत्सुकता से सब कुछ देख रहा था। उस व्यक्ति और लड़के के पीछे हबशी ग़ुलाम थे जिनके हाथों में शुतुर्मुर्ग़ के परों के बने बड़े बड़े पंखे थे और जिनकी कमर से छोटी छोटी कटारें लटक रही थीं।

उस व्यक्ति के पैरों के पास एक मुंशी था। उसके दायें-बायें कुछ मुलाज़िम थे जिनमें से एक नोवगोरद के व्यापारी जैसा ऊंचा-सा टोप पहने था।

निकीतिन ने अनुमान लगाया—मोर की तरह सजा-धजा जो व्यक्ति बैठा है, वही है असद-ख़ान। लड़के के बारे में उसका अनुमान था कि वह असद-ख़ान का बेटा है, और दूसरों के बारे में उसका ख़्याल था कि वे रईस और दरबारी हैं। लाल पगड़ीवाला घुटनों के बल बैठा और ज़मीन तक माथा झुकाया।

असद-ख़ान ने हाथ हिलाया, मुंह खोला और कुछ हुक्म-सा दिया।

निकीतिन को धकियाकर सामने लाया गया। पीछे से किसी ने उसके कन्धे दबाये कि वह भी झुककर सलाम करे। किन्तु निकीतिन ने उसे परे हटा दिया। तभी उसे घुटनों के नीचे एक चोट पड़ी और वह ज़मीन पर गिर पड़ा। सिपाहियों ने उसे इस ढंग से बिठाया कि वह जुन्नर के हुक्मरां को नीचे से देखे; क़ायदे के साथ।

अफ़नासी ने ओंठ भींचे, आंखें ऊपर उठायीं और सामने देखने लगा।

असद-ख़ान ने अफ़नासी से आंखें मिलायीं, त्यौरियां चढ़ायीं और मुंह बनाने लगा।



"क्या नाम है तुम्हारा? कहां से आ रहे हो?" लोहे जैसी सख्त आवाज़ में उसने पूछा, "और किसलिए आये हो?"

अफ़नासी को एक क्षण का मौक़ा मिल गया और सिपाही को परे ढकेलते हुए अकड़कर खड़ा हो गया। सिपाहियों ने उसके हाथ पकड़ लिये। फिर उसने ताक़त लगाकर सिपाहियों को एक तरफ़ गिराया और गहरी सांस लेते हुए आगे बढ़कर बोल उठा –

"मैं रूसी हूं... इन सिपाहियों को हटाने का हुक्म दीजिये। उन्होंने किसी चोर को तो नहीं पकड़ा है।"

सिपाही उसके पास तक आ चुके थे और अब जैसे उसपर झपट पड़े।

"ताक़त का जोर दिखाओगे, तो मैं कुछ न बोलूंगा," अपने आपको अंगरक्षकों के हाथों से मुक्त करता हुआ निकीतिन चिल्लाया, "बिल्कुल न बोलूंगा... शैतान के बच्चो, छोड़ दो मुझे!"

उसे फिर जमीन पर गिरा दिया गया। सिपाहियों की एक भीड़ उसपर टूट रही थी और वह उनसे मोर्चा लेता हुआ देख रहा था कि दरबारी असद-खान के पास आये, उन्होंने उसके कान में कुछ कहा,

मोटा लड़का डर से पीछे ठिठका और खुद जुन्नर का हुक्मरां मुक्का घुटने पर रखकर ग़ुस्से से चीख़ उठा...

सिपाही तितर-बितर हो गये। अफ़नासी ने अपना चुटीला मुंह पोंछा और उठकर ख़ून थूकने लगा। उसके मुंह पर बरतें पड़ गयी थीं लेकिन उसपर क्रुद्ध-सी मुस्कान थिरक रही थी – "आख़िर क्या मिला?"

असद-खान ने इशारा किया – पास आओ।

अफ़नासी कुछ आगे बढ़ा। ख़ान के मुंह पर प्रसन्नता दौड़ गयी। ऐसा लगा कि इस धर-पटक में उसे मज़ा आ रहा था। उसके मुंह पर पहले जैसी कठोरता दिखाई पड़ने लगी किन्तु अब उस कठोरता में उत्सुकता और मिल गयी थी।

"तुम बुज़दिल नहीं हो," ख़ान बोला, "और अल्लाह ने तुम्हें ताक़त भी दी है। चलो अच्छा है। मैं तुम्हें खड़े होने की इजाज़त देता हूं... अगर तुम खड़े हो सकते हो तो।"

अफ़नासी के मुंह में फिर ख़ून भर गया। उसने ख़ून थूक दिया। उसे तुरन्त कोई उत्तर समझ में न आया और खड़े खड़े सिर हिलाया।

"अच्छा अब तुम सच सच बताओ," ख़ान बोला, "तुम कौन हो और कहां से आ रहे हो?"

उसकें दरबारी, दांत भींचते हुए, अपने निडर ख़ान की ओर देखकर चापलूसों की तरह मुस्करा रहे थे।

"रूसी हूं। त्वेर से आ रहा हूं," यह समझते हुए, कि उत्तर उनके लिएं काला अक्षर भैंस बराबर है, निकीतिन ने उनके प्रति अपनी उपहास-भावना को छिपाते हुए धीरे से कहा, "और मेरा नाम है अफ़नासी निकीतिन।"

"झूठ मत बोलो। तुम ईसाई हो न!" बीच ही में ख़ान बोल उठा।

"बेशक। लेकिन खान, तुम्हारे जासूस क़ायदे के नहीं हैं। वे पूरी बात नहीं बताते। और मैं तुम्हें सब कुछ बता दूंगा। मैं ईसाई हूं, रूसी हूं, त्वेर में रहता हूं।"

खान ने भौंहें उठायीं। उसके कानों के पास सफ़ेद दाढ़ीवाला दरबारी कुछ फुसफुसाने लगा।

"यह ... मुल्क कहां है?" खान ने पूछा।

"यह मुल्क यहां से नहीं दिखाई पड़ता। बीच में दो समुद्र पड़ते हैं–एक हिन्द महासागर, दूसरा ख़्वालीन।"

खान ने अपने आदमियों पर फिर एक नज़र डाली और कोई दरबारी फिर उसके कान में फुसफुसाया।

"अपने शहरों के नाम तो गिनाना ज़रा।"

"शहरों के? मास्को, नीज्नी, रस्तोव, कीएव, त्वेर, नोवगोरद, उग्लीच... सब नाम गिनाना आसान थोड़े ही है? हमारी धरती कोई छोटी-मोटी धरती तो नहीं।"

"ऐसे शहर हो ही नहीं सकते।"

"खान, ऐसे शहर हैं। आपके आदमी उनके बारे में कुछ नहीं जानते। लेकिन यह ताज्जुब की बात नहीं है। आपके शहरों के बारे में हमारे आदमियों ने भी तो कुछ नहीं सुना है। लोग तरह तरह की मनगढ़न्त फैलाते हैं ..."

"हिन्दुस्तान के बारे में सारी दुनिया जानती है," असद-खान बीच ही में बोल उठा, "और अगर तुम्हारे लोगों को भारत की जानकारी न होती तो तुम्हें ही कैसे मालूम होता?"

असद-खान के इर्द-गिर्द खड़े-बैठे लोगों ने हाथ ऊपर उठाये और आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगे–उन्हें अपने मालिक की इस बुद्धिमानी पर आश्चर्य हो रहा था। अफ़नासी ने सिर हिला दिया।

"मुझे बड़ा तजुर्बा है, खान। सारी दुनिया देखी है मैंने। लेकिन मैं सारी बातें ठीक ठीक नहीं जानता। मुझे तो बताया गया था कि सौदागरी के ख्याल से हिन्दुस्तान एक बड़ा मुल्क है। व्यापारियों की वहां क़द्र होती है। लेकिन लगता है लोगों ने झूठ कहा था।"

"समय से पहले कोई फ़ैसला मत कहो!" निकीतिन पर एक गहरी-सी नज़र डालते हुए असद-खान ने उसे फिर रोका। "मैं तुम्हारा विश्वास नहीं करता। तुम सच बोल रहे हो इसका तुम्हारे पास क्या सबूत?"

निकीतिन को सहसा अपनी सनद की याद आयी। वह बोला–

"खान, अपने सिपाहियों से कहो कि वे मेरा थैला ले आयें। मैं तुम्हें सनद दिखा दूंगा।"

ऐसा लगा कि खान कुछ परेशान हो उठा।

"कैसी सनद?"

"हमारे रूस हुक्मरां की..."

"सनद मंगाओ!" असद-खान ने अपने दरबारियों की ओर देखते हुए हुक्म दिया, "और क्या तुम्हें यहां भेजा गया?"

निकीतिन ने सोचा–"क्या मैं झूठ बोल जाऊं, इतना झूठ कि तीन समुद्र भर जायें? चाहे झूठ बोलो, चाहे सच–यहां कोई रूसी तो जानता नहीं"। लेकिन फिर जैसे अपनी ही भर्त्सना करने लगा–"झूठ बोलना ठीक नहीं। चाहिए तो यही कि इन शैतानों को धोखा दिया जाये, पर मेरी आत्मा गवाही नहीं देती। शायद ऐसा लगेगा कि मैं डर गया।"

उसने निषेधसूचक ढंग से सिर हिला दिया।

"मुझे किसी ने नहीं भेजा। खुद आया हूं। अपना खतरा उठाकर।"

"अकेले, इतनी दूर?" द्वेषपूर्ण ढंग से मुस्कराते हुए असद-खान बोला।

"अकेले क्यों? यहां गया दोस्त-अहबाब मिल गये – माज़न्द्रान में भी, काशान में भी..."

"तुम फ़ारस होकर आये हो?"

"हां। होर्मुज़ तक। वहां से समुद्री रास्ते से।"

"यह तो हम जानते हैं... हां तो तुम्हारी धरती का क्या नाम है?"

"रूस।"

"रूस? तुम्हारा सुलतान कौन है?"

"हमारा देश मुसलमानी देश नहीं। रूस में सुलतान नहीं होते। राजे होते हैं।"

"तो क्या वे खलीफ़ा के मातहत होते हैं?"

"वे किसी के मातहत नहीं होते। उन्हें अपने दिमाग़ पर भरोसा रहता है।"

"खलीफ़ा है – अल्लाह का नुमाइन्दा।"

"और राजा – ईसामसीह का।"

"एक ही बात है!" उपदेशपूर्ण ढंग से खान बोला – "खलीफ़ा खलीफ़ा ही है। सबको उसी की रिआया बनकर रहना चाहिए। तुम्हारे हुक्मरां मुसलमान हैं?"

"मुसलमान क्यों?" निकीतिन ने उत्तर दिया, "वे रूसी हैं-- ईसाई धर्म को मानते हैं।"

खान ने कंधे झुलाये और उसके दरबारी व्यंग्यपूर्ण ढंग से मुस्करा दिये।

"यह बात तो वैसी ही है जैसे कोई यह कहे कि हल में बैल नहीं, घोड़ें जोते जाते हैं," असद-खान हंस पड़ा।

"लेकिन हमारे यहां सचमुच हलों में घोड़े जोते जाते हैं," शान्ति से अफ़नासी ने उत्तर दिया। "आपके यहां बैल जोते जाते हैं..."

असद-खान दोनों हाथ पेट पर रखे खिलखिलाकर हंस पड़ा और उसकी दाढ़ी आगे निकल आयी। उसके दरबारी भी हंस पड़े और लड़का भी। मुंशी भी इतने ज़ोरों से हंसा कि उसके ओंठ खिंचकर कानों तक आ गये। पहरेदारों ने भी खीसें निकाल दीं।

"अल्लाह गवाह है... अल्लाह गवाह हैं कि अकेले यही... मुझे यक़ीन दिलाता है..." कठिनाई से असद-खान बोला, "तो फिर तुम लोग...तुम लोग लड़ते होगे गायों पर बैठ बैठकर, है न?"

सब ठहाका मारकर हंस पड़े। लोग इस मैले-कुचैले, फटेहाल विदेशी पर खिलखिलाकर हंस रहे थे जिसके चेहरे पर गम्भीरता छा रही थी और जो ऐसा ऊट-पटांग बक रहा था। पागल है या कोई मसखरा?

मोटे लड़के ने सिर पर उंगलियां रखकर सींग दिखाये और गाय की तरह डकारने लगा जिसे देखकर सभी लोग और भी जोरों से हंस पड़े।

अफ़नासी चुपचाप खड़ा था और हंसते हुए लोगों को घूर रहा था—ये भी बड़े बेवक़ूफ़ हैं!

आखिर असद-खान कुछ शान्त हुआ।

"अच्छा," वह बोला, "अच्छा, मान लो घोड़े तुम्हारे यहां हल में जोते जाते हैं। तो फिर खरबूज़े पेड़ों में फलते होंगे क्या?"

"नहीं, खरबूज़े हमारे यहां नहीं होते," अफ़नासी ने जवाब दिया, "उनके लिए हमारी आबोहवा बहुत सर्द है। अलग अलग पौधों के लिए अलग अलग हालतों की ज़रूरत होती है। हमारे यहां की सर्दी में न खरबूज़ा ही हो सकता है और न तरबूज़ ही।"

"तो कैसी होती हैं ये सर्दियां ?"

"सर्दियों में बर्फ़ गिरती है और लोग सिर तक जानवरों की फ़रदार खाल लपेटे रहते हैं और सारे दिन अंगीठी जलती रहती है..."

"अंगीठी ?"

"हां, घरों को गर्म करने के लिए एक तरह का चूल्हा बना लिया जाता है और लोग उसके पास बैठकर बदन सेंकते हैं।"

और एक बार फिर सब हंस पड़े। घरों को भी गर्म किया जाता है–कहीं सुना है किसी ने? तो फिर गर्मी से बचने के लिए लोग क्या करते हैं ?

"वह तुम्हारी धरती भी खूब है !" असद-ख़ान बोला, "सब कुछ उलटा... तुम्हारे यहां मर्द तो बच्चे नहीं जनते ?"

सभी लोग खिलखिलाकर हंस पड़े।

इस समय घोड़े की टापें सुनाई दीं। मंडप में चहलपहल मची। जो सिपाही थैला लेने भेजा गया था वह आ गया था।

थैला अफ़नासी के आगे डाल दिया गया।

"सनद दिखाओ," रुखाई से असद-ख़ान ने हुक्म दिया। अफ़नासी ने थैले की चीज़ें खखोलीं और मास्को के गवर्नर राजा अलेक्सान्द्र की दी हुई पुरानी-सी दिखनेवाली सनद निकालकर ख़ान की ओर बढ़ा दी।

"यह रही।"

मुंशी ने सनद ले ली, उसे हिलाया-डुलाया और उल्टा पकड़कर विचारशील मुद्रा में मुंह बनाया।

"इधर तो देना !" असद-खान चिल्लाया।

पर खान ने भी इस कागज को वैसे ही देखा जैसे किसी अजीबोग़रीब चीज़ को देख रहा हो।

"क्या लिखा हुआ है?" खान सहसा पूछ बैठा, "यह कैसी लिखावट है?"

"खत स्लाव भाषा में है," अफ़नासी ने समझाया, "पत्र सभी राजाओं, मिर्ज़ाओं, खानों और वेगों के नाम है कि वे मेरी तिजारत में किसी तरह का दखल न दें, मुझे किसी प्रकार की तकलीफ़ न पहुंचायें। फिर इसपर मेरा नाम लिखा है–अफ़नासी निकीतिन। मुहर है। यह मुझे दिया है रूसी राजा ने।"

खान ने सनद गोड़ी-मोड़ी और निकीतिन के पैरों पर फेंक दी।

"अपने मन से भी बहुत कुछ कह डालना कोई मुश्किल नहीं। मैं तुम्हारी धरती कहां है नहीं जानता। तुम्हारे राजों-महाराजों को भी नहीं जानता और जानना चाहता भी नहीं। लेकिन तुमने खुद इक़बाल किया है कि तुम ईसाई हो। है न?"

"हां।"

"तुम इस देश का क़ानून जानते हो?"

"नहीं जानता, खान।"

"एक ही बात है। क़ानून न जानना–यह कोई बहाना नहीं। क़ानून तुम्हें जानना ही चाहिए था। क़ानून कहता है–इस सुलतान की ज़मीन पर क़दम रखनेवाले हर ग़ैरमज़हबी को अल्लाह का मज़हब मानना होगा। अगर नहीं मानेगा तो उसे गुलाम और ज़बरदस्ती मुसलमान बनाया जायेगा। अच्छी तरह सुन लिया न तुमने?"

"मुझपर रहम करो, खान ..."

"चुप रहो। तुम गुस्ताख़ हो, पर बहादुर भी हो। हम ऐसे आदमियों की क़द्र करते हैं, बहादुरों को प्यार करते हैं। मैं तुमसे वादा करता हूं कि अगर तुम हमारा मज़हब क़बूल करोगे, तो तुम्हें घोड़ा भी वापस मिलेगा और एक हज़ार सोने के सिक्के भी दिये जायेंगे।

अगर मेरी बात न मानोगे तो तुम्हें ज़बरदस्ती मुसलमान बनाया जायेगा और घोड़े से ही हाथ न धोना पड़ेगा, वरना तब तक के लिए मेरा गुलाम बनना पड़ेगा जब तक कि तुम्हें छुड़ाने के लिए कोई मुझे एक हज़ार सोने के सिक्के न दे। मुझे बहादुर गुलामों की भी जरूरत है। समझे ?"

"खान, मज़ाक़ कर रहे हो क्या ..."

निकीतिन का चेहरा पीला पड़ रहा था फिर भी वह मुस्कराये जा रहा था, "मेरे लिए कौन एक हज़ार सिक्के देगा ? नहीं ... और क्यों कर रहे हो मेरे साथ ऐसा बर्ताव ? अगर यहां तिजारत मना है, तो मेरा घोड़ा दो, मैं चला जाऊंगा ..."

"यह कोई बाज़ार नहीं है और न मैं तुम्हारे साथ सौदेबाज़ी ही कर रहा हूं।" असद-खान बीच ही में बोल उठा, "मुझे जो कुछ कहना था कह दिया। ले जाओ इसे यहां से! घोड़े को अस्तबल में रखो। तुम लोग इस सौदागर पर निगाह रखना ... और ऐ, ईसाई, ज़रा तुम भी सुन लो ... तुम्हें सोचने के लिए चार दिन दे रहा हूं। ईद के दिन मुझे जवाब देना। जाओ!"

ये दिन बड़ी परेशानी में कटे। ऐसा लगता कि सूर्य निकलने के साथ ही डूबने लगता। और ताज्जुब की बात यह थी कि अफ़नासी के अलावा और किसी को भी ऐसा न प्रतीत हो रहा था। सब कुछ पहले जैसा ही था—शहर के उस पार की पहाड़ियां, अहाते का कीचड़, चारों ओर की रोजमर्रा की बातचीत।

अफ़नासी ने अपने को संभाला—लोगों से देश के बारे में पूछ-ताछ की, वक़्त पर खाया-पिया, हसन से मौसम के संबंध में बातचीत की। किन्तु वह अच्छी तरह जानता था कि उसकी अवस्था असहायों जैसी

है। लोग उसकी निगरानी कर रहे हैं। भागना ठीक नहीं ग्रौर बेकार भी होगा। परदेश में बिना पैसे ग्रौर माल के रहना मौत को न्योता देना है।

ग्रौर इस्लाम धर्म ग्रहण करना – इसके माने हैं ग्रपने बाप-दादों के धर्म से नाता तोड़ना – मैं ग्रोलेना को न देख सकूंगा, ग्रपने मित्र सेरेगा कपिलोव से ग्रांख न मिला सकूंगा। दुष्ट मिकेशिन तक मुझपर थूकेगा। सभी मुझे देखकर मुंह फेर लेंगे। फिर रूस लौटने का विचार हमेशा के लिए छोड़ना पड़ेगा। तब तो मेरी ज़िन्दगी ग्रौर पैसा ग्रायेगा किस काम? मैं किस के लिए जिऊंगा ग्रौर कैसे? बस एक ही रास्ता है – ख़ान की बात न मानना ग्रौर ग्रगर मुसीबत ग्रा ही जाये तो ग्रपनी ज़िन्दगी की भारी क़ीमत लेना ...

तीसरा दिन समाप्त हो रहा है। कल ग्रसद-ख़ान को जवाब देना होगा। कल ही सब कुछ तय करना होगा।

...ग्रफ़नासी, मुज़फ़्फ़र ग्रौर हसन सराय के कुछ कुछ ग्रंधेरे कमरे में खाने पर बैठे हैं। पानी की रिमझिम सुनाई पड़ रही है। पड़ोसियों की ग्रावाज़ें ग्रा रही हैं। दीवालों के उस पार कुछ दूर वीणा बज रही है। किसी गायिका के स्वर कानों में पड़ रहे हैं। गायिका के गाने में भाग्य का रोना रोया गया है। खाना तरह तरह का था। मेज़ पर एक नीले-से साग़र में शराब थी। साग़र पर काली चिड़ियों की शक्ल बनी थी। पर किसी ने भी शराब न पी।

"कुछ भी हो, निकल भागना चाहिए।" तुर्कमन जल्दी जल्दी कह गया।

"कहां? क्या लेकर? ग्रौर भाग भी पाग्रोगे, तो पकड़े जाग्रोगे..."

"फाटक पर सिपाही खड़ा है," गहरी सांस लेते हुए हसन बोला।

"तो क्या हम ग्रपने ग्रापको उसके हवाले कर दें?" गुस्से से दांत भींचते हुए मुज़फ़्फ़र बोला।

"चुप भी रहो।"

"क्यों चुप रहूं, खोजा? जो होना है, सो होगा ही। अगर तुम हमारे मज़हब में नहीं आना चाहते तो न आओ। फिर भाग जाओ! सिपाही को मैं ढेर कर दूंगा! और जो जो भी हमारे रास्ते आयेगा उसे ठिकाने लगा दूंगा। मुज़फ़्फ़र मेहरबानियां भूलता नहीं, अच्छे आदमी की क़द्र करता है। वह उसके लिए अपनी जान तक दे देगा।"

"नहीं, मुज़फ़्फ़र, मैं यह नहीं चाहता।"

मुज़फ़्फ़र ने छाती ठोंकी।

"मेरी मां ने मुझे सिखाया था—दोस्त के दिल में अपनी अच्छी यादगार रखो और इससे अल्लाह तुम्हारे सारे गुनाह माफ़ कर देगा और अगर वैसा न कर सके तो वह यह गुनाह कभी माफ़ न करेगा। हसन से कहो अलग रहे और मेरे मामले में दखल न दे। मैं कहीं न जाऊंगा।"

"मैं क्यों अलग रहूं?" हसन बीच ही में बोल उठा, "मैं तो यहीं रहूंगा। मैं गुलाम जो हूं। मालिक को छोड़कर न जाऊंगा।"

"कल मैं भी गुलाम बन जाऊंगा।" धीरे से निकीतिन बोला।

अफ़नासी के मस्तिष्क में तरह तरह के विचार आ जा रहे थे। उसके गाल पिचक गये थे और वह बैठा बैठा फ़र्श ताक रहा था। इन तीन दिनों में उन्होंने कोई पहली बार तो यह बातचीत की नहीं थी। मुज़फ़्फ़र और हसन ने उसके दुखदर्द को अपना दुखदर्द समझा था।

निकीतिन के दिमाग़ में एक कटु विचार उठने लगा—"अगर उसपर यह मुसीबत न आयी होती तो उसे पता कैसे चलता कि ये लोग इतने अच्छे आदमी हैं।"

"ख़ैर। लगता है इस मुसीबत से हमारा छुटकारा नहीं हो सकता," उसने ज़ोर से कहा और साग़र पकड़ने के लिए हाथ फैलाया, "कुछ

भी हो खान मुझे मुसलमान नहीं बना सकता। उसे यह देखने का मौक़ा कभी न मिलेगा कि पैसे के लालच में कोई रूसी अपना धर्म बदल लेता है। आखिर उसकी समझ में आयेगा ही कि उसका पाला ऐसे-वैसे लोगों से नहीं पड़ा है . . . अच्छा, विदा होने से पहले हम शराब पियेंगे। दोस्तो, उठाओ जाम! मैं अच्छे लोगों के लिए पिऊंगा, रूस के लिए पिऊंगा!"

उसने प्याला खाली कर दिया। मुज़फ़्फ़र और हसन हिचकिचाते हुए एक दूसरे की ओर देखने लगे।

अफ़नासी ने इसका मतलब समझा और हंस दिया –

"क्यों, हिचकिचा क्यों रहे हो? पियो न! मेरी चिन्ता मत करो, पियो! सब ठीक हो जायेगा!"

अब, अन्ततः उसने अपनी असहाय स्थिति अच्छी तरह समझ ली थी और पक्का निश्चय भी कर लिया था। फलतः उसका जी हल्का हो गया था।

"मैं अब गाना गाऊंगा," कुछ उठते हुए अफ़नासी बोला, "रूसी गाना। मुझे वह बहुत पसन्द है . . ."

एक क्षण तक इन्तज़ार कर चुकने के बाद उसने गहरी सांस ली और तेज़ आवाज में गाने लगा। उसकी गाने की आवाज से पानी की रिमझिम, वीणा की मधुर ध्वनि और सराय का शोरगुल सभी दब गये –

आसमान में बाज़ उड़ा
वोल्गा की धारा के ऊपर
हहराती लहरों के ऊपर
"ओफ़ अगर सभी मिलकर गाते!"
हंसों की पांतों के ऊपर
चकराता, मंडराता, तिरता।

फाटक पर खड़े और नौकरानी से बातचीत करते हुए पहरेदार के कान खड़े हो गये। वीणा वादन बन्द हो गया। गायिका का गीत उसके गले ही में अटक कर रह गया। रेशम की पूरी खेप का सौदा करनेवाले दो मुसलमान गाना न समझ सकने के कारण कन्धे झुलाने और एक दूसरे को देखने लगे। सभी यह अन्दाज लगा रहे थे – यह विचित्र विदेशी गीत मुसीबत में पड़े हुए परदेसी के कंठ से निकल रहा है।

और रूसी गीत तेज़ और तेज़ होता गया, और प्रसन्न, स्वतंत्रताप्रिय और साहसी पक्षी की भांति बराबर ऊपर उठता गया, ऊंचे और ऊंचे।

और उसकी अन्तिम ध्वनि हवा में विलीन हो गयी। फिर भी सराय में बहुत देर तक शान्ति बनी रही। हर व्यक्ति उस क्षण की पवित्रता को समझ रहा था और लग रहा था जैसे हर किसी को डर हो कि कहीं वह उस पवित्रता में बाधक न बने। वर्षा की रिमझिम हो रही थी, बूंदें पट पट गिर रही थीं।

...मुज़फ़्फ़र और हसन दरवाज़े पर पड़ रहे। निकीतिन ने अपना थैला खोला और अपनी चीज़ें उठाने-धरने लगा। उसने साफ़ कपड़े एक ओर रखे – कल वह यही कपड़े पहनेगा। अब वह अपनी डायरी के पन्ने पलटने लगा जिसमें उसकी यात्रा का विवरण था। उसने निश्चय किया – यह डायरी वह मुज़फ़्फ़र को दे देगा। जब मुज़फ़्फ़र होर्मुज़ लौटेगा और किसी ईसाई को देखेगा तो वह उसे यह डायरी दे देगा। इसमें लोगों के लाभ की बहुत-सी बातें हैं। उसने कॉपी में वह सनद भी रख दी जिसे खान ने मोड़-माड़ डाला था।

पैरों पर बांधने की पट्टी, दो पुरानी पर मज़बूत पेटियां – रास्ते में काम आनेवाली चीज़ें, तांबे की दावात, डोरे का गुल्ला और

मुई उसने एक ओर हटाकर रख दी। अब इनकी उसे कोई ज़रूरत न रही थी।

फिर उसने थैले में से, सबसे नीचे से, वे कुछ चीज़ें निकालीं जो उसे जान से ज्यादा प्यारी थीं – गले में लटकानेवाला सलीब, जो कभी उसे उसकी मां ने दिया था, ओलेना की तावीज़ और इवान की बनायी प्रतिमा।

उसने सलीब चूमा और गले में पहन लिया। फिर उसने तावीज़ लटकायी, और अन्ततः इवान की बनायी प्रतिमा को अपने घुटने पर रखकर अपनी प्रियतमा का मुखड़ा देखने लगा।

ओलेना की आंखें उदास लग रही थीं। उसके मुख पर दुख की छाया थी। वह अफ़नासी को फटकारती और उसके लिए दुखी होती सी लग रही थी।

"ओलेना!" वह बोला, "मैं बरबाद हो गया, ओलेना... अब मैं न लौटूंगा। ओफ़, मुझे तुम्हारे साथ सुख नहीं बदा था। लगता है मामूली आदमी के लिए भारत में भी कोई सुख नहीं!"

सारी रात वह भगवान की प्रार्थना करता रहा। उसे मार्या, इओना और वसीली काशीन की भी याद हो आयी। उसके माता-पिता, जैसे जीवित दशा में, उसकी आंखों के आगे खड़े हो गये। फिर उसने जलते हुए क्न्यातिनो, लाल बालों वाले किसान और नाव के अपने सभी साथियों को, एक एक करके, देखा...

उसे सब कोई याद आ गया। उसने सब से माफ़ी मांगी और सबको क्षमा कर दिया।

परदेश की निर्दय घुटन भरी रात कटती रही, कटती रही। मुज़फ़्फ़र और हसन सो रहे थे या कौन जाने सोने का बहाना कर रहे थे। अफ़नासी अंधेरे में, विचारशील मुद्रा में एकाकी बैठा था।

"शैतान के बच्चे!"

"गधा कहीं का!"

"भाले पर दम निकलेगा तेरा, भाले पर!"

"बन्द कर यह अपनी गज़-भर की ज़बान!"

आवाज़ें इतनी तेज़ और इतनी परिचित थीं कि अफ़नासी ने उन्हें तुरन्त पहचान लिया। वह चौंक पड़ा। तब उसे पता चला कि वह सो रहा था।

खिड़की में से सुनहरा प्रकाश कमरे में आ रहा था। कहीं कोई खांस रहा था। अहाते में बैल डकार रहे थे। कोई नंगे पैरों मिट्टी के फ़र्श पर होता हुआ दौड़ रहा था। औरतों की हंसी सुनाई पड़ रही थी।

अफ़नासी उछल पड़ा और चोग़ा लपेटे लपेटे दरवाज़े की ओर चला आया। उसका दिल धड़कने लगा। उसे कानों पर विश्वास करने में भी डर लग रहा था।

हसन जैसे खुशी से फूला हुआ उसके पास आया—

"खोजा ... खोजा ..."

बरामदे में खज़ानची मुहम्मद की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी—

"वह है कहां?"

"मैं यह रहा जी, यहां!" हाथ फैलाता हुआ निकीतिन चीखा। दूसरे ही क्षण खज़ानची उसकी बांहों में बंध गया।

"ठीक," अफ़नासी की अस्पष्ट कहानी सुन चुकने के बाद खज़ानची बोला, "ठीक, ठीक ... मेरा भी यही अनुमान था कि तुम मुसलमान नहीं हो।"

दरवाज़े पर मुज़फ़्फ़र और हसन को देखकर खज़ानची ने भौंहें तरेरीं—

"हट जाओ। हसन, शराब लाओ ... हां, तो खान ने तुम्हारा घोड़ा ले लिया?"

"हां," अफ़नासी बोला, "घोड़ा तो ले ही लिया, साथ ही यह भी हुक्म दिया कि मैं मुसलमान बन जाऊं और एक हज़ार सोने के सिक्के देने का भी वादा किया है।"

"फिर तुम्हें कैसी मदद चाहिए? तुम तो बड़े क़िस्मतवर हो।"

"मैं मुसलमान नहीं बनना चाहता!" भौंहें तरेरते हुए निकीतिन बोला, "मैं अपना घोड़ा चाहता हूं।"

"क्यों मुसलमान नहीं बनना चाहते?" मुहम्मद ने अपने भारी-भरकम कन्धे झुकाये, "यह तो बड़े फ़ायदे की बात है! जब तुम यहां आ ही गये हो तो यहां का क़ानून मानो।"

"यहां मैं हमेशा के लिए नहीं आया हूं। यहां देखूं-भालूंगा, फिर अपने मुल्क लौट जाऊंगा।"

"लौट जाओगे? क्यों?"

"वह मेरा वतन है।"

"वहां तुम्हारा है कौन? मां, बाप, बीवियां, बच्चे?"

"कोई नहीं।"

"तो इसके माने हैं—मकान, नौकर-चाकर, ज़मीन-जायदाद?"

"हो सकता है अब मकान भी न रहा हो। क़र्ज़ में ही चला गया हो।"

"अजीब बात है!" निकीतिन की ओर देखते हुए ख़ज़ानची बोला, "कौन शैतान तुम्हें जाने को कह रहा है? आदमी का वतन वहां है, जहां वह खुश रहता है। यहां तुम खुश रहोगे। अमीर बनोगे, हरम बसाओगे, गुलाम ख़रीदोगे।"

"नहीं, नहीं!" निकीतिन ने सिर हिलाया, "आदमी का वतन

वहां होता है, जहां उसके देशवासी रहते हैं। तुम यहीं बड़े हुए हो। तुम्हें यहीं अच्छा लगता है। और मुझे अच्छा लगता है रूस में।"

"मैं तो यहां नहीं बड़ा हुआ। मैं बग़दाद का रहनेवाला हूं। लेकिन मुझे तो बग़दाद अपनी ओर नहीं खींचता ... तुम बड़े अजीब हो यूसुफ़। देशवासी, रीति-रिवाज, परदेस... तुम यहां रहने के आदी बन जाओगे। आखिर यहां है किस चीज़ की कमी?"

"यहां अपनी धरती जो नहीं है।"

"तो बना लो न इसे अपनी धरती! जिसके पास पैसा होता है धरती उसकी होती है!"

"ख़ज़ानची, वतन नहीं ख़रीदा जा सकता, समझे! ख़ैर छोड़ो भी इसे। क्या तुम्हें खान के पास जाने में डर लगता है?"

मुहम्मद ने मुंह बनाकर कहा –

"मैं तो तुम्हारी भलाई चाहता हूं। मैं जानता हूं तुम काले कोसों से आये हो, न जाने कितने उतार-चढ़ाव देखे हैं। और ख़ाली शब्दों के लिए अपनी खुशी से हाथ धोना चाहते हो। तुम बहादुर हो, तगड़े हो ... हम ऐसे लोगों की क़द्र करते हैं। मेरी राय है तुम मुसलमान बन जाओ। हां, और अगर न चाहते हो ..."

निकीतिन ख़ज़ानची की ओर, अपलक, देखता रहा और तड़ से कह उठा –

"हां, मैं नहीं चाहता। मैं तुम्हारे क़ानून में बंधकर अपना रास्ता नहीं बन्द करना चाहता। मुसलमान बनकर तो मैं कहीं का न रहूंगा – न रूसी, न खुरासानी, न हिन्दुस्तानी। अच्छा हो तुम मेरे लिए असद-खान के पास चले जाओ।"

"तुम्हें समझाना तो बालू से तेल निकालना है। जो चाहो करो ... हां, तो तुम रूसी हो, ईसाई। अच्छा तुमने खान से क्या क्या बातचीत की?"

निकीतिन से खान की जो जो बातें हुई थीं वे उसने मुहम्मद को कह सुनायीं और वह प्रायः आंख उठा उठाकर बड़े ध्यान से उन्हें सुनता रहा।

"समझ गया। असद-खान को घोड़े पसंद हैं," आखिर खज़ानची बोला, "एक बार उसने एक अरबी घोड़ी के लिए पचास रखेलियां दे दी थीं। तुम घोड़ा पाना चाहते हो? शायद मिल जाये।"

"कैसे मिलेगा?"

"मैं असद-खान से बात करूंगा।"

"तब तो मैं तुम्हारा नौकर बन जाऊंगा।"

"हूं-ह ... मुझे ऐसे नौकरों की ज़रूरत नहीं। मुझे ईमानदार नौकरों से डर लगता है।" मुहम्मद ने दांत निकाल दिये, "चलो खाने पर हाथ साफ़ करें। मैं भूखा हूं। अच्छा, रूस के बारे में कुछ बताओ। मुझे तो दिलचस्पी है ..."

"अरे भाई! इससे तो यही अच्छा है कि तुम्हीं यह बताओ कि यहां तक आये कैसे? इतनी तो झड़ी लगी थी। ऐसे पानी में पहुंचना सचमुच बड़े अचरज की बात है।"

"काम ही ऐसा था कि आना पड़ा। मेरे पास मालिक-अत-तुजार महमूद गवान के लिए ज़रूरी सन्देश है। हूं-ह, मेरी क्या? तुम बताओ रूस से यहां कैसे आये? मैंने तो सुना है वहां जंगली बसते हैं ..."

"आया अपनी बला से! मैंने भी बहुत कुछ सुन रखा था। लेकिन देखता हूं कि यहां रूस के काम की कोई चीज़ नहीं। यहां भी तुम्हारी ज़मीन पर सोना नहीं लोटता। फ़ारस में चीज़ें तो यहां से भी सस्ती होती हैं।"

"तो," मुहम्मद ने आपत्ति की, "तुम अभी भारत के बीचोंबीच पहुंचे कहां हो। जब पहुंचोगे तो तुम्हें अपनी यह राय बदलनी होगी।"

"ग्रागे जाने का कोई फ़ायदा भी है? यहीं तो बाल बाल बचा!"

"कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। सब ठीक हो जायेगा। हमें रूस का हाल सुनाग्रो। कहते हैं तुम्हारे यहां फ़र बहुत होता है।"

"होता है।"

"कैसा होता है?"

"जैसा चाहें, सेबल का, एर्माइन का..."

"किस हिसाब से बिकता है?"

"सेबल का तो कुल्हाड़ियों के बदले में मिलता है।"

"यह कैसे? कुल्हाड़ियों के बदले में?"

"कुल्हाड़ी के छेद में से जितनी खाल निकल जाये उतनी एक कुल्हाड़ी के बदले में मिल जाती है।"

"गप तो नहीं मारते हो?"

"गप! नहीं, सच कह रहा हूं।"

"यह तो ... तुम्हें मालूम है सेबल की एक खाल के लिए हम कितना देते हैं?"

"नहीं। दस सोने के सिक्के, शायद बीस?"

"तीन-चार हज़ार।" मुहम्मद ने जैसे फुसफुसाते कहा। "सुना, यूसुफ़? कहीं सौ खालें ले ग्राग्रो तो... ग्रल्लाह का नाम लो। लेकिन नहीं, ये खालें तुम्हारे यहां भी इतनी सस्ती नहीं हो सकतीं!"

"क्यों! हमारे यहां हर ग्रच्छे सौदागर के कोट में सेबल की खाल का ग्रस्तर होता है।"

मुहम्मद खाना भूल गया ग्रौर विस्मित होकर ग्रपनी पगड़ी पकड़ ली –

"सौदागर! लेकिन हमारे यहां तो यह ठाठ सिर्फ़ सुलतानों को नसीब है! ग्रच्छी एर्माइन की खालें? महंगी होती हैं?"

"एर्माइन से तो तीन गुनी महंगी हैं सेवल की खालें।"

मुहम्मद तो जैसे कराहने लगा –

"तो तुम ये खालें लाये नहीं!"

"लाया था, पर डाकुओं ने लूट लीं।"

"ओह! ये बदमाश, कुत्ते कहीं के!"

निकीतिन हंस दिया –

"मुझे मुसलमानों ने ही लूटा था।"

"एक ही बात है," निराशा से हाथ हिलाते हुए खज़ानची बोला।

"लेकिन हमारे यहां जवाहरात नहीं होते," निकीतिन ने बताया।

"तो बड़े महंगे बिकते होंगे? ज़रा सेवल की खाल के हिसाब से बताना तो उनके दाम।"

"यह हिसाब लगाना तो मुश्किल है ... एक अच्छे हीरे के लिए दो सौ खालें मिल सकती हैं।"

खज़ानची मुहम्मद अब अधिक बैठा न रह सका। वह उछल पड़ा और कमरे में चहलक़दमी करने लगा।

"असद-खान अच्छा लड़ाका है, लेकिन है मूर्ख," चहलक़दमी करते हुए खज़ानची बोला, "यह लड़ाका है, हुक्मरां नहीं। हां, हुक्मरां नहीं। जहां नहीं चाहिए वहीं टांग अड़ाता है ..."

"आज मेरा आखिरी दिन है!" अफ़नासी ने याद दिलायी।

मुहम्मद, निकीतिन को न देखते हुए भी, उसपर आंखें गड़ाये था। सहसा उसे बातचीत का सिलसिला याद आ गया।

"यहां बैठो," वह बोला, "मैं अभी असद-खान के पास जाऊंगा। वह तुम्हारे पीछे पड़ने की हिम्मत नहीं कर सकता। हसन, ग़फ़ूर, घोड़ा! नहीं वह हिम्मत नहीं कर सकता! मैं उसे मालिक-अत-तुजार की धमकी दूंगा! सुलतान की! मैं..."

खज़ानची मुहम्मद तैश में आकर बाहर निकल गया।

अफ़नासी बाहर अहाते में आया – खज़ानची चला जा रहा था। फाटक पर खड़े हुए सिपाही ने, जैसे ढुलमुल ढंग से, पैर मारे सलामी की मुद्रा में छाती पर हाथ रखा और सिर झुका दिया। सराय का मालिक मुस्करा दिया।

कमरे में हसन बचा हुआ खाना उठा ले जाने लगा।

"कोई ज़रूरत नहीं!" निकीतिन ने उसे रोका, "हम अभी खायेंगे! मुज़फ़्फ़र को बुलाओ।"

हसन ने सिर झुका दिया –

"मुज़फ़्फ़र चला गया, खोजा।"

"कहां?"

"क़िले में, फ़ौज में भरती होने।"

"यह बात है... तो फिर हम दोनों ही खायेंगे।"

लेकिन हसन दरवाज़े पर ही खड़ा रहा।

"तुम्हें हो क्या गया है?" निकीतिन ने पूछा।

"खोजा, तुम्हारे साथ बैठने की मैं हिम्मत कर सकता हूं? खज़ानची जो..."

निकीतिन उठा और ग़ुलाम का हाथ पकड़कर दरी पर आया और उसे बिठा दिया।

"अपने दिमाग़ से खज़ानची को निकाल फेंको, समझे!" वह क्रोध से चिल्लाया, "हमने साथ साथ दुख उठाये हैं तो साथ साथ सुख भी भोगेंगे।"

दोपहर के बाद खज़ानची लौट आया। उसके पीछे पीछे एक सिपाही घोड़ा लिये चला आ रहा था। यह वही सिपाही था जो निकीतिन को ले गया था।



घोड़ा देते हुए सिपाही छाती पर हाथ रखकर झुका –

"खोजा, मुझपर गुस्सा मत करना। मैंने जो कुछ किया था खान के हुक्म से ही।"

खज़ानची ने दाढ़ी पर हाथ फेरा और मोटी मोटी पलकें सिकोड़ लीं।

"सुना है तुमने बहुत बड़ा गुनाह किया है।" खज़ानची बोला, "हुसेन को मारा था, हिन्दू गाड़ीवान की तरफ़दारी की थी, अफ़ीम लाये थे, और फिर खुद असद-खान को भी नाराज़ कर दिया था! हो-हो-हो!"

"मैंने हुसेन को नहीं मारा, अफ़ीम भी मैं नहीं लाया – यह सब झूठ है। लेकिन मैंने गाड़ीवान को ज़रूर बचाया था!"

"तुम्हीं सोचो – असद-खान, महमूद गवान का मुसाहिब है, सत्तर हज़ार की फ़ौज़ का सिपहसालार है, जुन्नर का मालिक है। कहां वह, कहां तुम। और तुमने उसे नाराज़ कर दिया, हो-हो-हो ... हां, पहले तो वह तुम्हारे बारे में कुछ सुनना ही न चाहता था। लेकिन मैंने कहा हमें तुम्हारी ज़रूरत है, मैं खुद तुम्हें भारत लाया हूं और तुम्हारे बारे में मालिक-अत-तुजार से बात करूंगा। फिर मैंने उसे फ़र के बारे में बताया। अब तुम्हीं देख लो नतीजा – घोड़ा यह रहा। अब तुम्हें कोई नहीं छेड़ सकता।"

"मरते दम तक तुम्हारा अहसान न भूलूंगा, खज़ानची। मरते दम तक।"

"अच्छा, अच्छा ... मैं कुछ पीना चाहता हूं। मेरे पास कहीं

शराब के दो साग़र पड़े हैं। चलो पियें। मैं तुमसे रूस के बारे में भी पूछना चाहता हूं।"

खज़ानची को कमरे में वैसे ही नशे में ऊंघता छोड़ निकीतिन घोड़े की देख-भाल करने चला गया। उसे विश्वास ही न हो रहा था कि घोड़ा घर पर है। लगता है कि ख़ज़ानची रूसी फ़रों के सस्ते होने की कहानियां सुन सुनकर ही इतना उत्तेजित हो गया था कि उसने ख़ान से घोड़ा वापस लाने में एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा दिया था। शुरू शुरू में तो कहता था कि घोड़ा शायद मिले ...हां। नशा तो नशा – वह तो सभी के बारे में पूछना चाहता था – रास्ते के बारे में, रूसी नगरों के बारे में। और वह ये बातें लिख भी लेना चाहता था। उसके बारे में क्या कहा जाये! बड़ा होशियार है! और वह भी कोई ऐरा-ग़ैरा नहीं। ख़ुद असद-ख़ान तक उसकी बात सुनता है। पर उसे देखने में ऐसी कोई ख़ास बात नहीं लगती। सौदागर तो सौदागर। घोड़ों का सौदागर।

सायबान के नीचे निकीतिन की भेंट हसन से हो गयी। हसन घोड़े की मालिश करता हुआ उससे बातें करता था।

"हसन," निकीतिन बोला, "तुम्हारा मालिक बहुत पैसेवाला है? बड़ा नामी है?"

हसन कांप उठा पर अफ़नासी को पहचानकर मुस्करा दिया।

"हां, ख़ोजा, वह पैसेवाला है। बीदर में उसका अपना घर है, तालाब हैं, घोड़े हैं, बैल हैं।"

"वह इतना मालदार कैसे हो गया?"

"मैं नहीं जानता, ख़ोजा। वह बड़े बड़े काम करता है।"

"समझता हूं, समझता हूं... क्या घोड़ा ठीक है?"

"ठीक है, ख़ोजा, हां..."

"हां? क्या? कहो न!"

"खोजा, मुझे खरीद लो।"

"कैसे?"

"मुझे खरीद लो। मैं ज़्यादा महंगा नहीं हूं बस छः-सात सिक्कों का हूंगा। अगर तुम कहोगे तो खज़ांनची बेच देगा। तुम्हारे हाथ जोड़ता हूं। मुझे खरीद लो, खोजा।"

निकीतिन बोला –

"सच पूछो तो मैं भी तुम्हें प्यार करता हूं। देखो, मैंने कभी आदमी नहीं खरीदे। हमारे मजहब में ऐसा करने की मनाही है।"

"मैं ईमानदारी से तुम्हारी चाकरी करूंगा। मैं बहुत-से काम जानता हूं। खाना बना सकता हूं, मकान साफ़ कर सकता हूं, घोड़े की देख-भाल कर सकता हूं। यहां का एक एक रास्ता जानता हूं, यहां के लोगों को जानता हूं। मैं तुम्हारे काम आऊंगा, खोजा।"

हसन ने सिर लटका लिया और पुआल मरोड़ने लगा जिससे वह घोड़े के खुर पोंछ रहा था।

"मैं महंगा नहीं हूं ..." एक बार फिर वह धीरे से बोला।

"हे भगवान!" दिल दहला देनेवाले ग़ुलाम के इन शब्दों को सुनकर अफ़नासी बरबस बोल उठा, "आदमी को खरीदना एक गुनाह है और उससे भी बड़ा गुनाह यह है कि मैं तुम्हारी मदद न करूं। खैर, खज़ानची से बात करूंगा।"

हसन खुशी से नाच उठा।

शाम होने से कुछ पहले मुजफ़्फ़र आ गया। उसे तो कोई पहचान ही न सका। कन्धों पर हरा दुपट्टा, सिर पर लाल पगड़ी, कमर में चमड़े की पेटी से लटकती हुई हरे-लाल काम की म्यान में रखी एक कटार।



"तुम्हारा क़र्ज लौटाने आया हूं, खोजा," उसने शान से कहा, "दस सोने के सिक्के तुमने मेरे सफ़र के किराये के दिये थे और पांच खाने के। हिसाब ठीक है न?"

"तुम ज़्यादा गिन गये हो।"

"नहीं। मुझे खैरात नहीं चाहिए। यही रहे पन्द्रह सिक्के।"

"तो तुम असद-खान की फ़ौज में भरती हो गये?"

"हां। देख लो न, कपड़े-लत्ते, हथियार, घोड़ा और एक महीने की तनख्वाह पेशगी।"

मुज़फ़्फ़र ने हथेली पर चमड़े का बटुआ उछाला। बटुए में सिक्के खनक रहे थे।

"अब मैं मालदार हूं। आज तुम्हारी खातिर करूंगा। इजाज़त है न?"

निकीतिन ने समझ लिया था—इनकार करना उचित नहीं। उसने सिर हिला दिया।

"तुम्हारी दावत हमें मंजूर। बस।"

मुज़फ़्फ़र ने सराय के मालिक को बुलाया, उससे कुछ कहा और मालिक ने बा-इज़्ज़त उनके आगे सिर झुका दिया। मुज़फ़्फ़र के ओंठों पर गर्वीली और सन्तोष भरी मुस्कान बिखर रही थी। निकीतिन ने अपनी मुद्रा गम्भीर बना ली। ओह मुज़फ़्ज़र! बेचारे का दिल बच्चे जैसा है! बड़ा भोला है—खुश है कि आदमी तो बना! लेकिन इस आदमी बनने के लिए उसे क्या क़ीमत चुकानी पड़ेगी यह वह नहीं जानता!

वे एक अलग कमरे में रेशम के कुछ फटे-पुराने तकियों पर बैठ गये। उनके सामने मिठाइयां, मांस, ताड़ी और ताज़ी पूरियों का ढेर लगा था।

देहलीज़ पर एक जवान हिन्दु वीणा बजा रहा था। उसकी थकी हुई और उदास आंखें बन्द हो रही थीं। वीणा की धुन मन्द थी और मुज़फ़्फ़र को तेज़ नशा चढ़ रहा था।

"मैं खुश हूं कि असद-खान से मिले पैसों से मैंने तुम्हारा क़र्ज़ अदा कर दिया," मुज़फ़्फ़र बोला। उसकी आंखें चमक रही थीं। "तुम अच्छे आदमी हो! मैं जल्द ही तुम्हारा क़र्ज़ अदा कर देना चाहता था। और हां, मुझे ग़लत नहीं बताया गया था – फ़ौजी मज़े की ज़िन्दगी बसर करता है। और सुलतान की फ़ौज में तो और भी अधिक पैसे मिलते हैं।"

"खाओ तो पहले!" निकीतिन ने उसकी ओर तश्तरी बढ़ायी।

मुज़फ़्फ़र ने मांस का टुकड़ा ले लिया, पर खाया नहीं, बल्कि टुकड़ा अफ़नासी के मुंह के सामने पकड़े हुए कहता गया –

"बरसात ख़त्म होते ही हम महमूद गवान के यहां कोल्हापुर जायेंगे और वहां से काफ़िरों पर चढ़ाई करेंगे। मैं बुज़दिल नहीं हूं। मैं कैसे लौटूंगा यह तुम देख ही लोगे। दो साल लड़ूंगा फिर समुद्र के रास्ते बन्दर जाऊंगा। वहां बाबा हैं, जुलेखा है। मज़े में कटेगी ज़िन्दगी। ज़मीन खरीदूंगा, बाग़ लगाऊंगा और होर्मुज़ पानी पहुंचाया करूंगा। मेरे पड़ोसी की लड़की भी बड़ी हो रही है। बड़ी सुन्दर है वह। उसी से ब्याह रचाऊंगा। मेरे यहां आओगे न?"

"आऊंगा, ज़रूर आऊंगा ... तुम खाओ तो।"

मुज़फ़्फ़र ने कुछ घूंट और उतारे और ताली बजाने लगा –

"कहां हैं नाचनेवालियां?"



दो नर्तकियां हाज़िर हो गयीं। दोनों जवान थीं। रेशम की साड़ियां पहने हुए। दोनों छातियों पर लकड़ी के प्यालों की सी चोलियां कसी थीं। उनके बालों में क़ीमती रत्न जड़े थे या हो सकता है कि मामूली शीशे के टुकड़े। उनके दोनों हाथों में ढेरों चूड़ियां थीं और पैरों में पायल, जिसमें से हर गत पर बोल फूट रहे थे।

नर्तकियां संगीत की लय पर महेमानों के सामने नाचने लगीं। चेहरों पर चमकीली मुस्कान, बड़ी बड़ी भावपूर्ण आंखें और सुडौल शरीर। शरीर में लचक इतनी कि वे स्त्रियां नहीं बल्कि नागिनें लग रही थीं। उनके हाथों के सर्पिल हाव-भाव बड़े ही आकर्षक थे।

आख़िर कौनसे भाव छिपे हुए थे इस नृत्य में? नाच किधर जाने का आह्वान कर रहा था? शायद उसमें एकांगी प्रेम की व्यथा की व्यंजना थी, शायद मनुष्य को यह आश्वासन दिया गया था कि उसे संसार के सभी सुख प्राप्त होंगे। कौन जाने उसमें किस सत्य का उद्घाटन किया गया था। नाच उत्कट कामोत्तेजना, मनुष्य की जीवित आत्मा के करुण क्रन्दन और प्रेमी के प्रति विरहिणी की आकुलता का प्रतीक था।

नाच में अजीब जादू था। आंखें निर्निमेष उसपर गड़ी थीं। मन उसकी लय और गत के साथ साथ बह रहा था, हृदय में आशा जन्म ले रही थी और ऐसा लग रहा था कि दुनिया बहुत लम्बी चौड़ी है, उसमें परायेपन का लेश भी नहीं।

मुज़फ़्फ़र क़ालीन पर गिर गया। उसके माथे से शराब का साग़र टकराया और एक ओर लुढ़क गया। नशे में उसका हाथ चादर पर कुछ ढूंढता-सा लग रहा था कि सहसा उसकी उंगलियां थाली में रखी हुई राहत-लुकुम नामक मिठाई में सन गयीं। उसने शरमाते हुए भौंहें उठायीं, कुछ बड़बड़ाया और अपराधियों की तरह मुस्करा दिया।

नर्तकियां नाच रही थीं। वीणा के सुर हवा में बिखर रहे थे। अफ़नासी ने संकेत किया—

"बस करो!"

संगीत जहां का तहां रुक गया। थकी हुई नर्तकियां दीवाल के सहारे खड़ी हो गयीं। उनके मुंह पर नर्तकी-सुलभ मुस्कराहट नाच रही थी।

"जाओ!" अफ़नासी बोला, "जो कुछ यहां रह गया है उसे लेती जाओ।"

मुज़फ़्फ़र खर्राटे ले रहा था। दीवाल के उस पार पानी की रिमझिम फिर सुनाई पड़ने लगी थी। भारत की अखंड वर्षा शुरू हो गयी थी।

चौथा अध्याय

निकीतिन ने गिनकर देखा—वर्षा शुरू हुई थी २२ मई से और बराबर अगस्त तक होती रही थी। हां, कभी कभी पानी की झड़ी रुक जाती लेकिन फिर वर्षा होने लगती। जुन्नर जाते समय उसने देखा था कि भारतीय रबी की फ़सल काट चुकने के तुरन्त बाद से ही ख़रीफ़ की फ़सल काटने की तैयारी करते हैं। यद्यपि इस समय कीचड़ के कारण आना-जाना कठिन था फिर भी किसान ज़मीन

गोड़ते-बोते थे और मरियल बैलों के झुंडों को हांकते दिखाई देते थे। उसने लोगों से यह भी पूछा था कि यहां बोया क्या जाता है? उसे उत्तर मिला था–गेहूं, जौ और दालें।

मौसम ख़राब होने के कारण बाहर निकलने की भी इच्छा न होती, लेकिन जब दिन स्वच्छ होते तो वह सराय से निकल पड़ता और नगर में चहलक़दमी करने लगता। उन दिनों गर्मी थी। काली मिट्टी धूप में चमचमाती रहती। बिना खिड़कियों वाले मकानों के ऊपर से वर्षा से भीगते हुए पहाड़ दिखाई पड़ते। भारत की सर्दियों में तो रूस के वसन्त का मज़ा है। पृथ्वी कैसे लहलहाती है, जुन्नर के बाग़ों के पेड़ों में कैसे रस भर जाता है–यह सब कुछ उसने महसूस किया।

निकीतिन वसन्त पर लट्टू था। उसे इस मौसम की हर चीज़ पसंद थी। जुन्नर के मदरसों से आनेवाली नीरस ध्वनियां, धूप में चमकनेवाले सुनहरे गड्ढों को छपाक छपाक कर लांघनेवाले इत्तिफ़ाक़िया क़ाफ़िलों के गंजे ऊंट और बाज़ार में चलने-फिरनेवाले लोगों के पैरों से कुचले जानेवाले मिट्टी में पड़ी हुई गाजरों के अंकुर–सभी जैसे उसे मस्त किये दे रहे थे। जुन्नर के बाज़ार के बीचोंबीच, फ़ेंटों और पगड़ियों के ऊपर, तरकारियों और फलों की टोकरियों के ऊपर, शराब से भरे हुए चमड़े के थैलों के ऊपर और पानी में भीगे हुए गोबर के ऊपर उसने एक खम्भा देखा। खम्भे पर एक हिन्दू फ़क़ीर खड़ा ख़ड़ा अपने पार्थिव शरीर को नष्ट कर रहा था। कहते हैं कि वह पांच साल से इसी प्रकार खड़ा रहा है। अब तो उसे छठा साल चल रहा था। ऐसे लोग रूस में भी मिलते थे। निकीतिन के विचार कहां से कहां पहुंच गये–"कितनी उत्तेजना रही होगी उसमें कि इतने वर्षों में भी वह उसका दमन न कर सका।"

निकीतिन सिर झुलाता हुआ उसके पास से निकल गया।



एक मसजिद देखकर तो उसे और भी अधिक आश्चर्य हुआ। यह एक बड़ी और सीढ़ीदार मसजिद थी जिसपर खुदी हुई मूर्तियां टूट चुकी थीं। मसजिद में अटपटी-सी मीनार थी। स्पष्ट लग रहा था कि यह हिन्दुओं का मन्दिर था जिसे मसजिद बनाया गया था। उसने मन्दिर का एक चक्कर लगाया। पत्थरों की मजबूती और सुन्दरता, असाधारण रूप और आकार और शिलाओं से उसका निर्माण देख देखकर वह हैरान हो रहा था। कैसा बढ़िया निर्माण है!

निकीतिन ने असद-ख़ान को कई बार देखा था—झब्बेदार ख़ूबसूरत लाल वितान की नक़्क़ाशीदार पालकी में लोग उसे ले जाते थे। उसके आगे आगे लोगों को रास्ते से हटाते हुए उसके नौकर-चाकर दौड़ते-भागते थे। जब असद-ख़ान की सवारी निकल गयी तो निकीतिन ने उसके पीछे थूक दिया।

उक्त स्मरणीय सन्ध्या के बाद से मुज़फ़्फ़र के दर्शन दुर्लभ हो गये। उसका अधिक समय अपनी चाकरी में ही निकल जाता। हसन अपने उत्तर का इन्तज़ार कर रहा था। उसे अब भी आशा बनी हुई थी। निकीतिन ने उसे धीरज बंधाया—

"थोड़ा समय दो..."

किन्तु हसन के विषय में मुहम्मद से बातचीत करने का निकीतिन को कोई उपयुक्त अवसर न मिला। उसे प्रतीक्षा करनी थी।

हां, बाज़ार के फ़क़ीर की भांति ज़िन्दगी जहां की तहां नहीं रुकी। उसमें बराबर परिवर्तन होता रहा।

धर्मशाला के यात्रियों में अनेक फ़ारसी, खुरासानी और तुर्कमन थे, जो अफ़नासी की ही भांति पहली बार भारत आये थे।

ये तरह तरह के लोग थे। पर सभी जवान थे और सभी मज़बूत, और सभी की आंखों से हिंसा टपकती थी। एक ही कमरे में कई जने रह रहे थे। उनके पिचके हुए पेटों पर हमेशा पेटियां कसी रहती थीं। वे कम खाते थे किन्तु खाते थे नदीदों की तरह। सबके सब हमेशा साथ रहते थे। सबके सब रूखे थे। सबके सब जिज्ञासु।

और अगर कहीं क़ीमती जवाहरातों या राजा-महाराजों के महलों के खज़ानों की चर्चा होने लगती वे वहां ज़रूर पहुंच जाते और जैसे इस चर्चा का एक एक शब्द पी जाने को आतुर रहा करते।

शायद ही कोई दिन जाता हो जब उनमें से कोई किसी से तू-तू मैं-मैं न कर बैठता हो, किसी हिन्दू दूकानदार से हाथापाई न करता हो या पीकर अंड-बंड न बकता हो।

इनमें से एक आदमी से, दूसरों की अपेक्षा, अफ़नासी की अधिक गहरी छनने लगी।

यह आदमी हिरात का खुरासानी था। उसकी उम्र पचीस की थी। वह पांच वर्षों तक उज़ून-हसन की सेना में रहा था और अब उसने अपना गठीला बदन और युद्ध-कला बहामनी सुलतान के हाथ बेच डालने का निश्चय कर लिया था।

उसे घोड़े अच्छे लगते थे। वह हमेशा निकीतिन के घोड़े की तारीफ़ किया करता था जिसे सुनकर अफ़नासी का दिल थिरक उठता था।

यह खुरासानी प्रायः निःस्वार्थी था। हां, दिन हो या रात, वह खाने के लिए बाक़ायदा निकीतिन के पास आया करता था।

फिर थोड़े थोड़े पैसे भी उधार मांगता, परन्तु साथ ही वादा भी करता कि जैसे ही वह सुलतान की फ़ौज में भरती हो जायेगा, अपना क़र्ज़ चुका देगा। मुहम्मद, अफ़नासी पर हंसा करता—

"लगता है तुम अपनी फ़ौज अलग बना रहे हो," मुहम्मद चुटकी लेता, "मगर कहीं सुलतान को उसके फ़ौजियों से महरूम न कर देना!"

मुहम्मद ख़ुरासानी को कभी एक पैसा उधार न देता। उसका कहना था कि मैं अपना पैसा पानी में नहीं बहाना चाहता।

"बड़ा कंजूस है!" ख़ुरासानी ने निकीतिन से शिकायत की। किन्तु जब उसे मालूम हुआ कि खज़ानची का मालिक-अत-तुजार से अच्छा रब्त-ज़ब्त है तो उसने उसके बारे में अपनी राय बदल दी।

"होशियार आदमी है।" ख़ुरासानी बोला।

ख़ुरासानी को लोग मुस्तफ़ा कहकर पुकारते थे। वह खज़ानची की उपेक्षापूर्ण बातों से परेशान न होता, बल्कि उन्हें इस कान सुनता और उस कान निकाल देता। साथ ही वह उसका विश्वासपात्र बनने का भी प्रयत्न किया करता।

मुस्तफ़ा, मुहम्मद से सवाल कर बैठता—"सुना है हर फ़ौजी को मुफ़्त एक घोड़ा, हथियार और खाना मिलता है और ऊपर से तनख़्वाह। और हां, लड़ाई में जो माल हाथ लगता है उसका नव्वे फ़ीसदी फ़ौजियों में बांट दिया जाता है। ठीक है न यह?"

"बिल्कुल ठीक," खज़ानची ने जवाब दिया, "ऐसा न होता तो क्यों तुम्हारी सूरत यहां दिखाई देती?"

"मैं तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से आया हूं।" शान से ख़ुरासानी ने

जवाब दिया, "हम सब काफ़िरों को मिट्टी में मिलाने जा रहे हैं सुलतान के पास।"

"टिड्डियां हैं, टिड्डियां!" खज़ानची निकीतिन से कहने लगा, "इनके दिमाग़ों में यही बातें तो आती हैं – पेट में खाना ठूंसो, शराब पीकर अंड-बंड बको, शरारत करो। देख रहे हो न, ये लोग असद-खान की फ़ौज में नहीं जाते, जानते हैं कि सुलतान ज़्यादा पैसा देता है। ऊंह, खुदा का फ़ज़्ल!"

"और तुम क्या हो?" निकीतिन ने सोचा। वह जानता था कि मुहम्मद खुरासानी के स्वभाव से परिचित था किन्तु खुरासानी का दिल इतना साफ़ था और वह इतना स्पष्टवादी था कि निकीतिन उसपर लट्टू हो चुका था।

"उसे लफ़्फ़ाज़ी नहीं आती," निकीतिन ने सोचा और इसी लिए मुस्तफ़ा उसे प्यारा था। इन 'लालचियों' में से एक के प्रति निकीतिन के उदार होने का नतीजा यह हुआ कि उसके सभी साथी अफ़नासी की इज़्ज़त करने लगे। वे उसे देखकर सिर झुकाते, उसके घोड़े की देख-रेख करने में उसकी मदद करते और उसके लिए सब कुछ करने को तैयार रहते।

"तुम्हारे बारे में मैंने अपने साथियों से कह दिया है," एक बार मुस्तफ़ा ने उससे कहा, "हम सब बीदर चलेंगे। साथ साथ। हम सब तुम्हारी मदद करेंगे रास्ते में!"

"लो, दोस्त भी क्या बढ़िया मिला!" अफ़नासी ने मन ही मन सोचा।

खज़ानची क़हक़हा लगा रहा था –

"जलाले सुलतान यूसुफ़ कूच कर रहे हैं। काफ़िरो चौंको, सावधान हो जाओ!"

मुहम्मद रईसों की तरह रहता था। जुन्नर में उसके बहुत-से परिचित थे, वह किसी के साथ भी रह सकता था। निकीतिन जानता था कि ख़ज़ानची के कई मित्रों ने उससे अपने साथ रहने का अनुरोध भी किया था, पर ख़ज़ानची ने सराय से बाहर जाना न पसन्द किया।

"यहां किसी का अहसान तो नहीं!" ख़ज़ानची निकीतिन को समझाता, "पैसे देता हूं और जो चाहता हूं करता हूं।"

खज़ानची की एक ही कमज़ोरी थी – शराब। इस मामले में वह प्रायः अल्लाह का क़ानून तोड़ा करता था। जब वह नशे में धुत्त रहता, तो उसके कमरे के दरवाज़े पर उसके नौकर-चाकर डटे रहते और किसी को भीतर न जाने देते।

ख़ज़ानची को अफ़नासी के सामने कोई झिझक न होती। जब खज़ानची ख़ूब चढ़ा जाता, तो हाफ़िज़ की शायरी उसकी ज़बान से ढरकने लगती। इस शायरी में हुस्न की दास्तान होती और एक एक तिल पर बुख़ारा और समरक़न्द क़ुरबान किये जाते।

"यदि तुम खुद मौज नहीं कर सकते तो फिर सुलतान की सख़ावत, ताक़त, इज़्ज़त का मतलब ही क्या तुम्हारे लिए?" वह शराब के नशे में बड़बड़ा उठता, "हम सबको मरना है, इसलिए जल्दी जल्दी मौज लूटो, बहार लूटो..."

"मुस्तफ़ा भी यही कहता है!" निकीतिन ने हंसी उड़ाते हुए कहा।

"मेरे विचारों की उसके विचारों से तुलना मत करो!" ख़ज़ानची ने क्रोध में आकर कहा, "कुंदा और बांसुरी एक ही लकड़ी की होती हैं, पर कुंदे में से मीठा संगीत तो नहीं फूटता। उसके कोई रूह नहीं होती।"

"अच्छा, अच्छा! पियो भी! मेरे लिए सब बराबर है,"

निकीतिन न उत्तर दिया, "पर अगर ज़िन्दगी में मौज ही लूटना है, तो फिर ठोकर खाकर गिरना आसान है।"

परदेसी की आन्तरिक कशमकश समझकर खज़ानची झुंझला गया।

"देखूंगा तुम कैसे रहते हो!" वह क्रोध में आकर बोला, "मुझे अपने ईसामसीह के उसूल मत समझाओ। अगर तुम्हें अपने मज़हब में इतना यक़ीन है तो फिर मेरे पास क्यों बैठते हो? हमारे रीति-रिवाजों की इज़्ज़त क्यों करते हो? आं? फिर भारत से चले ही न जाओ!"

इन शब्दों ने निकीतिन की दुखती हुई रग छू दी थी। सचमुच चारों ओर परायापन था। पराये देवताओं की प्रार्थनाएं होती थीं। और उसमें कई बातों के विरुद्ध आवाज़ उठाने की शक्ति न थी। इसके विपरीत, उसे इस देश में, इसके वासियों में और उनके धर्म-कर्म में अधिकाधिक रुचि होने लगी थी।

खज़ानची मिकेशिन या काशीन से गया-बीता न था। पर उसका ज्ञान उनसे कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा था। जब वह देखता कि सूदखोर-व्यापारी मुसलमान दस्तकारों से उनकी दस्तकारियां मुफ़्त के दामों खरीद रहे हैं तो वह दस्तकारों का हमदर्द बन जाता। जनता में बड़े बूढ़ों की इज़्ज़त, हिन्दुओं की अतिथिप्रियता और फ़क़ीर – यह सचमुच आश्चर्य की बात थी।

भारत के नाच-गानों, अद्भुत मन्दिरों और शान्त और स्वाभिमानी किसानों में निकीतिन को भारत के समाज की महान आत्मा के दर्शन हुए और उसमें प्रवेश करने की उसकी उत्कंठा और भी प्रबल हो उठी।

मुहम्मद की कहानियों से उसे भारत की समृद्धि, वहां की विविध

रोचक बातों और उसके पास-पड़ोस के देशों के बारे में बहुत-सी उल्लेखनीय बातों की जानकारी हुई।

ख़ज़ानची उन दूसरे व्यापारियों की तरह न था जिन्हें सिर्फ़ अपने ही हानि-लाभ का ख्याल रहता है। उसने निकीतिन से लंका द्वीप की चर्चा की, जहां जंगली जातियां रहती थीं और जिसके एक पहाड़ पर आदम का एक पदचिह्न सुरक्षित था। उसने उसे दूरस्थ चीन के बारे में भी बताया जहां से चीनी मिट्टी के बरतन और हाथी-दांत की बनी अद्‌भुत चीज़ें आती थीं। उसने गोलकोंडा के हीरे की खानों और हिन्दुओं के धर्म का भी ज़िक्र किया।

"मैं बहुत समय से इसी मुल्क में रह रहा हूं," ख़ज़ानची ने कहा, "लेकिन भारत के सारे मज़हबों को मैं भी नहीं जानता। इन मज़हबों की तादाद बहुत ज़्यादा है–कोई विष्णु को मानता है, तो कोई बुद्ध को और कोई दूसरे देवताओं को... ये लोग सारी दुनिया को अपने ही देवता का अक्स समझते हैं। उनका ख्याल है कि आदमी एक ही बार नहीं पैदा होता, मरने के बाद उसकी आत्मा दूसरे शरीर–पशुओं तक के शरीर धारण करती है। इस्लाम सारे भारत में नहीं पाया जाता। हिन्दुओं के मन्दिरों को तो तुम खुद ही देखोगे। शायद ही तुम उनके धर्म को अच्छी तरह जान सकोगे। वे अपने धर्म-सिद्धान्तों को न सिर्फ़ हम लोगों से बल्कि अछूतों, दासों तक से छिपाकर रखते हैं।"

बेशक, निकीतिन ने यह अनुभव किया था कि जब भी कभी वह रास्ते में किसी हिन्दू से उनके रीति-रिवाजों की चर्चा छेड़ देता तो वे उससे कन्नी काट जाते और उसकी इन बातों का कोई जवाब न देते।

शायद इसका कारण यह रहा हो कि वे लोग उसे मुसलमान समझते थे।

"हां, कभी मैं उनसे खुलकर अपने बारे में कहूंगा तो शायद वे मेरा यक़ीन करेंगे और मुझसे खुलकर बातें करेंगे," उसने विचार किया।

निकीतिन धर्मशाला में ही रहा। धर्मशाला के निवास के दौरान में उसकी त्वचा फिर से सफ़ेद हो गयी। नतीजा यह हुआ कि उसके प्रति हिन्दुओं की उत्सुकता बढ़ती गयी। पर उसकी मुसलमानी सूरत-शक्ल और उसके संगी-साथियों के कारण, पहले की ही तरह, हिन्दू उससे खिंचे रहे।

एक बार अफ़नासी की भेंट एक हिन्दू से हो गयी। हिन्दू पत्थर के बाड़े की छाया में एक बरतन में भात लिये बैठा था। निकीतिन ने उसे पुकारा और उसने चौंककर अपना दुबला-पतला और भूख से कुम्हलाया हुआ चेहरा उसकी ओर घुमा दिया। फिर, भात ज़मीन पर फेंकते और पीठ सीधी करते हुए वह उठा और चला गया। उसने दुबारा निकीतिन पर नज़र भी न डाली। बाद में अफ़नासी को पता चला कि हिन्दू, परदेसियों के सामने खाना नहीं खाते और यदि मुसलमानों की निगाह खाने पर पड़ जाये तो फिर वे उसे छूते तक नहीं। उनकी दृष्टि में वह निकृष्ट हो जाता है। इस अजीब देश में उसे फूंक फूंककर क़दम रखना चाहिए।

किसी न किसी हिन्दू से बातचीत करने की उसकी बड़ी इच्छा थी, फिर भी जुन्नर में वह इसके लिए अवसर न निकाल सका।

"सुनो, खोजा," एक बार उसने ख़ज़ानची से पूछा, "कहते हैं कि यहां पहाड़ों के जंगलों में बन्दरों का बादशाह रहता है और उसकी पूरी फ़ौज उसके साथ रहती है। वहां बाज़ीगर घूमा करते हैं ... यह ठीक है?"

मुहम्मद अनिश्चित ढंग से बोल उठा –

"हां, मैंने भी सुना है... हिन्दू लोग इन बातों में यक़ीन करते हैं।"

"और तुम?"

"मैं क्या?" ख़ज़ानची सहसा क्रुद्ध हो गया, "तुमने हिन्दू बाज़ीगरों को देखा है? देखा है। जो कुछ वे करते हैं उसतक हमारा दिमाग़ तो नहीं पहुंचता। यह तय है कि वे अपने करिश्मे बिना शैतान की मदद के नहीं कर सकते। प्रेतों से उनकी दोस्ती है। वे कुछ भी कर सकते हैं..."

निकीतिन को उसके क्रोध का कारण समझ में आ गया। प्रेतों के बारे में कहना-सुनना ठीक नहीं। उन बहादुर 'लालचियों' तक की आंखों में उसने हिन्दू फ़क़ीरों के प्रति एक दक़ियानूसी भय देखा था। इतना ही नहीं, जब उसने स्वयं उनके करतब देखे थे तो भय की एक सिहरन उसके शरीर में भी दौड़ गयी थी।

बेशक, सबकी आंखों के सामने, बिना किसी सहारे के फ़र्श पर खड़े हुए डंडे पर चढ़ना, या ज़मीन में गड़े हुए चाकुओं पर नंगे सीने के बल कूद पड़ना मुमकिन हो सकता है, लेकिन फ़र्श पर से उठना और हवा में लटके रहना तो ज़रूर शैतान का ही काम है। यदि उसने ये सब बातें अपनी आंखों से न देखी होतीं तो इन बातों पर कभी विश्वास न किया होता।

हां, यह घटना उसने शाम के समय आग के प्रकाश म भयानक संगीत और हिन्दू हंसोड़ों की चीख़ों के बीच देखी थी। एक फ़क़ीर हाथ पर हाथ रखे ज़मीन से कई अंगुल ऊपर धीरे धीरे उठ गया और जैसे हवा में लटक गया। फिर वैसे ही धीरे धीरे ज़मीन पर आ गया।

इस बाज़ीगरी के बाद तो आदमी किसी भी बात पर विश्वास कर सकता है!

बेशक, इस देश की हर चीज़ अन्य देशों जैसी नहीं। मौसम, जानवर – गिलहरियां, वनों की भांति नगर की सड़कों पर भागे भागे फिरनेवाले नेवले, तरह तरह के केंचुलवाले सांप, जिन्हें मार डालना हिन्दू पाप समझते हैं और जिनके दिख जाने पर वे उनसे बचकर नकल जाते हैं, वन और लोगों के रीति-रिवाज – सभी कुछ निराले हैं।

और यदि उसे सोना और जवाहरात नहीं भी मिलते तो इस परीदेश की जानकारी प्राप्त करना और उसकी सच्चाई का अपने वतन में वर्णन करना ही कहां का कम है? निस्संदेह यह बहुत बड़ी बात है! अफ़नासी तेरा यहां आना बेकार नहीं गया।

"बरसात अब जल्दी ही खत्म होगी," मुहम्मद बोला, "मैं तो पहले कोल्हापुर में महमूद गवान के पास जाऊंगा। और तुमने क्या तय किया है?"

"मैं बीदर जाऊंगा। मुझे घोड़ा बेचना है। जल्द ही मैं फक्कड़ होनेवाला हूं।"

मुहम्मद दाढ़ी पर हाथ फेरने लगा।

"तुमने रूस के बारे में जो जो बातें बतायी हैं उनपर मैंने बहुत सोचा-विचारा। वहां तक पहुंचने में वक़्त कितना लगेगा?"

"जाने पर!" निकीतिन ने उत्तर दिया, "अच्छा क़ाफ़िला मिल गया तो एक साल लगेगा बशर्ते कि रास्ते में कोई लड़ाई न हो। वैसे तो खतरा है ही ..."

"एक साल? यह तो ज़्यादा नहीं हुआ। तुम्हारे यहां मुसलमानों पर जुल्म तो नहीं होते?"

"हमारे यहां विदेशों से आये हुए सौदागरों को पूरी आज़ादी रहती है। और भारतीयों से तो हमारे लोग अपनों की तरह मिलेंगे।

हमारे देशवासी अधिक से अधिक जानने के इच्छुक रहते हैं, लेकिन पता नहीं क्यों वे भारत के ही प्रति सबसे अधिक खिंचते हैं।"

"सुनो, यूसुफ़! मैं महमूद गवान से तुम्हारी बात चलाऊंगा। वह बहुत गुनी है। शायद हम एक क़ाफ़िला रूस भेजेंगे। तुम उसे रास्ता दिखाओगे न?"

"ज़रूर," अफ़नासी बोला, "मैं क़ाफ़िला ले चलूंगा।"

"अच्छी बात है। हसन तुम्हें बीदर तक ले जायेगा और मेरा घर दिखायेगा। तुम मेरे घर रह सकते हो। वहां मेरी वापसी का इन्तज़ार करना। मैं तुम्हें बताऊंगा कि महमूद गवान का क्या विचार है।"

"ज़रूर इन्तज़ार करूंगा... और हां, खोजा, हसन को मेरे हाथ बेच दो।"

"हसन को? उसे तुम मेरा तोहफ़ा समझकर ले लो न।"

"यह कैसे हो सकता है..."

"पैसा-वैसा मैं लूंगा नहीं। यह कोई खास तोहफ़ा नहीं है, यूसुफ़। तुम मुझे रूस का रास्ता दिखाओ तो जैसे सब कुछ मिल जायेगा।"

वर्षा शीघ्र ही समाप्त हो गयी। जिस कमरे में अफ़नासी सोता था, एक दिन प्रातःकाल वहीं उसके कान में पक्षियों का संगीत पड़ा। पहले भी जब सूर्य बादलों से झांकता था, तो ऐसे ही कलरव उसे सुनाई पड़ते थे, किन्तु इस संगीत में कोई ऐसा आकर्षण था कि वह तुरन्त उठ बैठा।

वह सड़क पर निकल आया। कल शाम तक बाड़े के पास लगे हुए आड़ू का जो वृक्ष धूमिल और नग्न-सा लग रहा था वह आज हरा-भरा था। नाजुक पत्तियों से प्रकाश-सा फूट रहा था।

उसकी आंखों के सामने गुलाब की एक कली चिटखी, उसमें से सोने का पराग चमका और भीनी भीनी गन्ध वातावरण में फैल गयी।

बांसों की बनी, भीगी हुई छत से अप्रिय-सी तेज़ आवाज़ सुनाई दे रही थी। एक मोर, सीना फुलाये और पंख फटकारे पंजे से ज़मीन कुरेद रहा था। एक गिलहरी अस्तबल में उछल-कूद मचा रही थी। शीघ्र ही उसके पास एक और गिलहरी आ गयी और दोनों एक दूसरे के पास आकर चिंचियाने लगीं।

घोड़े की तेज़ और उत्तेजित-सी हिनहिनाहट सुनाई पड़ रही थी।

उस दिन सराय से होकर धीरे धीरे एक क़ाफ़िला गुज़र रहा था – बड़े बड़े सींगों वाले भूरे बैलों से जुती हुई गाड़ियों पर भालों और तीरों से लैस, लंबे क़द के सांवले गाड़ीवान बैठे थे। उनके चेहरे विचित्र ढंग से रंगे हुए थे। गाड़ियों पर कुछ बच्चे भी थे, जो चिल्ल-पों कर रहे थे, और सफ़ेद और नीले दुपट्टे पहने और सिरों पर फूलों की वेनी लगाये औरतें रास्ते में एक दूसरे को पुकार-पुकारकर बतिया रही थीं।

"बंजारे आ गये!" मुहम्मद बोला, "इसके माने हैं, समय आ गया... तुम भी जा सकते हो इस क़ाफ़िले के साथ।"

"ये बंजारे कौन हैं?"

"घुमक्कड़ जातियां। आज यहां, कल वहां। राजे-महाराजों और खानों का सामान पहुंचाती रहती हैं। शायद ये लोग असद-खान द्वारा इकट्ठा की गयी मालगुज़ारी बीदर ले जा रहे हैं। तुम भी उनके साथ हो लो। वे यहां से कब कूच करेंगे इसका पता मैं लगा लूंगा।"

बंजारे तीसरे दिन रवाना हो गये। उनके साथ निकीतिन, कुछ व्यापारी और कई 'लालची' भी हो लिये, उनमें मुस्तफ़ा भी था।

जुन्नर छोड़ते समय अफ़नासी को एक बात का खेद बराबर बना रहा – वह मुज़फ़्फ़र से विदा न ले सका था। इन दिनों तुर्कमन दिखाई भी न पड़ा था।

"कोई बात नहीं, भगवान चाहेगा तो फिर मिलेंगे," जुन्नर की हद पर बसे हुए आखिरी मकान से गुज़र जाते हुए अफ़नासी ने सोचा।

"राम, राम, राम रे राम!"

"मैंने खुद ही देखा था!"

"उसे तो पत्थरों से मार डालना चाहिए!"

अफ़नासी ने सिर उठाकर सड़क से आती हुई आवाज़ें सुनीं। अभी अभी तो उसकी आंख लगी। अब लो! लेकिन आवाज़ें बराबर पास आती गयीं। उसकी उत्सुकता बढ़ गयी और आवाज़ें जैसे उसे अपनी ओर आकृष्ट करने लगीं। फिर वह बाहर चला गया।

सराय के सामने से लोग एक जवान औरत को घसीटे लिये जा रहे थे। उसके बाल बिखरे थे, कपड़े फटे थे और चेहरे पर जैसे कोई भाव न था।

"यह सब क्या है?" अफ़नासी ने हसन से पूछा।

हसन को कहीं से कुछ पता चला – औरत ने कोई जड़ी-बूटी बनाकर किसी रईस को ज़हर दे दिया है। अब लोग उसका इंसाफ़ करने के लिए उसे पकड़ लाये हैं।

निकीतिन ने सिर हिला दिया।

दो दिन पहले ही उसने बीदर में प्रवेश किया था। उससे पहले कोई भी युरोपीय इस नगर में न आया था। इन्हीं दो दिनों में उसने इतना कुछ देख लिया था कि कुछ पूछो नहीं। बेशक, नगर में उसने कोई बुराई न देखी थी – मज़बूत दीवालें, घरों के पास बगीचे, बड़ा-

सा बाज़ार और उसका एक भाग ऊपर से पटावदार। सड़कों के दोनों ओर ताड़ और सदाबहार पेड़ों की क़तारें। सफ़ेद बाड़ों पर चमकदार फूलों वाली लताएं लहरा रही थीं। नगर के पूर्वी भाग में – क़िला। ऊंची ऊंची, मनहूस-सी मीनारों के सामने खाई थी। खाई के शान्त जल में सफ़ेद कोकाबेलियां खिल रही थीं। खाई के उस पार पत्थर का एक संकरा-सा पुल था। क़िले में तीन फाटकों से होकर जाया जा सकता था। क़िले में चारों ओर पहरेदार और मुंशी थे। वहां केवल मुसलमानों को ही जाने दिया जाता था। वहां के मक़बरों के बड़े बड़े और रंगीन गुम्बदों और क़िले की दीवालों के ऊपर से दिखाई पड़नेवाले मंडपों और महलों के बरामदों से पता चलता था कि वहां विलासिता की कोई कमी नहीं। वहां सुलतान मुहम्मद-शाह रहता है, वहां महमूद गवान का महल है जो इस समय लड़ाई में गया है। वहां दूसरे राव-रईस रहते हैं।

ख़ज़ानची मुहम्मद का घर क़िले में नहीं, नगर में है। उसका मकान रईसाना ढंग का है। दुमंज़िला और बाग़-बगीचेवाला। बगीचे में एक बड़ा-सा तालाब है। तालाब में लट्ठों पर बनी एक संरचना है जिसपर शाखाएं और मिट्टी के ढेर हैं। इस मिट्टी में गुलाब और चमेली खिले हैं। तालाब के हरे-से जल में मछलियां और कछुए तैरते दिखाई पड़ रहे हैं। वहीं कमल पुष्प भी हैं। मकान में शीतलता है, सज-धज है। बगीचे से निकलनेवाली सुगन्ध तो उसमें और भी मादकता बिखेरती है। वहां स्नान के लिए संगमरमर के दो तालाब हैं जिनमें बहता हुआ शीतल जल रहता है। और यह जल उसमें आता है एक गहरे कुएं से बांस के पाइपों से होता हुआ...

शहर सचमुच बड़ा है, अद्भुत है!

यदि अफ़नासी, मुहम्मद के मकान में रहने लगे तो फिर उसे वीदर की शिकायत का मौक़ा ही न मिलेगा।

यद्यपि अफ़नासी ने खज़ानची का रईसाना मकान देखा था, फिर भी हसन और खज़ानची के दूसरे चाकरों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि अफ़नासी ने सराय ही में रहने का निश्चय किया है। वस्तुत: मालिक की अनुपस्थिति में उसके मकान में रहना निकीतिन को ठीक न जंच रहा था।

यहीं से सारी बात शुरू हुई। वह बाज़ार में चहलक़दमी करता हुआ, हरे, लाल और सन्तरई रंगों के रेशम, रंग-बिरंगे रत्नों, धातु की तश्तरियों, शस्त्रास्त्रों, काले पत्थर पर बने चांदी के कामवाले शृंगार के सामानों और सजावट की चीज़ों को देख ही रहा था कि सहसा उसे लगा जैसे पैसेवाली उसकी चमड़े की पेटी हलका गयी। उसे मुश्किल से ही पेटी पकड़ने का समय मिला था कि पीछे से किसी ने उसे ज़ोर से धक्का दिया और जब वह घूमा तो एक बदमाश बैंगन से भरी गाड़ी के नीचे ग़ायब हो गया। इतने ही में अफ़नासी की कमर में एक ठूंसा पड़ा और जब वह उस ओर देखने को मुड़ा तो किसी ने उसे पीछे से धक्का दे दिया। अब उसने अपनी पेटी खोल ली और इर्द-गिर्द जमा लोगों को कंधों से धकियाते हुए हटा दिया।

"हुं-ह! शैतान कहीं के!"

उसने अपनी पेटी लपेटी, उसे छाती के पास छिपाया और भीड़ से हटकर एक ओर चल दिया। उसके पीछे पीछे एक बुढ़िया भी, आंखें मिचकाती और बड़बड़ाती हुई, हो ली और उसे अपनी बेटी के पास आने का न्योता देने लगी –

"अजी मेरी बेटी तो सुलतानों के क़ाबिल है, सुलतानों के

क़ाबिल ! " बुढ़िया ने निकीतिन की ग्रास्तीन पकड़ी ग्रौर उसके साथ हो ली। ठीक है–होगी उसकी बेटी सुलतानों के क़ाबिल !

किसी तरह उस दलाल बुढ़िया से ग्रपना पिंड छुड़ाकर निकीतिन एक छोटी-सी दूकान पर पहुंचा ग्रौर कुछ मूल्यवान पत्थर मांग बैठा। भूरी दाढ़ी ग्रौर पोपले मुंहवाला एक मुसलमान उसे, बड़ी सतर्कता से, एक ग्रंधेरे कमरे में ले गया ग्रौर लोहे की पट्टियों से मढ़े हुए एक सन्दूक़ में से लकड़ी का एक डब्बा निकाला।

"हीरे! सबसे बड़े हीरे!"

फंसी कोई मुर्ग़ी! हीरे की जगह कांच!

ग्रफ़नासी देखते ही वहां से चला ग्राया।

ग्रौर ग्राज ही यह भी हुग्रा–लोगों ने उस ग्रौरत को पकड़ लिया था जिसने ज़हर दिया था...

हसन ने सारी कहानी कह सुनायी–एक रईस की बड़ी पत्नी छोटी से डाह करती थी ग्रौर पति को वश में करने के लिए उसे कोई दवा पिलाना चाहती थी। ग्राख़िर बड़ी पत्नी को एक डाइन मिल ही गयी। उसने उसे कुछ सोना दिया ग्रौर दवा की एक शीशी ख़रीद ली। शायद उस डाइन ने ही दवा बनाने में ग़लती की थी, शायद बड़ी बीवी ने, किसी पेय में पति को ज़रूरत से ज़्यादा दवा पिला दी थी–मतलब यह कि ख़ाविन्द साहब दुनिया से तशरीफ़ ले गये।

बीदर! बीदर! ग्रौर यहां की ग्रौरतें! हुं-ह!

इसी समय कहीं से ग्रहमद नाम का एक सहयात्री ग्रा टपका।

"सलाम!"

"सलाम! खोजा, घोड़ा बेच दिया?"

"तुम्हारे यहां घोड़ा बेचना! दलाल रोड़े ग्रटकाते हैं–दाम गिराने की कोशिश करते हैं!"

"तो अल्लाउद्दीन के बाज़ार में चलोगे ?"

"यह है कहां ?"

"बीदर से कोई अस्सी मील। वहां शेख़ अल्लाउद्दीन की यादगार में प्रति वर्ष एक बड़ा-सा मेला लगता है और तरह तरह का सामान बिकने आता है। हज़ारों घोड़े आते हैं वहां। चलोगे ?"

"अभी नहीं कह सकता..."

अहमद ग़ायब हो गया। उसके सफ़ेद सफ़ेद दांत और बाहर निकली हुई सी आंखों की नीली-सी सफ़ेदी झलक गयी।

सराय के सामने एक संकरी-सी गली थी जिसके छोर पर गवान-चौक दिखाई पड़ रहा था। चौक में लगभग बनकर तैयार हुए एक मदरसे की नुकीले सिरेवाली मीनारें और सुनहरे गुम्बद थे। मदरसा महमूद गवान की ओर से नगर को दिया गया एक उपहार था। मदरसे के लिए कोई तीन हज़ार दुर्लभ हस्तलिखित पुस्तकों की भी व्यवस्था की जा चुकी थी।

भवन-निर्माण के कारण चौक-भर में धूल बिखरी हुई थी। वहां से ऊंटों की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। अभी हाल ही में वे संगमरमर के बड़े बड़े चौकोर टुकड़े लाये थे।

बुरक़ा पहने हुए एक स्त्री हल्के हल्के क़दम बढ़ाती चली जा रही थी। उसने सिर घुमाकर निकीतिन पर एक नज़र डाली।

एक हिन्दू, जिसका सिर नंगा था, एक भारी-सी गाड़ी में धक्का लगा रहा था और पसीने पसीने हो रहा था।

कोने से तीन मोटे मोटे आदमियों की आकृतियां दिखाई दे रही थीं। वे हाथ झुलाते हुए कुछ चिल्ला रहे थे। उनकी कुछ बातें कानों में पड़ भी रही थीं—

"दस हाथ..."

"टसर... महंगा है... यह कोई रेशम नहीं है..."

लग रहा था – वे सौदा पटा रहे हैं।

पराया नगर। कैसे विचित्र है वह। बदमाशों की निर्लज्जता की कोई हद नहीं। बगीचे से निकलनेवाली शीतलता भी उसे शान्ति न दे रही थी।

"हसन! कैसा रहे अगर हम अल्लाउद्दीन के मेले में चलें? क्या वहां मैं अपनी लौंग और मिर्च बेच डालूंगा?"

"बेच डालोगे, खोजा।"

"और वहां नयी नयी चीज़ें भी देखने को मिलेंगी न?"

"ओह, वहां तो सारे भारत से सौदागर आते हैं। वहां देखनेवाली बहुत-सी चीज़ें हैं।"

"मेला जल्दी ही शुरू होगा?"

"परसों से।"

"यानी माता मरियम के पर्व पर। घूर क्यों रहे हो? माता मरियम यानी ईसा की मां। तुम्हें तो जानना चाहिए।"

"जानता हूं। ईसा का ज़िक्र क़ुरान में भी आया है।"

"ज़िक्र आया है! वह एक ही तो पैग़ंबर था। मुहम्मद तो तुम्हारी खोज है, है न?"

"खोजा, अगर पैग़ंबर एक था तो दूसरा क्यों न होता?"

"यही तुम सब कहते हो... खैर... तैयार हो जाओ। अल्लाउद्दीन के मेले में चलेंगे।"

"हम खज़ानची का इन्तज़ार नहीं करेंगे क्या?"

"कब आयेगा खज़ानची? घोड़े पर मैंने सौ रूबल लगा दिये हैं। रूबल... रूसी दीनार। समझे? अब इसे बेच ही डालना चाहिए।"

"आज चलें ?"

"तो क्या, तुम्हारे पास बहुत कुछ धरने-उठाने को है? लम्बी लम्बी तैयारियां करनी हैं क्या ?"

"नहीं, यह बात नहीं... अब दुपहर हो चुकी है!"

"गांवों में ज़्यादा खतरनाक पिस्सू हैं क्या ?"

हसन हंस दिया।

"खोजा, तुम होशियार आदमी हो। तुम्हारी इच्छा ही मेरे लिए क़ानून है। चलो।"

जब तक हसन अस्तबल से घोड़ा लाये लाये तब तक निकीतिन मसालों का गट्ठर ले आया और उसका इन्तज़ार करने लगा।

मेरी इच्छा क़ानून है। यह हसन भी बड़ा अजीब है। मैंने कह दिया – "तुम आज़ाद हो !" और वह सुनते ही जैसे घबड़ा गया और पहले तो कुछ न समझा, फिर कहने लगा – "नहीं, नहीं!"

और अगर विचार किया जाये तो हसन का कहना ठीक था – आज़ाद हसन जायेगा कहां? फ़ौज में भरती होगा? नौकरी करेगा? फ़ौज में जान का खतरा है और नौकर को कोई पैसा नहीं देना चाहता। देखो न बाज़ारों में कितने ग़ुलाम बिकते हैं। तो फिर जायेगा कहां? हसन के कोई सगे-संबंधी भी नहीं। उसे मुंह छिपाने को कोई जगह नहीं। उसे तो यही बदा है कि ज़िन्दगी-भर किसी की परछाई बना रहे। क्या हाल है बेचारे का!

आज तक हसन, निकीतिन के पास ग़ुलाम की हैसियत से ही रहा था। और यद्यपि अफ़नासी देखता था कि उसका ग़ुलाम कम खाता है और उसकी जेब का ख्याल रखता है, फिर भी पैसा तो खर्च ही होता है, खर्च ही होता है...

"लाओ घोड़ा! ओ-हो! चाहते ही नहीं कि कुछ लादा जाये? कोई बात नहीं, सह लोगे! अच्छा तो यह टेंटुआ तो न फटकारो...

बड़े शैतान हो। जब बेच दूंगा और कोई धमधूसर खान सवारी गांठेगा तो पता चलेगा। हां, मगर किया क्या जाये! हज़रते खान जहां बैठ गये – बैठ गये। अपने आप उतरेंगे भी नहीं। उसकी आदत ही डाल लो... अच्छा हसन चलो अल्लाह का नाम लेकर!"

और एक बार फिर अफ़नासी भारत की भूमि नापने चल पड़ा – खुश, अथक, दृढ़ निश्चयी, सतर्क, सावधान।

सितम्बर का महीना शुरू हो चुका था। पानी अब भी छुटपुट बरस जाता। पर सर्दी का मौसम निकट था। दिसम्बर दूर नहीं था। इस समय गर्मी और वर्षा के संकटपूर्ण महीनों के बाद साफ़ आसमान और मज़े मज़े चलनेवाली बयार आदमी को मस्त बना रही थी।

उसने दक्खन के पठारों पर निगाह डाली और उसे याद आ गयी अपने स्तेपी की। उसने पोपलर के बड़े बड़े वृक्षों को देखा और उसकी मातृभूमि उसकी कल्पना के आगे घूम गयी। उसके ओंठों पर एक मधुर मुस्कराहट फैल गयी।



खेतों में गेहूं के ऊंचे ऊंचे पौधे तथा भांग की हरी हरी पत्तियां और जौ की बालियां सिर उठाये खड़ी थीं।

वह देख रहा था और सोच रहा था – "एक ही जमीन, एक ही खान-पान, एक ही जैसे सुख-दुख – क्या रूसी, क्या भारतीय। काश सूखा न पड़ता तो ज़मीन कितना सोना उगल देती..."

एक गांव में उसने देखा – एक किसान अपने हल में नयी मूठ लगा रहा था। अफ़नासी ने घोड़ा रोका और किसान की मदद करने लगा। यह देखकर हसन को भी आश्चर्य हुआ। किसान तो पहले डर ही गया था। निकीतिन ने हल ठीक कर दिया और सुस्ताने बैठ गया। उसने पान निकाला और किसान की ओर बढ़ा दिया। उसने पान ले लिया और कुछ पूछने और कुछ समझाने लगा। किन्तु दोनों एक दूसरे की बातें न समझ सके। निकीतिन अपने रास्ते पर चल दिया, और किसान धूप से बचने के लिए माथे पर हथेली लगाये वहां कुछ देर तक खड़ा खड़ा, उसे जाते हुए देखता रहा – साश्चर्य और स्नेहपूर्ण आंखों से।

और न जाने क्यों निकीतिन का दिल भर आया...

चारों ओर दूर दूर तक फैला हुआ मैदान पशुओं और आदमियों से भरा पड़ा था। सभी ओर सफ़ेद, नीले और पीले तम्बू सिर उठाये खड़े थे। स्वच्छ आकाश में धुएं के बादल उठ रहे थे।

यहीं, बीदर से कोई अस्सी मील दूर, सारा भारत मौजूद था – पश्चिम से, नर्मदा के तटों से आये हुए पशु-विक्रेता, पूर्व से, दोआब से आये हुए जूट के सस्ते कपड़ों के व्यापारी, मलाबार के तम्बाकू-विक्रेता, शस्त्रनिर्माण के लिए प्रसिद्ध गुलबर्गा क्षेत्र के सौदागर, दिल्ली और विजयनगर के जौहरी, उत्तर-पश्चिम के सूखे क्षेत्रों से आये हुए धान और कपास के दलाल और ढाका और बनारस के पंडित, नागपुर और हैदराबाद के मुल्ले और सभी जगह के ग़रीब-गुरबे।

इस सारे के सारे जन-समूह में भिन्न भिन्न जातियों के, भिन्न भिन्न भाषाओं के, भिन्न भिन्न धर्मों के और भिन्न भिन्न रीति-रिवाजों के लोग आपस में बातचीत करते, बहस-मुबाहसे करते,

हां करते, ना करते, दूसरों के आगे हाथ फलाते, उपदेश झाड़ते, रोते-गाते, चिल्ल-पों करते, ठहाके लगाते। दस ही दिनों में ये सब लोग अपना अपना सामान ख़रीद-बेचकर और तरह तरह की सूचनाएं इकट्ठा कर, देश के भिन्न भिन्न भागों की ओर चल देंगे।

हसन हमेशा घोड़े के पास बैठा रहता और अफ़नासी बाज़ार के चक्कर लगाया करता। वह घोड़ा बेचने में जल्दी न करना चाहता था। मेला समाप्त होते होते उसकी क़ीमतें बढ़ जाने की सम्भावना थी।

महीन से महीन रेशम, हाथी-दांत की खुदाई की बढ़िया से बढ़िया चीज़ें, दुर्लभ रत्न – यहां सभी कुछ मिल सकता था। इतनी दूर का सफ़र करके उसे कोई पछतावा न रह गया था।

उसने हिसाब लगाया कि वह औसत दाम पर अपने मसाले और घोड़ा बेचकर दस ऐसे रत्न खरीद सकेगा जिनका कभी वह स्वप्न तक न देख सकता था।

इन रत्नों का मूल्य, रूसी मूल्य की तुलना में, इतना कम था कि उसे आश्चर्य हो रहा था।

"ये जवाहरात आते कहां से हैं ?" उसने उस हिन्दू से सीधा-सादा प्रश्न किया जिसने उसे सुलेमानी पत्थर दिखाया था।

हिन्दू ने उत्तर दिया –

"मैं नहीं जानता। मैंने ख़ुद ये चीज़ें ख़रीदी हैं," वह हंस दिया। ऐसा लग रहा था जैसे वह बताना ही नहीं चाहता।

अफ़नासी विचारमग्न हो गया। उसने सुन रखा था कि गोल-कोंडा और रायचूर में सुलतान की हीरों की खानें हैं और देश के दूर दक्षिण में विजयनगर राज्य में सोने की जन्म-भूमि। पर खानों में किसी को जाने की आज्ञा नहीं। और सोने तक पहुंचना भी

आसान नहीं। "लेकिन ये जवाहरात मिलते कहां हैं?" सैकड़ों बार तो यह प्रश्न उसने अपने आपसे किया होगा, "यह जानना चाहिए। और जब जान लूंगा तो वहां ज़रूर जाऊंगा।"

अन्ततः उसने चौल से खरीदी हुई लौंग और इलाइची बेच डाली। किन्तु घोड़े के लिए उसे कोई मौक़े का ख़रीदार न मिला। ऐसे बहुत-से थे जो घोड़ा खरीदकर उसे ऊंचे दामों पर बेचना चाहते थे।

पांचवें दिन सायंकाल थका-मांदा अफ़नासी घर की ओर – उस पुरानी झोंपड़ी में जहां वह और हसन सोये थे – लौटा। एकाकी मकानों की खिड़कियों और दरवाज़ों के छेदों में से रोशनी और तापने के लिए जलायी गयी आग के हिलते हुए धब्ब-से दिखाई पड़ रहे थे। दूर शहनाई और नगाड़े की आवाज़ सुनाई दे रही थी – कहीं खुशियां मनायी जा रही थीं। कोई रात की चिड़िया पंख फड़फड़ाती हुई उड़ रही थी। पास ही कहीं से उसकी बोली सुनाई पड़ी। यह पक्षी मौत का हरकारा है। कभी उसने बीदर के मार्ग में भी उसकी चीख़ सुनी थी। उस समय बंजारे चिन्तित हो गये थे, और निकीतिन ने पूछा था –

"आखिर क्यों?"

लोगों ने उसे समझाया था –

"यह उस आदमी के मकान पर बैठता है जो जल्दी मरनेवाला है।"

"तो फिर उसे मार क्यों नहीं डालते?"

"नहीं, ऐसा नहीं करना चाहिए। उसके मुंह से आग निकलती है। जो आदमी उसे मारने को बढ़ता है उसके हाथ जल जाते हैं।"

जिधर से आवाज़ आ रही थी निकीतिन, डरकर, उधर ही देखने लगा। शायद वह उसी की जान लेने आया हो? किन्तु

चिड़िया चुप हो गयी और फिर उसकी आवाज़ न सुनाई दी। वह कहीं उड़ गयी थी।

जो भी हो वह चिन्तित हो उठा था। उसे लगा जैसे रात में भूत नाच रहे हैं, रहस्यमयी परछाइयां डोल रही हैं, अस्पष्ट-सी आवाज़ें सुनाई पड़ रही हैं और उसके मस्तिष्क में एकान्त जीवन के संबंध में तरह तरह के विचार उठने लगे। उसका हृदय यह अनुभव कर मसोस उठा कि उसे ज़िन्दगी में प्यार और मुहब्बत नहीं मिली, शान्ति से घर में बैठने को नहीं मिला और सारी ज़िन्दगी वह आनेवाले कल की चिन्ता करता रहा। क्या ऐसा कोई भी दिन गया था, जब उसने यह न सोचा हो कि कल कोई मुसीबत न खड़ी हो जाये? शीघ्र ही वह चालीस का हो जायेगा। अब समय आ गया है जब उसे एक जगह क़दम जमाने चाहिए और जमीन नापना बन्द करना चाहिए। अब वह ज़्यादा सफ़र नहीं कर सकता। बरसात में उसके पैर दर्द करने लगते हैं। पैरों में पहली सरदी उसे तब लगी थी जब वह नोवगोरद पर की गयी चढ़ाई में शरीक हुआ था। जब वह तेज चलता है तो आराम से सांस भी नहीं ले पाता। जवानी जा रही है, जा रही है जवानी।

उदासमान, वह जलती हुई आग की ओर बढ़ा। वहां हसन किसी के साथ बैठा था। अफ़नासी को उस अजनबी की पीठ-भर दिखाई दे रही थी लेकिन उसके कपड़ों से और साथ ही कुछ अन्य निश्चित चिह्नों से उसने समझ लिया था कि यह कोई हिन्दू है। हसन और वह हिन्दू बातचीत करते करते यह भी देखते रहे थे कि देगची में कोदों कैसे पक रहा है। अफ़नासी आग के इर्द-गिर्द पड़नेवाले प्रकाश के घेरे में चला गया। हसन ने पीछे घूमकर देखा, हिन्दू उछलकर झुका और हाथ जोड़ दिये।

हिन्दू की सूरत-शक्ल पहचानी-सी लग रही थी। अफ़नासी के माथे पर कुछ शिकनें पड़ गयीं, मानो सोच रहा हो इसे कहां देखा है।

"खोजा यह गुरु है," दांत निकालते हुए हसन बोला, "वही गाड़ीवान ... जो हुसेन के साथ था ... इत्तफ़ाक़ से मुझे मिल गया।"

गुरु ने अपनी मुसीबतों की दास्तान बतानी शुरू की। घाटों में उस चिरस्मरणीय रात के बाद बेचारा गाड़ीवान जिधर सींग समाया भाग निकला। चौल वह लौट नहीं सकता था – लौटता तो भूखे परिवार के लिए और एक बोझ बन जाता। सभी तो उसपर आशा लगाये थे। सोच रहे थे गुरु आयेगा – पैसा लायेगा। और वह तो अपने बैलों तक से हाथ धो बैठा था। यही बैल उसके परिवार की अन्तिम आशा थे। निश्चय ही उसके किसी संबंधी ने कभी किसी सर्पराज को रुष्ट किया होगा, वरना सांप उसके ही बैलों को क्यों डराता? गुरु दुखी था, निराश था। यह तक उसे मालूम न था कि अब क्या करना चाहिए। वह तीन दिनों तक दक्षिण की दिशा में अकेला पहाड़ी रास्तों की ख़ाक छानता रहा – एकदम भूखा, ख़ाली पेट। रातें वह या तो कन्दराओं में बिताता या पेड़ों पर। फिर वह मैदानों में आ गया, जहां गांव शुरू हो गये थे। यहां लोग उसे कुछ खाने-पीने को दे दिया करते। पानी-बूंद के दिन थे। चलना-फिरना दूभर हो रहा था, किन्तु गुरु को तो रास्ता काटना ही था – उसकी ज़रूरत थी किसे? लोगों के लिए यों ही ज़िन्दगी पहाड़ बनी हुई थी फिर किसी आवारा को कौन खिलाता? और वह चलता रहा। एक दिन ऐसा हुआ – यह कोई तीन हफ़्ते बाद की बात है – कि उसे एक छोटे-से गांव के पास बनी मचान में रात काटनी पड़ी।

भोर होते होते गाँव में सुलतान की फ़ौज ने हमला बोल दिया। अपनी मचान पर से गुरु देख रहा था कि फ़ौजवालों ने वहां के निवासियों के हाथ-पैर बांधे, मवेशियों को हंकाया और उनके झोंपड़ों में आग लगाकर अपने रास्ते चले गये।

गुरु चूहे की तरह चुपचाप बैठा रहा। वह डर रहा था कि कहीं फ़ौजी उसे भी न देख लें। किन्तु जल्दी में किसी की निगाह उसपर न पड़ी। फिर वह मचान पर से कूद पड़ा। वह बराबर यह सोचता रहा कि इस नर्क से शीघ्र से शीघ्र निकले। उसने देखा कि हड़बड़ी में कुछ मवेशी इधर-उधर भी छिटके। उसने यह भी ग़ौर किया कि जंगल में, एक डरे हुए बैल की दुखी आंखें किसी आशा मूं उसकी ओर देख रही हैं। जब पशु आपकी पनाह में आने के लिए आपकी ओर दृष्टि लगाये हो तो आप उसकी ओर से आंखें मूंदकर जा भी कैसे सकते हैं? गुरु बैल को पुकारने लगा और वह गुरु की ओर बढ़ आया... अब क्या किया जाये? कुछ दिनों तक तो गुरु भस्म मकानों की राख के पास इस इन्तज़ार में बैठा रहा कि बैल का मालिक लौटे और वह] बैल उसे सौंप दे। किन्तु कोई नहीं आया। फिर यह न जानते हुए, कि उसे सुखी होना चाहिए या दुखी, वह अपने आगे आगे बैल को हंकाता हुआ ले गया... और जो पहला गांव पड़ा वहीं एक ब्राह्मण से सारी कथा कह सुनायी। उसने पूछा कि क्या वह इस बैल को अपने पास रख सकता है? इसे चोरी का तो न समझा जायेगा? ब्राह्मण देर तक सोच-विचार करता रहा, फिर बोला कि इस बैल को उसे देना चाहिए। भगवान ने बैल को गुरु के पास भेजा था और गुरु को ब्राह्मण के पास। इसका अर्थ यह हुआ कि बैल ब्राह्मण के पास रहना चाहिए। बात साफ़ थी, फ़ैसला भी ठीक ही था। उसके विरुद्ध गुरु आपत्ति ही

क्या करता, यद्यपि बैल को छोड़ने में गुरु को दुख जरूर हो रहा था। हिन्दू ने भगवान की इच्छा के आगे सिर झुकाया और प्रसन्नतापूर्वक उसे पूरा किया। पर पहले की तरह फिर उसके सामने यही समस्या बनी रही कि वह क्या करे।

गुरु की भक्ति से इन्द्र देव प्रसन्न हो गये। उसी दिन उस गांव से होकर दक्षिण के कई व्यापारी गुज़र रहे थे। उनमें से एक बड़ी मुसीबत में पड़ गया था – उसके एक गुलाम को सांप ने डस लिया था और गुलाम वहीं, उसी गांव में, मर गया था।

व्यापारी के पास तीन गाड़ियां थीं और हर गाड़ी में दो दो बैल जुते थे। अकेले तीनों गाड़ियां संभालना उसके बूते के बाहर था। उसने गुरु को अपने साथ रख लिया और उसे खाना देने का वचन दिया।

इसी व्यापारी के साथ गुरु यहां आ गया। यह व्यापारी बड़ा दयालु है। उसने गुरु से कहा है कि यदि बीदर जाने पर उसे सफलता मिली तो वह एक बैल गुरु को दे देगा।

"हां, अगर भगवान ने मदद की," गाड़ीवान ने गहरी सांस लेते हुए कहा, "तब मैं भी घर लौटूंगा..."

चारों ओर रात की कालिमा फैल रही थी। कोदों पक चुका था। हसन ने देग़ची उतारी और निकीतिन के आगे रख दी। खिचड़ी में से स्वादिष्ट-सा धुआं उठ रहा था।

"गुरु को भी दो न," निकीतिन ने धीरे से कहा।

"रात है," हसन ने आपत्ति करते हुए संक्षेप में कहा, "हिन्दू रात में नहीं खाते।"

"तुम दो तो। शायद खा ले..."

किन्तु गुरु ने खाने से इन्कार कर दिया। खाना तो दूर उसने उसकी ओर ताका तक नहीं। उसके चेहरे को देखकर अफ़नासी ने समझ लिया था – इतनी देर से खानेवालों के प्रति गुरु की अच्छी भावना नहीं है, किन्तु चुप वह इसलिए रह गया कि वह अफ़नासी की इज़्ज़त करता था।

"जो रात को खाना खाता है, उसपर काली का कोप पड़ता है," हिन्दू की ओर देखते हुए हसन ने उसका उपहास-सा करते हुए, भरे हुए मुंह से कहा। "वह पागल भी हो सकता है ..."

गुरु ने कोई उत्तर न दिया। पर उसके चेहरे से लग रहा था जैसे वह अपने को संयम में रख रहा है। वह सिर झुकाते हुए उठ खड़ा हुआ।

"ज़रा ठहरो," अफ़नासी बोला, "तुम्हारे व्यापारी का क्या नाम है?"

"भावलो, सरकार!"

"वह काहे का व्यापार करता है? उसके पास जवाहरात नहीं रहते क्या?"

गुरु उत्तर देने में कुछ हिचकिचाया, फिर सिर हिला दिया – "हैं। जवाहरात हैं उसके पास! हां हैं ..."

हिन्दू व्यापारी भावलो अफ़नासी को एक विचित्र-सा आदमी जान पड़ा। वह चालीस से ऊपर का हो चुका था। लम्बा क़द। दुबला-पतला। भूरे, छोटे, घुंघराले बाल। पीठ कुछ कुबड़ी जैसी। किन्तु न जाने क्यों अफ़नासी को ऐसा लगता कि भावलो हर क्षण अपने को तथा अपने कंधों को सीधा करने को है। जब गुरु अपने साथ अफ़नासी को लेकर आया तो भावलो की अधखुली पलकों और



सांवले चेहरे से कोई भी भाव प्रकट नहीं हो रहे थे। व्यापारी ने उदासीनता से सिर हिलाया और चुप रह गया।

निकीतिन ने तुरन्त काम की बात छेड़ दी। उसे जवाहरात चाहिए। गुरु ने बताया है कि आप के पास जवाहरात हैं। शायद आप मुझे अपना माल दिखायें।

भावलो के जुड़े हुए से सूखे ओंठ खुले। हां जवाहरात हैं तो। लेकिन अच्छा माल तो बिक चुका है। जो रह गया है वह बस ऐसा ही है कि शायद ही पसन्द आये।

यह भी एक विचित्र जवाब था। कहीं कोई अपने दही को भी खट्टा कहता है?

"मैं देखना चाहता हूं," निकीतिन ने उत्तर दिया।

भावलो उठा, खेमे के कोने में गया और एक डब्बे में से जवाहरात का बटुआ निकाल लाया।

बटुए में से उसने कार्नेलियाई पत्थर, नीलम और सुलेमानी पत्थर निकाले। सचमुच ये पत्थर न बड़े ही थे और न साफ़ ही।

अफ़नासी ने सभी पत्थरों को ध्यान से देखा और उन्हें बड़ी सावधानी से व्यापारी की ओर बढ़ाते और एक गहरी-सी सांस लेते हुए कहने लगा–

"बेशक इन्हें मैं न खरीदूंगा।"

व्यापारी ने उदासीनता से सारे पत्थर फिर अपने बटुए में रख लिये।

पता नहीं क्यों अफ़नासी को ऐसा लगा जैसे भावलो के पास अच्छे पत्थर तो हैं किन्तु वह उन्हें उससे छिपाना चाहता है।

"मेला भी बस बुरा ही रहा," खेद-सा प्रकट करते हुए निकीतिन बोला, "जो माल भी ढूंढता हूं नहीं मिलता। ऐसे में लौट जाने में भी कोई हर्ज नहीं।"

व्यापारी ने उत्तर न दिया।

"अच्छा, यह तो बतायें कि यह पत्थर आप लाते कहां से हैं?" भावलो को पैनी दृष्टि से देखते हुए अफ़नासी ने पूछा, "कहां से लाते हैं? ये जगहें दूर हैं क्या?"

"दूर," अनमनेपन और उदासीनता से व्यापारी ने उत्तर दिया। उसकी सूरत-शक्ल से ही पता चल रहा था कि इस बातचीत का कोई नतीजा न निकलेगा।

"यहां जिसे देखो यही जवाब देता है। और मुझे जानना है। मैं यहां का रहनेवाला नहीं। तुम शायद मुझे मुसलमान समझ रहे हो। लेकिन मैं मुसलमान नहीं। मैं दूर देश से आया हूं और तुम्हारे देश के बारे में कुछ भी नहीं जानता।"

व्यापारी ने सिर उठाया। उसकी निगाहों से सतर्कता टपक रही थी। जिस समय से भावलो अफ़नासी से मिला था उस समय से अब, पहली बार, भावलो ने उसकी ओर ध्यान से देखा था।

"मैं तुम्हारे शब्दों का मतलब नहीं समझा!" आखिर उसने जवाब दिया, "मैं हूं एक मामूली सौदागर। वेद पुरान मैंने पढ़े नहीं। लेकिन यह जानता हूं कि बिना भगवान की मर्ज़ी के पत्ता तक नहीं डुलता। कौन ठीक है, कौन ग़लत इसमें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं।"

अफ़नासी ने खिजलाते हुए मुंह सिकोड़ा।

"यहां के आदमी बड़े शक्की हैं।" उठते हुए वह बोला, "नहीं बताना चाहते, न बताओ। मैं खुद ही पता चला लूंगा ..."

हसन को अफ़नासी की यह विफलता देखकर ज़रा भी आश्चर्य न हुआ।

"हम बीदर लौट चलें।" हसन ने सलाह दी, "वहां माल आसानी से ढूंढा जा सकेगा। फिर वहां चैन तो है। कहते हैं यहां सुबह कोई तेंदुआ एक बैल को उठा ले गया था। और तुम रात में चलते-फिरते हो। यह ठीक नहीं। तुम भारत को नहीं जानते। यहां क़दम क़दम पर खतरे हैं।"

"फिर हम लौट ही चलें," सोचते हुए निकीतिन ने जवाब दिया, "जो कुछ देख चुका हूं वही काफ़ी है मेरे लिए।"

अब उसे यह आशा न रह गयी थी कि उसे किसी नयी बात का पता चलेगा, उसे कोई ऐसे आदमी मिलेंगे जो उसका विश्वास करेंगे। शाम होने से पहले पहले वह दरी पर लेटा और हसन का गाना सुनने लगा। उसने सोने का स्वांग रचा। तभी उसे कोई आता हुआ दिखाई दिया और किसी के अभिवादन की परिचित-सी आवाज़ सुनाई पड़ी।

अफ़नासी उठकर खड़ा हो गया। उसके सामने गुरु का मालिक भावलो खड़ा था ...

भावलो धीरे धीरे, शब्द चुन चुनकर बोल रहा था। "विदेशी के आगे गुनहगार हूं। भगवान मेरी नासमझी क्षमा करे। गुरु ने मुझे चौल के रास्ते की घटना और असद-खान की नाराज़ी की बात बता दी है। और ये बातें उसे तुम्हारे गुलाम – हसन – से मालूम हुई थीं।"

भावलो को पछतावा हो रहा था कि जो परदेशी मेरे आगे अप ने दिल की बात भी खोलकर रखना चाहता हो उसके प्रति मेरे

दिमाग़ में सन्देह उत्पन्न हुआ। यह मेरे लिए शर्म की बात है। मैं अपने पाप का प्रायश्चित करने को तैयार हूं।

"कैसा पाप!" निकीतिन बोला, "बैठो, तुम मेरे मेहमान हो।"

निकीतिन के लिए यह रात चिरस्मरणीय रात थी। अफ़नासी ने भावलो को रूस, तातारों से युद्ध और अपने मार्ग की कहानियां सुनायीं। व्यापारी एक एक बात को, जैसे उत्सुकता से, पीता जा रहा था। कभी कभी वह बीच में कुछ पूछ भी बैठता, किन्तु हर बात उसे आश्चर्य में डुबोये दे रही थी। और यद्यपि खुद उसने अफ़नासी को कोई जवाहरात नहीं दिये फिर भी उसने वादा किया कि वह उसकी मुलाक़ात बीदर के मशहूर जौहरी कर्ण और उन दूसरे हिन्दुओं से करा देगा जिन्हें माल की अच्छी परख है, जो बाज़ार जानते हैं।

"तुम्हें हमारा देश पसन्द आयेगा!" उसने कहा, "और हमारे लोग भी। बस ज़रा मुसलमानों से बचे रहना।"

भावलो के जाने के बाद हसन आग के पास आया और मन ही मन बड़बड़ाने लगा।

"क्या बात है?" निकीतिन ने पूछा।

"ख़ोजा, तुम्हें सीख देने का तो मुझे कोई हक़ नहीं," विनम्र बनने की कोशिश करते हुए हसन बोला, "हां, हिन्दुओं से बचकर रहना चाहिए।"

"मुझे यह सब समझाना तुम्हारा काम नहीं!" निकीतिन ने उसे रोका, "क्या करना चाहिए यह मैं ख़ुद जानता हूं।"

हसन, चिढ़ा हुआ सा, देग़ची पर झुक गया। पर अफ़नासी को अपनी रूखी बात का कोई मलाल न हुआ। मेरे साथ रहना है तो उसे सब कुछ बरदाश्त करना होगा। दोनों चुपचाप सो गये।

दूसरे दिन वे भावलो के साथ बीदर की ओर चल पड़े।

बीदर में भावलो बहुतों को जानता था। उसने कुछ हिन्दू परिवारों से निकीतिन का परिचय भी करा दिया था।

भावलो ने जिस पहले ग्रादमी से निकीतिन का परिचय कराया था वह कर्ण नाम का एक बूढ़ा था जो रत्नों की कटाई में उस्ताद ग्रौर हीरों पर पालिश करने की कला में सलतनत-भर में मशहूर था।

"यह व्यक्ति नूरा नाम की प्रसिद्ध सुन्दरी का सगा भाई है। जानते हो नूरा के ही लिए रायचूर में खून की नदियां बही थीं," भावलो बोला, "कोई पचास वर्ष से ग्रधिक हुए कि कर्ण का परिवार दक्षिण में, मुद्‌गल में रहता था। उस समय नूरा चौदह की थी ग्रौर कर्ण था छः साल का। बीदर का तरफ़दार कुतुबुद्दीन नूरा को ग्रपनी बीवी बनाना चाहता था। ग्रगरचे कुतुबुद्दीन मुसलमान था ग्रौर नूरा हमारे पूर्वजों के देवी-देवताग्रों को मानती, उसने नूरा को बचाने ग्रौर उसे ग्रपनी रानी बनाने का निश्चय किया ग्रौर मुद्‌गल पर चढ़ाई कर दी, महाराजा के सैनिक शेर की तरह लड़े। लेकिन हुग्रा यह कि किसी ने मुसलमानों को महाराजा के ग्राक्रमण की पूर्वसूचना दे दी थी ग्रौर वे मोर्चा लेने को तैयार हो गये थे। उन्होंने मुद्‌गल की रक्षा की ग्रौर नूरा ग्रौर उसके परिवार को गुलबर्गा भेज दिया। वहां नूरा को स्वयं फ़ीरोज़-शाह के हरम में दे दिया गया। फ़ीरोज़-शाह ने उसे देखा ग्रौर उसपर लट्टू हो गया। कुतुबुद्दीन ने इसका बदला लेना चाहा। विजयनगर राज्य से लड़ाई थी, फिर भी यह विवाह हो ही गया होता। तरफ़दार जो चाहते थे कर लेते थे।"

भावलो ने मुंह सिकोड़ा ग्रौर चुप हो गया। वह कुछ सोचने लगा था।

"फिर क्या हुग्रा?" निकीतिन ने पूछा।

भावलो माथा खुजाने लगा।

"हां... लेकिन नूरा की सुन्दरता की ख़बर विजयनगर तक पहुंच चुकी थी। वहां यह ख़बर पहुंचानेवाले थे चारण ग्रौर सौदागर। विजयनगर का महाराजा नहीं चाहता था कि हिन्दू लड़की किसी ग्रत्याचारी के बच्चे को जन्म दे। बराबर लड़ाई चलती रही। ऐसी ही एक भिड़न में तरफ़दार ने गद्दारी की। फ़ीरोज़-शाह को तलवार का एक वार लगा था लेकिन पता नहीं क्या चमत्कार हुग्रा कि उसकी जान बच गयी... ग्रफ़सोस! इस पियक्कड़ ग्रौर ऐयाश बादशाह को तो मौत के घाट ही उतार देना था..."

"तो फिर..."

"फिर क्या! दो साल तक लड़ाई चलती रही। मुसलमानों ने ख़ूब मार-काट की ग्रौर रायचूर ख़ाली हो गया ..."

"ग्रौर नूरा?"

"कौन जाने बेचारी का क्या हुग्रा। उसके बारे में फिर किसी ने कुछ भी न सुना। कर्ण का पिता ग्रपने परिवार के साथ गुलबर्गा में रह गया। गुलबर्गा उस समय राजधानी थी। जब ग्रहमद-शाह ने बीदर को ग्रपनी राजधानी बनाया उस समय वह वहां ग्रपने ग्रच्छे से ग्रच्छे कारीगरों को भी ले गया था। तभी से ये लोग यहीं रह रहे हैं। सिर्फ़ कर्ण का सबसे बड़ा पुत्र राजेन्द्र दिल्ली चला गया जहां उसे मार डाला गया।"

"कैसे?"

"उसने एक सौदागर पर विश्वास किया था। दोनों साथ साथ काम करते थे लेकिन जब हिसाब-किताब का वक़्त ग्राया तो उसने राजेन्द्र पर यह ग्रभियोग लगाया कि उसने इस्लाम की मुख़ालफ़त की है। इसपर राजेन्द्र की खाल खींच ली गयी ..."

भावलो के शब्दों से घृणा ग्रौर ग्रान्तरिक व्यथा ग्रभिव्यक्त हो

रही थी। उसका चेहरा पत्थर जैसा कठोर हो गया, मुट्ठियां भिंच गयीं और अंगुलियों के जोड़ सफ़ेद पड़ गये।

इस बातचीत से निकीतिन समझ रहा था कि स्वयं भावलो को भी इससे कम दुख नहीं हुआ है। लेकिन इसके बारे में भावलो ने कुछ भी न कहा और अफ़नासी ने भी कुछ न पूछा। क्यों छुये वह उसकी दुखती हुई रग?

कर्ण की कथा सुनकर अफ़नासी उसे जिज्ञासा के साथ देखने लगा। वह उस जौहरी से कुछ असाधारण बातें और बहादुरी के कारनामों की दास्तान भी सुनना चाहता था। जौहरी के मुरझाये हुए चेहरे पर उस अनुपम सौन्दर्य के कुछ चिह्न अब भी दिखाई दे रहे थे, जो जवानी में अकेले उसकी बहन के ही हिस्से में नहीं पड़ा था। पर कर्ण की दृष्टि रुक्ष और आवाज़ धीमी थी। लोगों के प्रति उसकी अपरिवर्तनशील समानता से स्पष्ट पता चलता था कि उसकी आत्मा जैसे बेहद थक चुकी है। ऐसा लगता था जैसे कर्ण के लिए दुनिया और उसकी अनुभूतियों का कोई अस्तित्व नहीं। जिन रत्नों को वह हाथों में लेते रहने का आदी हो गया था उन्हीं की जड़ता जैसे उसकी आत्मा में भी प्रवेश कर गयी थी। यह बड़े आश्चर्य की बात थी कि जैसे ही हीरा इस उदासीन-से व्यक्ति के हाथों में आता कि उसकी चमक अद्वितीय हो जाती।

भावलो बोला –

"कर्ण की बराबरी करनेवाला कोई है ही नहीं। अकेला वही है जो माणिक के ओंठों पर भी आदमी की ही तरह मुस्कराहट बिखेर सकता है," और विचित्र ढंग से दांत दिखाते हुए, आगे कहने लगा, "वैसे ही जैसे वह रंगू को हंसाता है।"

रंगू कर्ण का पोता था। जवान और ख़ूबसूरत। रंगू की शादी एक सुन्दर शर्मीली, जवान लड़की से हुई थी। लड़की का नाम था

झांकी। रंगू एक सुन्दर-से बच्चे का पिता भी बन चुका था। बच्चा अभी पांच महीने का भी पूरा न हुआ था। रंगू अपने बूढ़े बाबा का सहायक भी था और शिष्य भी।

यह सच है कि रंगू हमेशा मुस्कराता था। निकीतिन ने भावलो की बात नहीं समझी।

"यह कैसे? वह उसे कैसे हंसाता है?" निकीतिन ने प्रश्न किया।

"रंगू, राजेन्द्र का बेटा है," भावलो ने उत्तर दिया, "यानी कर्ण के उस बेटे का बेटा जिसकी खाल खींची गयी थी। उस समय रंगू बहुत छोटा था। वह नहीं जानता कि उसके बाप की मौत कैसे हुई और यह भी नहीं जानता उसकी मौत का दोषी है कौन। लेकिन कर्ण जानता है और रंगू से छिपाता है।"

"वह उसे चिन्ता में नहीं डालना चाहता।"

"उसे बदला लेने की चिन्ता से रोक रहा है?! लेकिन उसे बदला लेना ही चाहिए।"



भावलो की आंखें सिकुड़ गयीं और नथूने क्रोध से फड़कने लगे।

"मैं खुद..." स्वतः उसके मुंह से निकल पड़ा पर उसने अपना क्रोध रोकते हुए अपने ओंठ काटे और धीरे से अपनी बात पूरी की – "कभी मैं भी कर्ण की ही तरह सोचता था ... कभी ..."

निकीतिन के नये परिचितों में एक व्यापारी था – निर्मल। निर्मल

नाटे क़द का एक मोटा-सा ग्रादमी था जो बीदर के जुलाहों से कपड़े की दलाली करता था। वह उन्हें क़र्ज़ के रूप में रुपया ग्रौर सूत पेशगी दिया करता था।

निर्मल जब कभी जुलाहों के मामूली-से झोंपड़ों में ग्राता तो वे उससे ऐसे मिलते मानो वह उनका सबसे बड़ा हितैषी हो। जुलाहे उसका एक एक शब्द बड़े ध्यान से सुनते ग्रौर उसके ग्रागे बड़ी इज़्ज़त से सिर झुकाते। निकीतिन समझता था कि ये लोग निर्मल के बड़े क़र्ज़ में डूबे थे।

निर्मल ने ग्रफ़नासी को सुझाव दिया कि वह उसका साझेदार बन जाये ग्रौर वे सूत की एक बड़ी-सी गांठ खरीदें। निकीतिन को उसमें कोई हिचकिचाहट न हुई। स्पष्ट था कि यह फ़ायदे का सौदा है। वह जो कुछ लगायेगा उसका उसे सात गुना मिल जायेगा। ग्रब उसकी समझ में ग्राया कि भारत में कपड़ा इतना सस्ता क्यों है – यहां कारीगरों को पैसा इतना कम जो मिलता है।

लेकिन काम वे बहुत ग्रच्छा करते हैं। इतना महीन रेशम ग्रौर ग्रन्य तरह तरह के कपड़े तैयार करते हैं कि देखते ही बनता है। तरह तरह की डिज़ाइनें – मोर, फूल, टेढ़ी-मेढ़ी धारियां ग्रौर तरह तरह के रंग देखने को मिलते हैं।

रंगों की दुनिया का उस्ताद था उजाल। छोटी-सी छाती। सूखी हुई काठी। ग्रधेड़-सी उम्र। प्रायः उसे बुखार का दौरा हो ग्राता। लोग कहते थे कि जब वह बीमार होता, तो किसी को पहचान तक न पाता। उसकी दशा सरसाम के रोगी जैसी हो जाती। कोई न कोई चतुर ग्रादमी उसकी इस दशा से लाभ उठाने की सोचा ही करता पर सरसाम की हालत में भी वह रंगों का ज़िक्र न करता। इसी लिए चतुर ग्रादमी भी रंगों का रहस्य न जान पाता। भावलो ने पहले से ही

निकीतिन को सचेत कर दिया था कि वह उजाल से रंगों के बनाने ग्रादि के बारे में कुछ न पूछे वरना वह कोई बात न करेगा। वह किसी पर भी विश्वास नहीं करता।

उजाल के घर में ऐसे लोग प्राय: ग्राया करते जिन्हें कोई न जानता होता – कभी केसरिया रंग के धूल-धूसरित कपड़े पहने हुए कोई बौद्ध भिक्षु, कभी फटी-चिथी धोती पहने कोई किसान, कभी जानवरों की सी शक्लवाला कोई फ़क़ीर जिसके कंधों पर तेंदुए की खाल ग्रौर हाथों में मोटा सोटा होता।

उजाल उनसे ग्रकेले में फुसफुसाते हुए बातचीत करता ग्रौर उन्हें चुपके से दरवाज़े तक छोड़ ग्राता। निकीतिन ने ग्रनुमान लग लिया था कि उसके पास ग्रानेवाले ये लोग उसे तरह तरह की घास लाकर देते हैं।

उजाल जिन बड़े बड़े हंडों में कपड़े भिगोता उन्हीं में वह इन घासों को भी डाल देता ग्रौर कपड़ों में ग्रद्भुत रंग चढ़ जाता – कभी मई के उस सायंकालीन ग्राकाश की तरह जब ताज़ी पत्तियां उसपर हरियाली छिटकाती हैं, कभी ग्रगस्त की उस ऊषा की तरह जब वह छटते हुए धुंध में से झांकती है ग्रौर कभी जुलाई की तपती हुई भूमि पर नाचते हुए गहरे लाल रंग के सूर्यास्त की तरह।

निकीतिन उजाल से रंग खरीदना चाहता था ग्रौर जब उसने उससे इसके लिए ग्रनुरोध किया तो उजाल ने रंग बना देने का वादा कर लिया।

निर्मल ग्रौर उजाल दोनों ही विवाहित थे। निर्मल की पत्नी ग्रपने पति से बड़ी लगती थी ग्रौर उजाल की छोटी। उजाल की पत्नी का नाम था रेश्मा। पर निकीतिन के लिए उनकी उम्र का ग्रन्दाज़ लगाना ग्रासान न था इसलिए कि उसने, एक तरह से, उन्हें ग्रांख भरकर देखा भी न था। वे सदा बच्चों ग्रौर ग्रपने काम-काज में ही फंसी रहतीं।

भावलो ने इन हिन्दुओं से निकीतिन की जान-पहचान करा दी और स्वयं अपने किसी काम में व्यस्त हो गया। इस काम में वह किसी का भी विश्वास न करता।

प्रत्यक्षतः निकीतिन को कोई विशेष सफलता न मिली। उसने घोड़ा न बेचा इसलिए कि उसके दाम कम लगते थे। और मुस्तफ़ा ने लौटाने का वचन देकर जो पैसा उधार लिया था उसके मिलने की भी कोई उम्मीद न थी। खुद मुस्तफ़ा तक जैसे पानी में बिला गया था। सराय में रहना आरामदेह न था – वहां बराबर भीड़ रहती, लोगों की निगाहें उसपर जमी रहतीं और घोड़े और माल-असबाब का डर बराबर बना रहता।

कर्ण ने बताया कि इस समय अच्छे जवाहरात की कमी है। अभी इन्तज़ार की ज़रूरत है। जब फ़ौज लौटती है तो बहुत-सा सामान लाती है। या तो तब जवाहरात अच्छे मिलते हैं या वसन्त में श्री-पर्वती जाने पर क्योंकि हिन्दुओं के इस पवित्र तीर्थस्थान पर ढेरों हिन्दू सौदागर जाते हैं। कर्ण वहां स्वयं जाना चाहता था या फिर रंगू को भेजना चाहता था। वे हमसफ़र हो जाते।

निकीतिन ने निर्मल से सूत खरीदने के लिए साझा कर लिया और मुनाफ़े और श्री-पर्वती की यात्रा के इन्तज़ार में एक छोटे-से मकान में रहने लगा। मकान हिन्दुओं के मुहल्लों से दूर न था – इकमंज़िला, मिट्टी का, जिसकी ईंटों की ऊंची चहारदीवारी के पीछे एक छोटा-सा बगीचा था। यह मकान चमड़ा कमानेवाले एक मुसलमान का था जो उसे विरासत में मिला था। उसने यह मकान निकीतिन के हाथ बेचा था और इस बात पर राज़ी हो गया था कि वह क़ीमत का कुछ भाग पहले लेगा और बाक़ी के लिए इन्तज़ार करेगा। पिछले दो वर्षों में उसे कोई मकान तो मिल गया था। अब उसके पैर का सनीचर तो

दूर होगा। उसने हसन के साथ सारे घर की सफ़ाई की। एक भीतरी कमरे को अपने सोने का कमरा बनाया। वहां फूस का गद्दा बिछाया और उसपर एक सस्ता-सा क़ालीन। सन्दूक़ उसने एक तरफ़ रख दिया।

सबसे बड़े कमरे में उसने एक अच्छा-सा क़ालीन बिछाया, उसपर तकिये रखे। एक ओर तश्तरियों के लिए अलमारी रखी। अलमारी में हसन के चमकाये हुए लोटे और थालियां रखी गयीं और साफ़ धोयी हुई मिट्टी की सस्ती प्यालियां। ये सारी चीज़ें बीदर के बाज़ार में खरीदी गयी थीं।

घर को ठीक-ठाक करने में बचा हुआ प्रायः सारा पैसा खर्च हो गया। पर अफ़नासी को तब तक चैन न मिला जब तक उसने सभी आवश्यक चीज़ें न जुटा लीं।

जब मकान का सारा प्रबन्ध हो गया तो सोच में पड़ गया – निर्मल से अपने लाभ का हिस्सा दो महीने से पहले मिलेगा नहीं। फ़िलहाल घोड़े को भी खाना मिलना चाहिए। उससे फ़ायदा तो कुछ हो नहीं रहा है। फिर अपना खाना और ऊपर से हसन का पेट भरना।

लगता है उसे क़र्ज़ के लिए हाथ फैलाना ही होगा।

उसने भावलो से सलाह लेने का निश्चय किया। भावलो उसे किरोधार नामक एक बूढ़े के पास ले गया जो देखने में फटेहाल लगता था और चमरौटों – अछूतों की बस्ती के छोर पर एक मामूली-से मकान में रहता था। पहली मुलाक़ात में किरोधार ने कोई वादा नहीं किया, ज़िन्दगी की कठिनाइयों का ही रोना रोता रहा।

"कोई बात नहीं," भावलो ने निकीतिन को धीरज बंधाया, "सब ठीक हो जायेगा..."

और सचमुच दो दिन बाद किरोधार स्वयं अफ़नासी के पास आया।

हसन तो उसे अन्दर ही नहीं आने दे रहा था पर निकीतिन ने उसकी आवाज़ सुनी और खुद वाहर आ गया।

किरोधार ने उत्सुकता से चारों ओर देखा और पूछने लगा – "सचमुच तुम्हारे पास घोड़ा है?"

निकीतिन ने उसकी वात समझी और घोड़ा दिखाया।

किरोधार का जैसे समाधान हो गया। फिर उदास हसन की दी हुई चाय पीते हुए उसने अफ़नासी से सवाल किया – "तो तुम्हें रुपया चाहिए?"

अफ़नासी ने हां की।

"बहुत चाहिए?"

"तीस दीनार," निकीतिन बोला। उसे सन्देह हो रहा था कि इतना रुपया वह दे भी सकेगा।

"इतने कम क्यों?" किरोधार ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं तो सौ लाया हूं। अगर आदमी में सामर्थ्य है तो वह सुख क्यों न भोगे?"

"ओ-हो!" अफ़नासी ने सोचा और कहने लगा –

"नहीं, सौ नहीं चाहिए। अच्छा पचास ले लूंगा। और वापस कितना करना होगा?"

"मैं ठहरा ग़रीब आदमी," वह आंखें मूंदते हुए कहने लगा। उसकी आकृति से लग रहा था जैसे वह सचमुच बड़ा ग़रीब और निरीह है। "मैंने पेट काट काटकर थोड़ा पैसा जोड़ा है। मैं भला किसी को क्या क़र्ज़ दूंगा! लेकिन लोगों की ज़रूरतें पूरी करना भी तो इन्सानी फ़र्ज़ है। भगवान इससे खुश होते हैं ... फिर जल्द ही तुम घोड़ा बेच लोगे, तुम्हें निर्मल से भी पैसा मिल जायेगा। और तुम मुझ जैसे ग़रीब को नुक़सान तो पहुंचाना नहीं चाहते।"

"यह तो निर्मल के बारे में भी जानता है! बड़ा पहुंचा हुम्रा है!" ग्रफ़नासी ने सोचा।

"मेरे पास कौनसी रक़म गड़ी है!" निकीतिन ने उत्तर दिया, "तुम तो देख ही रहे हो कैसे रहता हूं। घोड़ा चाहे भी जितने को बिके, ग्राखिर वह भी रास्ते की ही भेंट चढ़ेगा। मैं दूर देश से ग्राया हूं न! फिर ज़िन्दगी यों ही मुहाल है।"

"हां, हां, हां," किरोधार ने ग्राह भरते हुए कहा, "सभी चीज़ें बड़ी महंगी हैं। मैं ख़ुद ही ग्राधा पेट खाकर गुज़र करता हूं। बड़ा ग़रीब हूं। हां, हां..."

"तो फिर मुझे कितना लौटाना होगा?" निकीतिन ने पूछा, "हम दोनों ही ग़रीब हैं, दोनों ही एक दूसरे को नाराज़ नहीं करना चाहते ... तो फिर कितना?"

किरोधार के चेहरे पर जैसे उदासी-सी छा गयी। उसने हाथ जोड़ दिये।

"मैं ख़ुद नुक़सान उठा लूंगा लेकिन किसी को नाराज न करूंगा... जो क़र्ज़ लेते हैं उनसे ग्राम तौर से क़र्ज़ का रुपया ग्रौर उसका ग्राधा ग्रौर लिया है लेकिन मैं तुमसे सिर्फ़ तिहाई लूंगा। साठ दीनार ले लो ग्रौर एक महीने बाद ग्रस्सी लौटा देना।"

निकीतिन ग्रांखें फाड़कर देखने लगा—

"तिहाई? ग्रस्सी?"

उसे लगा जैसे उसने समझने में ग़लती की। किरोधार तकिये के सहारे कुड़मुड़ाने लगा।

"किसी धनी के लिए तिहाई रक़म ज्यादा है क्या? मैं तो यों ही कम मांग रहा हूं—सिर्फ़ तिहाई।"

"नहीं, तब मैं न लूंगा!" निकीतिन ने दृढ़ता से कहा।

"तो तुम कितना दोगे?" किरोधार ने बड़ी विनम्रता से पूछा।

"दसवां हिस्सा ... हालांकि यह भी बहुत है!"

"बहुत है? क्या बहुत है?" किरोधार घबड़ा-सा गया, "तुम बीदर-भर छान मारो, मुझसे कम कोई न लेगा!"

"तो भी किसी तरह ज़िन्दा तो रहूंगा ही," निकीतिन बोला।

किरोधार ने कन्धे झुला दिये।

"मैं तो तुम्हारी मदद करना चाहता हूं। सिर्फ़ मदद ..."

सौदा न पटा और किरोधार चला गया। हसन ने बड़ी अनिच्छा से उसके जूठे बरतन धोये।

"कुत्ता कहीं का!" हसन बड़बड़ाया, "मालिक, देख रहे हो न कैसे हैं ये लोग ..."

निकीतिन को भावलो पर क्रोध आया। "क्यों ऐसे लालची बदमाश को मेरे पास भेज दिया!"

और जैसे ही निकीतिन की भावलो से भेंट हुई कि उसने किरोधार के बारे में सब कुछ कह सुनाया। सारा क़िस्सा सुनकर भावलो की त्यौरियां चढ़ गयीं।

"मुझे उससे ऐसी आशा न थी। वह तो तुमसे उतना ही सूद लेना चाहता था जितना ग़रीब से ग़रीब आदमी से लेता है ... खैर मैं उससे बात करूंगा।"

"नहीं, उससे तो मेरी जान ही बचाओ... वह करता क्या है? पैसा आता कहां से है उस ग़रीब के पास?"

"किरोधार – ग़रीब? किरोधार बीदर का शायद सबसे बड़ा धनी है। वह महाजन है। हर तीसरा हिन्दू उसका क़र्ज़दार है।"

"अच्छा? तो फिर इतनी ग़रीबी में क्यों बसर करता है?"

"अगर ऐसे न रहता तो टैक्स देते देते उसकी हुलिया बैरंग हो गयी होती, लोग उसे लूट ले गये होते या उसका सारा पैसा छिन गया होता। वह हमेशा फूंक फूंककर क़दम रखता है। आम तौर से वह दूसरों की मार्फ़त क़र्ज़ देता है। तुम्हारे पास वह खुद आया था यह ताज्जुब की बात थी। इसके माने हैं वह तुम्हारा विश्वास करता है।"

"शुक्रिया," जैसे क्रोध से हंसते हुए अफ़नासी बोला, "मेरी इज़्ज़त करता है। खैर हुई कि खाल नहीं उतार ली!"

किरोधार के बारे में और अधिक बात न हुई। अफ़नासी ने कर्ण से बीस दीनार ले लिये।

भावलो फिर बाहर जाने की तैयारी करने लगा। उसका बीदर का काम समाप्त हो गया था, शायद सफलतापूर्वक।

"तुम्हें बधाई देता हूं तुम्हारी सफलता पर।" अफ़नासी बोला।

भावलो ने धीरे धीरे पलकें उठायीं और उसकी ओर एकटक देखते हुए कुछ विचित्र ढंग से बोला –

"अभी नहीं... लेकिन जल्दी ही काम बन जायेगा। अब ज्यादा देर नहीं है। और खुद सुलतान से।"

"ताज्जुब है!"

"क्यों? मैं तो अपने उचित फल का इन्तज़ार कर रहा हूं।"

और निकीतिन ने पहली बार भावलो का क़हक़हा सुना। लेकिन यह हंसी भयानक थी।

निर्मल ने, भावलो के प्रस्थान से पूर्व, एक उत्सव का आयोजन किया। उसका सबसे छोटा बेटा एक वर्ष का हो चुका था। सारा परिवार उसका 'अन्न-प्राशन' मना रहा था।

निर्मल ने इस उत्सव में निकीतिन को भी बुलाया। पिछले कुछ समय से हिन्दू लोग उसका बड़ा विश्वास करने लगे थे।

इसके कई कारण थे – उसने कर्ण के साथ साफ़ साफ़ और दिल खोलकर बातें की थीं, भारत की हर चीज़ में पूरी रुचि दिखायी थी और मुसलमानों के कारण उसपर जो मुसीबतें आयी थीं उनका खुलकर ज़िक्र किया था।

भारतीयों की जात-व्यवस्था के प्रति निकीतिन का जो तटस्थ-सा रुख था, उससे हिन्दू ज़रूर परेशान थे। एक दिन निकीतिन चमरौटी गया और वहां एक कोरी के बच्चे को गोद में लेकर उससे खेलने लगा। यह बात कर्ण के कानों में पहुंची और उसने निकीतिन को समझाने का निश्चय किया।

"खुद मुसलमान तक जात-पांत मानते हैं!" कर्ण ने अफ़नासी की भर्त्सना-सी करते हुए उससे कहा।

"लोगों को कैसे देखना-समझना चाहिए इस संबंध में मुझे दूसरे ही ढंग से शिक्षा मिली है। मेरे भगवान के सामने सब बराबर हैं, सब एक जैसे।"

बूढ़े रत्न-तराश ने आपत्ति की –

"लेकिन तुम्हीं ने तो कहा था कि तुम्हारे यहां राजा हैं, योद्धा हैं, ब्राह्मण हैं ... मैं जानता हूं उनके तुम्हारे मुल्क में दूसरे दूसरे नाम होंगे। मगर बुनियादी फ़र्क़ तो कुछ है नहीं? क्या तुम्हारा राजा अपनी कन्या किसी व्यापारी को दे सकता है? या किसी योद्धा की विधवा किसी हलवाहे से शादी कर सकती है? बताओ तुम्हारे पिता कौन थे?"

"व्यापारी ..."

"और तुम भी व्यापारी हो। और जो हथियार बनाते हैं उनके लड़के कौन होते हैं?"

"आम तौर से ये भी वही काम करते हैं ..."

"फिर फ़र्क़ क्या रहा?"

"फ़र्क़ है। हमारे यहां कोई भी किसान ब्राह्मण हो सकता है अगर जनता उसे चुन ले। योद्धा तो सभी हो सकते हैं–चाहे हलवाहे हों, चाहे दस्तकार। अगर दुश्मन चढ़ाई कर दे तो..."

किन्तु कर्ण मुस्करा दिया।

"इसके माने हैं कि तुम्हारे यहां मिली-जुली जात-व्यवस्था है। अच्छा बताओ, अगर किसान ब्राह्मण हो जाये तो वह कैसा होगा? उसे धर्मग्रन्थों की तमीज़ होगी?"

"ठीक है। वह धर्मग्रन्थों की बातें नहीं जानता... यही तो हमारा रोना है।"

"अच्छा तो एक सवाल का जवाब और दो। तुम सौदागर पैदा हुए। तुम्हारा राजा–राजा और किसान–किसान। ऐसा ही क्यों?"

"यह बात तो निर्भर है मां-बाप पर... लेकिन मेरे बाप किसान पैदा हुए थे!"

"यह बात दूसरी है!" कर्ण ने उसकी बात काटी, "कभी कभी नीची जात का आदमी ऊंची जात में आ जाता है और समाज उसे मान लेता है। हां, ऐसा होता कम है। लेकिन नियम–नियम है। बताओ–क्यों?"

और निकीतिन को, आपत्ति का अवसर न देते हुए, बूढ़ा रत्न-तराश स्वयं ही कहने लगा–

"इसलिए कि जातियां भगवान विष्णु की बनायी हैं। उनकी उत्पत्ति दैवी है। और तुम्हारे जन्म के अनन्त कारण हैं। तुम उन्हें नहीं जानते परन्तु कारण हैं अवश्य। तुम्हें कर्म के विषय में ज़रूर जानना चाहिए। संसार में स्वतः कोई भी चीज़ जन्म नहीं लेती।

हर कार्य का कोई कारण होता है और हर कारण से किसी न किसी कार्य की उत्पत्ति होती है। मनुष्य का हर क़दम उसके भावी जीवन का परिचायक है। उसका सारा जीवन ही उसके विगत कर्मों का फल है ... तुमने एक ऋषि की कथा सुनी है? जब ऋषि पैदा हुए तो दुम के स्थान पर एक सोंटा दे दिया भगवान ने उन्हें। बेचारे सारी ज़िन्दगी तड़पते रहे। बड़ी तपस्या की उन्होंने भगवान की और उनसे उन्होंने अपनी व्यथा का कारण पूछा। भगवान बोले कि पिछले जीवन में उन्होंने एक चिड़िया को ऐसा ही दुख दिया था जिसका फल उन्हें इस जन्म में मिल रहा है।"

अफ़नासी ने मुश्किल से हंसी रोकी और उत्तर दिया –

"हमारे यहां यह नहीं माना जाता कि आदमी दुबारा पैदा होता है। जो मर गया, सो मर गया। मरने के बाद या तो वह स्वर्ग में जाता है, या नर्क में, या पापमोचन में और वहां तब तक रहता है जब तक स्वयं भगवान उसका फ़ैसला नहीं कर देते ..."

"लेकिन यह भी तो कर्म ही है, यद्यपि है साधारण प्रकार का। आपके यहां सब गड़बड़ कर देते हैं।"

"तुम्हें अपनी बातों में इतना विश्वास है कि तुमसे बात करना भी मुश्किल है। मगर एक बात मैं कहूंगा। हमारे यहां अछूत जैसे कोई आदमी नहीं। हम सब धर्म-बन्धु हैं।"

कर्ण कमज़ोर आंखें सिकोड़कर सोचने लगा।

"बड़ी विचित्र बात है," वह बोला, "सचमुच बड़ी विचित्र बात है। शायद भगवान ने सारी कृपा तुम्हीं लोगों पर की हैं।"

"कैसी कृपा! लोगों को न छूना, संक्रामक रोगों की तरह उनसे बचना यह अत्याचार है। आखिर इसमें इन अछूत कहे जानेवालों का क्या दोष?"

किन्तु कर्ण ने सिर हिलाया।

"आखिर तुम समझते क्यों नहीं? अत्याचार! बिल्कुल नहीं! बल्कि यह तो उदारता है! तुम समस्या की तह तक पहुंचकर अपना निर्णय नहीं देते। यह तुमसे किसने कहा कि बुद्धिमान लोग अछूतों की इज़्ज़त नहीं करते? इज़्ज़त करते हैं। किन्तु वे उन्हीं की इज़्ज़त करते हैं जो जात-पांत के नियमों को मानते हैं। ऐसे अछूत शास्त्र के नियमों को न माननेवाले ब्राह्मणों की अपेक्षा भगवान के अधिक निकट होते हैं... आदमी एक ही जात में नित्य नहीं रहता। जो आदमी इस जन्म में एक जात का है, दूसरे जन्म में वह उससे ऊंची या नीची जात में भी पैदा हो सकता है। इसी लिए हर व्यक्ति को अपनी अपनी जात के नियमों का पालन करना चाहिए। हमारी जात ही को ले लो। हम वैश्य हैं। हम अछूतों से व्यवहार नहीं रखते। उन्हें छूना सभी जातों के लिए पाप है। तुम्हारे देश में ऐसे क़ानून नहीं हैं इसलिए मैं तुम्हारी बात समझ सकता हूं। लेकिन तुम भारत में हो और यदि तुम हमारे निकट रहना चाहते हो, तो हमारे नियमों को याद रखना।"

कर्ण के शब्दों में निकीतिन को सख़्त चेतावनी का संकेत मिल रहा था। उसने निश्चय कर लिया था कि वह उसी की सलाह से काम करेगा और हां, पीड़ितों, दलितों और नंगे-भूखे कोरियों, मोचियों, धोबियों और चमारों की तो सहायता वह न कर सकेगा...

कर्ण ने देखा कि निकीतिन ने उसकी बात मान ली। वह बड़ा खुश हुआ। और जब उसने जान-पहचानवाले हिन्दुओं के बीच निकीतिन के बारे में बातचीत चलायी तो ज़ोर देकर कहा—

"यह शख़्स हमारे रीति-रिवाजों को इज़्ज़त की निगाह से देखता है और हमारे साथ हमदर्दी रखता है। हमें भी चाहिए कि

हम उसकी इज्ज़त करें। उसके देश में नीची जातें नहीं होतीं। यह ज़रूर आश्चर्य की बात है। और वह भी तो एक अद्भुत-सा आदमी है। किसी ने इतनी सफ़ेद चमड़ी और सोने जैसे बालों वाला कोई आदमी देखा है यहां? किसी ने नहीं देखा। हम तो कभी सोच ही न सकते थे कि इतनी सफ़ेद चमड़ीवाले आदमी भी हो सकते हैं। चमड़ी का गोरा होना ऊंची जात की निशानी है। यह याद रखना चाहिए।"

रत्न-तराश के विचारों से पूर्णतः सहमत होते हुए, निर्मल ने निकीतिन को भी 'अन्न-प्राशन' उत्सव में निमंत्रित किया।

हां, सच तो यह है कि उसे बुलाने के पहले ब्राह्मण की राय ले ली गयी थी।

ब्राह्मण राम लाल ने इस विषय में कोई आपत्ति न की। इस मौन और बूढ़े आदमी ने अफ़नासी को देखा और उसके बारे में बहुत कुछ सुना भी था। बोला –

"भगवान ने जिस आदमी को इतनी लम्बी यात्रा करने की प्रतिभा दी है, वह ज़रूर भगवान का प्यारा होगा। वह मामूली आदमी नहीं हो सकता।"

अफ़नासी को ब्राह्मण की बातों का कोई पता न चल सका किन्तु शीघ्र ही निर्मल के इष्टमित्रों को उसका मत मालूम हो गया और निकीतिन उनकी निगाहों में और भी चढ़ गया।

उत्सव के दिन निर्मल के मकान में, उसकी जात-बिरादरी के लोग जमा हुए थे।

निर्मल के साफ़-सुथरे सफ़ेद मकान के गलियारे में कोई बीस लोग एकत्र हुए थे।

निकीतिन पहली बार हिन्दुओं की किसी रस्म में शरीक हुआ और इसी लिए, उसने सब कुछ आंखें फाड़ फाड़कर देखा।

प्रथानुसार, उसने निर्मल के पुत्र को पन्ना जड़ी चांदी की एक ज़ंजीर उपहार में दी। निर्मल की पत्नी कजली तो ख़ुशी से नाच उठी।

वहां सभी तरह के मेहमान थे। मर्द, औरतें, जवान लड़कियां। सभी एक जगह थे, सभी बातें करते, सभी हंसते मुस्कराते, लेकिन रूसियों की तरह ज़ोरों से नहीं, धीरे धीरे। सभी एक दूसरे से बड़ी इज़्ज़त से पेश आते।

निकीतिन ने निर्मल से अनुरोध किया कि वह उसे रस्म की कार्रवाइयां समझाता चले।

"जब सब मेहमान इकट्ठा हो जायेंगे तभी रस्म की कार्रवाई शुरू होगी," निर्मल मुस्कराते हुए बोला, "अभी तो सब अपने अपने काम में फंसे हैं..."

आख़िर निर्मल ने सभी मेहमानों को भीतर बुलाया। सभी आकर दरी पर, क़तारों में, बैठ गये। फिर निर्मल ने सिर झुकाते हुए रस्म शुरू करने के लिए उनसे अनुमति मांगी।

हर शख़्स ने एक बड़े-से तसले में अपने हाथ-पैर धोये। इस विधि में काफ़ी समय लगा।

फिर मेहमानों के सामने पत्तल आये जिनमें स्वादिष्ट खीर परोसी गयी।

मेहमानों ने, मुस्कराते हुए, तालियां बजायीं। खुश, गुमसुम-सी, कजली उनके सामने अपने नंगे बच्चे को ले आयी।

मां बेटे भी सबके साथ बैठ गये। बच्चे को खाना चखाया गया। बच्चे ने बड़ी रुचि से खाया।

सभी खुश थे। सभी मुस्करा रहे थे।

हिन्दुओं ने भी धीरे धीरे खाना शुरू किया। सभी दाहिने

हाथ से और बड़े सुन्दर ढंग से खा रहे थे। अगर किसी को प्यास लगती तो वह उंगलियां पोछता और दाहिने हाथ से पानी का पियाला उठाकर पीने लगता।

रंगू ने पहले से ही निकीतिन को समझा दिया था कि खाना दाहिने हाथ से खाना चाहिए। बायें हाथ से पानी पीने से वही पाप लगता है जो शराब पीने से। ऊंची जातियों में शराब पीना मना है। शराब पीने के माने हैं अशुद्ध हो जाना।

निकीतिन को यह हिन्दुस्तानी रस्म पसन्द आयी—न शराब, न शराबियों की शरारतें। पर उसे यह रस्म अजीब ज़रूर लग रही थी।

निर्मल के घर में भावलो की दशा देखकर निकीतिन को सबसे ज़्यादा हैरत हुई। उसने देखा कि भावलो की उदास निगाहें दो सुन्दर और चहचहाती हुई लड़कियों पर गड़ी हैं। अफ़नासी को लगा जैसे भावलो की आंखें छलछलानेवाली हैं। लेकिन तभी भावलो ने निगाहें नीची कर लीं। सिर्फ़ उसके ओंठ वैसे ही फड़क रहे थे जैसे सपने में किसी बच्चे के। आखिर लड़कियों की चुहल से वह खुद क्यों उदास हो रहा था?

खाने के बाद, हमेशा की ही तरह, फिर हाथ धोये गये। बरामदे में औरतें एक मीठी धुन गा रही थीं और आदमी उन्हें सुनते हुए पान का मज़ा ले रहे थे। निर्मल शतरंज की बिसात ले आया और उजाल के साथ जम गया। शतरंज की गोटें चन्दन की लकड़ी की थीं।

नवम्बर की यह रात, फूलों की महमह, गीतों की रसीली धुन, खुशी से झूमती हुई कजली—अफ़नासी के हृदय में भी एक हूक-सी उठने लगी।

काश! मैं भी इतना ही खुश होता। निर्मल की तरह मैं भी

ठाठ से बैठता, पत्नी की प्यार भरी निगाहें महसूस करता और अपने स्वस्थ बेटे पर गर्व करता।

लेकिन इस सुख का उसे कभी अनुभव न हुआ था। यह सुख जैसे उसे बदा ही न था। पर क्यों? क्या उसने प्यार और मुहब्बत की खोज न की थी? क्या उसे औरत का दुलार पसन्द न था? क्या वह अपनी महबूबा के लिए अपनी जान क़ुरबान करने को तैयार न था?

और इन सबके स्थान पर थीं क्षणिक भेंटें... जैसे शर्माते हुए वे एक दूसरे के पास आये थे... ओलेना... ओलेना तो अब किसी दूसरे की बीवी बन गयी होगी। उसे भूल जाना ही ठीक होगा।

अफ़नासी घर लौट आया, लेकिन देर तक उसकी आंख न लगी। वह न जाने कब तक हसन के खर्राटे, ताड़ के पेड़ों की सरसराहट और सड़क से आती हुई घोड़े की टापें सुनता रहा– कोतवाल के पहरेदार रात में गश्त लगा रहे थे।

उसका दिल अब भी उदास था। उसकी कल्पना के सामने एक लड़की आकर खड़ी हो गयी–ओलेना से मिलती-जुलती, और उससे भिन्न। दुबला-पतला शरीर, लचकदार कमर–हिन्दू लड़की जैसी, भयभीत-सी उसके हाथ में अपना हाथ देती हुई। उसने लड़की का चेहरा न देखा था। पर उसे अच्छी तरह मालूम था–उसकी बरौनियां लम्बी लम्बी थीं और उसके गुलाबी गालों पर पड़ती हुई उनकी छाया बराबर हिल-डुल रही थी।

भावलो कहीं दक्षिण की ओर चला गया।

बीदर के चौराहों पर डुग्गी पीट पीटकर लोगों को बताया जा रहा था कि सुलतान की फ़ौज की फ़तह हुई है, खेलना क़िला जीता जा चुका है और शंकर राजा कहीं भाग गया है।

पहले की ही भांति गवान-चौक में राज-मज़दूर हथौड़े चला रहे थे। मदरसे के लिए पत्थरों पर प्रेम और दया के विषय में क़ुरान की आयतें खोदी जा रही थीं। कभी कोई मज़दूर हाथ में हथौड़ा थामे भूख से तड़प तड़पकर मर जाता। लोग उसे क़ब्रिस्तान ले जाते। क़ब्रिस्तान – शहर की चहारदीवारी के उस पार एक मनहूस और वीरान-सा मैदान था, जहां कुछ कुछ झुके हुए से पत्थर के खम्भे गड़े थे और घूम रहे थे ग़ुस्सैल जंगली कुत्ते।

सड़कों के बीच, फिंके-गिरे आम और संतरों के छिलकों पर लोगों का पैर पड़ता और वे फिसल पड़ते। आम के छिलकों से तारपीन जैसी बू आ रही थी। यहीं किसी अफ़ीमची की नाचती हुई निगाहें अपना खोया हुआ स्वप्न ढूंढने लगतीं।

उत्तर से चिड़ियां उड़ उड़कर आ रही थीं। और उड़ते हुए बगुलों की चें चें, बीदर में गिरते हुए बूंदों की तरह सुनाई पड़ रही थी।

वर्ष का सबसे मधुर काल – मज़े की गर्मी, शान्त हवा, स्वच्छ नीला आकाश।

निर्मल ने पैसा लाकर दिया। यह लाभ हुआ था जुलाहों के पसीने से। निकीतिन को पन्द्रह दीनारों के सौ दीनार मिले थे। उसने कर्ण का पैसा लौटाया, एक नया चोग़ा ख़रीदा, उजाल से रंग लिये। घोड़े के भी कई बार अच्छे दाम लगे, लेकिन निकीतिन ने पक्का निश्चय कर लिया था कि घोड़े का वह एक हज़ार दीनार से एक पैसा कम न लेगा।

वह हिन्दुओं के पास बैठता, उनसे उनके धर्म के बारे में पूछ-ताछ करता और उनके रस्मोरिवाजों में दिलचस्पी लेता।

ब्राह्मण राम लाल ने अफ़नासी को अपने बराबर का समझा था इसलिए कि अफ़नासी ने कह रखा था कि उसके सगे-संबंधी छोटी उम्र से ही लिखना-पढ़ना और धर्मग्रन्थों का मनन शुरू करते हैं।

ब्राह्मण पूरा कर्मकांडी था। किसी के भी साथ न खाता-पीता, अपनी बीवी के साथ भी नहीं। ऐसे लोग आवरणी कहलाते हैं और किसी के साथ खाना-पीना पाप समझते हैं—पता नहीं किसने क्या पाप किया हो और उनके साथ खाने-पीने से वह न जाने किस पाप का भागी हो जाये।

राम लाल घंटों आसन जमाये, सारी दुनिया की ओर से बेख़बर, परमानन्द की प्राप्ति के लिए ध्यान किया करता।

वह कभी किसी के साथ बहस में न पड़ता। लेकिन जब बात आ पड़ती तो लोगों को समझाता—आदमी का जन्म होता है कर्म भोग के लिए। उसका जीवन-पथ बराबर दुख और प्रलोभनों से भरा रहता है। दुनिया का हित केवल भ्रम है, और स्वयं दुनिया है माया, जिसका आदमी के साथ ही लोप होता है। आदमी तपस्या करता है, कष्ट उठाता है इसलिए कि वह माया पर विजय प्राप्त करे। लेकिन क्या यह बुद्धिमानी की बात है? नहीं। बुद्धिमान लोग जानते हैं कि कष्टों की जड़ है तृष्णा। इसे नष्ट कर डालो, तो सारे दुख दूर होंगे, निर्वाण प्राप्त होगा।

"हमारे यहां के मठवाले भी इसी प्रकार अपने को शुद्ध करते हैं!" सोचता हुआ निकीतिन बोल उठा—"सारी दुनिया से दूर रहते हैं, मोटी मोटी ज़ंजीरें पहनते हैं, अपने को मारते-पीटते हैं..."

"यह तो अति है," राम लाल ने उत्तर दिया, "द्विजातियों और ऊंची जातवालों के लिए दूसरा रास्ता है। उन्हें निर्वाण प्राप्त करने के लिए योगी बनने की जरूरत नहीं। उनका रास्ता है—

संयमित जीवन, धर्म में पूरा विश्वास, ईमानदारी, क्रोध का त्याग, सच्चाई से जीवन-यापन ..."

राम लाल इस विषय पर बहुत समय तक बातचीत कर सकता था। अफ़नासी को उसकी कई बातें अच्छी लगतीं, कई भ्रम में डालतीं, तो कई पसंद न आतीं।

संसार के बारे में राम लाल के बड़े ही विचित्र विचार थे। उसके अनुसार संसार की रचना किसी ने नहीं की थी। वह केवल माया है। इसी माया से सब कुछ उत्पन्न हुआ है। पहले भगवान और माया अभिन्न थे फिर किसी तरह भगवान हर चीज़ में और हर कार्य में प्रकट होने लगे।

यह सारी बातें समझना अफ़नासी के लिए टेढ़ी खीर थी। हां, उसे यह जानकर ज़रूर संतोष हुआ कि यदि हिन्दुओं का भगवान एक है—उसके रूप भले ही भिन्न भिन्न क्यों न हों—तो वह ईसाइयों, रूसियों के भगवान से जरूर मिलता-जुलता होगा।

निकीतिन को अहिंसा के महामंत्र ने ईसाइयों के इस उपदेश की याद दिलायी कि कोई तुम्हारे दाहिने गाल पर चांटा लगाये तो बायां गाल भी सामने कर दो।

सामान्यतया हिन्दुओं और ईसाइयों के धर्म-नियम प्रायः एक ही जैसे हैं—किसी की हत्या मत करो, चोरी मत करो, दूसरों की पत्नियों को बुरी दृष्टि से मत देखो...

सभी लोग राम लाल और रंगू के धर्म के नहीं थे। भारतीय लोग भिन्न भिन्न धर्मों को मानते थे। बीदर में भारतीय मुसलमान रहते थे, जो इस्लाम में होने के बावजूद कई जातों में बंटे हुए थे। इसके अलावा बुद्ध मतावलंबी और अपने को श्वेताम्बर और दिगम्बर क़हनेवाले तथा अन्य सम्प्रदायों के लोग भी थे। सभी अपने अपने

ढंग से पूजा-पाठ करते, साथ साथ न खाते न पीते, और प्रायः अलग अलग रहा करते।

हिन्दुओं को और भी अच्छी तरह जानने समझने की दृष्टि से निकीतिन ने उनकी भाषा सीखने का भी विचार किया। लेकिन इसमें कठिनाइयां भी थीं। कर्ण का कहना था कि भारत में ढेरों बोलियां बोली जाती हैं, लेकिन धर्मग्रन्थ लिखे मिलते हैं एकदम भिन्न भाषा में। फिर भी अफ़नासी ने कर्ण और रंगू की भाषा ही सीखने का प्रयत्न किया।

उसने भाषा पढ़ना इसलिए नहीं आरम्भ किया था कि, राम लाल के मतानुसार, उसे निर्वाण प्राप्त हो जाये। वह निरीह बनना नहीं चाहता था। वह तो यह चाहता था कि इस अद्भुत देश में वह आसानी से रह सके। आखिर अभी तो यहां उसे बहुत कुछ देखना था।

उसने अपने अनुभवों के संबंध में मार्ग से ही जो डायरी लिखनी शुरू की थी, उसमें उसने भारतीय व्यापार तथा स्वयं देखी-सुनी सभी बातों के संबंध में तरह तरह की सूचनाएं टांक दी थीं। डायरी का विशेष महत्त्व था, उसमें बड़े काम की चीज़ें थीं, यद्यपि वे सिलसिलेवार न थीं।

प्रायः उसमें मज़ेदार घटनाओं का भी ज़िक्र किया गया था। जैसे रूस में उसने 'मामोनों' के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था लेकिन यहां उसे पता चला कि मामोन सिर्फ़ बन्दर होते हैं। उसने यह भी संकेत कर दिया कि रूस में लोग इसपर माथा-पच्ची न करें।

इस साधारण-सी खोज से उसे कुछ कुछ निराशा भी हुई। उसे भारत के असली चमत्कार देखने की बड़ी इच्छा थी। लेकिन लग रहा था जैसे वहां कोई चमत्कार है ही नहीं। बेशक वहां चमक-दमक थी, देश धनधान्यपूर्ण था, ऐसे ऐसे जानवर थे जो उसने कभी न

देखे थे, उससे भिन्न धर्म के लोग थे। पर दुख-सुख यहां भी ठीक रूसियों की ही तरह थे।

"और शायद यही चमत्कार हो ?" उसने सोचा। "कुछ भी हो, रूसियों को सुनाने के लिए मेरे पास बहुत मसाला हो जायेगा... और अगर यहां कुछ लम्बे समय तक रह गया तो शायद और भी बहुत कुछ देख सकूंगा!"

और वह इन्तज़ार करता रहा—घोड़ा बेचूंगा, रंगू के साथ प्रसिद्ध श्री-पर्वती जाऊंगा। वहां मिट्टी के मोल हीरे खरीदूंगा।

पर शीघ्र ही उसकी मानसिक शान्ति भंग हो गयी और यह भी बड़े अप्रत्याशित ढंग से।

और यह हुआ नवम्बर के अन्त में।

पांचवां अध्याय

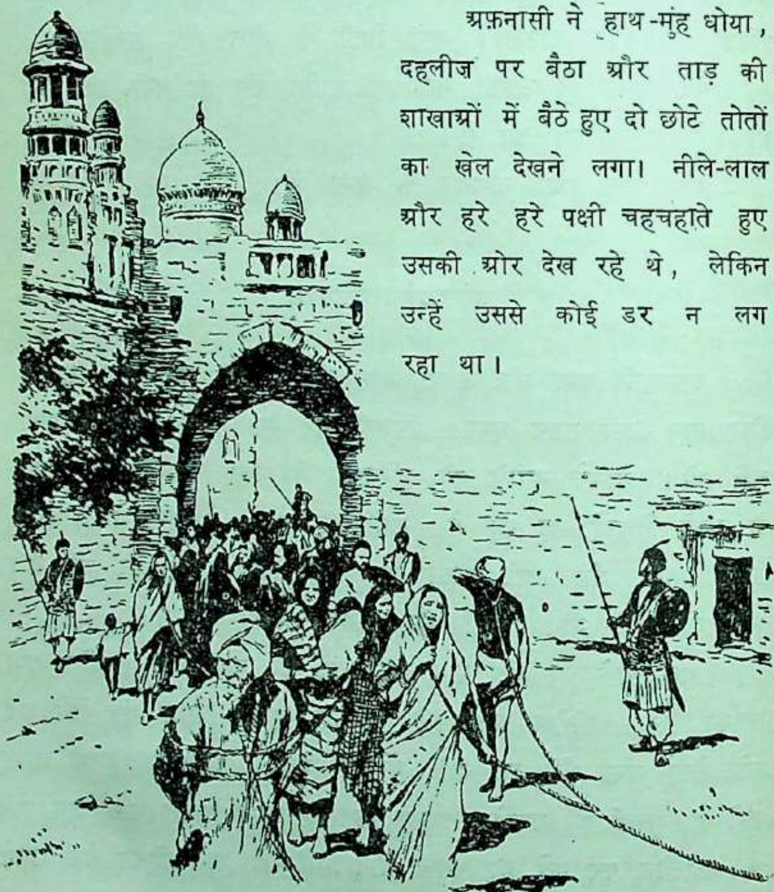
अफ़नासी जगा और ऊपर, बांस की छत की ओर देखने लगा। फिर वह बायीं तरफ़ घूमा। खिड़की पर एक गौरैया पंख फड़फड़ा रही थी। सामने बगीचे की हरियाली के उस पार नीले आकाश के टुकड़े दिखाई पड़ रहे थे। फूलों की सुगंध, उष्ण-सी मिट्टी और ताज़ा पानी जैसे सारे वातावरण को जीवन प्रदान कर रहे थे। भोर हो चुकी थी। चारों ओर शान्ति छायी हुई थी।

वह सोफ़े पर बैठ गया और नंगे पैर काले-नीले क़ालीन तक लटका दिये। गौरैया चहचहाती हुई उड़ गयी। आंख मूंद लेने पर उसे ऐसा लगा जैसे वह रूसी घर में बैठा है और अहाते में बरस रही है जुलाई की गरमी। किन्तु सिर के ऊपर गठीले बांस झूम रहे थे, क़ालीन पर कढ़े हुए पतले और लम्बे पैरों वाले हिरन पैर समेटे

बठे थे, कोने में एक छोटी-सी मेज़ चमक रही थी, दरवाज़े पर लटकी हुई खपच्चियों की चिक हिल-डुल रही थी और हसन कुछ बड़बड़ा रहा था।

निकीतिन उठ खड़ा हुआ, उसने सलीब का निशान बनाया और हाथ-मुंह धोने के लिए चला गया। हसन ने चावल पहले ही पका लिये थे। उसका शाम का लाया हुआ पानी गर्म हो गया था।

अफ़नासी ने हाथ-मुंह धोया, दहलीज पर बैठा और ताड़ की शाखाओं में बैठे हुए दो छोटे तोतों का खेल देखने लगा। नीले-लाल और हरे हरे पक्षी चहचहाते हुए उसकी ओर देख रहे थे, लेकिन उन्हें उससे कोई डर न लग रहा था।



काश मैं इनका एक जोड़ा त्वेर ले जाता लेकिन अफ़सोस वे वहां की बर्फ़ न बरदाश्त कर सकेंगे। कितने ख़ूबसूरत हैं ये!

सुबह का समय कितना सुहावना लग रहा था। दहलीज़ पर बैठने में उसे मज़ा आ रहा था।

वह इस समय बड़े रंग में था। उसे याद आ रहा था बीदर का बाज़ार और वह सुन्दर नर्तकी जिसकी लचक-ठसक देख देखकर हिन्दुओं तक को आश्चर्य होता था।

दूर से धीमा धीमा शोर-सा सुनाई पड़ रहा था। निकीतिन को आश्चर्य हो रहा था। आज शायद बुधवार नहीं, बृहस्पतिवार है सुलतान के जुलूस का दिन।

लेकिन नहीं। आज तो बुधवार ही है। तो आज बेवक़्त मुसलमान कहीं जाने की तैयारी कर रहे हैं। उसने जुलूस देखना चाहा और कपड़े पहनने गया।

जुलूस हमेशा ही बड़े ठाठ का होता था। सैनिक और रईस लोग घोड़ों पर चढ़कर निकलते। एक एक रंग के घोड़ों के दल होते; फिर लड़नेवाले हाथियों की क़तारें जिनपर रंग-बिरंगी झूलें लटकतीं —ये हाथी चलते-फिरते क़िले हुआ करते, जिधर बढ़ते उधर मौत का सन्नाटा छा जाता। उनके दांतों पर इस्पात के नोकदार ढक्कन लगे रहते और पीठों पर योद्धाओं के लिए हौदे होते। सिपाहियों की नंगी तलवारें चमचमाया करतीं, सुलतान की पालकी पर, बन्दरों के सोने के कामवाले पिंजड़ों पर और सुलतान की रखेलियों की पोशाकों पर क़ीमती रत्न झलका करते। सींक-सलाई जैसे सुलतान के जुलूस के साथ पूरा का पूरा चिड़ियाघर और हरम निकला करता। आगे आगे छत्र से खेलते और रास्ता साफ़ करते हुए हरकारा बढ़ा करता। बांसुरियां बजा करतीं, डुग्गियों की डमडम कानों में

पड़ा करती और झंडे और हल्की हल्की पोशाकें हवा में लहराया करतीं।

लोग जुलूस के पीछे पीछे भागते, छतों पर चढ़ जाते और अपने को कभी नसीब न होनेवाली विलासिता को आंखें फाड़ फाड़कर देखा करते।

इसी समय अफ़नासी ने बाग़ में से देखा कि पड़ोसियों के मकानों की छतों पर लोग चढ़ने लगे। उसने भी जल्दी जल्दी बांस की एक सीढ़ी लगायी और अपने मकान की छत पर चढ़ गया। हसन वहां पहले ही से जमा हुआ इधर-उधर ताक रहा था। बायीं ओर से नगर की चहारदीवारी तक जानेवाली सड़कों पर से आवाज़ें आ रही थीं। इसके माने थे कि सुलतान का जुलूस नहीं निकल रहा है। अन्त में उसे फाटक के पीछे से आते हुए कुछ घुड़सवार दिखाई पड़े। सभी सवार भूरे रंग के घोड़ों पर चढ़े थे और सफ़ेद और हरी हरी पोशाकें पहने थे। सबसे आगेवाले घोड़े की रकाब में अल्लाह का हरा झंडा गड़ा था।

"आं! अल्लाह! अल्लाह! ऊ-ऊ-ऊ!" छतों और पेड़ों पर बैठे हुए तथा फ़ौजियों से आगे आगे चलनेवाले लोग चिल्ला उठे।

"महमूद गवान के घुड़सवार!" हसन उत्तेजित होकर चीख उठा।

कोई बीस घुड़सवार सड़क पर आ गये। उनके पीछे की सड़क एक मिनट के लिए खाली दिखाई पड़ने लगी। फिर पैदल चलने वालों का तांता शुरू हुआ...

"क़ैदी लाये जा रहे हैं!" चारों ओर से यही आवाज सुनाई दी।

चार चार क़ैदी एक एक रस्सी से बंधे थे। सभी नंगे सिर थे। सभी सिर झुकाये, लड़खड़ाते और धूल फांकते-से चल रहे थे। सभी

थकान से चूर थे, फिर भी एक दूसरे को सहारा दे रहे थे। माताएं अपनी बची-खुची शक्ति लगाकर चीख़ते-चिल्लाते बच्चों को छाती से चिपटाये थीं। इन गंदे, फटे-हाल लोगों में से कुछ ऐसे भी थे जो ताड़ के पत्तों से किसी प्रकार अपनी लज्जा ढके थे। सभी के पैरों में बिवाइयां फट रही थीं, छाले पड़ गये थे।

इन क़िस्मत के मारों का जुलूस किसी प्रकार घसिट रहा था, लेकिन लोग थे कि उत्तेजित हो होकर उनपर मिट्टी के ढेले और पत्थर बरसा रहे थे। भीड़ मस्त चिल्ला रही थी और सिपाही उसे ढकेल रहे थे। अफ़नासी का कलेजा बैठा जा रहा था।

किसी पागल नागरिक ने ऐसा साधकर एक पत्थर मारा कि वह किनारे पर लड़खड़ा लड़खड़ाकर चलनेवाले एक सात साल के बच्चे के सिर में लगा और बच्चा वहीं ढेर हो गया। बेचारा आख़िरी बार चीख़ भी न पाया। बस, उसके कन्धे दो बार फड़फड़ाये और फिर हमेशा के लिए शान्त हो गये। उसकी भूरी और दुबली-पतली लाश बढ़ते हुए लोगों के पीछे रस्सी के सहारे घसिटती चली गयी।

भीड़ ख़ुशी से चीख़ उठी।

अफ़नासी ने ओंठ काटे और सहसा सामने झुक गया।

इस हो-हल्ले से फ़ायदा उठाकर घेरे में बंधी हुई किसी लड़की ने उस गिरे हुए बच्चे को गोदी में उठा लिया। ठीक इसी समय वह अफ़नासी के मकान के आगे से गुज़र गयी। उसके काले काले बालों पर धूल जम गयी थी, ओंठों का फेन सूख चुका था। वह कठिनाई से चलती रही। लाश का बोझ उसके लिए भारी पड़ रहा था। उसके दुबले-पतले चेहरे पर दुख की नहीं, घृणा की झलक थी।

अफ़नासी के मुंह से निकलते निकलते रह गया—"ओलेना!"

सहसा उसके हाथ कांपे और वह अपने पर नियंत्रण न रख सका। वह जैसे मुंह बा बाकर सांसें लेने लगा। लड़की, जो फटी-सी साड़ी पहने थी, उसके आगे से निकल गयी। क्या यह भगवान का ही तो चमत्कार न था? वह पंजों पर खड़ा हो गया। ओलेना का सिर दूसरे सिरों के समुद्र में ग़ायब हो चुका था किन्तु उसने ओलेना की तरह दाहिने कंधे की ओर झुकी हुई उसकी गरदन एक बार फिर देखी, और बस!

सहसा उसे काशिन के घर की ड्योढ़ी और उस सन्ध्या की याद आ गयी।

"मेरा इन्तज़ार करोगी न, मेरी लाड़ली?"

"करूंगी, करूंगी ..."

क़ैदी चले गये। हसन उस शर्मनाक जुलूस के अन्त में चलनेवाले घुड़सवारों को देख रहा था। अफ़नासी नीचे उतर गया। आश्चर्य कि सतायी हुई लड़की की शक्ल ओलेना से कितनी मिल-जुल रही थी। इससे उसके दिल में हलचल मच गयी। धिक्कार है उन लोगों को जो असहाय क़ैदियों पर ज़ुल्म ढाते हैं। इन बेचारे गुलामों को देखकर उसका कलेजा जल-सा गया।

रंगीन सुबह काली पड़ चुकी थी। सिर के ऊपर चहचहानेवाले तोते भी इस समय उसे काटते-से लग रहे थे। "जैसे तातार रूसियों पर ज़ुल्म करते हैं!" उसने सोचा।

हसन कूदकर बग़ीचे में आ गया और उसके आगे मुस्कराता हुआ, कहने लगा –

"अब खज़ानची का इन्तज़ार करना चाहिये। आपको हिन्दुओं के पास जाने की कोई ज़रूरत नहीं। खज़ानची आपकी पूरी पूरी मदद करेगा ..."

अफ़नासी हसन की आंखों में आंखें डालकर देखने लगा।

"हिन्दुओं ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जी?"

उसके मुंह से निकलते निकलते रह गया—"और कौन जाने तेरे मां-बाप हिन्दू ही रहे हों। तुझे मालूम ही न हो?"

"वे सारे मुसलमानों को मार डालना चाहते हैं," हसन ने दृढ़ता से उत्तर दिया। उसके चेहरे पर कोई भाव न थे।

अफ़नासी ने सिर झुकाया और उदास-सा होकर उससे पूछने लगा—

"इन क़ैदियों का क्या करेंगे?"

"बेच देंगे इन्हें," एक ओर देखता हुआ हसन बोला, "चावल तैयार है, खोजा। दूं?"

"नहीं।"

अफ़नासी उठ खड़ा हुआ। उसका हृदय अशान्त था। वह जानता था कि वह असहाय है, कुछ नहीं कर सकता। उसका जी हुआ कहीं चला जाय, भाग जाय। हसन के साथ रहना उसे बर्दाश्त न हो रहा था।

"हसन, मैं रंगू के पास जा रहा हूं।"

हसन ने आंखें फाड़कर देखा और कन्धे झटका दिये। खोजा यूसुफ़ ने मेरे लिए क्या नहीं किया! उसके साथ रहकर तो मैं अपनी पहली हीनता तक को भूल गया था। लेकिन पिछले कुछ समय से खोजा बराबर हिन्दुओं के साथ रहता है। बेशक वह ईसाई है, लेकिन हसन तो मुसलमान है। काश खज़ानची जल्दी आ जाता फिर सब ठीक हो जाता।

निकीतिन सड़क पर कुछ समय तक अनिश्चित-सी दशा में खड़ा रहा, फिर तेज़ी से घूमा और हिन्दुओं के मुहल्लों की विरुद्ध दिशा में चल दिया। क्यों? इस क्यों का उत्तर वह स्वयं न जानता था ...

बीदर के बाज़ार में रंग ही रंग दिखाई दे रहा था। आज सुबह से तो वहां विशेष चहल-पहल मची हुई थी, हमेशा से कहीं अधिक। ठठेरे अपने काम पर वैसे ही जुटे थे, जुलाहे अपने साधारण-से करघे वैसे ही तत्परता से चला रहे थे, दूकानदार अपने अपने सौदे बेचने के लिए वैसे ही चिल्ला रहे थे, दरवेश वैसे ही चीख़-चिल्ला रहे थे और खरीदार वैसे ही एक दूसरे को धकिया धकियाकर चल रहे थे। फ़ारस के बढ़िया कामवाले क़ालीन, हिन्दुस्तान के ख़ूबसूरत कपड़े, मसाले, तरकारियां, गोश्त, थालियां, क़टोरे—यह सारी चीज़ें ज़मीन पर, तख़्तों पर और बेंचों पर बिखरी पड़ी थीं। सामान के इर्द-गिर्द अजीब चिल्ल-पों मची हुई थी।

किन्तु जिस ओर ग़ुलाम बिक रहे थे उधर असाधारण चहल-पहल थी।

क़ैदी बेचारे छोटे छोटे दलों में खड़े हुए अपनी अपनी क़िस्मत के फ़ैसले का इन्तज़ार कर रहे थे। अफ़नासी योद्धाओं, व्यापारियों और रईसों के हरमों के जनखों के बीच से होता हुआ आगे बढ़ रहा था।

उसने देखा—ख़रीदार ग़ुलामों के जिस्म ठोंक बजाकर देख रहे हैं, उनके मुंह में उंगलियां डाल डालकर उनके दांतों की जांच और औरतों के शरीरों की रचना के बारे में व्यवहारिक ढंग से बातचीत कर रहे हैं।

उसे हज़ारों चेहरे दिखाई दिये—उदास, रुआंसे, अपमानित।

उसने उस लड़की को भी देखा। लड़की अपने मालिक के पास खड़ी थी। उसका मालिक एक बूढ़ा खूसट सिपाही था जिसके मुंह पर चोटों के निशान थे। वह हाथ में एक रस्सी पकड़े था जिसमें पांच लड़कियां बंधी थीं। एक अधेड़-सा मुसलमान उस लड़की को खरीदना चाहता था। इस मुसलमान की बायीं आंख टेढ़ी थी। उसने लड़की

के चारों श्रोर एक चक्कर लगाया श्रौर सिर नीचे कर उसके शरीर की जांच करने लगा। सिपाही इस खरीदार की श्रोर तटस्थ-सा देख रहा था। लड़की शांत खड़ी थी। उसका शरीर तना हुश्रा था, सिर ऊपर उठा हुश्रा था श्रौर श्रांखों से निकलकर बड़े बड़े श्रांसू नीचे ढरक रहे थे।

"छः शेखतेले?" सोचते हुए टेढ़ा ख़रीदार धीरे से बोल उठा, "लेकिन इसका क्या ठिकाना कि यह कन्या है?"

"श्ररे, तुम!" सिपाही रस्सी पकड़े पकड़े बोल उठा, "तो..."

श्रफ़नासी श्रपने को न संभाल सका। वह श्रागे बढ़ श्राया श्रौर सिपाही के सामने खड़ा हो गया।

"मैं ख़रीदूंगा!" उसने जल्दी जल्दी श्रौर श्रस्पष्ट शब्दों में कहना शुरू किया, "उसे छोड़ दो ... यह रहे ...सात शेखतेले..."

सिपाही ने रस्सी ढीली कर दी श्रौर निकीतिन की श्रंजुलि में खनकते हुए सिक्के देखने लगा।

टेढ़े ने श्रापत्ति की—

"माल मैं देख रहा हूं। शायद मैं भी सात शेखतेले दे दूं।"

"मैं दस दूंगा!" टेढ़े की श्रोर न देखते हुए श्रफ़नासी बोल उठा।

"ग़ुलाम इतने महंगे नहीं होते!" उसने एतराज़ करते हुए कहा।

लेकिन सिपाही बोला—

"खोजा दस दे रहे हैं। लड़की उन्हीं को मिलेगी। बोलो तुम दस से ज़्यादा दोगे?"

"मेरा दिमाग़ ख़राब है क्या कि एक लड़की के लिए इतना पैसा दूं!"

"ऐ काने, भाग यहां से! श्ररे ऐसे माल के लिए तो तुरन्त दस कहना चाहिए। खोजा की श्रांखें हैं जौहरी की श्रांखें श्रौर दिल माशा-

अल्लाह कितना बड़ा है उनका। वे समझते हैं सिपाही की मुसीबतें – तुम्हारी तरह थोड़े ही हैं। इस माल के लिए मैंने ख़ून बहाया है!"

सिपाही ने लड़की निकीतिन की ओर बढ़ा दी।

"जा, अब ये खोजा तेरे मालिक हुए ... उम्रदराज़ हो खोजा! तुमने बढ़िया माल ख़रीदा है। इसे इस्तेमाल करना और गफ़ूर का नाम लेना। गफ़ूर यानी मलिक-अत-तुजार का सिपाही!"

यह दुबली-पतली लड़की जड़वत् निकीतिन के सामने खड़ी हो गयी।

अफ़नासी ने उसकी कलाई पकड़ी और उसे बाज़ार के बीच से होता हुआ ले चला। लड़की विनम्रतापूर्वक उसके पीछे पीछे चलती रही। निकीतिन को लगा जैसे सारा बाज़ार उन्हें घूर घूरकर ताक रहा है। वह दांत भींचे लोगों को हटाता हुआ आगे बढ़ रहा था और भीड़ की आंखों से हटकर घर पहुंचने की जल्दी में था। आख़िर बाज़ार पीछे छूट गया। वह रहा नुक्कड़, वह रहा ताड़ का पुराना पेड़ और वह कुम्हार का मकान।

हसन साश्चर्य पीछे आता रहा। फिर मुंह खोलकर मुस्कराया।



"खोजा, तुमने रखेली ख़रीदी है?" ख़ुश होकर उसने पूछा, "बड़ी हसीन है। मुबारक हो। घर में रौनक रहेगी।"

निकीतिन ने उसे कठोर दृष्टि से देखा –

"चुप रहो! जाकर पानी लाओ!"

हसन मुंह सामने किये किये

पीछे हटने लगा और हाथ पीछे कर चमड़े की बाल्टी टटोलने लगा।

अफ़नासी लड़की को बग़ीचे में ले आया और उसे बाहर की सीढ़ियां दिखाते हुए कहने लगा –

"बैठो!"

वह उसकी आज्ञा मानकर बैठ गयी और पथराई-सी आंखों से सामने देखने लगी।

निकीतिन ने लड़की की अधखुली छाती और सांवले रंग के नंगे पैर देखे और धीरे धीरे बड़बड़ाता और मुक्का दिखाकर किसी को धमकी-सा देता हुआ दौड़कर घर में घुस गया। कमरे में कुछ महंगी क़िस्म के अच्छे कपड़े रखे थे। उसके हाथ में जो पहला कपड़ा पड़ा उसने उसे उठाया और यह अनुमान लगाकर कि वह लड़की के लिए ठीक होगा बग़ीचे में लौट आया। लड़की पहले की ही तरह अपनी जगह जड़वत् बैठी थी।

लड़की की ओर देखने का प्रयत्न न करते हुए अफ़नासी ने कपड़ा उसकी ओर बढ़ा दिया।

"यह लो ... इसे पहन लो ..."

किन्तु वह न हिली, न डुली। कपड़ा उसके घुटनों से फिसलकर ज़मीन पर गिर गया।

निकीतिन ने कपड़ा उठा लिया। उसपर गर्द लग गयी थी। उसने गर्द झाड़ी और फिर उसे लड़की की ओर बढ़ाते हुए कहने लगा –

"यह लो!"

दरवाज़ा खुला और बाल्टियां लिये हसन उनके पास आ गया।

"पानी ले आया हूं, खोजा।"

"तसला दो ... यहां ... इसमें उड़ेलो पानी ... और लेकर जाओ। यह थोड़ा है। जल्दी जाओ!"

हसन फिर भागता हुआ निकल गया।

अफ़नासी वहीं खड़ा खड़ा पैर पटकता रहा। उसकी समझ ही में न आ रहा था कि इस लड़की को कैसे समझाये कि वह नहा-धो ले। आखिर उसने उसका हाथ पकड़ा, उसे तसले के पास लाया और पानी दिखाकर इशारा किया—नहा डालो।

लड़की उसकी आज्ञा मानकर धीरे धीरे साड़ी उतारने लगी। अफ़नासी वहां से चला गया।

हसन से बाल्टियां लेकर उसने आज्ञा दी—

"जाओ और कर्ण या रंगू को बुला लाओ।"

अफ़नासी पानी की छपाक सुनता हुआ अंधेरे बरामदे में खड़ा हो गया।

फिर कोई आध घंटे तक इन्तज़ार कर चुकने के बाद वह बड़ी सावधानी से उस दरवाज़े की ओर बढ़ा जो बग़ीचे में खुलता था।

"अन्दर आ सकता हूं?"

एक सेकंड तक चुप्पी रही। उसके पश्चात् उसे उस लड़की की महीन आवाज़ सुनाई दी। लड़की ने न जाने किस भाषा में क्या कहा और अफ़नासी ने दरवाज़ा खोल दिया।

लड़की नीली रेशमी साड़ी पहने गुलाब की झाड़ी के पास खड़ी हो गयी। वह अपने धुले-पुछे हाथों से साड़ी का किनारा पकड़े थी। उसके चमचमाते हुए काले बाल गुंथे और सिर के पीछे चोटी के रूप में बंधे थे। बड़ी बड़ी आंखें, गोल भौंहें और हल्के गुलाबी ओंठ उसकी सुन्दरता में चार चांद लगा रहे थे।

लड़की का चेहरा कुछ कुछ अफ़नासी की ओर झुका हुआ था।



भय, अविश्वास, आशा की क्षीण किरणें, मूक गिड़गिड़ाहट और आश्चर्य–ये सारी भावनाएं न केवल उसके चेहरे से ही, अपितु उसके सम्पूर्ण दुखी व्यक्तित्व से व्यक्त हो रही थीं।

अफ़नासी ने मन ही मन उसकी सराहना की। उसे उसकी हालत पर तरस भी आया। वह उससे क्या कहे, क्या सुने, यह उसकी समझ ही में न आ रहा था। वह उसे देखकर बड़े स्नेह से मुस्कराया और जैसे उसे समझाते हुए हाथों के इशारे से कहने लगा – यहां की हर चीज़ तुम्हारी है, तुम डरो मत। यहीं रहो, खुश रहो।

प्रायः हाव-भाव और मुद्राएं दिल की बात शब्दों से अधिक प्रकट करती हैं। शायद इसी कारण वह चौकन्नी-सी लड़की तुरन्त ही समझ गयी कि यह व्यक्ति मेहरबान है, उदार है और उसका बुरा नहीं चाहता। उसके ओंठों पर सलज्ज मुस्कान बिखर गयी, जिसमें अफ़नासी के प्रति उसके विश्वास की झलक थी।

निकीतिन हंसा और खुश होकर छाती ठोंकता हुआ कहने लगा –

"मैं अफ़नासी हूं। मेरा नाम है अ-फ़-ना-सी!"

लड़की ने उसकी बात समझी और छाती पर फिसलती हुई साड़ी कांपती हुई उंगलियों से साधे रही।

"सीता!" अफ़नासी को उसकी आवाज़ सुनाई दी।

जब रंगू पहुंचा उस समय अफ़नासी और सीता पास पास बैठे थे। अफ़नासी के सिर पर पगड़ी न थी। सीता की निगाहें उसके बालों से होती हुई उसके गोरे गोरे हाथों पर टिक गयी थीं। लग रहा था जैसे वह उसे समझने का प्रयास कर रही हो।

निकीतिन की बात सुनकर रंगू ने सीता को समझाया कि वह आज़ाद है और पूछा कि वह कहां से आयी है और उसे कैसी मदद चाहिये।

लड़की के मुंह पर जैसे रौनक आ गयी। उसने रंगू की बात का जवाब दे दिया।

"यह लड़की मराठा जाति की है!" रंगू बोला, "हम दोनों एक दूसरे की बात समझते हैं।"

किन्तु कर्ण के पोते ने लड़की से कुछ बात और की और फिर निकीतिन की ओर विचित्र ढंग से देखने लगा।

"क्या बात है? क्या कहा?" अफ़नासी ने घबड़ाकर पूछा।

"सुनो," कुछ हिचकिचाते हुए रंगू बोला, "उसे जाने का कोई ठिकाना नहीं। उसका गांव जला डाला गया है। उसके मां-बाप मारे जा चुके हैं और उसकी बहन ... उसे कोई पियक्कड़ सिपाही उठा ले गये। बाद में सीता ने अपनी बहन को नहीं देखा।"

अफ़नासी की भौंहें तन गयीं। उसने दृढ़ता से कहा—

"ख़ैर! अगर चाहे तो फ़िलहाल मेरे घर रहे। शायद हमें उसके किसी नाते-रिश्तेदार का पता चल ही जाय।"

"और अगर न चला?" रंगू आपत्ति करते हुए बोला, "उसे तो अपने घर का रास्ता भी नहीं मालूम। फिर वह है भी बहुत दूर। उसे एक महीने से अधिक तो रास्ते में ही घसिटते लग गया था।"

"तो फिर ..." अफ़नासी ने कहा, "ख़ैर बाद में देखा जायेगा।"

"हमें राम लाल की राय लेनी चाहिये!" रंगू धीरे से बोला, "इस लड़की को अपने कुटुम्बियों से मिलना ही चाहिए, अपनी जातवालों से।"

"जातवालों से? क्यों?" निकीतिन ने आपत्ति की, "वह उनके बिना भी जीवित रहेगी।"

"आदमी को अपनी जात का ही होकर रहना चाहिये," रंगू जैसे अपनी बात पर अड़ा रहा, "मैं राम लाल के पास जाऊंगा। जैसा वह फ़ैसला करेगा हम वैसा ही करेंगे ... अगर तुम्हें एतराज़ न हो तो।"

"अच्छी बात है, मुझे कोई एतराज़ नहीं," उदास होकर निकीतिन ने उत्तर दिया।

रंगू उठा, लड़की से कुछ कहा और जाने की तैयारी करने लगा।

"ठहरो!" निकीतिन ने उसे रोका, "मेरे बारे में भी तो इसे कुछ बता दो। कहां से आया हूं, कौन हूं। वरना वह खाना तक न छुयेगी। वह भूखी है ..."

रंगू चला गया। सीता ने खाना खाया और उसकी ऐसी आंख लगी कि बड़े कमरे के क़ालीन पर मुरदे की तरह पड़ गयी। तभी अफ़नासी ने हसन को अंधेरे गलियारे में खड़े देखा।

"खोजा," हसन जोश में आकर बोला, "हिन्दुओं की बातें न सुनो, खोजा! यह लड़की तुमने खरीदी है। वह तुम्हारी अमानत है। यह ब्राह्मण जाने क्या क्या जड़ दे। इसे यहां आने ही मत दो, खोजा!"

निकीतिन सिर हिलाता हुआ वहीं खड़ा रहा।

"तुमने मेरा ख्याल किया, हसन। शुक्रिया। पर तुमने उसके बारे में कुछ नहीं सोचा? वह कैसे रहेगी, सोचा है? नहीं तो, हसन..."

खजानची मुहम्मद अपने आलीशान मकान के बग़ीचे में एक छोटे-से तालाब के किनारे बैठा हुआ आटे की रोटी के छोटे छोटे टुकड़े तोड़कर पानी में फेंकता और चंचल मछलियों को टुकड़ों पर मुंह मारते हुए देखता जा रहा था।

यह एक सीधा-सादा मन बहलाव था किन्तु मुहम्मद की आंखों के सामने ऐसा धुंध छा रहा था कि तालाब, मछलियां और रोटी के छोटे छोटे टुकड़े—एक एक के दो दो, तीन तीन और फिर ढेरों का स्वरूप धारण कर कहीं दूर, किसी अज्ञात दुनिया में, अदृश्य हो गये थे। उंगलियां बराबर टुकड़े तोड़तीं और उन्हें यन्त्रवत् तालाब में फेंकती जा रही थीं ... नहीं! ख़ज़ानची का ध्यान किसी खास चीज़ की ओर न था। और सचमुच वह वास्तविकता की दुनिया में लौटना भी न चाहता था—आख़िर इस दुनिया में उसे सुख था कहां? उसे लग रहा था उसे जैसे उसमें लगन और विचारों की दृढ़ता का अभाव-सा है। वह जानता था कि यह दशा उसके मन की क्लान्ति की सूचक है। किन्तु उसे इसी में सुख मिल रहा था, ऐसा सुख जिसमें व्यथा की छाप थी। वह अकेला था, सबकी आंखों से दूर।

खज़ानची को अपना शरीर कमज़ोरी के कारण भारी, थका थका और पराया जैसा लग रहा था। लोगों का ख्याल था खज़ानची बहादुर है, साहसी है, शक्तिशाली है, उसमें जिन्दगी है। किन्तु खज़ानची जानता था कि यह सब कुछ झूठ है, उपर्युक्त सारे गुण उसके लिए मौत की नक़ाब की तरह हैं। वह लोगों को धोखा दे सकता था पर खुद अपने को धोखा देना वह नहीं चाहता था। बात सारी दिल्ली में हुई थी, कोई दस साल पहले। उस हिन्दू राजेन्द्र को लेकर। पर उस समय ख़ज़ानची न जानता था कि इसके परिणामस्वरूप उसकी आत्मा पर मुरदनी छा जायेगी। उसने ज़िन्दगी को पकड़ना चाहा था, जीना चाहा था। उसने

सारा मान-सम्मान, सारी दौलत जोड़ी थी चुग़लख़ोरी से किसी को मौत के घाट उतारकर। अब गोया कि उस क़र्ज़ को उतारने का समय आ गया था। उसकी आत्मा कराह रही थी और वह उससे अपना पिंड छुड़ाने में असमर्थ था। बिल्कुल असमर्थ। कोई अस्पष्ट-सा भय बराबर उसके पीछे पड़ा रहता था। नौकरों-चाकरों की निगाहें, चिलचिलाती धूप में जानेवाले किसी हिन्दू की सफ़ेद धोती, दूसरों की हंसी, फुसफुसाहट इन सभी में उसे कोई भय-सा लगा करता। कभी कभी तो खज़ानची का जी करता कि घायल शेर की भांति गरजे, चीखे। निराशा के दौरे के बाद उसे लोगों पर क्रोध आने लगता। दूसरों को घृणा की दृष्टि से देखना—यही तो उसे जीवित रखने में सहायता दे रहा था। दूसरे तुच्छ हैं, निकम्मे हैं, उसका यह विश्वास जैसे उसके अपने अस्तित्व को सुदृढ़ बना रहा था, अपनी निगाहों में उसे ऊंचा उठा रहा था ...

किन्तु कभी उसे लगता जैसे यह सब धोखा है। और तब वह संकल्प कर लेता कि वह ईमानदारी की ज़िन्दगी बसर करेगा, किसी का बुरा न चेतेगा और अपने पुराने पापों का प्रायश्चित करने के लिए भविष्य में अच्छे काम करेगा।

और सचमुच उसने कई अच्छे काम किये भी। उसने मस्जिद में खैरात बांटी, ग़रीबों की मदद की, ज़रूरतमंदों को पैसा दिया, उन लोगों की सहायता की जिनके कारोबार चौपट हो गये थे।

बीदर में कम से कम बीस आदमी ऐसे थे जो खज़ानची की पूजा करते थे। वह कभी अपने गुलामों पर ज़ुल्म न करता, उन्हें विवाह की अनुमति देता। कइयों को तो उसने आज़ादी भी दे दी थी। छोटे छोटे व्यापारियों को वह हमेशा रुपये-पैसे की मदद दे दिया करता। मुल्ले तो उसकी उदारता की मिसालें दिया करते थे।

लेकिन भय था कि उसके पीछे ही पड़ा रहता। अपनी कमज़ोरी के क्षणों में, जैसा उसे इस समय लग रहा था, खज़ानची आराम करता। डर से भागकर आराम करता।

ख़ज़ानची ने कसकर आंखें मींचीं, सिर हिलाया और कन्धे झटका दिये। उसकी उंगलियों ने रोटी का बड़ा टुकड़ा तोड़ा और झटके के साथ तालाब में फेंका। मछलियां तितर-बितर हो गयीं। किनारे पर से उसे एक छोटा-सा काला कछुआ दिखाई दिया। कछुए ने अपना लालची सिर उठाया। उसके पंजे धीरे धीरे चल रहे थे। वह टुकड़े की ओर तैर रहा था ... ख़ज़ानची का मदहोश कर देनेवाला कमज़ोरी का दौरा जैसे दूर हो गया। अब सब कुछ असली हालत में अपनी अपनी जगह पर आ गया। अब अपने ख़्यालों के बीच उसे ध्यान आ रहा था रूसी सौदागर का, जिसका ख़ज़ानची मुहम्मद इन्तज़ार कर रहा था।

इस ख़्याल के आते ही जैसे वह कुछ कुछ चिड़चिड़ा उठा।

वह पिछले दो दिनों से बीदर में था। किन्तु उसकी निगाहों के आगे खेलना की चढ़ाई, मारकाट, आगजनी और उन पर्वताकार हाथियों की शक्लें घूम रही थीं जिनके पैरों के नीचे पड़कर नंगी औरतें और पागल-से पुरुष कुचल जाते थे। लेकिन रूसी का ख़्याल आते ही ये चित्र भी ग़ायब हो गये। हुं-ह ... हुं-ह ... वज़ीरे आज़म मालिक-अत-तुजार, उसपर मेहरबान था। उसकी घोड़ों की खरीद से महमूद गवान बड़ा खुश हुआ था। जब खज़ानची ने उससे अज्ञात रूस से आये हुए विचित्र परदेसी और रूस के सस्ते सामानों का ज़िक्र किया था तो उसने इन बातों में भी दिलचस्पी ली थी। इसके अतिरिक्त मुहम्मद ने असद-ख़ान के सामने परदेसी की जो वकालत की थी उसका भी महमूद गवान ने अनुमोदन किया था और यह आज्ञा दी थी कि जब वह बीदर आयेगा तो उस रूसी से बातचीत करेगा ...

वज़ीरे आज़म की क्या बात—ढेरों काम, ढेरों चिन्ताएं। शंकर राजा पर चढ़ाई करनी है, गोआ फ़ौज भेजनी है, मलाबार तट पर जाना है। विजयनगर पर चढ़ाई करने की बात सोचनी है। फिर भी उसने उस रूसी में दिलचस्पी दिखायी।

"यह बहादुर आदमी है!" मुहम्मद को आज भी वज़ीरे आज़म के ये शब्द साफ़ साफ़ सुनाई पड़ रहे थे।

हां, बेशक बहादुर है। किन्तु जाने किस बात से खज़ानची इस व्यक्ति की ओर से अधिकाधिक चिन्तित और सतर्क होता जा रहा है। इस रूसी ने एक हिन्दु की रक्षा करके हुसेन के साथ बड़ा विचित्र व्यवहार किया था। असद-खान से भी असभ्यता से पेश आया था। और फिर बीदर में भी उसका व्यवहार बड़ा अजीब रहा है।

यह रूसी सीधा-सादा है। सोचता है कि बीदर में ऐसे खो जायेगा जैसा रेत में सुई। लेकिन वह नहीं जानता कि शहर कोतवाल की आंखें चमरौटी तक पर रहती हैं। फिर वह सूदखोर किरोधार और पानी भरनेवाले वे छोकरे जो उसी कुएं से पानी खींचते हैं जहां से हसन लाता है। और फिर दूसरे नौकरों की तरह हसन के पेट में भी तो बात नहीं खटाती। फिर वे व्यापारी हैं जो निर्मल से ईर्ष्या करते हैं। इस रूसी के बारे में राई रत्ती तक मालूम है—राई रत्ती तक।

हिन्दुओं के साथ उसका मेल-जोल! बीदर में रहनेवाले व्यापारी के लिए यह कुछ खास बात नहीं। सबसे बुरी बात तो है कर्ण का यानी राजेन्द्र के पिता का साथ। और राजेन्द्र—खज़ानची उसका तो नाम भी ज़ोरों से नहीं ले सकता। हो सकता है यह सब कुछ इत्तिफ़ाक़ से ही हुआ है। हां, कर्ण खज़ानची को नहीं जानता। वह जान भी नहीं सकता। और जानना चाहिये भी नहीं। फिर भी .... फिर भी ...

खज़ानची ने रोटी खत्म कर डाली। उसके ओंठ भिंच गये। और पलकें खुली रह गयीं। उसके दिल में अपने आप इस सीधे-सादे, भोले-भाले और दृढ़निश्चयी आदमी पर खीझ हो रही थी जो देश के शासकों के रस्म-रिवाजों, उनके क़ानूनों को नहीं मानता था। पर जब गुलाम ने रूसी सौदागर के आने की सूचना दी तो मुहम्मद ने मेहरबानों जैसा मुंह बना लिया, मुस्कराते हुए उठा और हाथ बढ़ाते हुए, उससे मिलने के लिए आगे आ गया – अभी उसने अन्तिम रूप से कोई निश्चय न किया था।

"यह फ़र्वरी का महीना है। हम कोई छः माह से एक दूसरे से नहीं मिले!" खज़ानची बोला और बढ़िया बिसात पर हाथी-दांत के बने शतरंज के मोहरे बिछा दिये। "सूरत शक्ल से तो अच्छे दिखाई पड़ते हो। कैसे हाल-चाल हैं?"

"हाल-चाल ठीक हैं," खुशी से अफ़नासी ने उत्तर दिया, "दिसम्बर में घोड़ा बेच दिया था, उमर-खान के हाथ। उसे जानते हो?"

"सुलतान के घुड़सवारों का सरदार? उसने ठीक ही क़ीमत दी होगी।"

"हां ..."

"तो तुम बीदर में रहते हो? तुम्हें यहां अच्छा लगता है?"

"शहर बुरा नहीं है। लेकिन अभी तो मैंने महल ही नहीं देखा। मुझे कोई जाने ही नहीं देता।"

"महल दिखाने का इन्तज़ाम मैं कर दूंगा। तुम महल देख लोगे... तुम्हारा कारोबार ठीक चल रहा है न?"

"क्या बताऊं? मैं अधिकतर देखता-सुनता हूं। मैंने बंगाल, गंगा और आसाम के बारे में बहुत कुछ सुना है। सोचता हूं एक चक्कर लगा आऊं ..."

"फिर जाते क्यों नहीं ?"

"समय निकला जा रहा है, दोस्त। और बंगाल, आसाम जाने केलिए दो-तीन साल चाहिये। लगता है इस बार भाग्य मुझे वहां न ले जायेगा। और मैं अपने देश के लिए तरस रहा हूं। श्री-पर्वती ज़रूर जाना चाहता हूं और गोलकोंडा और रायचूर भी।"

"आ-ऽऽ! जवाहरात के लिए न ... किसके साथ जाओगे श्री-पर्वती ?"

"मेरे परिचित हिन्दुओं ने मुझे अपने साथ ले जाने का वादा किया है। एक रत्न-तराश है, कर्ण ... तुमने उसका नाम नहीं सुना?"

"कर्ण ... हूं-ह ... लगता है सुना है। कुछ भी हो सारे काफ़िर एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं।"

"नहीं, ऐसा न कहो!" अफ़नासी ने टोकते हुए कहा और बिसात के ऊपर हाथ करते हुए सोचने लगा।

शतरंज में खेल की स्थिति बड़ी विषम हो रही थी। अफ़नासी अपना हाथी गंवाकर मुहम्मद की स्थिति खतरे में डालने की सोच रहा था। किन्तु खज़ानची उसका जवाब भी तो दे सकता था। आखिर अफ़नासी ने तय कर लिया। यदि मुहम्मद घोड़े की चौथी चाल पर ध्यान नहीं देता तो फिर मात।

अफ़नासी ने बिसात पर धड़ से मोहरा रखा और शह दे दी।

"हां, ऐसा न कहो!" उसने अपनी बात दुहरायी। "तुम तो मुझे जानते ही हो। मैं हूं ईसाई। मुझे मुहम्मद या विष्णु से क्या करना-धरना! मुझे माफ़ करना, मैं कहूंगा साफ़ साफ़। बुरा मत मानना। पर ऐसे कुछ मुसलमान हैं और हिन्दू भी जो मुझे अपनों जैसे लगते हैं। बेशक हम अलग अलग ढंग से अपना धर्म मानते हैं, हमारे रीति-रिवाज भी अलग अलग हैं, पर इनसान हमेशा इनसान रहता है न।

अच्छे, ईमानदार और सीधे-सा लोग भी होते हैं और ईमान और बुरे लोग भी। ईसाइयों में भी बुरे लोगों से कोई दोस्ती नहीं करता।"

"यह मज़हब तो बड़ा विचित्र है!" निकीतिन का हाथी पीटते हुए मुहम्मद मुस्कराया। अफ़नासी ने भी जवाबी चाल चली और दाढ़ी सहलाने लगा।

"शायद ... शायद ..." अफ़नासी ने अन्यमनस्क होकर उत्तर दिया, "जानते हो कि मैं फ़ारस होकर आया हूं। मैंने मुसलमानी शहर देखे हैं। तुम्हारे गीत सुने हैं, शैरो-शायरी सुनी है। यह बड़ी ख़ूबसूरत चीजें हैं। भारत में भी भले मुसलमान हैं। उनमें कारीगर भी हैं और कलाकार भी। सच पूछो तो पहले मुझे तुम लोगों की बातें पसन्द न थीं। लेकिन आज वही विचार मुझे बेहूदा लगता है। हर जगह ऐसी चीज़ें हैं जिनकी इज़्ज़त करनी चाहिये और उनसे कुछ सीख लेनी चाहिये। यही बात काफ़िरों के बारे में भी सच है। मेरा एक दोस्त है राम लाल। उसने मुझे महाभारत का क़िस्सा सुनाया है।"

"'महाभारत' का क़िस्सा सुनाया है ..."

"हां, कितना अद्भुत है यह क़िस्सा। यह ग्रन्थ तो विद्वत्ता की खान है।"

"यह सब हिन्दुओं की मनगढ़न्त है।"

"अच्छा यही सही। लेकिन बिना आग के धुआं नहीं होता। हर क़िस्सा-कहानी की कोई न कोई तो सच्ची बुनियाद होती ही है। अतीत का इतने अनूठे ढंग से वर्णन किया गया है कि मुझे तो रश्क होता है। यह हुई पहली बात। फिर हिन्दुओं के देवताओं की कहानियां ही ले लो या उनके जुलाहों, हथियार-निर्माताओं, जवाहरात पर चमक रखनेवालों या रत्न-तराशों को ही देख लो ... शतरंज के ये मोहरे भी तो हिन्दुओं के बनाये हुए हैं?"



"शायद ..."

"हां। हिन्दू बड़ा होशियार होता है, कमाल का कारीगर। मैं बिना समझे-बूझे उसके दुख का कारण नहीं बता सकता। हो सकता है उसका कारण उनके पुराने रीति-रिवाज हों। मैंने सुना है कि हिन्दुओं की विधवाओं को ज़िन्दा जला दिया जाता है, उनमें आदमियों की क़ुरबानियां होती हैं, बड़े परिवार में लड़की के पैदा होते ही उसका गला घोंट दिया जाता है। हो सकता है इसका कारण उनकी जात-व्यवस्था हो, जिसने सारी जनता को बांट रखा है। या हो सकता है अहिंसा ने ही उनका अहित किया हो ... यह मेरी समझ में भी नहीं आता!"

"हमारा ख़्याल है उनकी अहिंसा हमारे अनुकूल है," शरारत भरे ढंग से ख़ज़ानची बोला, "वह सुलतानों के काम में विघ्न नहीं डालती!"

"ऐसा कैसे कह सकते हो तुम?" उसकी भर्त्सना-सी करते हुए अफ़नासी ने कहा, "इससे उन्हें सिर्फ़ तकलीफ़ें ही होती हैं। कर्ण की ही मिसाल ले लो। उसके बेटे को किसी ने मार डाला और वह है कि चुप बैठा है। अहिंसा का पुजारी! चुप बैठने के बजाय उसे अपने बेटे की मौत का बदला लेना था। हिन्दू ऐसे ही होते हैं– सब कुछ सह लेते हैं ... आख़िर कभी तो उनके सब्र का प्याला भरेगा ही।

ग्रौर तब उनके दुश्मन ग्रपना सिर भी न छुपा सकेंगे। तुम तो खुद ही जानते हो कि ग्रपने ग्रत्याचारियों की तुलना में इनकी संख्या कितनी ग्रधिक है!"

मुहम्मद ने उत्तर न दिया बल्कि बराबर बिसात पर नज़र गड़ाये रहा। निकीतिन ने खज़ानची पर निगाह डाली। खज़ानची की ग्रांखें शून्य-सी लग रही थीं। वह कांपते हुए हाथ से कोट का कालर झुला रहा था। वह भारी सांस लेते हुए बिसात पर निगाह दौड़ाने लगा।

"यह लो। ग्रब मैंने फांस लिया तुम्हें!" निकीतिन हंस दिया, "तुम्हें घोड़ा चलना था। ग्रौर ग्रब – मात ... चलो नयी बाज़ी बिछाग्रो... मैं काफ़िरों को बुरा-भला नहीं कह सकता..."

मुहम्मद ने फिर बाज़ी बिछायी ग्रौर ग्रपने को पूरी तरह संभाल लिया। ग्रफ़नासी के शब्दों ने उसे सहसा जिस मानसिक उलझन में डाल दिया था उससे वह किसी प्रकार उबरा। नहीं, इस रूसी को कुछ नहीं मालूम। फिर भी मुहम्मद के दिल में डर बैठा ही रहा।

खज़ानची गोटें चलता हुग्रा बोला –

"ग्रहिंसा .. यह तो सिर्फ़ फ़िलसफ़े की बात है... सच यह है कि कर्ण ग्रपने दुश्मन को नहीं जानता।"

"नहीं। ग्रहिंसा उनका धर्म है। कर्ण ग्रपने दुश्मन को जानता है," ग्रफ़नासी ने शांति से उत्तर दिया, "जानता है, लेकिन मुंह नहीं खोलता... मुझे उस बूढ़े पर तरस ग्राता है। कितने वर्षों से वह ग्रपनी ग्रात्मा पर जब्र कर रहा है! ग्रौर क्यों?"

"ग्रौर ग्रगर तुम होते तो... खोलते मुंह?"

"ज़रूर... मगर, खज़ानची, ज़रा ग्रपने मोहरे का भी ख्याल करो। ग्रपनी चाल वापस लो।"

खज़ानची ने हंसने की कोशिश की और अपने बादशाह को गिरा गया।

"मैं हार मानता हूं... आज खेलने के मूड में नहीं हूं। चलो पी जाय।"

"तो तुम्हारा पीना जारी ही है?"

"ज़िन्दगी में खुशी है कहां... मैंने यह नहीं सोचा था कि तुम हिन्दुओं के साथ यारी करोगे। सचमुच नहीं सोचा था। शायद उसकी कोई खास वजह हो? जितने मुंह उतनी बातें..."

"बात क्या है?"

"तुम्हीं अन्दाज़ लगाओ!"

खज़ानची ने सोत्साह मिठाई की तश्तरियां उसके आगे बढ़ा दीं और प्याले में शराब उड़ेलने लगा।

"नहीं, यह बात न उठाओ।"

"कोई राज़ की बात है क्या? लोग कहते हैं बड़ी हसीन है..."

"सुनो खोजा, वह मेरी बहन की तरह है। समझे? कोई ज़रूरत नहीं कि..."

"वह तुम्हारे मकान में तीन महीने से रह रही है, बहन की तरह?! छिपाओ मत, दोस्त! यह ठीक नहीं! मैं उसकी सेहत की कामना में पिऊंगा, बड़ी खुशी से।"

निकीतिन ने चांदी का प्याला हथेली में ढंक लिया।

"सुनो जी, तुम्हें मेरे बारे में यह सब मालूम कहां से हुआ?"

"ऐ... नौकरों की ज़बानें दो दो हाथ की होती हैं और पड़ोसियों के भी तो आंख-कान होते हैं। पियो न।"

अफ़नासी उदास हो गया और सोचने लगा।

"मुझे कुछ नहीं मालूम लोग क्या क्या बकते हैं," कुछ क्षण चुप रहने के बाद वह बोला, "बस मैं एक ही बात कहूंगा – वह सचमुच मेरी बहन की तरह है।"

"यह तो और भी खराब है," मुहम्मद ने आंखें मिचकायीं, "मैंने सुना है कि तुम उसे बहन कहकर पुकारते भी हो। हिन्दू औरत को – बहन कहकर! छिः! और यहां बीदर में जहां हिन्दू रहते हैं सुलतान की मेहरबानियों की वजह से ही!"

"यह बात तो पहले से ही समझता हूं!" उदास होकर निकीतिन ने व्यंग्य से सिर हिला दिया।

"देखो, मेरी राय मानो!" मुहम्मद ने दोस्ताना ढंग से निकीतिन का घुटना छुआ, "उसे रखेली कहकर पुकारा करो। यह बात लोगों की समझ में तो आयेगी और फिर तुम मुसीबतों से भी बचे रहोगे।"

"मैं ऐसा नहीं करूंगा! मैं डरपोक नहीं हूं, समझे?"

"तुम बड़े दृढ़निश्चयी हो! सच्चे आदमी हो! पर सावधान रहना... और हां, मुझे इसमें ज़रा भी शक नहीं कि जल्द ही तुम उसे रखेली कहकर पुकारोगे, सचमुच तुम यही करोगे!"

"देखो, खोजा, मुझे ऐसा मज़ाक़ पसन्द नहीं!"

"अरे अरे, तुम तो गर्म हो गये! अच्छा छोड़ो यह सब! आखिर शब्द होते क्या हैं? – सिर्फ़ धुआं! हवा चली और वह उड़ गया। चलो पियो, और पियो! मैं तुम्हारा दोस्त नहीं हूं क्या? मैं तुम्हें महल दिखाऊंगा, तुम्हारे बारे में रईसों और वैज्ञानिकों से बातचीत करूंगा। तब तुम देखोगे असली बीदर। तुम्हें मुझसे मिलने का पछतावा कभी न होगा। फिर हम रूस क़ाफ़िला भेजेंगे। फ़र लेने। साथ में हीरे ले चलेंगे। यूसुफ़! हमें आपस में झगड़ने की

ज़रूरत नहीं। हम दोनों की बहुत-सी एक जैसी चिन्ताएं भी हैं। हम दोस्ती के नाम पर पियेंगे... ग्रां! तुम मुझे शतरंज में मात देने तो नहीं ग्राये ? "

खज़ानची बराबर ग्रफ़नासी के प्याले में शराब ढालता ग्रौर गप्प लड़ाता रहा। हां, उसने इसके बाद हिन्दुग्रों से निकीतिन की मित्रता के बारे में कुछ न कहा।

ग्रफ़नासी मुहम्मद के ग्राने की कब से राह देख रहा था। वह सोच रहा था कि खज़ानची की सहायता से वह मुसलमानों से सुपरिचित होगा, किन्तु सीता के बारे में खज़ानची की बातें सुनकर उसे काफ़ी दुख हुग्रा।

फिर भी वह खज़ानची के स्वभाव ग्रौर नगर के रीति-रिवाजों को समझते हुए उसे क्षमा करने के लिए तैयार था।

ग्रौर जब ग्रफ़नासी घर पहुंचा तो सचमुच वह खज़ानची से हुई बातचीत जैसे भूल ही गया। उसे ख़ुशी हो रही थी कि इस समय वह सीता के पास था। सीता उसकी ज़िन्दगी के निकट थी। उसका उसके जीवन में इतना महत्त्व था।

ग्रफ़नासी के मन में क्या था, इसे कोई न भांप सका। सीता पिछले तीन महीनों से उसके घर रही थी ग्रौर ग्रफ़नासी के लिए ये महीने प्रेम ग्रौर पीड़ा, हर्ष ग्रौर विषाद के महीने थे।

ब्राह्मण राम लाल ने ग्रपना फ़ैसला दे दिया था – शायद इस लड़की के सगे संबंधी होंगे। ग्रगर ग्रफ़नासी उसके भोजन ग्रौर रहने-बसने की व्यवस्था करने को तैयार है ग्रौर वह उसके सगे-संबंधियों को ढूंढने में उसकी सहायता करना चाहता है तो यह लड़की उसके पास रह सकती है।

27—1576

सीता निकीतिन के साथ रहती रही। इस सीधी-सादी और भोली-भाली लड़की ने पहले ही दिन रंगू की पत्नी झांकी से अपने छोटे-से जीवन की रामकहानी कह डाली। सीता का पिता, अण्णू, किसान था। उसके पास थोड़ी-सी ज़मीन और सब्ज़ियों का एक बग़ीचा था। बेशक, उसका धान और उसकी सब्ज़ियां कभी उसके लिए पूरी न पड़तीं। उसे टैक्स देने होते, बढ़ता हुआ क़र्ज़ पाटना होता, देवताओं को दान-दक्षिणा देनी होती। लेकिन अभी तक ऐसा कभी न हुआ कि उनके पास तन ढकने को कपड़ा न हो और किसी दिन खाना नसीब न हुआ हो। गांव के आसपास के जंगलों में जामुन, महुआ, नारियल और खजूर उगते थे। सीता की मां मंझोरी खानेवाले कंद-मूल बीनने में माहिर थी। हां, उनके पास एक सुअर और एक अच्छा बैल भी था। सीता उनकी दूसरी लड़की थी। उसकी बड़ी बहन का नाम था बेगमा। वह बड़ी सुन्दर निकली। इसी लिए लोग उसे गांव से हटाकर एक दूर नगर में ले गये जहां वह प्रेम और धनधान्य की देवी लक्ष्मी के मन्दिर की देवदासी बन गयी। चौदह वर्ष बाद बेगमा पिछले साल ही घर आयी थी। उसके आते ही घर में आनन्द की वर्षा होने लगी थी। बेगमा के पास ढेरों कपड़े और साज-शृंगार की सामग्री थी, और मुंह पर लगाने के तरह तरह के रंग। वह ऐसा नाचती, ऐसा गाती कि कोई उसके सामने टिक न पाता। उसे वेद और पुराण पढ़ाये गये थे। अब आसपास, दूर दूर तक, उस जैसी इज़्ज़तदार दूसरी कोई औरत न थी। जब वह घर लौटकर आयी तो उसके मां-बाप हर्ष से आंसू बहाने लगे।

किन्तु बेगमा मां-बाप के घर अधिक दिनों तक न रह सकी। ब्राह्मण रामप्रसाद ने उसे अपनी पत्नी बना लिया।

सीता के परिवार के लिए यह और भी अधिक सम्मान की बात थी।

इसके बाद फिर मुसीबतें उनके सामने आयीं। गर्मी के बाद पानी-बूंद के दिन आये। मवेशियों के लिए यह काल सबसे अधिक संकट का था। सीता के परिवार का बैल मर गया।

सीता के पिता अण्णू ने महाजन पटेल से क़र्ज़ लेना शुरू किया। सूखे के कारण वह समय से क़र्ज़ न पाट सका। रामप्रसाद और वेगमा अपने परिवार की सहायता करना न चाहते थे। रामप्रसाद को अण्णू पर इसलिए क्रोध आया करता कि वह राजा के पास से आये हुए लड़कियों के खरीदार के हाथ सीता को बेचना न चाहता था।

क़र्ज़ दिनोंदिन बढ़ता रहा। पटेल ने अण्णू को तबाह कर डालने की धमकी दी, किन्तु साथ ही यह वचन भी दिया कि यदि सीता उसकी पत्नी बन जाये तो वह क़र्ज़ माफ़ कर देगा।

पटेल बूढ़ा था। कद्दू जैसा सिर और दुबली आंखें। फिर भी लोग उसकी इज़्ज़त करते थे। वह पंचायत का पंच था। उसी पर सारे परिवार की ज़िन्दगी निर्भर थी। अण्णू ने अपनी स्वीकृति दे दी...

रामप्रसाद के ज़रिये सीता की मंगनी हो गयी। ब्रह्मा और लक्ष्मी को भेंटें चढ़ायी गयीं। पटेल ने अण्णू का क़र्ज़ माफ़ कर दिया और सीता के लिए चांदी की पायलें खरीद दीं।

इस वर्ष विवाह और गौना होना था।

सीता बहुत रोयी चिल्लायी। उसने न जाने कितने देवी-देवताओं की मनौतियां मानीं – वे ही उसकी रक्षा करें। वेगमा सीता से नाराज़ थी। कौन जाने वेगमा ठीक ही नाराज़ हो रही हो ... सीता की जान बच गयी लेकिन बहुत बड़ी क़ीमत पर।

उनके गांव में पहले भी लोगों ने लड़ाई की बातें सुनी थीं। पर, लड़ाई में तो सैनिक, सुलतान और राजे लड़ते हैं, जनता तो लड़ती नहीं। किसी को यह आशा न थी कि उनपर भी मुसीबतों का पहाड़ टूटेगा।

मुसलमानों ने गांव पर यकायक हमला कर दिया और सारा धान, सारी साग-सब्ज़ियां और सारे मवेशी उठा ले गये। उन्होंने किसानों को मौत के घाट उतारा और औरतों की लज्जा से होली खेली।

बेगमा के साथ तो दुखान्त घटना घटी। पर वस्तुतः उसका क्या हुआ था यह सीता तक नहीं जानती थी।

सीता को किसी ने घोड़े पर पटक दिया और जब मां बेटी को बचाने दौड़ी तो भाले से उसका काम तमाम कर दिया। पिता का भी सिर फोड़ डाला गया था। जब सीता को लोग लिये जा रहे थे तो उसका पिता, खून से नहाया हुआ, ज़मीन पर पड़ा था।

सीता और दूसरी लड़कियों को सुनसान रास्तों से हंकाया गया जब तक कि वे खेलना के उपनगर क्षेत्रों के खेमे तक न पहुंच गयीं।

सिपाही हर रात कभी एक लड़की को, कभी दूसरी को, अपने पड़ाव में ले जाते और उनपर बलात्कार किया करते।

लड़कियों के झुंड में बराबर रोना पड़ा रहता। कई लड़कियों ने तो अगले जन्म की यातनाओं तक से निडर रहकर आत्महत्या ही कर ली। सीता ने भी उन्हीं के रास्ते चलने का निश्चय किया था। इस बेइज़्ज़ती की ज़िन्दगी से तो यम के क्रोध का निशाना बन जाना ही अच्छा था।

लेकिन तभी युद्ध शुरू हो गये। मुसलमानों ने कई बार खेलना पर चढ़ाई की और आखिर उसे ले लिया। नगर जला डाला गया।

अब तो क़ैदियों की संख्या और भी अधिक हो गयी। लड़ाई दूर के क्षेत्रों में होती रही, और सीता और कुछ अन्य लड़कियों को हरकारों की एक टुकड़ी के साथ बीदर भेज दिया गया।

इस कहानी से निकीतिन का दिल दहल गया था। वह बराबर यही सोचता रहा कि किस प्रकार सीता की मदद करे कि वह अपने दुखों को भूल जाये। लेकिन प्रायः उसकी चिन्ताएं कारगर न होतीं। वे तो सीता के घावों पर जैसे नमक छिड़का करतीं।

उसने उपहार में सीता को देने के लिए एक माला खरीदी। माला कांसे की थी, जिसपर सोने का काम था। उसकी पत्तियों पर इतनी महीन नक़्क़ाशी थी कि अफ़नासी उसपर लट्टू हो गया था।

वह सोच रहा था कि सीता इस उपहार से फूली न समायेगी – भारतीय नारियां ज़ेवरों की दीवानी होती हैं न। लेकिन नेकलेस को देखते ही सीता की घिग्घी बंध गयी, उसके ओठ असहायों की तरह कांपने लगे और आंखें छलछला आयीं... कौन जानता था कि उसकी मां के पास भी ऐसी ही एक माला थी?!

अफ़नासी ने खीझकर माला ज़मीन पर पटक दी। किन्तु सीता आह भरती हुई उसके पास आयी और माला उठाकर गले में पहन ली। उसका चेहरा फक पड़ गया था।

निकीतिन ने सीता की आंखों में अक्सर आंसू देखे थे। सीता झांकी की सहेली बन गयी थी। झांकी ने ही अफ़नासी को बताया था कि सीता अपने को अपने माता-पिता की हत्या का अपराधी समझती है और इसी लिए दुखी रहती है।

"फिर तुम्हीं उसे समझाओ न कि सचमुच वह अपराधी नहीं!" अफ़नासी ने झांकी से कहा।

झांकी ने अपनी सुरमई आंखें झुका लीं और कोई उत्तर न दिया।

रंगू ने इस मामले में अफ़नासी से साफ़ साफ़ कह दिया था कि वह सीता की हरकतें ठीक नहीं समझता। आखिर, उसने अपने मंगेतर से अपना पिंड छुड़ाने के लिए भगवान से क्यों प्रार्थना की थी? उसने मां-बाप और देवताओं की इच्छा के विरुद्ध काम किया था, इसी की तो सजा मिल रही है उसे...

"उसपर इतने जुल्म हुए फिर भी तुम उसी को दोषी बताते हो?" क्रोध से अफ़नासी ने दांत निकाल दिये, "कमाल की सूझ है तुम्हारी... अच्छा। सफ़ाई रहने दो। हां उससे मेरी ओर से कह दो कि उसका कोई दोष नहीं।"

"तुम्हारी बात मैं कह. दूंगा।"

रंगू की बात सुनकर सीता केवल इतना ही फुसफुसा पायी– "यह तो बड़े मेहरबान हैं..." और रो दी।

अफ़नासी की ज़िन्दगी मुसीबत बन गयी थी। अपने ही घर में उसे ऐसा लगता मानो मुरदा पड़ा हो। सीता के दुखों का अनुभव करके उसे जितना ही दुख होता, उतना ही वह यह समझा करता कि सीता उसके दिल के और भी निकट आती जा रही है।

पहले पहल तो उसने स्वयं अपने से ही असलियत छिपाने का प्रयत्न किया और बराबर अपने मन को समझाता रहा कि सीता के प्रति उसके हृदय में सिवा दया और सामान्य उत्सुकता के और कोई भावना नहीं। किन्तु, वह अपने को धोखा दे रहा था।

सीता के अपने गांव में लौट जाने और उसके बूढ़े मंगेतर के विचार मात्र से अफ़नासी की दिन-भर की ख़ुशी पर पानी फिर जाता और वह उदास हो जाता।

रातों में वह बग़लवाले कमरे से सीता की सांसें सुना करता। उसके मन में न जाने कौनसा तूफ़ान उठने लगता, उसके ओठ सूखने

लगते और वह मुश्किल से अपने को संभाल पाता, मुश्किल से उसका विचार अपने दिमाग़ से हटा पाता...

"नहीं, यह बिल्कुल मुम्किन नहीं! बिल्कुल नहीं। उसका धर्म दूसरा, रहन-सहन का ढंग दूसरा। मैं उसे सुखी न कर सकूंगा। और दुख तो वह न जाने कितने भोग चुकी है..."

फिर उसे एक विचित्र-सा ख्याल आया – सीता को क्यों न अपने साथ ले जाये, उसे ईसाई बना ले, उसके साथ व्याह कर ले?

त्वेर में वह उसकी वकालत कर लेगा। लेकिन क्या वह भी उसे चाहती है? और क्या वह अपने वतन से नाता तोड़ सकेगी, रूस तक के रास्ते की टक्करें सह सकेगी, विदेश की आदी बन सकेगी?

उसके दिमाग़ में तरह तरह के सन्देह उठने लगे। उसने बड़ी सतर्कता से सीता पर नज़र डाली, अपने सन्देहों को निराधार समझकर उनसे दूर रहने का प्रयत्न किया, पर फिर भी तरह तरह की भावनाएं, तरह तरह के विचार उसे मथने लगे।

झांकी की मार्फ़त सीता ने घर में शिव की स्थापना करने के लिए अफ़नासी की अनुमति ले ली। शिव की स्थापना हो गयी और हिन्दुओं की प्रथानुसार उसने अफ़नासी के पग पखारना शुरू किया।

यह सब देखकर हसन को परेशानी हो रही थी। उसके और सीता के बीच वैर रूपी एक गहरी खाई थी, किन्तु यह वैर उदासीनों जैसी चुप्पी और तिरस्कार-प्रदर्शन से आगे न बढ़ सका।

एक दिन एक भंगी, रास्ते में उत्सुकता से अफ़नासी को देखता हुआ कई मिनटों तक वहीं खड़ा रहा। तभी सीता जोरों से चिल्ला पड़ी। वह क्रोध से कांप रही थी। भंगी तुरन्त नौ दो ग्यारह हो गया।

निकीतिन ने सीता से बातचीत करने का प्रयास किया। उसे अछूतों से सहानुभूति थी। उसे उनके बच्चों पर दया आती थी जो रास्ते में पड़े अनाज के दाने बीना करते थे, पेट भरने के लिए। किन्तु सीता इस मामले में सख्त थी।

"मेरे गांव में एक ऐसा घर जलाया गया था जिसपर अछूत की छाया पड़ गयी थी," उसने दृढ़ता से कहा।

उसे समझाने-बुझाने से कोई फ़ायदा नहीं। उसे समझाने के माने हैं उसे और भी दुखी करना।

"नहीं, वह ग़ैर है!" अफ़नासी ने विचार किया, "ग़ैर!"

और सहसा निकीतिन को लगा जैसे किसी की प्रतीक्षा-सी करती हुई सीता की भयभीत दृष्टि उसपर पड़ रही है। उसे लगा जैसे उसने जो कुछ निश्चय किया है, वह ठीक नहीं... और समय बीतता गया। इस बीच सीता में भी परिवर्तन दिखायी पड़ने लगा। पहले वह लोगों से डरती और एकान्त में बैठी बैठी कढ़ाई किया करती थी, लेकिन अब वह अक्सर काम छोड़कर बग़ीचे में उछलती-कूदती और तोतों को तंग किया करती। कभी कर्ण के घर जाती और झांकी के बच्चे के साथ खेलती, तो कभी मस्त होकर गाने लग जाती।

खुशी के इन क्षणों का स्थान और भी अधिक दुख के क्षण लेते। अफ़नासी का तो जैसे दिमाग़ ही खराब हो रहा था। एक दिन तो यह नौबत आ गयी कि वह अपने को संभाल न सका और फूट पड़ा।

एक दिन सीता रत्न-तराश की पत्नी को उसके घरेलू काम-काजों में मदद देने के लिए उसके यहां अकेली चली गयी। शाम होने आ रही थी, अंधेरा बढ़ रहा था। अफ़नासी बग़ीचे में आ गया।

हसन फूलों के साथ खुट-पुट कर रहा था। निकीतिन गुलाब के पौधों की सिंचाई में हसन की मदद करने लगा, पर उसके कान बराबर सड़क पर लगे रहे। फिर, उसने झारी एक ओर रखी और ताड़ों के बीच चहलक़दमी करने लगा। संध्या सघनाती जा रही थी, आकाश में अर्द्धचन्द्र तैर रहा था, सितारे टिमटिमा रहे थे... अफ़नासी की निगाह सप्तर्षि नक्षत्र पर अटक गयी। सप्तर्षि नक्षत्र, जैसे निचाई पर, बड़े विचित्र ढंग से चमक रहा था – रूस की तरह नहीं।

निकीतिन न जाने कितनी देर तक उधर निगाहें गड़ाये रहा। उसके हृदय में अपने वतन के लिए हुड़क उठ रही थी। उसे अकेलापन काटने दौड़ रहा था। उसकी आधी से अधिक ज़िन्दगी बीत चुकी थी लेकिन वास्तविक और स्थायी सुख उसे नसीब न हुआ था। अब यहां, विदेश में, उसे कौन पूछेगा? सीता? रात हो रही थी – अंधेरी, अजनबी-सी, उष्ण कटिबंध की रात... सीता की फ़िक्र उसे सताने लगी।

"हसन!" उसने कर्कश स्वर में पुकारा, "मेरे साथ चलो! जल्दी!"

उसने पेटी कस ली। पेटी में कटार लटक रही थी। पर, तभी उसे बाड़े के पीछे से क़दमों की आहट सुनाई पड़ी।

सीता लौट आयी थी। उसे रत्न-तराश पहुंचा गया था। वह हंसती हुई कमरे में चली गयी। निकीतिन चुपचाप उसके पास आ गया। उसका दिल ज़ोर ज़ोर से धड़क रहा था। उसके ओंठ लकड़ी जैसे सख्त हो रहे थे। बस वह इतना ही कह सका –

"रात हो चुकी है... तुम्हें इतनी देर तक बाहर रहना चाहिए क्या?"

वह उसके पास आयी, और कांपते हाथ अपने कोमल गालों पर रखे घुटनों के बल वहीं जड़वत् बैठ गयी।

कुछ समय बीता। सीता ने अफ़नासी से अनुरोध किया कि वह उसे भी अपने साथ श्री-पर्वती ले चले।

और जिस ढंग से सीता ने श्री-पर्वती जाने की बात चलायी थी उससे निकीतिन ने समझ लिया था कि वहां जाना उसके अपने हित में भी है। उसने उसे वहां ले जाने का वादा किया। सीता फिर से शान्त हो गयी और उसकी ख़ुशी ग़ायब हो गयी, पर अफ़नासी को उसकी आंखों में एक नयी विचित्र चमक दिखाई दी जिसने उसके दिल की कली खिला दी।

जब अफ़नासी खज़ानची के यहां से लौटा तो उसके हृदय में सिवा प्रेम की हिलोरों के और कुछ भी न था।

...खज़ानची मुहम्मद अफ़नासी को विदा कर वापस आया और उसे इतनी कमजोरी महसूस होने लगी कि वह कठिनाई से ही अपने सोफ़े तक पहुंच सका। उसने अपने ग़ुलामों को वहां से हटा दिया और खुद आधा मुंह खोले, मरी हुई मछली की भांति, वहीं बैठा रहा।

यह सब संयोग की बात थी। जिस भय को वह निर्मूल समझ रहा था अब वही जीवित होकर उससे बदला लेने को बढ़ रहा था। यह रूसी... आया और खज़ानची के मुंह पर थूककर चला गया। लेकिन खजानची साहब मुस्कराते रहे, चुप रहे। बेशक खज़ानची को भय लग रहा था, वह घबड़ा रहा था—मानो सभी को सच्ची बात मालूम हो ही गयी थी और उसके बदले का वक़्त आ रहा था... कर्ण! उसे सब कुछ मालूम है, लेकिन चुप है... चुप है, पर सब कुछ जानता है!

मुहम्मद ने कुछ ढूंढ़ने का प्रयत्न किया और पानी से भरा कंटर उसके हाथ लग गया। उसने पानी प्याले में भरा और बड़े बड़े घूंट उतारने लगा। पानी दाढ़ी से उछलता हुआ छाती और पैरों की खबर लेने लगा। अब वह समझ रहा था – उसकी सारी ज़िन्दगी, सारी खैरातें, पापों के लिए किये गये सारे पश्चात्ताप, दान-दक्षिणा – इन सब पर पानी फिर जायेगा।

उसे अपनी ज़िन्दगी बचाने की फ़िक्र करनी चाहिए।

सीता सामने देखती हुई, गुलाबी साड़ी हाथ से सीने पर ही रोके, सड़क पर चली जा रही है। साड़ी पर चांदी की लहरें-सी बनी हैं। यह साड़ी अफ़नासी की ओर से सीता को दिया गया नया तोहफ़ा है। इसमें तो वह खिल उठती है। पुरुष उसे घूम घूमकर देखते हैं। एक सिख उसे देखकर ज़बान चटखारता है। चोटीधारी एक जवान ब्राह्मण, अपनी पत्नी के साथ जाते हुए भी, कनखियों से सीता को देख रहा है। वेषभूषा से सीता ऊंची जाति की लग रही है, किन्तु ब्राह्मण उसे नहीं जानता।

सीता न तो सिख की ओर देखती है, न ब्राह्मण की ओर ही। बेशक, पुरुषों की निगाहें उसके हृदय में गुदगुदी पैदा करती हैं। पर, साथ ही उसे क्रोध भी आ जाता है। उसे ऐसे घूरने का किसी को भी अधिकार नहीं। किसी को भी नहीं, सिवा एक के। उसका विचार आते ही वह हंसना और उछलना-कूदना चाहती है।

"आह कैसा मधुर है यह प्रातःकाल! बाड़े के पीछे चिड़ियों की चहचह! और पैर! ओफ़, कितने हल्के पड़ रहे हैं वे, और शरीर! जैसे उसमें बेहद ताक़त भर गयी है!

"हे लक्ष्मी महारानी, हे जगदम्बे, तेरा गुन कभी न भूलूंगी। मैंने तुमसे कुछ भी तो नहीं मांगा। लेकिन तुमने मुझे सारी ज़िन्दगी ही भेंट कर दी! वह दूर देश का वासी। गोरा-चिट्टा बदन—ब्राह्मणों से श्रेष्ठ। सोने जैसे बाल!

"मैंने नयी साड़ी पहनी और वह खुश हो होकर मुझे निहारने लगा। उसने मेरे हाथ पकड़े और झुलाने लगा। और मेरा भी जी हुआ कि उसके सीने से चिपट जाऊं... ओह!"

सीता के पैर जैसे स्वतः बढ़ते जा रहे थे। उसका चेहरा गुलाबी पड़ रहा था। वह गहरी सांसें ले रही थी।

वह उसे प्यार करती है!

श्री-पर्वती के पवित्र नगर में पहुंचकर वह भगवान शिव के मन्दिर में उन्हें अपने मन की बात बतायेगी—वह इस अज्ञात जात-पांत वाले परदेसी को प्यार करती है। और यदि देवता उसपर रुष्ट न हुए तो वह उसी की होकर रहेगी जिसे वह चाहती है, प्यार करती है।

सीता सड़क पर चल रही है। उसकी गुलाबी साड़ी उसके दुबले-पतले बदन के इर्द-गिर्द लहरा रही है। उसके छोटे छोटे पैर जैसे ज़मीन पर पड़ते ही नहीं—"हे लक्ष्मी महारानी, हे जगदम्बे, तेरा गुन कभी न भूलूंगी..." सीता कर्ण के मकान की ओर चली जा रही है। झांकी चक्की पीस रही है। सीता दौड़ी दौड़ी जाकर झांकी को आलिंगन करना चाहती है पर वह उसे रोक देती है।

"तुम्हें तो काली ने घेर लिया है!" क्रोध का बहाना करती हुई झांकी बोली, "तू तो मेरे कामों में दखल देती है!"

सीता उछल पड़ती है और सिर के ऊपर हाथ बांधती हुई एक ही स्थान पर नाचने लगती है। फिर गा उठती है—

सजनवा, पनिया भरन मैं गयी
पनघट पै तुम्हरी ग्रांखों से ग्रांखें चार हुईं
छलकी सिर पर भरी गगरिया छन में उलट गयी।
जल तो सारा चला गया पर याद तुम्हारी रही
घर पर सबने शोर मचाया ग्रपमानित मैं हुई।
सास ननद ने डांटा डपटा ग्रौर कहा कलमुंही
घड़ा प्यार का होय न रीता प्रीत की रीत यही।

रंगू गाना सुनता है ग्रौर घर से निकल जाता है। वह ग्रौर झांकी एक दूसरे पर एक नज़र दौड़ाते हैं।

"ग्रफ़नासी क्यों नहीं ग्राया?" रंगू पूछता है।

"उसे नगर में कुछ काम है।"

झांकी एक ग्राह-सी भरकर रह जाती है।

"झांकी, क्यों इतनी गहरी सांसें ले रही हो तुम?" उसके सामने बैठती हुई सीता पूछने लगती है।

"यों ही।"

"नहीं, बताग्रो न! बताग्रो भी!"

"ग्रफ़सोस, वह हमारे देवताग्रों को नहीं मानता। ग्रादमी ग्रच्छा है वह।"

"क्या इस कारण राम लाल उसकी कम इज़्ज़त करता है?"

"ग्ररे, नहीं ... नहीं ... मैं सोच रही थी कि ग्रगर ग्रफ़नासी हमारे देश में पैदा हुग्रा होता, तुम्हारा पति होता, तो कितना ग्रच्छा होता। लेकिन यों शादी ग्रसम्भव है। हम उसकी जात-पांत तो नहीं जानते।"

सीता उछल पड़ती है। उसका चेहरा लाल हो उठता है ग्रौर ग्रांखें छलछलाने लगती हैं।

रंगू नाराज़ होकर पत्नी को झिड़क देता है–

"तुम बेकार की चें-चें कर रही हो, झांकी!"

और गुलाबी साड़ी फिर लहरा उठती है। सिर झुकाये हुए सीता दीवाल के सहारे सहारे चली जा रही है। उसका मन उदास है। बेशक, इस आदमी की जात-पांत का कोई ठिकाना नहीं ... ओफ़, उसके बाल हैं कि सूरज की किरणें, उसकी चमड़ी कितनी गोरी है, ब्राह्मण से भी गोरी ... लेकिन उसकी जात-पांत का कुछ पता नहीं ...

धर्म के निर्मम और निर्दय सिद्धान्त! सीता उन्हें अच्छी तरह जानती है और भय से कांप उठती है।

जो लड़की किसी नीची जातिवाले से प्रेम करती है उसे उसके नाते रिश्तेदार कुत्ते की तरह घर से निकाल देते हैं, उसपर पत्थर बरसाते हैं। और दूसरे जन्म में भी उसे नर्क यातनाएं सहनी पड़ती हैं।

और गुलाबी साड़ी मिट्टी की चहारदीवारी से सटी सटी आगे बढ़ रही है।

हे राम! कब वह शिव के मन्दिर पहुंचेगी और कब उसके भाग्य का फ़ैसला होगा?

बीदर में रहते हुए अफ़नासी को हिरातवासी मुस्तफ़ा की ज़रा भी याद न आयी। आख़िर शैतान तो शैतान ही है, क़र्ज़ नहीं पाटना चाहता। वह हाथ लगे भी कैसे? और क़र्ज़ कोई इतना बड़ा तो था नहीं कि अफ़नासी मुस्तफ़ा की खोज में भागता फिरे। पर मुस्तफ़ा को निकीतिन की याद आती रही। उसने तीन बार अफ़नासी को देखा था और किसी गली में घुसकर भीड़ में ग़ायब हो गया था। पैसा लौटाना उसके लिए मुसीबत थी। इसके अलावा, मुस्तफ़ा के इस प्रकार बरताव करने का एक कारण और था। मुस्तफ़ा को विश्वास हो गया था कि रूसी व्यापारी का मन साफ़ नहीं है। सुलतानी तख़्त के दुश्मन

को क़र्ज़ लौटाना अक़्लमंदी नहीं है। और, मुस्तफ़ा बेवक़ूफ़ बनना नहीं चाहता था। नहीं! एक बात और थी—मुस्तफ़ा को एक ऐसा राज़ मालूम था जिसका अगर उसके मालिक, सुलतान के घुड़दल के सरदार ख़ान उमर को पता चल जाता तो उसे जंगलों में डलवा दिया जाता जहां गीदड़ उसे नोचकर खा गये होते ...

कभी मुस्तफ़ा ख़तरे के डर से कांपने लगता, तो कभी उसकी लोभ-प्रवृत्ति चंचल हो उठती। सुख-समृद्धि हाथ फैलाये जैसे उसके स्वागत को खड़ी थी लेकिन उसे क्या करना चाहिए, बस यही उसकी समझ में न आ रहा था। उसकी बात का विश्वास कौन करेगा? कोई नहीं। फिर उसके पास कोई सबूत भी तो नहीं। बेशक जो कुछ उसने देखा था, जो कुछ सुना था उसका एक एक शब्द वह बता सकता था।

और मुस्तफ़ा ने ऐसी चीज़ देखी और वे बातें सुनीं कि पहले तो उसे अपने आंख-कान तक पर विश्वास न हुआ।

...ख़ान उमर की नौकरी में आने के कोई तीसरे या चौथे हफ़्ते मुस्तफ़ा को महल की गश्त लगाने की ड्यूटी दे दी गयी। उसका काम था ख़ान के बाग़ की दीवाल से लगे लग एक दूर की गली का चक्कर लगाना। इस जगह सिवा महल के चौकीदारों के सरदार के और कोई न जा सकता था। यह गश्त मुस्तफ़ा को दी गयी थी क्योंकि एक दिन पहले उसने सरदार को भी पिलायी थी और ख़ुद भी पी थी। इसी लिए सरदार ने उसे यह काम दे दिया था। और चूंकि ख़ुद सरदार का सिर घूम रहा था इसलिए उसने यही ठीक समझा कि मुस्तफ़ा को ऐसी जगह लगा दिया जाये कि उसे झपकी ले लेने का मौक़ा मिल जाये... मुस्तफ़ा दो बार तो उस गली तक गया फिर यह देखकर कि चारों ओर शान्ति है और दर्द से उसका सिर फटा जा रहा है वह एक घनी



झाड़ी में घुस गया। यहां मज़े की ठंढक थी। वह वहीं लेटकर सुस्ताने लगा। अपने वफ़ादार ग़ुलामों पर अल्लाह बड़ा करम करता है। मुस्तफ़ा ने आंखें बन्द कर लीं और सोने की कोशिश करने लगा। पर, उसे मिचलियां आ रही थीं और नींद उससे कोसों दूर थी।

तभी उसे कुछ आवाज़ें सुनाई दीं। एक आवाज़ कुछ रूखी और धीमी थी। यह थी ख़ान उमर की, और दूसरी किसकी थी यह वह तुरन्त न समझ सका।

पहले कुछ क्षणों तक तो उसे लगा जैसे लोग उसी को ढूंढ रहे हैं और इसी लिए वह वहां दबा पड़ा रहा। ख़ान उमर काहिल सिपाहियों पर ज़रा भी रहम न करता था।

"ख़ान, मुझे खुद महाराजाधिराज ने तुम्हारे पास भेजा है!" मुस्तफ़ा ने सुना।

"सबूत दो!"

"यह रहा।"

कुछ क्षणों तक चुप्पी रही फिर ख़ान की आवाज़ सुनाई दी—"अब कहो..."

मुस्तफ़ा ने थोड़ा-सा सिर घुमाया और उसे घनी झाड़ियों में से ख़ान की चौड़ी पीठ और किसी अधेड़ उम्र के हिन्दू का परिचित-सा चेहरा दिखाई दिया। मुस्तफ़ा ने इस हिन्दू को कहीं देखा ज़रूर है... कहीं? मगर कहां? हां, याद आयी। बाज़ार में रूसी खोजा यूसुफ़ के साथ। मुस्तफ़ा जैसे एक एक शब्द पी जाने के लिए उतावला हो रहा था!

हिन्दू ने हाथ जोड़े।

"आला ख़ान! महाराजाधिराज ने आपके और आपके प्रतिष्ठित संबंधियों के सम्मान में ये जवाहरात भेजे हैं। इन्हें लें और समझ लें कि शोहरत आपके क़दम चूमने को बेक़रार है। विजयनगर हमेशा आक़िलों और बहादुरों की क़द्र करता है ..."

"तो किस चीज़ की ज़रूरत है?"

"कोई ज़रूरत नहीं, आला ख़ान! हमारे महाराजा महान और निस्वार्थी हैं। उन्होंने कहलाया है कि उनके दिल में क़ाबिल दुश्मनों की भी इज़्ज़त है और अगर वे उनसे सेवा चाहते हैं तो वे सेवा के लिए हमेशा तैयार रहेंगे ..."

ख़ान उमर ने हुंकारी भरी।

"तो? वे किस तरह की सेवा करने को तैयार हैं और किस लिए?"

"आला ख़ान! मुझे माफ़ करना! बात मैं सोलह आने सही कहूंगा। सुलतान की फ़ौज को खेलना लेकर ही चैन न मिलेगा। महाराजाधिराज जानते हैं कि महमूद गवान विजयनगर पर चढ़ाई करना चाहता है। हज़ारों बेगुनाह और बहादुर सिपाही क़ुरबानी के लिए तैयार हैं। अगर फ़तह हुई तो सेहरा महमूद गवान के सिर होगा और हार हुई तो उसकी ज़िम्मेदारी वह अपने सिर न लेगा ..."

"उसे जितनी शोहरत मिली है वह हमारी ही वजह से मिली है!"

"यही तो महाराजाधिराज का कहना है। वे बड़े बुद्धिमान हैं। लड़ाई नहीं चाहते। वे सुलह करना चाहते हैं। लेकिन वे महमूद गवान से बातचीत न करेंगे। वे नहीं चाहते कि कोई नौबढ़ आदमी उनका शासक बन जाये। वे उसका विश्वास नहीं करते।"

"फिर वे विश्वास किसका करेंगे?"

"फ़ौज के किसी ख़ानदानी सरदार का। आपके सुलतान अभी भी कच्ची उम्र के हैं। वे तो वज़ीर के असर में रहते हैं।"

"यह बात तो सही है।"

"आला ख़ान! महाराजाधिराज आपका विश्वास करेंगे। वे तजुर्बेकार और ख़ानदानी आदमी की बात मानने को हमेशा तैयार रहते हैं और मदद के लिए अपनी सेना भेजने को भी तैयार हैं।"

दो मिनट तक ख़ान उमर हिन्दू के सामने चुपचाप खड़ा रहा, फिर बोला –

"मेरे साथ आओ..."

मुस्तफ़ा तब तक वहीं पड़ा रहा जब तक आवाज़ें ग़ायब न हो गयीं। फिर उसने अपनी ढाल उठायी और घुटनों के बल रेंगता हुआ वहां से हट गया। कांटों से उसका चेहरा घायल-सा हो गया था, किन्तु दर्द जैसे उसे लग ही न रहा था। वह अपनी पीली पीली आंखें खोले बराबर रेंगता रहा। गली में पहुंचकर उसने चैन की सांस ली।

"ग़द्दारी! ग़द्दारी! क्या करूं? कहां भागूं? किससे कहूं? सरदार से, सिपाहियों से, सुलतान के किसी नौकर से?"

यद्यपि उसने बहुत अधिक पी रखी थी, फिर भी प्राकृतिक सतर्कता ने उसकी बड़ी मदद की।

और जब चौकीदारों के सरदार रहीम ने पहरा बदलने के समय, सिर हिलाते और जैसे फटकारते हुए उससे कहा –

"क्या शकल बना रखी है, जी!" तो मुस्तफ़ा ने बुदबुदाकर केवल इतना ही कहा –

"गिर गया था..."

रहीम बड़बड़ा रहा था – "मुझे चकमा दे रहा है, भला ऐसी शकल इस क़ाबिल है कि आदमियों को दिखाई जाये?" और यद्यपि

अब अपने महत्व के प्रति जागरूक हो जाने के कारण बड़े काम का सिद्ध हो सकता है—और इसी लिए उसके भीतर एक आग-सी जल रही थी—फिर भी वह अपराधी की भांति सरदार की डाट सुनता रहा। उसने निश्चय कर लिया था कि फ़िलहाल चुप रहेगा। वह अभी तक यह तय न कर सका था कि वह यह रहस्य की बात कहे तो किससे कहे।

उसने हिन्दू व्यापारी का नाम भी मालूम कर लिया था—भावलो। यह व्यापारी रूसी का परिचित था, उसका संबंध विजयनगर के राजा से था, उसी को खान उमर के पास भेजा गया था और उसी ने उमर के साथ कोई साज़िश की थी ...

मुस्तफ़ा सोच रहा था कि अगर मैं ग़द्दारी की खबर सुलतान को दे दूं तो उमर-खान को फांसी होगी और मुझे घुड़सवारों की कमान दी जायेगी और खान का महल और जागीर भी। वह अपने भावी मान-सम्मान और समृद्धि की कल्पना से गद्गद हो रहा था ... लेकिन वह किससे कहे? और सबूत कहां है उसके पास?

मुस्तफ़ा का जी हुआ कि वह क़िस्मत की बेरहमी से खीझकर रो पड़े। कौन जाने वह धोबी का कुत्ता ही बनकर रह जाये—न घर का न घाट का? हुं-ह!

लेकिन बदक़िस्मती की मार! एक दिन उसने घोड़े की ठीक मालिश न की और खान उमर ने उसे बीस कोड़े लगाये जाने की आज्ञा दी। अब अगर वह खान के खिलाफ़ कुछ भी कहेगा तो खान तुरन्त यह आड़ ले लेगा कि उससे बदला लेने की चाल चली गयी है। खान ने हिन्दू से क्या बात की थी इसे तो किसी ने न सुना, लेकिन कोड़ों से जो मुस्तफ़ा की पीठ लाल कर दी गयी थी उसे कम से कम पचास आदमियों ने देखा था। गवाह! मुस्तफ़ा को कोई रास्ता न सूझ रहा था। वह दांत भींचकर रह गया।

एक दिन क़िले में घूमते हुए उसकी निगाह ख़ज़ानची मुहम्मद पर पड़ गयी।

ख़ज़ानची मुहम्मद गवान के बहुत निकट था। ख़ज़ानची शिया था और खान उमर सुन्नी। खज़ानची भारत के लिए विदेशी था, पर खान उमर के सगे-संबंधी दक्खन के पुराने ख़ानदान के थे। ऐसे लोगों के बीच कभी दोस्ती नहीं हो सकती। और पुराने ख़ानदानियों और महमूद गवान के आदमियों के बीच कितनी बड़ी खाई है इसे दुनिया जानती है। यह सच है कि ख़ज़ानची रूसी की तरफ़दारी करता है, लेकिन वह रूसी के बारे में मुंह भी न खोलेगा। जो भी हो, बीदर में अकेला ख़ज़ानची ही एक ऐसा आदमी है जिसे रईसों के महलों में जाने की इजाजत है और मुस्तफ़ा उसे जानता है।

मुस्तफ़ा ने खज़ानची से मिलने का निश्चय किया।

...पहले पहल तो ख़ज़ानची उससे मिलना भी न चाहता था लेकिन जैसे ही नौकर ने दरवाज़ा खोला कि मुस्तफ़ा पैर अन्दर रखते हुए उससे कहने लगा कि वह उसकी खबर खज़ानची को कर दे, वह बड़े ज़रूरी काम से आया है।

आखिर उसे भीतर आने की इजाज़त मिली। खज़ानची सोफ़े से उठा भी नहीं बल्कि वैसे ही सफ़ेद पैजामा पहने वहीं बैठा बैठा हुक्का पीता रहा। उसने मुस्तफ़ा की ओर देखा और लापरवाही से सिर हिला दिया किन्तु मुंह से एक शब्द भी न कहा।

"खोजा, आप से मिलने आया!" ख़ज़ानची के आगे सिजदा करते और चापलूसी-सी करते हुए मुस्तफ़ा कहने लगा।

मुहम्मद मुस्तफ़ा की ओर देखता हुआ चुपचाप धुआं उड़ाता रहा।

"खोजा, अल्लाह आपको बरकत दे!" मुस्तफ़ा बोला, "सेहत तो ठीक है न, और काम-धाम कैसा चल रहा है?"

बातचीत कैसे चलायी जाये यह मुस्तफ़ा की समझ में न आया। उसका जिस अनमने ढंग से वहां स्वागत हो रहा था उससे वह हतोत्साह न हुआ, पर खज़ानची की चुप्पी ज़रूर उसके मार्ग में बाधक बन रही थी।

आखिर मुहम्मद बोला—

"मैं देख रहा हूं, खुशक़िस्मती तुमपर मुस्करा रही है। तुम खान उमर की फ़ौज में हो न?"

"हां, सरकार!"

"बड़ी उदासी से बोल रहे हो। खान उमर तनख्वाह अच्छी नहीं देता क्या?"

"नहीं। लेकिन वह सुन्नी है..."

"ओह, तो कब से यह फ़िरक़ापरस्ती तुममें आ गयी है? ज़माना हुआ?" मुहम्मद उपहास करते हुए हंस पड़ा।

किन्तु मुस्तफ़ा का उत्तर अप्रत्याशित रूप से गम्भीर और विचित्र था—

"जब से बीदर में आया हूं। इससे यहां मदद मिलती है ... उन्हें जो कुछ देख-समझ सकते हैं।"

खज़ानची मुंह से धुएं के बादल निकालता और उसे चुपचाप ताकता रहा।

"तो तुमने क्या देखा-समझा है?"

"बहुत कुछ, खोजा... बहुत कुछ। लेकिन मैं ठहरा एक अदना आदमी ..."

लग रहा था जैसे मुस्तफ़ा अंधेरे में कुछ टटोल रहा है। उसने खज़ानची पर एक पैनी नज़र डाली मानो उसके अनुमोदन की प्रतीक्षा कर रहा हो।

"बैठो," मुहम्मद बोला, "अच्छा अच्छा, सुनाओ अपना हाल-चाल ... तुम यहां ... रूसी के साथ आये थे न?"

इन शब्दों में जो तीखापन था वह मुस्तफ़ा से छिपा न रह सका। लग रहा था जैसे वह और अफ़नासी कोई सच्चे दोस्त नहीं रह गये। मुस्तफ़ा ने सारी बात जानने-समझने का निश्चय किया।

"हां, उसी के साथ। बस यहीं वह मुझे नहीं दिखाई पड़ता।"

"अफ़सोस... अब वह मालदार आदमी है न।"

ओहो! यह बात खीझ के साथ कही गयी थी।

"मैं जानता हूं। उसने अपना घोड़ा खान उमर के हाथ बेच दिया था," बड़ी सतर्कता के साथ मुस्तफ़ा बोला, "ख़ान उमर ने तो दाम भी अच्छे दिये थे।"

"जिसके पास इतनी बड़ी जागीर हो उसके लिए अच्छे दाम देना कोई मुश्किल नहीं," खज़ानची बड़बड़ाया, "बड़े से बड़े ईमानदार शिया के पास उसकी दौलत का दसवां हिस्सा भी न होगा ... लेकिन वह तो तुम्हारा मालिक है न ..."

"हमारा मालिक तो एक ही है—अल्लाह।" ख़ज़ानची की आंखों में देखता हुआ मुस्तफ़ा धीरे से बोला, "मेरा मजहब मुझे खान उमर की सखावत या उसकी नाराज़ी से ज्यादा प्यारा है।" जिस ढंग से मुस्तफ़ा ने यह शब्द कहे थे और अपने शब्दों पर विचित्र ज़ोर देकर उसने जिस प्रकार खज़ानची की आंखों में देखा था उससे खज़ानची ने भांप लिया था कि इस आदमी के यहां आने का कोई राज़ ज़रूर है।

मुहम्मद ने आंखें मिचकायीं।

"तुमने कहा था तुम्हें कोई ज़रूरी काम है। क्या काम है?"

मुस्तफ़ा ने पीछे मुड़कर देखा फिर आंखें नीची कर लीं। अगर उसने खज़ानची को पहचानने में ग़ल्ती की है तो फिर ख़ैरियत नहीं। लेकिन बात सीधी थी – या तो वह खज़ानची के सवाल का जवाब दे वरना वहां से चला जाये।

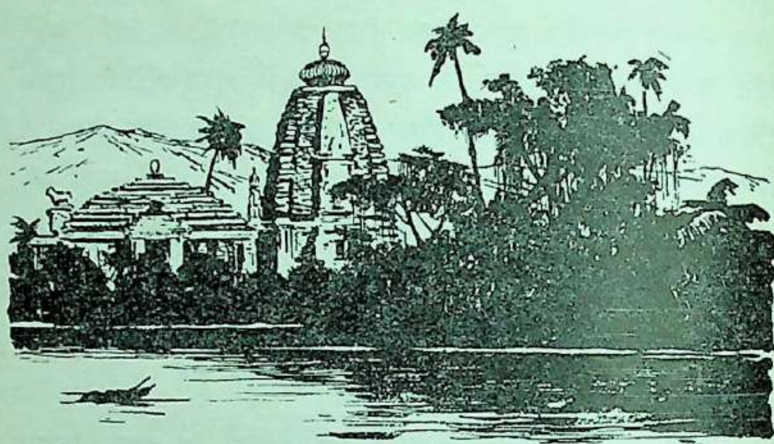
"क्या? तुम्हें कोई राज़ की बात मालूम है क्या?" मुहम्मद उत्साह के साथ फुसफुसाया।

मुस्तफ़ा ने सिर उठाया। उसके गालों की हड्डियां फड़कने लगीं। खज़ानची ने उसे लोभी दृष्टि से देखा।

"हां, मालूम है," फुसफुसाते हुए मुस्तफ़ा ने जवाब दिया।

...मुस्तफ़ा के जाने के बाद खज़ानची जोश में आकर दाढ़ी पर हाथ फेरने लगा। मुहम्मद जैसे बदल ही गया था। वह सीधा खड़ा हुआ, दृढ़तापूर्वक क़दम बढ़ाने लगा। उसने ग़ुलाम को आज्ञा दी कि वह उसकी सबसे छोटी पत्नी को बुला लाये। तभी उसकी निगाह चाय के कमरेवाले क़ालीन पर पड़ी जिसका कोना उल्टा हुआ था – उसने ताली बजायी और जब डरा हुआ नौकर उसके पास दौड़ा आया तो उसपर चोटों की बौछार करने लगा। सारे घर को जैसे सांप सूंघ गया। बस पहले दो हफ़्तों में तो ऐसा लगा था जैसे मालिक घर में है। इसके पहले तो वह अकेला बैठा बैठा या शराब पीता रहता या हुक्का। केवल एक बार ही रूसी सौदागर को क़िले के महल और मक़बरे तथा सुलतान का मशहूर राय-महल दिखाने ले गया था, जहां दीवालों पर जड़े हुए चौकोर पत्थरों पर सुनहरे अक्षरों में कुरान की आयतें खुदी थीं। किन्तु वहां से लौटने पर तो खज़ानची और भी उदास रहने लगा। घरवालों ने देखा कि किसी बात ने उसे अशान्त कर रखा है...

बारह साल की एक दुबली-पतली लड़की, फ़ातिमा, सलवार



पहने मुहम्मद के घुटनों पर बैठ गयी और मेंहदी से लाल हाथ उसकी गरदन में डालकर उसका आलिंगन करती हुई पूछने लगी —

"इस फ़ौजी ने तुम्हें इतना खुश कर दिया है क्या ?"

लेकिन खज़ानची ने कोई उत्तर न दिया।

प्राय: एक सागर से दूसरे तक फैली हुई कृष्णा नदी, दक्खन के पठार को काटती हुई बह रही है। मार्ग में उसमें आकर छोटी-बड़ी कई सहायक नदियां मिलती हैं — मलप्रभा, भीमा, तुंगभद्रा। कृष्णा नदी पूर्वी घाटों से गुज़रती हुई बंगाल की खाड़ी में डेल्टा बनाती है। साल में दो बार इस नदी में भयंकर बाढ़ आती है और वह अपने पाट की सीमाओं को लांघती हुई मैदानों और तटों के बांस के जंगलों में प्रलय का दृश्य खड़ा कर देती है। नतीजा यह होता है कि वनों से चिड़ियों के झुंड, जंगली सुअर और दहाड़ते हुए बाघ भाग जाते हैं। प्रकृति की इस भयंकरता के समय अकेले घड़ियाल ही स्वतंत्र रूप से विचरा करते हैं अपने शिकार की तलाश में।

जिस जगह कृष्णा पूर्वी घाटों से कुछ पहले दक्षिण की ओर मुड़ती और बाद में पहाड़ों से टकराती हुई सहसा उत्तर की ओर घूम पड़ती है वहीं भगवान शिव का मन्दिर है जिसका निर्माण अनेकों पीढ़ियों में हुआ है।

यहीं, इसी तीर्थ-स्थान में, अप्रैल के महीने में, प्राय: देश-भर के नर-नारी आते हैं – साधु-सन्यासी, फ़क़ीर, व्यापारी। सभी की अपनी अपनी चिन्ताएं होती हैं, अपनी अपनी भावनाएं।

यहां बीमार आते हैं भगवान से नीरोग होने की प्रार्थना करने के लिए, योगी आते हैं जो दुनियां से मुंह मोड़ चुके हैं, ग़रीब आते हैं और अमीर आते हैं अपने बैलों पर ...

यहीं निकीतिन, सीता, रंगू और झांकी तथा बीदर के कुछ और व्यापारी बैलों पर आये थे। उनका रास्ता साफ़ था और गांवों, मैदानों और कटे हुए जंगलों से होकर पड़ता था। बंगाल की खाड़ी से उठनेवाला शीत मानसून अब शान्त हो चुका था किन्तु अभी कड़ाके की गर्मी का समय न था। हवा साफ़ थी। दक्खन की नीरस-सी प्रकृति धीरे धीरे हरियाली से सजने-धजने लगी थी। यात्रियों के मार्ग पर तरह तरह के छोटे-बड़े मन्दिर पड़ते थे, जिन्हें देखकर अफ़नासी को गिरजों की याद आ जाती थी। हर मन्दिर अपने ही ढंग से बना था – कोई पत्थरों के मकान जैसा होता और उसके खम्भों पर मनुष्यों की आकृतियां खुदी होतीं; किसी में स्तम्भों की प्रचुरता और मुख्य फाटक पर पत्थर के हाथियों और शेरों की मूर्तियां होतीं; कुछ के शिखरों की बनावट सीढ़ीदार होती और हर सीढ़ी पर कई बुर्ज-से होते और उनके छोर पर कलश रखा होता। मन्दिरों पर पशुओं और मनुष्यों की नग्न पाषाण आकृतियां बड़ी कुशलता से बनायी गयी थीं। वे स्वप्नलोक की सी लग रही थीं। उन्हें देखकर सहसा यह विश्वास ही न हो पाता कि इन्हें मनुष्यों के हाथों ने बनाया होगा। एक एक हाथी की मूर्ति बनाने में



शायद सौ सौ साल लगे होंगे। ओफ़, कितने संयम और साहस की ज़रूरत है इस कला में!

यह था सीता का देश और यह थी उसके धर्मबन्धुओं की कला, उसकी जाति की आत्मा। और इस देश की आत्मा थी यहां बसनेवाले लोग!

कई मन्दिरों में सीता ने दान-दक्षिणा दी। यहां तरह तरह के मन्दिर थे—अग्नि देव का मन्दिर, प्रेम और धन-धान्य की देवी लक्ष्मी का मन्दिर और बुद्धि और व्यापार के देवता गणेश का मन्दिर। सीता ने सबसे अधिक दक्षिणा चढ़ायी लक्ष्मी और गणेश के मन्दिर में। इससे निकीतिन काफ़ी प्रभावित हुआ।

गांववासी तीर्थयात्रियों से बड़े स्नेह से मिलते। सीता अफ़नासी को बराबर दिखाती जा रही थी—हमारे गांव में ऐसा ही कुआं था, ऐसा ही तालाब, ऐसा ही बछड़ा। अफ़नासी को सीता की आंखों में दुख की झलक दिखाई पड़ रही थी। वह बार बार यही सोचता जा रहा था कि वह अपनी धरती हमेशा के लिए छोड़ भी सकेगी, रूस में रह भी सकेगी?

कभी कभी अफ़नासी को बीदर के अपने जीवन के अन्तिम सप्ताहों की याद आने लगती। उस समय उसके मन में तरह तरह की शंकाएं उठा करतीं किन्तु इनका कारण क्या था यह वह न जानता था।

खज़ानची उदास होता जा रहा था, वह जैसे ईद का चांद हो गया था। बातचीत के समय कभी सामने न देखता। उसे खज़ानची से क्या लेना-देना था? और हां ऐसा लगता है जैसे मुस्तफ़ा ने भी शहर में कई बार उसका पीछा किया है। नहीं यह सब बेवक़ूफ़ी की बातें हैं। मुस्तफ़ा तो खुद उससे भागता है ... किरोधार भी उसके यहां आया था। उसने उसके घर की सभी चीज़ों को घूर घूरकर देखा भी था। लेकिन परेशानी की क्या बात! वह बीदर के अपने घर में हसन को छोड़ ही आया है। वह घर की देख-भाल कर ही लेगा। वहां कौन क्या ले जायेगा। जो माल-मता उसके पास था वह तो अब भी उसके बटुए में है।

बेकार के ख्याल! बीदर में उसका जीवन कोई बुरा नहीं रहा। उसने वहां के महल देखे थे, यह देखा था कि गहरे गहरे कुओं से पानी, नलों द्वारा किस प्रकार महलों में पहुंचाया जाता था। उसकी अच्छे-भले लोगों से जान-पहचान हुई थी – महमूद गवान का इतिवृत्त लेखक फ़रिश्ता, शायर अबू अली, नजूमी सेफ़ी इनमें से थे।

फ़रिश्ता नाटे क़द का एक गोल-मटोल आदमी था। जब हंसता तो मुंह ऐसे खुल जाता मानो बीच से कटा हुआ तरबूज़ हो। उसने रूस के बारे में बहुत कुछ पूछा था, वहां के राजाओं के नाम अपने पास लिख लिये थे और रूस की फ़ौज के बारे में भी कुछ सवाल किये थे। अफ़नासी ने उसे हंसी-मज़ाक़ में जवाब दिया था कि रूस में सभी फ़ौजी हैं, सभी को युद्ध-कला सिखायी जाती है और अच्छा हो कि लोग वहां न जायें... इतिवृत्त लेखक ने पंख की क़लम से अपने गोल गोल नथुने खुजाते हुए एक आह-सी भरी थी और सब कुछ लिख लिया था।

अबू अली शायरी करता था। उसे कोई खाना भले ही न दे, लेकिन बहादुरों की तवारीख तथा लड़ाइयों और हसीनाओं की दास्तानें पढ़ने के लिए दे दे, तो फिर शायर को कुछ नहीं चाहिए।

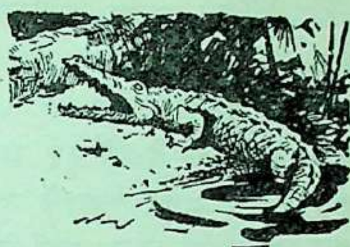
अबू अली सलतनत-भर में प्रसिद्ध था। उसका बाप भी शायर था, लेकिन ज़िन्दगी में उसने एक ग़लती की थी। एक बार उसने अपनी शायरी पहले सुलतान को न सुनाकर किसी दूसरे को सुनायी थी। नतीजा यह हुआ था कि उसकी आंखें निकाल ली गयी थीं, ज़बान काट ली गयी थी और कानों में सीसा भर दिया गया था। उसे मानो जताया गया था कि अपनी हैसियत न भूलो।

अबू अली को अपने पिता की याद है और आज भी वह उदास हो उठता है।

निकीतिन ने उसे मिकूला सेल्यानीनोविच की पुरानी गाथा सुनायी और शायर के दिल की कली खिल गयी। उस गाथा में इतना जोश था कि अबू अली अपने आंसू न रोक सका।

नजूमी सेफ़ी इन सब से भिन्न था। बूढ़ा और एकान्तप्रिय। रातों को मीनार पर निकल जाता और तारों की गति का अध्ययन किया करता। तारे देखकर ही वह आदमी की तक़दीर बता देता। कहते हैं वह उस खानदान से था जिसके किसी चिराग़ ने वर्तमान सुलतान के परबाबा को, जो उस समय एक मामूली सिपाही थे, यह बताया था कि वे तख़्तनशीन बनेंगे, सुलतान बनेंगे।

अफ़नासी की इच्छा थी कि सेफ़ी उसकी भी एक जन्मपत्री बना दे किन्तु उसने अपने पैदा होने का समय और ग्रहों आदि के बारे में जो कुछ नजूमी को समझाया उसे वह न समझ सका। यह अफ़सोस की बात थी—भविष्य जान लेना भी कितने कौतूहल की चीज़ है। और बूढ़ा सेफ़ी, आदमी भी कितने मज़े का है। उसने आकाश के बारे में न जाने कितनी आश्चर्यजनक बातें बतायी थीं। उसने कहा कि वह यह भी बता सकता है कि कोई अज्ञात तारा सौ वर्ष बाद कहां होगा।



वह कुछ अंक लिखता और आकाश में किसी रिक्त स्थान की ओर संकेत करता हुआ कहता – वहां उदय होगा वह तारा।

बीदर बड़ी दिलचस्प जगह है! पर रास्ते में उसे और मज़ा आ रहा है। उसे अपनी आत्मा निष्कलुष-सी लगती है, यद्यपि रास्ता बहुत आसान नहीं है। उसके रवाना होने से पहले बीदर से तीन बैल-गाड़ियां चली थीं और वे ढेर हो गयी थीं। कहते हैं उनपर भेड़ियों ने हमला किया था। यहां भेड़िये छोटे छोटे होते हैं, लेकिन बड़े ख़ूंख़ार होते हैं और जब निकलते हैं तो बड़े बड़े झुंडों में। भगवान न करे उनका सामना हो जाये ...

सीता के गाने की मधुर ध्वनि सुनना, उसके बल खाते हुए शरीर और मुस्कराते हुए चेहरे को एकटक देखना, रंगू की दास्तान सुनना, किसानों की झोंपड़ियों में रात बिताना, घास और झाड़ियों की ख़ुशबू का आनन्द लेना ... कितने दिव्य आनन्द की अनुभूति होती है इन सब में!

सड़क पर भीड़ बराबर बढ़ती रही। लोग पहाड़ियों और छोटी छोटी नदियों से होते हुए ताड़ के पेड़ों और घाटियों के बीच से टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर चल रहे थे।

उन्हें मार्ग में एक माह लग गया था। अब उनके सामने कृष्णा का कलकल करता हुआ जल, शान से सिर उठाये हुए ऊंचे ऊंचे पहाड़ और मन्दिर की भूरी भूरी उदास-सी दीवालें दिखाई दे रही थीं।

सीता, रंगू और अपने इर्द-गिर्द के सैकड़ों लोगों के मुंह पर निकीतिन को एक जैसे भाव दिखाई पड़ रहे थे – प्रसन्नता, व्याकुलता, भीरुता, आशा और चिन्ता के भाव ...

बैलों को स्थानीय निवासियों की देखरेख में छोड़, रंगू, सीता और झांकी के साथ उसने कृष्णा पार कर उसके दक्षिणी किनारे पर जाने का निश्चय किया।

लोग चमड़े से ढंके हुए डब्बों* में चढ़ चढ़कर पार उतर रहे थे। डब्बे प्रायः तेज़ बहाव में पड़कर नाचने लगते और उनमें थोड़ा-बहुत पानी भरने लगता। डब्बों को खेनेवाले बराबर व्यस्त थे। अफ़नासी सीता का हाथ पकड़े था। कई बार तो उनके डब्बे के बिल्कुल ही पास कुछ भयानक घड़ियाल भी दिखाई दे जाते। वे छिछले पानी में भी पड़े रहते और लोगों की चिल्ल-पों सुनकर भी करवटें न लेते। अफ़नासी ने उनकी ओर न देखने का प्रयत्न किया। वह जानता था—यहां लोग बड़ी बड़ी दूर से आदमियों की लाशें लाते हैं और घड़ियालों का पेट भरते हैं।

अभी अभी एक अधफुंकी लाश चिता से निकालकर नदी में प्रवाहित की गयी थी। काश, इन चिताओं पर उसकी नज़र न पड़ती! सारे तट पर चिताओं का धुआं दिखाई दे रहा था। लोग कैसे विश्वास कर लेते हैं कि घड़ियाल के पेट में जाकर आदमी को मुक्ति मिलती है!

उसने सीता पर एक दृष्टि डाली। वह उत्तर में बस मुस्कराकर रह गयी।

डब्बे किनारे लगे। अफ़नासी कूदकर सीता को हाथ का सहारा देने लगा।

उनके सामने मन्दिर की दीवालें थीं—पत्थर की बड़ी और भूरी भूरी दीवालें जिनपर बारह पंक्तियों में पाषाण मूर्तियों के रूप में भगवान शिव के भिन्न भिन्न स्वरूपों और लीलाओं के चित्रण हुए थे।

---

* डोंगियों।

भगवान शिव की इस नगरी में सर्वत्र चहल-पहल थी। मुसलमान चौकीदारों को प्रवेश-शुल्क अदा कर चुकने के पश्चात् हज़ारों लोग नगरी में प्रवेश कर रहे थे। यहां प्रति दिन हज़ारों की संख्या में लोग पूजा पाठ करते थे, दान-दक्षिणा देते थे। मन्दिरों की ज्योति अखंड रूप से जला करती थी। भक्त लोग फूल खरीद खरीदकर मन्दिर के देवताओं और मुख्य मन्दिर के बाहर काले पत्थर की बनी भीमाकार गौमाता पर चढ़ा रहे थे।

नगर की चहारदीवारी के पास पड़े व्यापारियों के तम्बुओं में आपको सभी चीज़ें सुलभ हो सकती थीं–देवताओं की कांसे की मूर्तियों से लेकर रत्न राशि तक।

कर्ण ने झूठ नहीं कहा था। यहां हीरे सस्ते थे। निकीतिन ने कई दुर्लभ और आबदार हीरे खरीदे। कौतूहलवश वह मन्दिरों में भी गया। मन्दिर में प्रवेश पाने के लिए आदमियों को सिर के बाल और स्त्रियों को चोटी का एक हिस्सा कटाना पड़ता था। बहुत-से लोग तो अपनी सारी चांद घुटवा डालते। मन्दिर में जूता पहनकर जाने की मनाही थी। पत्थर की सीढ़ियां इतनी जला करतीं कि लोगों के पैर तक झुलस जाते। जटाधारी फ़क़ीर, शरीर पर बाघ और चीते की खालें डाले, यात्रियों का आंचल पकड़ पकड़कर भीख मांग रहे थे। सीता की निगाह में ये भिखारी भी साधु-सन्तों से कम न थे। वह इन्हें उन्मुक्त हस्त से दान-दक्षिणा दे रही थी।

मन्दिरों के भीतर अंधेरा था और लम्बे लम्बे दीवटों पर ज्योतियां जल रही थीं जिनके प्रकाश में भीतर के स्तम्भ तथा मूर्तियां मन्दिरों की सुनहरी और कांसे की दीवालों में झलक रही थीं। सुखद शीतलता जैसे पत्थरों से उठ उठकर चारों ओर फैल रही थी, पर समस्त दिशाओं से देवी-देवताओं के तरह तरह के–

पक्षियों, सर्पों और पशुओं के—चेहरे भक्तों की ओर बड़े भयानक ढंग से घूर रहे थे।

एक मन्दिर में शिव, अपने ढेरों हाथों में कुंडलियों वाले सर्प पकड़े, तांडव नृत्य कर रहे थे। एक दूसरे मन्दिर में वह किसी विराट दैत्य के पंखों पर बैठे थे तो तीसरे मन्दिर में मानव की खोपड़ियों के बीच खड़े थे... जगह जगह धूप और सूखे फूलों की सुगन्ध आ रही थी। बांसुरी, शहनाई, वीणा तथा अन्य वाद्यों की ध्वनि और हज़ारों मृदंगों की धा-धिन धा-धिन कानों में पड़ रही थी। देवदासियां मन्दिरों की शोभा बढ़ा रही थीं। यौवन से गदराती हुई, एक से एक सुन्दर। पारदर्शी साड़ियां पहने और बहुमूल्य रत्नों से लदी हुई। वे देवताओं के स्तोत्र गातीं और अपने नृत्य में भगवान शिव और अन्य देवी-देवताओं की जीवन-लीलाओं को व्यक्त करतीं।

संगीत की धुन बढ़ती गयी और देवदासियों के नृत्य की गति भी। अन्ततः, सिवा बांसुरी की एक हल्की-सी धुन के, सारी धुनें बन्द हो गयीं। देवदासियों ने परमानन्द की अवस्था में, अपने सारे वस्त्र उतार डाले। अब दर्शकों के कानों में उनके घुंघरूओं, अंगूठियों और चूड़ियों की टुनटुन ही पड़ रही थी... सारा दृश्य जैसे निर्लज्जता और मस्ती का द्योतक था। निकीतिन बाहर चला आया। उसका सिर ऐसा भन्ना रहा था मानो नशे में हो। उसने देखा कि बाहर आनेवाले हिन्दुओं की आंखों में एक ज्वाला धधक रही है। यह वह नशा था जो उनपर उत्तेजक संगीत, भयानक मूर्तियों, देवदासियों की सुन्दरता और उन्माद की अवस्था के कारण छा रहा था... रंगू ने बताया कि देवदासियां बड़े और रईस घरों की लड़कियां होती हैं। उनके माता-पिता बचपन में ही उन्हें मन्दिरों में दे देते हैं, जहां पुजारी उन्हें वेद, पुराण और नृत्य-कला सिखाते



हैं। ये लड़कियां अपनी सुन्दरता से मन्दिरों की सेवा करती हैं। उन्हीं के कारण मन्दिरों में अधिक चढ़ावा चढ़ता है। और वे तब तक यह कार्य करती हैं जब तक पचीस की नहीं हो जातीं। इसके पश्चात् वे अपने घर लौट आती हैं।

"और . . . यह कोई बात नहीं ? उन्हें घर में आने दिया जाता है?" सावधानी से निकीतिन ने पूछा।

रंगू की समझ में कुछ न आया।

"क्या . . . आने दिया जाता है ? उनके लौटने से सारा परिवार ख़ुशी से झूम उठता है। देवदासी सबसे अच्छी कन्या समझी जाती है। तुमने सीता की बहन के बारे में तो सुना ही होगा . . ."

निकीतिन अपनी परेशानी व्यक्त न करते हुए नृत्य में दिखाये गये भावों के बारे में पूछने लगा।

"आज तुमने नृत्य में राम और सीता के प्रेम की कथा देखी है," रंगू कहने लगा, "लंका का राक्षस सीता को हर ले गया था। लंका में सीता को हज़ारों राक्षसों के पहरे में रखा गया था। गरुड़ और वानर सेना ने राम की मदद की थी। वानरों ने एक दूसरे से अपनी पूंछें फंसा फंसाकर सागर पर एक पुल-सा बना लिया था। राम की सेना की राक्षसों पर विजय हुई। इस प्रकार सीता का

उद्धार हुआ था। यह प्रेम और श्रद्धा की कहानी है। कल तुमने सर्पसत्र की कथा देखी थी..."

निकीतिन की जिज्ञासा पर सीता खुश थी। सीता ने भी उसे बहुत-सी बातें समझायीं। श्री-पर्वती के मन्दिर की दीवालों के किनारे किनारे चलती हुई वह उसे पत्थर की अनेकानेक मूर्तियां दिखाती और उनके अर्थ समझाती – यह देखो वराह अवतार में शिव प्रलय जल में से पृथ्वी का उद्धार कर रहे हैं ... वह देखो मत्स्यावतार शिव ...

"भगवान हर समय जीव-जन्तुओं का ही अवतार क्यों धारण करते हैं ?"

"क्या ? भगवान – वे तो सर्वत्र हैं। संसार की हर वस्तु उन्हीं से जीवन का प्रकाश पाती है न।"

वह तो निकीतिन से भी अधिक आश्चर्यचकित हो रही थी।

सीता, रंगू और दूसरे हिन्दुओं की बातों से अफ़नासी ने अन्ततः उनके धर्म के मूल सिद्धान्तों को समझ लिया था।

हिन्दू सारे संसार को भगवान का ही रूप मानते हैं। भगवान का यह रूप क्षणिक, मायिक और अबोध्य है। उनके अनुसार जीवन की गति अनन्त है। मनुष्य बार बार जन्म लेता है। वह सर्प, पक्षी या देवता आदि में से किस योनि में प्रकट होगा यह उसके कर्मों पर निर्भर है। अगले जन्म में सुखी रहने के लिए मनुष्य को चाहिए कि वह अपने धर्म और जात के सिद्धान्तों पर अडिग रहे। दुःख इस संसार का नियम है और जो कोई इसका विरोध करेगा उसे कष्ट भुगतने पड़ेंगे। जीवन पानी का बुलबुला है। मनुष्य को चाहिए कि वह परमब्रह्म में लीन होने का प्रयास करे। इसके दो मार्ग हैं। पहला – ध्यान-धारणा का, जो केवल द्विजों के लिए है

और दूसरा योगी मार्ग, जो सबके लिए है। दूसरा रास्ता वह है जिसमें इन्द्रिय निग्रह करके मनुष्य सांसारिक कर्म करता रहता है।

"ठहरो, मैं तुम्हें यहां कुछ कर्मठ योगी दिखाऊंगा," रंगू ने वादा किया।

और अफ़नासी ने उन्हें देखा भी। यह घटना शिवरात्रि के बाद की है। शिवरात्रि अफ़नासी ने सीता और अन्य हिन्दू मित्रों के साथ बड़े मन्दिर में भगवान शिव की मूर्ति के पास ही बितायी थी। भगवान शिव की पाषाण-मूर्ति – वानर का लाल लाल मुख, पन्ने जैसी हरी-हरी आंखें, लम्बी पूंछ, बायें हाथ में सोने से मढ़ा हुआ त्रिशूल और दाहिना भक्त के सिर के ऊपर सधा हुआ।

उस रात फूलों की बहार थी और इतनी उदासी कि आदमियों के रोंगटे खड़े हो जाते। संगीत कुछ इस विचित्र ढंग से चल रहा था मानों कोई भविष्य कथन कर रहा हो। देवदासियां झूम झूमकर नाच-गा रही थीं।

धूप की गंध के साथ साथ सारे वातावरण में किसी असाधारण घटना के घटने का भी भान हो रहा था।

अन्ततः भोर हुआ। देवदासियां हवा में तैरती-सी, द्वार की ओर बढ़ीं। उनके कंठों से निकलनेवाले उन्मादी संगीत का हज़ारों कंठ एक साथ अनुकरण करने लगे। भक्तों का समूह जैसे सुधबुध खोकर देवदासियों के पीछे चल रहा था।

पहाड़ों के उस पार सूर्य के दर्शन हो रहे थे। किन्तु, मशालों का धुआं, बढ़ती हुई भीड़ पर, रेखाओं के रूप में छाता जा रहा था। देवदासियां गाती जा रही थीं, चलती जा रही थीं, गाती जा रही थीं, चलती जा रही थीं... इस प्रकार भीड़ नगर-द्वार को

पार कर गयी। कृष्णा का जल दिखाई पड़ने लगा। देवदासियों के संगीत ने तीखी, भयानक और करुण कराह का रूप ले लिया था...

और अफ़नासी ने देखा कि भीड़ में से कुछ लोग छंटे, कृष्णा के किनारे की पहाड़ियों पर चढ़े और नदी के पानी में कूद पड़े। एक... दो... पांच... उसने जल की ओर देखा और भय, घृणा और व्यथा से उसकी बोटी बोटी कांप उठी। कृष्णा नदी में ढेरों घड़ियाल थे।

अफ़नासी को पसीना आ गया। ओफ़, भगवान के भक्त क्या नहीं करते? ज़िन्दगी-भर विनम्रता दिखाओ, आज्ञा मानो, आख़िर में परिणाम यह। हुं-ह... यह सब उसके लिए नहीं।

रंगू ने अफ़नासी की दशा देखी पर यह सोचकर रह गया कि वह इस दृश्य से बड़ा प्रभावित हुआ है।

"वे ब्रह्म में मिल गये!" रत्न-तराश बोला, "उन्हें परमानन्द की अवस्था प्राप्त हो गयी..."

परमानन्द, परमानन्द, परमानन्द! निकीतिन का कितने ही धर्मों से साबक़ा पड़ चुका था! हर धर्म अपने अपने ढंग से मुक्ति का मार्ग दिखाता था। पर सभी धर्म एक बात से सहमत थे–मनुष्य को इस संसार में कोई सुख नहीं, उसका जीवन भगवान की इच्छा पर निर्भर है और सुख अकेले परलोक में मिल सकता है।

आखिर हिन्दू धर्म, अन्य धर्मों की अपेक्षा किस अर्थ में बुरा था?

सीता सारी रात भगवान शिव के चरणों में पड़ी रही थी। वह पीली पड़ गयी थी। किन्तु जब उसने अफ़नासी की ओर देखा उसकी आंखें चमक उठीं।

"मैंने सब कुछ भगवान से कह दिया है," नदी से लौटते समय सीता ने फुसफुसाते हुए कहा।

अफ़नासी ने उसका हाथ थपथपाया और सिर हिला दिया। शायद अब वह शान्त होगी।

खेमे में से झांकी उन्हें हाथ के इशारे से बुला रही थी। उसके पास ही एक कुबड़ा-सा आदमी खड़ा खड़ा धूप में आंखें मिचिया रहा था। निकीतिन ने उसे तुरन्त पहचान लिया।

"भावलो!" अफ़नासी ने दूर से ही उसे पुकारा, "ऐ! भावलो! तुम यहां! कहां से आ रहे हो?"

सीता जहां की तहां ठिठक कर खड़ी हो गयी और जड़वत् भावलो की ओर देखने लगी। फिर, जैसे मन्त्रमुग्ध-सी उसकी ओर बढ़ी। लगता था कि भावलो भी इस भेंट से चकित हो उठा था।

"दादा, तुम मुझे भूल गये क्या?" सीता ने पूछा और "अफ़नासी सीता की यह फीकी-सी आवाज़ सुनकर चकित हो गया।

"सीता, अण्णू की बेटी?" अविश्वास से भावलो बोल उठा, "अफ़नासी, यह सब कैसे हुआ?"

"दादा," सीता बीच ही में बोल उठी, "आप हमारे यहां तो नहीं गये थे?"

"गया था। तुम्हारे पिता जी समझ रहे हैं तुम मर चुकी हो।"

"तो वे ज़िन्दा हैं?"

"हां, ज़िन्दा हैं।"

सीता बैठकर रोने लगी। उसने दोनों घुटनों पर सिर रख लिया।

भावलो पहले भी कई बार सीता के गांव में गया था और उसके सारे परिवार को जानता था।

"भावलो दुखी है!" झांकी चुपके से निकीतिन से बोली, "फ़ौजियों ने उसकी आंखों के सामने उसकी पत्नी और उसकी दोनों

बेटियों को मौत के घाट उतार दिया था... लेकिन वह है अच्छा आदमी।"

पांचों लोग अंगीठी के पास बैठकर अपनी अपनी कहने-सुनने लगे। सीता एकदम बदल गयी थी। वह अफ़नासी से आंखें चुरा रही थी और घबड़ा गयी थी।

"मैं तुम्हें तुम्हारे पिता के पास पहुंचा दूंगा," भावलो ने सीता को वचन दिया, "वह तो खुशी से फूला न समायेगा। आजकल क़र्ज़ में डूबा हुआ है।"

शाम को जब अफ़नासी और सीता अकेले रह गये तो अफ़नासी ने उससे पूछा –

"तुम अपने पिता के पास जाना चाहती हो?"

सीता ने अपनी गर्दन न उठायी। उसने धीमी-सी आवाज़ में कहा –

"हां।"

"मैं तुम्हें न जाने दूंगा।"

सीता चुप रह गयी, किन्तु इस चुप्पी से भी उसका विरोध स्पष्ट प्रकट हो रहा था। अफ़नासी फिर बोला –

"मैं तुम्हें न जाने दूंगा!"

"तुम देवताओं की इच्छा के विरुद्ध नहीं जा सकते," सीता फुसफुसायी, "भावलो कोई संयोग से नहीं आ टपका। भगवान शिव मुझे रास्ता दिखा रहे हैं।"

अफ़नासी ने उसके कंधे दबाये। सीता की आंखें उसे जड़वत् देखती रहीं। निकीतिन ने अपने हाथ गिरा दिये और घूमकर तेज़ी से चल दिया। उस रात वह बिल्कुल न सोया, बल्कि कृष्णा के किनारे बैठा बैठा जलतरंगों के साथ चन्द्र किरणों की क्रीड़ा देखता रहा...

दो दिन और बीत गये। सीता भी जैसे सूख गयी थी। लग रहा था मानो किसी ने उसे अन्दर ही अन्दर चूस लिया हो। जब कभी निकीतिन पास होता तो वह चौंक पड़ती। उसके मुंह से बोल तक न फूटते।

रंगू और झांकी, जैसे चिन्तातुर, उसके संबंध में फुसफुसा फुसफुसाकर रह जाते। भावलो भी चुप था। यह सब कुछ अफ़नासी के लिए असह्य हो रहा था।

एक दिन किसी की चिता धूधू कर रही थी और अफ़नासी और भावलो वहीं पास खड़े थे। अफ़नासी ने भावलो से पूछा –

"अब तुम कहां जाओगे?"

"खेलना लौट जाऊंगा। वहां मेरे सगे-संबंधी हैं।"

"तो सीता के गांव से होकर जाओगे?"

"हां।"

निकीतिन ने एक आह भरी, ज़मीन से घास का एक तिनका उठाया और उंगली से मसलने लगा। घास महमहा उठी।

"यह मौक़ा है। सीता अपने पिता के पास जा सकती है," निकीतिन बोला, "वह इस अवसर को भगवान् की इच्छा समझती है। उसे अपने साथ ले जाओ न।"

"अच्छी बात है," भावलो ने उत्तर दिया, "तुम तो जानते ही हो कि उसकी मंगनी हो चुकी है?"

"इससे मुझे क्या लेना-देना!"

सीता उस गांव जा रही है जहां उसका जन्म हुआ था यह जानकर भी सीता को कोई प्रसन्नता न हुई। वह पहले की ही तरह अनमनी, उदास बनी रही।

एक दिन बाद विदा की घड़ी भी आ पहुंची।

"नमस्ते!" भावलो की बैल-गाड़ी के पास खड़ी होकर सीता बोली, "यह चादर ले लो, मैंने तुम्हारे यहां करघे पर बीनी है...

निकीतिन ने उसका हाथ पकड़ा, ज़ोर से दबाया और फिर छोड़ दिया।

"नमस्ते," वह धीरे से बोला।

गाड़ी आगे बढ़ने लगी। निकीतिन रास्ते में खड़ा हो गया। वह देख रहा था सीता का धूमिल पड़ता हुआ चेहरा, साड़ी की अदृश्य होती हुई सिलवटें और अन्ततः विलीन होती हुई उसकी सम्पूर्ण आकृति...

निकीतिन ने सिर लटका लिया। उसे धूल में बने पहियों के निशान दिखाई पड़ रहे थे। अभी हवा चलेगी और इनका भी नामोनिशान मिट जायेगा।

निकीतिन को रंगू की आवाज़ सुनाई दी। किन्तु वह सिर झुका कर दूसरी ओर, कृष्णा के किनारे किनारे चलने लगा, ठीक उसी रास्ते पर जो उसे एक महीना पहले भगवान की इस नगरी में लाया था, सिर्फ़ एक महीना पहले।

छठा अध्याय

श्री-पर्वती से बीदर लौटने के बाद निकीतिन ने सीता को भुलाने का प्रयत्न किया, किन्तु न भुला सका। जब घर में अबू अली उसे रुदाक़ी और उमर ख़ैयाम की रुबाइयां सुनाता और जब वह फ़ारसी के चुनिन्दा शेरों को, जिनका विषय पूर्वी देशों की सुन्दरियों का यशवर्णन होता, अपने लिए लिख लेता उस समय भी अफ़नासी बराबर

उसे याद करता रहता। उसे ये सुन्दरियां उसकी कृशकाय बन्दिनी की ही तरह लगा करतीं। जब कभी घर में कपड़े लेने के लिए धोबी आता तो उसे सीता की याद आ जाती, क्योंकि धोबी के आते ही सीता जैसे सिर पर आसमान उठा लेती थी।

स्वयं कर्ण के यहां भी निकीतिन यदा-कदा ही जाता, क्योंकि वहां भी सीता की याद उसका पीछा न छोड़ती – सीता झांकी की सहेली थी न!

वह घंटों कोई काम न शुरू कर पाता, निरुद्देश्य बीदर की सड़कों और तंग गलियों में इस आशा में मारा मारा फिरा करता कि उसका प्रेम इन्हीं गलियों में छूट जाये, खो जाये।

जून का महीना, चिलचिलाती हुई धूप। गर्मी से झुलसकर पेड़ों की पत्तियां तक टूट टूटकर गिरने लगतीं। कुएं भी इनेगिने ही थे। उनपर प्यासों की भीड़ लगी रहती – कोई कटोरियों में पीता, तो कोई चुल्लू में। प्रायः पानी देखते देखते सूखकर रह जाता और यदि उसकी कुछ बूंदें ज़मीन पर गिरतीं तो तुरन्त ग़ायब हो जातीं और उनकी जगह छोटे छोटे सूराख बन कर रह जाते।

शाम के समय मकानों के बाहर नर-नारियों के छोटे-छोटे समूह इकट्ठे हो जाते। उनके चेहरे अस्पष्ट-से दिखाई देते और उनके रंगबिरंगे कपड़े धूमिल-से। वह वहां से गुज़रता चला जाता। उसे देखकर लोग अपनी बातचीत बन्द कर देते, और कुछ तो झुककर उसे अभिवादन भी करने लग जाते। इनमें से कुछ को वह जानता तक न था किन्तु उत्तर वह प्रत्येक को देता।

अफ़नासी के चेहरे पर उदासी भरी हल्की-सी मुस्कान दौड़ जाती। इस समय उसे मदद की ज़रूरत थी। लेकिन उसे मदद

देता कौन? और झूठी सान्त्वना से वह अपना मन बहलाना न चाहता था।

भारत में रहते रहते उसे एक वर्ष हो चुका था। अब हर समय वह मन ही मन यही प्रश्न किया करता—अब लौट न चला जाये? वह बहुत घूम चुका था और भारत के व्यापार के बारे में अपनी डायरी में बहुत कुछ लिख भी चुका था। तो अब रहने का क्या तुक?

परन्तु फ़ारस से जो खबरें बीदर आती थीं वे उत्साहवर्द्धक न होती थीं। उज़ून हसन की फ़ौजों ने ख्वालीन के रास्ते के यज़्द तथा अन्य नगरों पर अधिकार कर लिया था और गुरमीज़ अरब और खोरासान से कट गया था। उज़ून हसन का इरादा सारे फ़ारस पर क़ब्ज़ा करने का था। उसने अपने पुराने दुश्मन झेगनशाह को मारकर उसकी सेना को मिट्टी में मिला दिया था। इसके अलावा वह आज़रबैजान पर भी क़ब्ज़ा कर लेने की सोच रहा था।

उसके इस रास्ते से जाने का कोई सवाल ही न था। एक रास्ता और था— मक्का होकर। पर ईसाइयों का मक्का होकर जाना उचित न था। तो क्या उत्तर में विन्ध्य पहाड़ों को पार कर फिर रेगिस्तानों और पहाड़ों की खाक छानते हुए चला जाता? अबू अली ने बताया कि इस तरह बुख़ारा तक आसानी से जाया जा सकता है। लेकिन यह कहना सम्भव न था कि इस रास्ते में उसे कितना समय लगेगा। हो सकता है उसका मुक़ाबला तातारों से हो जाये। और कौन जाने सराय और मास्को के बीच युद्ध चल रहा हो? अगर ऐसा हो तो हथकड़ियां पड़ेंगी और यदि फ़ौरन मार न डाला गया तो अत्याचारों का शिकार होना पड़ेगा। ओफ़! बदक़िस्मती! भारत से निकलकर जाने का कोई रास्ता नहीं! और रुपया तो ऐसे बह

रहा है जैसे अप्रैल के सूर्य से तपकर वर्फ़। घोड़ा वेचने से जो पैसा मिला था उसका तीन चौथाई तो खाने-पीने और घूमने-घामने में ही ख़र्च हो गया। अब, अगर भारत में और रहना पड़ा तो फिर कुछ न कुछ तो सोचना ही होगा। लेकिन क्या? बस एक ही रास्ता रह गया है–जवाहरात वेच डालना और गोलकोंडा और रायचूर की सुलतान की खानों में जाना। वेशक वहां जाने की मनाही है किन्तु रंगू ने कहा है कि बहुत-से लोग यह ख़तरा मोल लेते हैं, वहां जाते हैं और गोलकोंडा में काम करनेवाले ग़ुलामों से हीरे मिट्टी के मोल खरीदते हैं।

उसे भी यही रास्ता अख़्त्यार करना होगा। यह फ़ायदेमन्द भी होगा–एक तो वह खुद रास्ता जान लेगा, दूसरे रूसियों के लिए उसके बारे में लिख देगा।

उसके दिमाग़ ने उसे यही सलाह दी थी। किन्तु उसका दिल उसे अज्ञात कोंकन के गांव कोठूर में बुला रहा था। इस गांव की स्मृति उसके मानस में घुल मिल गयी थी।

सोते समय यही विचार उसके दिमाग़ में उठ रहे थे। जागने पर भी उसे उनसे मुक्ति न मिली थी। वह सोफ़े पर पड़ा पड़ा, बांस की छत की ओर देखता हुआ, जाने क्या क्या सोच रहा था। भारतीय व्यवस्था के अनुसार आदमी का जीवन तीन भागों में बंटा हुआ है। पहला–जब आदमी पढ़ता-लिखता है; दूसरा–जब वह श्रम करके अपने पूर्वजों के ऋण से उऋण होता है और दाम्पत्य जीवन के नियमों का पालन करते हुए सन्तति पैदा करता है; और तीसरा–जब वह ध्यान-धारणा के माध्यम से परमसुख प्राप्त करता है।

अपने पिता की सहायता करते हुए और खुद काम करते हुए अफ़नासी ने भी पढ़ा-लिखा था–अब भी तो वह सीख ही रहा है।

और सन्तति से तो भगवान ने उसे दूर ही रखा है। वृद्धावस्था शान्ति से कटेगी यह विचार भी उसे बड़ा विचित्र लग रहा है। नहीं, ज़िन्दगी को सिद्धान्तों के चौखटे में नहीं कसा जा सकता। यह बात सच लगती है। उसने इंजील अवश्य पढ़ी है, फिर भी वह ढंग का ईसाई तक न सिद्ध हो सका। सारी युवावस्था में उसका आचरण इंजील के अनुसार कभी न रहा – उसने शत्रुओं को क्षमा नहीं किया, संसार के शक्तिशाली लोगों के आगे घुटने नहीं टेके, परलोक की बात नहीं सोची और अकेले शरीर की ज़रूरतें पूरी करने में ही लगा रहा।

कभी कभी अफ़नासी को लगता – काश उसके पास वे धर्मग्रन्थ होते जिन्हें रास्ते में तातारों ने लूट लिया था। तब वह समझ पाता कि आसपास क्या घट रहा है। किन्तु वे ग्रन्थ थे कहां! अफ़सोस! अब तो वह अपने वारों तक को भूल गया था, और रह रहा था मुसलमानी कैलेंडर के अनुसार। कब कौन व्रत होगा, कब कौन त्योहार, इसकी उसे कोई सुध न रह गयी थी।

यह एक ऐसा पाप था जिसे भगवान कभी माफ़ न करेगा। बस एक ही सन्तोष है – ईसाइयों के लिए एक नया देश खुल गया है। यहां से वह बहुत-सी ज़रूरी ज़रूरी चीज़ें ले जायेगा – कुतुबनुमा, भारतीय नक़्शे और चीन और नये नये धर्मों के बारे में अनेकानेक सूचनाएं, जिनके विषय में रूस के लोग अनुमान तक नहीं लगा सकते। अज्ञात मुल्कों के साथ रूस के संबंध दृढ़ होंगे, व्यापार और विज्ञान का रास्ता खुलेगा। वह सोचता था कि भिन्न भिन्न धर्मों के लोगों को कुएं के मेंढक बनकर नहीं रहना चाहिए। हर राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को कुछ सिखा सकता है और उससे कुछ सीख भी सकता है। धर्म कौनसा ठीक है इसका फ़ैसला करना बहुत कठिन है। इसका पता

तो कालान्तर में ही चलेगा। समय की सीमा लांघकर तो कोई देख नहीं सकता!

और कौन जाने उसने ईसाइयों की जो चिन्ता की है उसे देखते हुए भगवान उसके पापों को माफ़ ही कर दे। भारत के लोगों और भारत देश के प्रति मैत्रीपूर्ण अनुभूतियों से गद्गद उसके मस्तिष्क में इसी प्रकार के विचार चक्कर लगा रहे थे।

प्राय: उसे लगता कि यदि उसके साथ इवान लप्शोव होता तो वह रूस के कलाकारों और पादरियों के लिए भारत के मन्दिरों, देवी-देवताओं, महलों, बाज़ारों, जंगलों और पशुओं के चित्र बनाता और यह सब कितना अद्भुत होता!

अफ़नासी ने इस प्रकार के चित्र प्राप्त करने की पूरी कोशिश की, किन्तु अभी तक उसे अधिक चित्र न मिले थे। इस दिशा में उसे सिर्फ़ एक ही बार सफलता मिली थी।

बात यों हुई। निकीतिन के नगर लौटने तक पर खज़ानची मुहम्मद वहीं बीदर में रहा। उसने अफ़नासी का अच्छा सत्कार किया और उसे उसके हिन्दू मित्रों की कोई याद न दिलायी। बस एक बार यह ज़रूर पूछा कि अफ़नासी की जानपहचान जौहरी भावलो से तो नहीं है? और जब अफ़नासी ने इसका उत्तर हां में दिया तो उसने इतना और कह दिया कि जब वह आये तो मुझे बता देना, उससे कुछ काम है। बीदर के रईसों ने भी निकीतिन के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। उन्होंने खज़ानची की मार्फ़त उसे बुलाया भी था। उनका निमंत्रण अस्वीकार करना अशिष्टता होती, यद्यपि, असद-खान से हुई भेंट की याद करके, वह इन स्थानीय रईसों से दो हाथ दूर ही रहना चाहता था। वह बीदर के इन रईसों से एक-दो बार मिलने गया था किन्तु उसे विश्वास हो गया कि उनके बारे में उसका जो कुछ ख्याल है वह सही है।

ये रईस उससे बड़े तपाक से मिलते। उसे अपने महल और शेरों, हिमालय के भालुओं और तेंदुओं के बाड़े दिखाते, उससे बराबर वालों की तरह मिलते, अपने संगीतज्ञों और नर्तक-नर्तकियों से मिलाकर उसे चकित करने का प्रयत्न करते, उससे रूस के बारे में पूछते, लेकिन अफ़नासी को लगता कि उसके मेज़बान के घर आये हुए मेहमान उसे वैसे ही देखते मानो वह कोई पढ़ा-लिखा बन्दर, या कोई दुर्लभ-सा जीव हो। वे उसके ईसाई धर्म की खिल्ली भी उड़ाना चाहते किन्तु उन्हें महमूद गवान का डर था, क्योंकि, लोगों का कहना था कि उसकी आज्ञा थी कि रूसी को किसी भी प्रकार नाराज़ न किया जाये।

निकीतिन को दूसरों की अपेक्षा तरफ़दार फ़रहत-खान अधिक पसन्द आया। यह तरफ़दार महमूद गवान का कोई निकट का दोस्त था।

तरफ़दार एक जवान आदमी था। स्वस्थ, गठीला। उसके ठाठ देखकर तो लोगों की आंखें खुली की खुली रह जातीं। उसे दुर्लभ वस्तुएं संग्रह करने का शौक़ था। उसने तरह तरह के गुलदान, तसवीरें और क़ालीन इकट्ठे किये थे। इन दुर्लभ वस्तुओं से महल के तीन बड़े बड़े हाल भरे हुए थे। निकीतिन आंखें फाड़ फाड़कर देख रहा था। उसकी समझ ही में न आ रहा था कि क्या क्या देखे– चीनी मिट्टी के लाल, सुनहरे और कामदार गुलदान, अंडे जितना बड़ा हीरा या एक इंच में बीस हज़ार गांठों वाला क़ालीन, जो सत्तर वर्ष में बनकर तैयार हुआ था...

फ़रहत-खान अपने को एक प्रसिद्ध ज्ञानी समझता था। जब उसे यह विश्वास हो गया कि उसकी समृद्धि ने निकीतिन पर बड़ा प्रभाव डाला है तो उसने अफ़नासी को धर्म के विषय में बहस करने को ललकारा।

अफ़नासी उसका उत्तर बड़ी शिष्टता से देता था। वह फ़रहत-खान की भावनाओं के विरुद्ध कुछ भी कहने-सुनने में हिचकता था। तरफ़दार को यह अच्छा लगता और वह खुद आत्मसन्तोष की भावना से अपनी वक्तृता का प्रदर्शन करता रहता।

सारी बहस आकर इस बात पर ठप्प हो गयी – फ़रहत-खान ने समझ लिया था कि अफ़नासी को ईसाई धर्म के बारे में कोई खास ज्ञान नहीं।

निकीतिन ने कोई बहस नहीं की। इतना ही कहा कि वह यहां एक परदेसी है और उसे अपने धर्म के अनुसार ही भगवान की प्रार्थना करने का अभ्यास है।

फ़रहत-खान, खिलखिला कर हंस पड़ा। बोला – "मैं तुम्हारी सभी तरह की मदद करने को तैयार हूं और मुझे विश्वास है तुम पक्के मुसलमान बनोगे।"

"तब तो मैं क़ाफ़िला रूस न ले जा सकूंगा," अफ़नासी ने उत्तर दिया, "सभी नगरों के लोग तो मुझे जानते हैं।"

उत्तर सुनकर तरफ़दार सोच में पड़ गया। आखिर उसे रास्ता सूझ ही गया।

"अच्छी बात है," वह बोला, "इबादत तुम अपने ढंग से करो। यह कोई अहम बात नहीं। अहम बात यह है कि दिल क्या मानता है। क्या मैंने तुम्हें विश्वास नहीं दिलाया?"

"तुमने बड़े गुर की बातें बतायी हैं। तुम्हारी सलाह बड़े काम की है," निकीतिन ने उत्तर दिया, "मैं इस पर अभी और विचार करूंगा। और अगर मैं तुम्हें तुरन्त कोई जवाब न दे सकूं तो मुझे दोष न देना।"

"अल्लाह का झंडा कभी न कभी तो उन मुल्कों में गड़ेगा ही

जिनके बारे में तुमने बताया है," तरफ़दार ने पूरे विश्वास के साथ कहा, "तुम इन देशों को जानते हो। तुम अगर ज़रूरी क़दम उठाओ तो हम उसकी वाजिब क़द्र करेंगे!"

निकीतिन ने बातचीत को दूसरी दिशा में मोड़ने का प्रयास किया और पुस्तकों के विषय में चर्चा करने लगा।

फ़रहत-ख़ान बहस की बात तो भूल गया और एक दुर्लभ हस्तलिपि ले आया। हस्तलिपि में बड़े अद्‌भुत चित्र बने थे।

उसके पास 'नल-दमयंती' की तीन प्रतियां थीं।

निकीतिन ने हस्तलिपि की इतनी प्रशंसा की कि फ़रहत-ख़ान भी बड़ी उदार मुद्रा का प्रदर्शन करने लगा—उसने रूसी के समक्ष खाल में लपटी हुई भारतीय काव्य की एक प्रति रखी और कहा कि अपने प्यार के तोहफ़े के रूप में त्वेर के वैज्ञानिक के लिए यही उसकी भेंट है।

अफ़नासी ने सिर झुकाकर भेंट ग्रहण की और वादा किया कि वह अपने देशवासियों से कहेगा कि भारत का फ़रहत-ख़ान बड़ा विद्वान और बड़ा गुणी है।

यह उपहार सचमुच बड़ा मूल्यवान था और इससे निकीतिन प्रभावित हुआ। वह बहुत समय तक अबू अली से लिखना-पढ़ना सीखता रहा। वह चाहता था कि यदि वह भारत से कुछ मुसलमानी पुस्तकें रूस ले जाये तो उन्हें पढ़ तो सके। वह सचमुच कुछ पुस्तकें अपने साथ ले जाना चाहता था। पुस्तकों में बहुत-सी उपयोगी बातों का ज़िक्र रहता था।

अफ़नासी कई बार फ़रहत-ख़ान के महल में गया था। गुलाबी महल, सर्पिल स्तंभों वाले बड़े बड़े शीतल हॉल, दीवालों पर मढ़े हुए कीमख़ाब।

फ़रहत-ख़ान एक निर्दयी फ़ौजी सरदार का पुत्र था, फिर भी उसे



युद्ध-कला से कोई लगाव न था। उसे रुचि थी विज्ञान में, ज्योतिष में, कीमिया की रहस्यमयी विद्या में। खान का सबसे निकट का दोस्त था एक अरबी सेफ़ी। तपेदिक के मरीज़ जैसा दुबला-पतला आदमी, जिसके शरीर तक से तेज़ाबों की गन्ध आया करती। वह मिट्टी से सोना तैयार करने के प्रयोगों में लगा रहता था।

अफ़नासी ने सेफ़ी का कारखाना भी देखा। यहां बड़ी बड़ी देगों में कोई द्रव उबल रहा था और बोतलों में से, नलियों द्वारा कुछ बदबूदार बूंदें नीचे टपक रही थीं। वहीं ढेरों शीशियां थीं जिनमें भिन्न भिन्न रंगों के चूर्ण रखे थे।

फ़रहत-खान के ओठों पर एक गर्वपूर्ण मुस्कान बिखर गयी। उसने बताया कि इन प्रयोगों पर वह कोई तीस लाख दीनार खर्च कर चुका है। अब शीघ्र ही वे सोना प्राप्त कर सकेंगे। दुनिया ने जो जो सिद्धियां देखी हैं उन सबसे अधिक ज़रूरी, सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उसका यह प्रयोग होगा।

"मेरी फ़ौजें मुझे कभी धोखा न देंगी!" जिस जगह सेफ़ी काम कर रहा था उधर, दुर्गन्धि से भरे हुए तहखाने की ओर इशारा करते हुए फ़रहत-खान ने कहा।

निकीतिन ने जान लिया था कि ऐसी कमज़ोरी भी बड़ी दुर्लभ होती हैं। पर फ़रहत-खान की इसी विशेषता के कारण तो वह उसकी ओर आकृष्ट हुआ था।

दूसरे रईसों में इस प्रकार की कोई कमज़ोरियां न थीं। इस

30—1576

विचित्र तरफ़दार के बारे में निकीतिन का जो मत था उसकी पुष्टि शायद अबू अली ने भी की थी। उसने तरफ़दार की दी हुई भेंट की बड़ी प्रशंसा की थी।

इस प्रकार जून बीत गया। पेत्रोव दिवस, यानी उलुक-बैराम, को महमूद गवान की फ़ौजें बीदर लौट आयीं। अफ़नासी के भाग्य पर इस घटना का बड़ा प्रभाव पड़ा, अगरचे वह उसकी कोई आशा न करता था। उससे जवाहरात सस्ते दाम पर मांगते थे। साथ ही सुना जाता था कि फ़ौज हीरे-मोतियों के ढेर के ढेर ला रही है। इस अफ़वाह से बीदर के बाज़ार में जवाहरात के भाव गिर गये थे। निकीतिन ने थोड़े-से सुलेमानी और कार्नेलियाई पत्थर ख़रीदने का निश्चय किया। रूस जाते समय वह उन्हीं से राह-खर्च चलाना चाहता था। उसे ये पत्थर बड़े सस्ते मिल गये थे, फिर भी उसे कोई प्रसन्नता न हुई।

"मालिक-अत-तुजार भी कैसे बेमौक़े लौटा है!" वह सोचने लगा, "करूं क्या, बदक़िस्मती जो साथ दे रही है!"

फ़ौज के आने से उसे कोई ख़ुशी न हुई।

सेना ने नगर में बड़ी शान से प्रवेश किया। कोंकन के विजेताओं और गोआ पर अधिकार कर लेनेवालों का जनता दिल खोलकर स्वागत कर रही थी।

बीदर में दो दिनों तक ज़ोरदार जशन मनाया गया। फ़ौज वापस आयी थी उलुक-बैराम के बड़े मुसलमानी त्योहार पर। यह निस्संदेह एक विशेष शकुन था। सारे नगर में यह बात मशहूर हो गयी थी कि वज़ीरे आज़म ख़ुदा का पैगम्बर है और उसका जन्म ऐसी ग्रह-दशा में हुआ है कि वह सारी दुनिया में इस्लाम का नाम रोशन करेगा। हर मुंह से एक समाचार यह भी सुन पड़ता था कि स्वयं सुलतान और उसकी मां वज़ीर से मिलने गयी थीं और वज़ीर ने उन्हें बड़े बड़े

तोहफ़े दिये थे। यह बात भी सुनने में आयी थी कि वज़ीर ने सुलतान को जवाहरात से भरे सोने के तीस थाल और उनके सगे-संबंधियों को ऐसे दस दस थाल दिये थे। एक एक थाल इतना बड़ा था कि उसपर भुना हुआ पूरा का पूरा बकरा रखा जा सकता था! कहते हैं कि सुलतान की मां ने महमूद गवान को अपना भाई कहकर पुकारा, उसे 'मीरे जहां' का ख़िताब और ज़मीन दे दी।

ख़ज़ानची मुहम्मद बहुत समय तक वज़ीरे आज़म की निःस्वार्थता और उसके श्रमसाध्य एवं निष्ठापूर्ण जीवन की ही बातें करता रहता था।

वह कहा करता था कि जीवन-भर महमूद गवान ने अपने सामने एक ही लक्ष्य रखा था—पृथ्वी पर अल्लाह की ताक़त को मज़बूत बनाना और मुसलमानी राज्य से मिलकर न रहनेवाले काफ़िरों को शिक्षित बनाना। इसी लक्ष्य ने महमूद गवान को बहुत ऊपर उठा दिया था।

"तुम्हीं देखो, वह कितना सीधा-सादा है! टाठबाट की दुनिया में तो जैसे रहता ही नहीं!" ख़ज़ानची ने कहा, "तभी तो लोग उसे तख़्त का सहारा कहते हैं?"

"और उसके पास बहुत-से फ़ौजी हैं क्या?"

"बीस हज़ार!"

"और पुराने तरफ़दारों के पास?"

"किसी के पास भी दस हज़ार से ज़्यादा नहीं।"

निकीतिन हंस दिया—

"तो फिर उसे अपने घोड़े पर झाल-झालर लटकाने की क्या ज़रूरत!"

ख़ज़ानची ने अपनी आंखें बिचकायीं।

"ऐसा मज़ाक़ करने की सलाह मैं तुम्हें न दूंगा।"

"मैं दूसरों की सलाह के बिना भी ज़िन्दा रहने का आदी हो गया हूं," निकीतिन ने उत्तर दिया। वह मुहम्मद के इस गर्वपूर्ण ढंग से बातचीत करने पर चिढ़ गया था।

दो दिनों तक तो बीदर में जशन मनता रहा। तीसरे दिन नशा उतरने लगा।

हसन को पानी लाने के लिए सुबह से ही भेज दिया गया था। जब वह लौटा तो साथ में एक खबर भी लेता आया –

"खोजा, मालिक-अत-तुजार ने अपने फ़ौजियों को आज्ञा दी है कि वे अपने जवाहरात न बेचें।"

"यह कैसे?"

"मनाही हो गयी है। सारा शहर कह रहा है!"

अफ़नासी को अपने कानों पर विश्वास करने में भी भय लग रहा था। पर हसन को इसके बारे में ठीक ठीक पता न था। निकीतिन बाज़ार जाने की सोचने लगा। अभी उसने अपना भोजन समाप्त भी न किया था कि दरवाज़े पर दस्तक हुई। कोई व्यापारी उसे पूछ रहा था।

"क्या काम है?" जल्दी जल्दी चावल के कुछ कौर निगलते हुए निकीतिन बोला।

नाटे क़द और छोटी गर्दनवाला एक व्यापारी सामने आकर खड़ा हो गया। उसने बड़ी विनम्रता से सिर झुकाया और कहने लगा कि उसे बताया गया है कि निकीतिन के पास जवाहरात हैं। वह कुछ जवाहरात बेचना तो नहीं चाहता?

"नहीं," अफ़नासी बोला।

"अच्छी क़ीमत दूंगा। बहुत अच्छी।"

"नहीं।"

इस अजनबी को बाहर तक छोड़ आने के बाद अफ़नासी ठहाका मारकर हंसने लगा।

"सूंघ लिया है न! तो, अब चारों ओर से दौड़ पड़ेंगे!"

सभी ओर के सौदागर बाज़ार में टूट पड़े थे। उनके चेहरे मुरझाये हुए थे और उनपर घबराहट के चिह्न नज़र आ रहे थे। निकीतिन को, अभी कुछ ही दिन पहले खरीदे हुए सुलेमानी और कार्नेलियाई पत्थरों के तिगुने दाम मिल रहे थे। अब इस बात का निश्चित पता चल गया था कि यदि फ़ौजी अपने जवाहरात व्यापारियों के हाथ बेचेंगे तो उन्हें फांसी दे दी जायेगी। मालिक-अत-तुजार ने घोषणा की थी कि सारे जवाहरात वह स्वयं खरीदेगा।

"हुं-ह, कितना निःस्वार्थी है यह वज़ीर!" निकीतिन ने सोचा, "मुनाफ़ा मारने की सोच रहा है।"

यह एक अप्रत्याशित सफलता थी – एक अनपेक्षित लाभ। निकीतिन ने उस दिन तक प्रतीक्षा करने का निश्चय किया जब बाज़ार में जवाहरात ढूंढे न मिलेंगे। तभी वह अपने फ़ालतू जवाहरात बेचेगा।

जब वह घर लौटा तो बहुत ख़ुश था। ओसारे में ही उसे एक लाल खाल की ढाल दिखाई दे गयी। हसन मुस्करा रहा था। कमरे में, कमर पर हाथ रखे, मुज़फ़्फ़र मुस्करा रहा था।

पुलाव की प्रतीक्षा करते करते वे मिठाइयां खा रहे थे और बातचीत कर रहे थे। मुज़फ़्फ़र ने खेलना पर धुआंधार हमला किया था। जब वह सीढ़ी लगाकर क़िले पर चढ़ रहा था तो दुश्मनों ने सीढ़ी गिरा दी थी जिससे उसे ऐसी चोट लगी कि बेहोश हो गया। जान इसलिए बच गयी कि किसी लाश पर गिरा था। क़िले की खाई में ही उसे सुबह होश आया। आक्रमण विफल कर दिया गया था। वह स्वपक्षियों और विपक्षियों के शरीरों के बीच पड़ा था। उसी की आंखों

के सामने एक ज़ख्मी मुसलमान ने खिसकते हुए खाई से निकल जाने का प्रयत्न किया था, किन्तु दीवाल की ओर से आते हुए एक तीर ने उसे वहीं ढेर कर दिया था। मुज़फ़्फ़र ने मुर्दा बने रहने में ही अपनी खैर समझी। अगरचे प्यास के मारे उसका हाल बुरा हो रहा था फिर भी वह कई घंटों तक धूप में पड़ा रहा। उसका सिर किसी के ठंढे पैरों से सटा हुआ था। कितना समय बीत गया था इसका उसे कोई पता न चला। सहसा उसे अपनी अर्द्धचेतना में जंगली चीखें सुनाई दीं। भयभीत मुज़फ़्फ़र की आंखों के सामने एक भयानक दृश्य था। क़िले में से तेंदुए छोड़ दिये गये थे। लग रहा था कि इस पशुओं को अरसे से भूखा रखा गया था। वे खाई में इधर-उधर चक्कर लगाने और ज़ख्मी और जीवित सिपाहियों को अपना कौर बनाने लगे। भागने से कोई लाभ न था। मुज़फ़्फ़र ने किसी की तलवार खींची – अपनी तो बहुत पहले ही खो चुका था – और इन्तज़ार करने लगा। एक तेंदुआ उसपर झपटा परन्तु उसका तलवार से स्वागत किया गया। लेकिन एक वार काफ़ी न था। पशु के पंजों से ज़ख्मी हो जाने पर भी मुज़फ़्फ़र काफ़ी समय तक उसके साथ जूझता रहा और अन्ततः दोनों ज़मीन पर गिरे और गुड्ड-मुड्ड खाई में लुढ़कने लगे। बस उसे आखिरी चीज़ जो दिखाई दी वह थी खूनी फेन से सना तेंदुए का खुला हुआ मुंह और जलती हुई आंखें . . . दूसरी बार जब उसे होश आया तो रात हो चुकी थी। तेंदुआ उसी के ऊपर मरा हुआ पड़ा था। किसी प्रकार वह सारी शक्ति बटोरकर, खिसकता हुआ, खाई से बाहर निकला और मुसलमानी खेमों तक पहुंच गया।

"मुझे पक्का यक़ीन है कि काफ़िर हमसे नफ़रत करते हैं!" मुज़फ़्फ़र सख्ती से बोला, "मैंने देखा था कि किस प्रकार उन्होंने मुसलमानी गांवों को तबाह और बरबाद किया और औरतों और बच्चों

को मौत के घाट उतारा। तभी से मेरा दिल पत्थर का हो गया था। मैं घाव अच्छा होने तक का भी इन्तज़ार न कर सका। मेरे मन में बदले की आग भड़क उठी। मैं गोआ गया। वहां मुझे घाव लगा। मेरा हाथ कट गया था। लेकिन अब तो ठीक है। देखो न कितने मज़े से हिला-डुला सकता हूं। हां, मैंने अपनी जान तक की बाज़ी लगायी। पर आज मुझे अकेले काफ़िरों पर ही गुस्सा नहीं आ रहा है। तुमने कुछ सुना?"

"जवाहरात के बारे में?"

"हां! यह तो लूट है, लूट। मेरी चीज़, जिसके हाथ चाहूं बेचूं। खून बहाकर तो ये पत्थर हाथ लगे हैं। और अब मुझे वज़ीरे आज़म के आगे नाक रगड़ने को मजबूर कर रहे हैं। यह तो बेइन्साफ़ी की हद है। मैं महमूद गवान को जवाहरात न दूंगा।"

"इस मामले में मैं तुम्हें कोई राय नहीं दे सकता।"

"नहीं बेचूंगा और उसके मुंह पर कह दूंगा कि तुम डाकू हो।"

"इतने गर्म मत हो, मुज़फ़्फ़र," निकीतिन ने समझाया।

परन्तु मुज़फ़्फ़र को शान्त करना असम्भव था। आखिर वह महमूद गवान को गालियां देता हुआ वहां से चला गया।

उसी दिन निकीतिन कर्ण से मिला। उसके घर में सभी परेशान थे, घबड़ाये हुए थे। रंगू ने फुसफुसाते हुए कहा कि सस्ते जवाहरात पाने की आशा में उन्होंने घर का सारा हीरा-मोती बेच डाला था। सारे परिवार पर संकट छा रहा था। अब क्या करना चाहिए यह किसी को भी न सूझ रहा था।

"मैंने तुम्हारी मदद जरूर की होती," सोचता हुआ निकीतिन बोला, "लेकिन शीघ्र ही मैं जानेवाला हूं।"

"हम तुम्हारा क़र्ज़ जल्द लौटा देंगे!" रंगू ने वचन दिया।

"कैसे ?"

"मुझे जवाहरात खरीदने जाना होगा।"

"कहीं दूर?"

"गोलकोंडा।"

"सुलतान की खानों में? लेकिन इसकी तो मनाही है?!"

"हां, पर किया क्या जाये? खतरा उठानेवाला कोई मैं पहला आदमी तो हूंगा नहीं।"

निकीतिन ने अपनी दाढ़ी सहलायी।

"कोई और रास्ता नहीं?"

"कोई बात नहीं। मैं किसी तरह पहुंच ही जाऊंगा। मैं रास्ता जानता हूं और कुछ पहरेदारों से भी मेरी जानपहचान है। शायद तुम भी मेरे साथ चलो?"

"जल्दी मत करो। मुझे सोचने का मौक़ा दो... सोचने दो..."

मुज़फ़्फ़र की बात याद आते ही अफ़नासी ने सहसा कर्ण से पूछा— लोग ठीक कहते हैं क्या, कि राजाओं के सिपाही मुसलमानों के गांवों को तबाह और बरबाद करते हैं और घायलों पर हिंसक पशु छोड़ देते हैं?

"लड़ाई में क्या नहीं होता! सभी तरह की निर्दयता बरती जाती है!" आह भरते हुए रत्न-तराश ने उत्तर दिया। "देखो न, हम मुसलमानों के साथ मज़े में रह सकते हैं और अगर वे हमारे धर्म के मामले में दखल न दें, हमसे जज़िया न लें तो हमारी उनकी दुश्मनी का कोई कारण नहीं। लेकिन बीदर के शासक इसे नहीं समझते। वे जुल्म करते हैं और जवाब में उनपर भी जुल्म किया जाता है। मैंने इन सवालों पर काफ़ी विचार किया है। मुसीबत की जड़ तो यह है कि हमारे धर्म अलग अलग हैं। विद्वान ब्राह्मण सब के लिए

एक मज़हब का रास्ता ढूंढ़ रहे हैं। जब कभी यह रास्ता मिल जायेगा तो फिर हमारे देश जैसा सुखी दुनिया का कोई देश न होगा।"

"भगवान करे ऐसा ही हो!" अफ़नासी बोला, "लेकिन माफ़ करना, मैं अविश्वासी हूं।"

इस अप्रिय प्रसंग को बदलने की दृष्टि से हाथ ऊपर उठाते हुए अफ़नासी बोला—

"ख़ैर, फिर देखा जायेगा ... और हां मुझे एक बात और याद आ गयी। मेरा एक दोस्त है—महमूद गवान का मित्र। पता नहीं कैसे भावलो को जानता है। उसने मुझसे कहा है कि जब वह आये तो मैं उसे खबर कर दूं। यदि मैं चला जाऊं तो तुम उसे खबर करा देना।"

"कौन है यह आदमी?" कर्ण ने पूछा।

"ख़ज़ानची मुहम्मद। एक व्यापारी है। तुम उसे जानते हो?"

कर्ण घबड़ा गया और असहाय की तरह निकीतिन को घूरने लगा। उसका दाढ़ी सहलाता हुआ हाथ कांप उठा। उसे जैसे सिर हिलाने की भी शक्ति न रह गयी।

वहीं झांकी भी किसी काम से आ गयी थी। उसने अफ़नासी को देखा और कुछ पूछने लगी। अफ़नासी ने उत्तर दिया और दोनों खिलखिलाकर हंस पड़े। कर्ण की बात जैसे उसे भूल ही गयी। कर्ण ने गहरी सांस ली। और जब बच्चे के रोने की आवाज़ सुनकर झांकी चली गयी तो फिर पूछने लगा—

"बताओ न, यह कौन खज़ानची? तुम उससे कहां मिले थे? उससे मिले बहुत दिन हुए क्या?"

अफ़नासी ने मुहम्मद से मिलने की सारी बात बता दी।

"तो तुम उसे जानते हो क्या ?" अपनी बात समाप्त करते हुए अफ़नासी फिर बोला।

"नहीं, नहीं ... वह कोई दूसरा आदमी था," हिन्दू बोला, "हां कोई दूसरा आदमी।"

इतने ही में उजाल आ गया। बेचारे को फिर बुख़ार का दौरा आ गया था। कहने आया था कि यदि वह बीमार पड़ जाये तो झांकी उसकी पत्नी की मदद कर दिया करे।

निकीतिन उजाल को उसके घर तक छोड़ने गया। उजाल के पीले पड़े हुए माथे पर पसीने की बूंदें झलक आयी थीं। उसने अपने कंधे झुला दिये और घर की दहलीज़ पर बैठकर अपनी रोगी आंखें बन्द कर लीं।

"कुछ ही दिनों में मेरे पास नये नये रंग हो जायेंगे। लोगे ?" वह बुदबुदाया।

"लेटो और काढ़ा पियो," अफ़नासी ने उसे राय दी, "रंगों की बात हम फिर कर लेंगे।"

उजाल चुप हो गया। उसे कंपकंपी चढ़ आयी। निकीतिन ने दरवाज़े को धक्का दिया और उजाल को, हाथों का सहारा देते और घसीटते हुए, भीतर ले आया। रेशमा भी नम्रतापूर्वक आयी और अपने पति को गद्दे पर लिटाने में निकीतिन की मदद करने लगी। उसने धीरे से पानी उड़ेला और दवा तैयार करने लगी।

"मैं कल आऊंगा," निकीतिन ने वादा किया।

रेशमा ने उसपर एक उदास और थकी हुई सी दृष्टि डाली।

दूसरे और तीसरे दिन निकीतिन उजाल के घर न पहुंच सका। उसका प्रायः सारा समय अपने कामकाज में लग गया था। उसने कुछ जवाहरात बेच डाले थे और उनसे उसे अच्छी रक़म मिल गयी थी।

पर दलालों से सौदा पटाते पटाते उसकी ज़बान भी तो घिस गयी थी।

खास तौर से उसके पीछे पड़ गया था शबाइत से आया हुआ एक भारतवासी, जो अपने साथ मुश्क लाया था। इस व्यापारी से एक यही लाभ हुआ था कि उसने उसे बताया था कि उसके इलाक़े में हिरनों की बहुतायत है।

इस प्रकार तीन दिन बीत गये। चौथे दिन अफ़नासी को पता चला कि उजाल चल बसा। निकीतिन अन्तिम विदाई के लिए उसके घर गया। घर में शान्ति थी। रेशमा, मुंह और बालों पर राख मले, चुपचाप लाश के चरणों पर बैठी थी। लाश सफ़ेद कफ़न से ढकी थी। कुछ सगे-संबंधी घर-भर में दौड़ धूप कर रह रहे थे और अन्त्येष्टि के लिए टिखटी और लकड़ियों के बारे में पूछ-ताछ कर रहे थे।

निकीतिन ने निर्मल को देखा और संस्कार के लिए कुछ रक़म भेंट की। पैसा देने पर वह वापस चला आया। परिवार के इस संकट को देखना उसके लिए असह्य हो रहा था।

उसी दिन रंगू ने फिर गोलकोंडा जाने की बात छेड़ दी।

"अभी नहीं कह सकता, ज़रा ठहरो," निकीतिन बोला, "मैंने अभी तक कोई निश्चय नहीं किया।"

उसे अब भी सन्देह था कि वह बीदर से जा भी सकेगा। शायद उसे महमूद गवान से मिलने के लिए प्रतीक्षा ही करनी है। आखिर खज़ानची ने तो कहा ही था कि वज़ीर उससे मिलना चाहता है। फिर बारिश भी हो रही है, बारिश ...



दूसरे दिन प्रातःकाल बाजार में उसे अजीब चिल्ल-पों सुनायी पड़ी। लोग क़िले की ओर भागे चले जा रहे थे। निकीतिन भी लोगों की उसी उत्सुक भीड़ में मिल गया।

क़िले के सामने के मैदान में सब कुछ पहले जैसा ही था। फाटकों पर वैसे ही ब्राह्मण मुंशी बैठे थे, वैसे ही चौकीदार पहरा दे रहे थे, कंगूरेदार दीवालों के पीछे से इमारतों की रूपरेखाएं वैसे ही झांक रही थीं और खाई के किनारे किनारे ताड़ के पेड़ वैसे ही सरसरा रहे थे।

क़िले के पुल के सामने आठ स्तम्भों पर ख़ून से सने आठ सिर टंगे थे। किसी एक पर पगड़ी थी, बाक़ी खाली सिर थे।

ये सिर थे उन व्यापारियों और सिपाहियों के जिन्हें सलतनत की हुक्म-उदूली करने के कारण वज़ीरे आज़म की आज्ञा से फांसी दी गयी थी। इन लोगों ने उन हीरे-मोतियों के साथ मनमानी करने का दुस्साहस किया था जिन्हें महमूद गवान स्वयं खरीदना चाहता था।

अफ़नासी और आगे बढ़ा। बायीं ओर से दूसरा सिर उसके बिल्कुल सामने था। उसके चेहरे पर बाज़ जैसी तेज़ और गोल गोल आंखें अभी तक वैसी ही जड़ी हुई थीं। उसकी मूंछों पर ख़ून जमकर सूख गया था। एक मिनट तक तो अफ़नासी उसे पहचान ही न सका। फिर सहसा मुज़फ़्फ़र का चेहरा उसके सामने कौंध गया। चेहरा मौत से पहले ही ऐंठ गया था।

उसी दिन उसने रंगू को अपना निश्चय कह सुनाया – "मैं तुम्हारे साथ गोलकोंडा चलूंगा।"

सामान जुटाने में उसे अधिक समय न लगा। उसने बैल और एक गाड़ी खरीदी और चार दिन बाद रंगू के साथ बीदर से निकल

गया। हसन फिर खाली घर की देखभाल करता रहा। जाने के पहले उसने खज़ानची से भी विदा ले आने की सोची थी किन्तु पता नहीं क्यों आख़िरी वक़्त में उसने यह विचार छोड़ दिया। ऐसा लगा जैसे उसे अपने दिल के किसी कोने से यह आवाज़ सुनाई पड़ी हो–"अच्छा हो इसी तरह बिना किसी से कुछ कहे-सुने बीदर से निकल जाओ।"

वज़ीरे आज़म, सौदागरों का सरदार, महमूद गवान महल के पुस्तकालय में एक संकरी-सी खिड़की के सामने खड़ा हुआ, बाहर बाग़ की ओर टकटकी लगाये देख रहा था–ताड़ के पेड़ों और फूलों के पौधों के बीच मोर नाच रहे थे। उनकी खूबसूरत पंखियां खुली हुई थीं। वज़ीर के कानों में खज़ानची मुहम्मद की आवाज़ पड़ रही थी।

पुस्तकालय का कमरा चौकोर था जिसकी दीवालों पर लकड़ी की खूबसूरत कारीगरी की गयी थी। दीवालों से लगी हुई ढेरों अलमारियां थीं जिनमें काली, नीली, लाल और पीली चमड़े की जिल्दवाली पुस्तकें रखी थीं। कुछ अलमारियों में अरबी, चीनी और हिब्रू भाषाओं की दुर्लभ हस्तलिपियां थीं।

सूर्य की रोशनी मेहराबदार और संकरी खिड़कियों में से होती हुई पुस्तकालय के कमरे में फ़र्श पर बिछे क़ालीनों और कोने में पड़ी एक छोटी-सी लकलकाती हुई मेज़ को प्रकाशित कर रही थी। और आकाश-गोल के चारों ओर लगे हुए धातु के घेरे में से चिनगारियां-सी निकलती दिखाई दे रही थीं।

बाहर से महमूद गवान शान्त लग रहा था किन्तु नये षड्यंत्र के समाचार ने उसके हृदय को झकझोर डाला था। उसके मन में अस्पष्ट-सी चिन्ताएं उठने लगी थीं।

महमूद गवान ने दुनिया में बहुत कुछ देखा था। उसे न जाने कितनी सफलताएं मिली थीं। लोग उसके आगे सिजदे करते, उसकी

चापलूसी करते, उससे ईर्ष्या करते और उसे खुश करने के लिए सभी कुछ किया करते। बीस दरबारी कवि उसकी विद्वत्ता, महानता, दयालुता और निर्भयता का गान किया करते। इतिहासकार फ़रिश्ता तवारीख के लिए उसके प्रत्येक कार्य का खुलकर वर्णन किया करता। फ़रिश्ता पुस्तकीय ज्ञान के क्षेत्र में सचमुच बेजोड़ था किन्तु जिन्दगी का उसे कोई अनुभव न था। जब महमूद गवान फ़ौज के सामने आता तो हज़ारों कंठ उसकी जयजयकार करने लगते। सारा संसार उसपर ईर्ष्या करता, किन्तु वह दिल से कभी खुश न रहता।

बस वह उन्हीं क्षणों में विस्मृति की दुनिया में रहा करता जब वह प्रकृति और नारी सौन्दर्य के विषय में गज़लें लिखता, अरस्तू की दार्शनिकता पर टिप्पणियां तैयार करता या युद्ध में अपने सैनिकों का नेतृत्व करता। परन्तु वह अच्छी तरह जानता था कि यह सब आत्मवंचना है। दुनियां के हुक्मरां और दुनियावालों के कारनामों की रहबरी करनेवाले उस पाक परवरदिगार अल्लाह की ताक़त के आगे उसकी हस्ती ही क्या थी!

जब महमूद गवान छोटा और नासमझ था तभी उसे लगा कि ज़िन्दगी में सबसे बड़ी चीज़ है, शक्ति और अधिकार। वह गिलियन के एक अपमानित दरबारी का पुत्र था। वह था बुद्धिमान और शक्तिशाली। वह प्रायः इस आशा में रहता कि कभी अपनी ग़रीबी से उसका पिंड छूटेगा और उसे ख़िलअती भेड़ों की मनमानी से निजात मिलेगी। इन भेड़ों को दूसरों के जीवन से खेलने का अधिकार मिल गया था, इसलिए कि उनके पास पैसा था, उनके रसूख़ थे।

महमूद गवान सर्वशक्तिमान सूबेदारों और उनके दरबारियों से नफ़रत करता था। अगर उसे उन सभी की गर्दनें मरोड़ डालने की ताक़त होती, जिनके आगे उसे झुकना पड़ता था, तो उसकी खुशी की इन्तिहा न रहती।

उसके दिल में अपने अपमान की इतनी ज़बरदस्त आग धधका करती थी कि उसका मानव-प्रेम ध्वस्त हो गया। वह ज़ालिमों से घृणा करता था इसलिए कि वे ज़ुल्म करते थे, और मज़लूमों से नफ़रत करता था इसलिए कि वे ज़ुल्म बरदाश्त करते थे।

उसने अपने सामने एक लक्ष्य रखा था – पूर्ण स्वाधीनता का लक्ष्य। उस तक पहुंचा जा सकता था – महलों का चक्कर काटकर, चापलूसी करके, नीचता दिखाकर, ग़द्दारी करके, लोगों की हत्या करके। महमूद गवान, इसी रास्ते पर चला था। और अब, जब उसने अपने विगत जीवन पर एक दृष्टि डाली तो उसकी निगाहों के सामने विषधरों के विष, चुगलियां और ख़ून की नदियां सभी कुछ एक साथ घूम गये ... बेशक, पांसा पलट भी सकता था और उसे मौत के घाट उतारा जा सकता था, उसकी बोटी बोटी उड़ाई जा सकती थी, परन्तु उसने जो कुछ किया था सुलतान के नाम पर किया था, काफ़िरों से जेहाद करने के नाम पर किया था, और महलों में रहनेवाले उसके शत्रु – पुराने रईस – अपनी अपनी सोच रहे थे, अपनी छिनी हुई आज़ादी वापस पाने के चक्कर में थे। उसने, तरफ़ों का उत्तराधिकार समाप्त कर, अपने इन शत्रुओं को कहीं का न रखा था और जो कल तक रईस थे आज मामूली सेवक रह गये थे। उसने तरफ़ों की संख्या में बहुत वृद्धि कर दी थी और नई नई तरफ़ों के प्रधानों के पदों पर अपने आदमी भर दिये थे। नतीजा यह हुआ था कि पुराने रईस अब दो टके के रह गये थे।

इन सभी कारणों से सुलतान की शक्ति बहुत अधिक बढ़ गयी। पर उसके शत्रुओं ने उसे कभी नहीं बख़्शा।

महमूद गवान के मन में कोई आवाज़ यह कहती-सी लग रही थी – "तूने सुलतान के लिए नहीं अपने लिए किया है, तूने अपने

रास्ते से उन लोगों को साफ़ किया है जो तेरी निजी योजनाओं की पूर्ति में बाधक बनते थे।"

जो भी हो उसे अपनी इस शपथ पर गर्व था कि वह कभी सिंहासन की ओर आंख उठाकर भी न देखेगा।

परन्तु यह शपथ बेकार-सी थी। वह अच्छी तरह जानता था कि बाहरी शत्रुओं के रहते अंदरूनी झगड़े बड़े खतरनाक साबित होंगे। फिर, सुलतान के तख्त की ओर हाथ बढ़ाने में मौत का खतरा भी तो था।

समय के साथ ही साथ महमूद गवान अपने को इस्लाम का संरक्षक, तख्तोताज का मुहाफ़िज़ और काफ़िरों की मल्कुल मौत समझने लगा था। वह अपनी सभी इच्छाओं को पूरा कर सकता था। उसका शब्द ही क़ानून था। पर ज़िन्दगी ने उसे उन नियामतों से महरूम कर रखा था जिनके सपने हर इन्सान देखता है—सच्ची दोस्ती, सच्ची मुहब्बत और दिली सुकून। उसके चारों ओर दुश्मन मंडरा रहे थे। सभी मालिक-अत-तुजार की घात में थे। हर समय उसकी स्थिति जंगल के तेंदुए तथा शिकारियों से घिरे हुए चीते या जंगली हाथी जैसी हो रही थी।

"... यह रूसी सौदागर साजिश करनेवालों को ज़रूर जानता होगा, मेरे मुहाफ़िज़!" खज़ानची ने मुहम्मद गवान से कहा, "वह बड़ा निडर आदमी है जिसने मेरी जान बचायी थी।"

मालिक-अत-तुजार की आंखें मोरों और गुलाब के फूलों से हटकर मुहम्मद के चेहरे पर जम गयीं। उसने अपनी झुर्रियोंदार पलकें ऊपर उठायीं।

"कौन रूसी सौदागर?"

"रूसी, मेरे आक़ा, रूसी, जिससे आप बात करना चाहते थे।"

"हां, याद आयी। यह हिन्दुओं को कैसे जानता है?"

"वह जवाहरात की खोज में आया है, साहबे जलाल। उसने हिन्दुस्तान की कहानियां सुनी थीं। उसके मुल्क में मशहूर है कि हिन्दुस्तान की सरे ज़मीन पर सोना रेत की तरह लोटता है। वह हिन्दुओं के साथ श्री-पर्वती भी गया था।"

"अब वह कहां है?"

"बीदर में।"

"अच्छी बात है। मैं खुद उससे मिलूंगा... जाओ। मैं तुमसे बहुत खुश हूं, मुहम्मद। तुम्हें इनाम शाम को मिल जायेगा। जाओ।"

खज़ानची झुकता हुआ द्वार की ओर बढ़ गया।

वज़ीरे आज़म ने ताली बजायी, और एक मुक्त दास हाज़िर हो गया। यह एक सीरियाई था—कुत्ते की तरह ईमानदार और मछली की तरह चुप्पा।

"मुझे उन लोगों के नामों की सूची चाहिए जो दक्षिण से—रायचूर से, कोलर से या आलन्द से—बीदर आये हैं या आयेंगे," महमूद गवान ने हुक्म दिया, "मलिकों और खानों के महलों पर अपने आदमी लगा दो। मैं जानना चाहता हूं कि इनमें से किसके यहां हिन्दू आते-जाते हैं।"

दास चला गया। पुस्तकालय में शान्ति छा गयी। महमूद गवान के कानों में मोर की नृत्य-धुन पड़ रही थी।

महमूद गवान एक छोटी-सी मेज़ के निकट बैठ गया। उसके लिए सांस लेना भी कठिन हो रहा था। महाराजा के एलची के आने से भी वह खीझ उठा था। तो, उमर-खान के हाथों मुझे मौत के घाट उतार देने की ठान ली गयी है! फिर यह रूसी सौदागर... आखिर ये ग़ैर-मज़हबी लोग हिन्दुस्तान आते क्यों हैं, उन्हें क्या ज़रूरत कि हमारी दौलत का पता चलायें, हमारे रहन-सहन के बारे में जानें-समझें। असद-खान ने उस ईसाई से हम-मज़हब बनने की मांग पेश करके ठीक ही किया था।

मुहम्मद का कहना है कि सौदागर को किसी बात का कोई शुबहा नहीं। तो फिर वह यहीं रहे और इस्लाम क़बूल करे। उसे हिन्दुस्तान से बाहर जाने की इजाज़त नहीं होनी चाहिए। उसकी आंखें बहुत कुछ देख चुकी हैं, उसकी याददाश्त बहुत कुछ क़ायम रख सकेगी।

वज़ीरे आज़म जानता था—ईसाइयों के मुल्कों में लोग सरसाम की हालत में भी हिन्दुस्तान का ही नाम लेते हैं। वेनिस, गेनोआ और स्पेन जानेवाले सौदागर खलीफ़त में यही खबरें सुनाया करते कि ईसाई सम्राट हमले की तैयारियां कर रहे हैं। परन्तु हिन्दुस्तान का रास्ता वे नहीं जानते। यह देश उनके लिए एक अज्ञात देश है। और अच्छा है लोग तब तक इसके बारे में कुछ न जानें जब तक उसपर एक ही सुलतान का एकछत्र राज्य नहीं हो जाता। अगर रूसी चला गया तो वह ईसाइयों को तरह तरह की खबरें देगा—यहां काफ़िरों से लड़ाई चल रही है, बड़ी हाय-तोबा मची है। और अगर होशियार हमलावर हिन्दुस्तान आने का फ़ैसला करेंगे तो इन खबरों से फ़ायदा उठायेंगे। मुसलमान विजेताओं ने भी तो अपने ज़माने में वही किया था। हां, हां। रूसी यहीं रहेगा। फ़रों के लिए कोई क़ाफ़िले नहीं भेजे जायेंगे।

और उमर-खान! उसे किसी न किसी दिन पता चलेगा ही कि भाला किस तरह शरीर में घुसता है और कैसे तड़प तड़पकर उसकी जान निकलती है! अल्लाह का सब्ज़ परचम विजयनगर के महलों पर लहरायेगा। और जब महमूद गवान की घुड़सेना हिन्दुस्तान को लंका से अलग करनेवाले जलडमरूमध्य तक पहुंचेगी तो उसके बहादुर सिपाही उत्तर की ओर बढ़ेंगे, पूर्व की ओर बढ़ेंगे, दिल्ली में तहलका मचायेंगे, गंगा की घाटी फ़तह करेंगे और तब बीदर के सुलतानों का हिन्दुस्तान सारी दुनिया को ललकारेगा—चीन से लेकर स्पेन तक और तभी अनेकों जातियां उसके पीछे पीछे गुलामों की तरह चलेंगी!

महमूद गवान धीरे से मुस्कराया किन्तु उसके पतले और टेढ़े-मेढ़े ओंठ वैसे ही जड़ बने रहे। वह पुस्तकालय से होता हुआ, छोटी मेज़ तक चला आया। मेज़ पर एक चिकना काग़ज़ पड़ा था जिसपर बुलबुल के विषय में कोई अपूर्ण कविता लिखी थी। महमूद गवान ने एक गज़ल फिर से पढ़ी—

मेरे बाग़ में बहार आयी है, शबनम गुलाबों पै छायी है
नज़ाकत होंठ इनकी देखें, रुलाई नैन इनसे सीखें।
पर ये चूमें तो किसको चूमें और ये रोयें तो किस पै रोयें
इनके लिए तो बस बुलबुल गीत लेकर आयी है।

महमूद गवान आराम-कुर्सी पर बैठ गया। उसने लेखनी उठा ली। वह गुलाब से ईर्ष्या कर रहा था। बुलबुल ने उसका हृदय द्रवित कर दिया था।

उसके मन में तरह तरह के उद्गार उठने लगे और धीरे धीरे उसकी लेखनी आगे बढ़ने लगी। विस्मृति के क्षण उसके सामने थे।

बग़ीचे में मोर शोर मचा रहे थे, परन्तु उसे कुछ भी सुनाई न पड़ रहा था।

वज़ीरे आज़म के पास से लौटकर खज़ानची मुहम्मद को बड़ी राहत मिली। उसकी पाक ज़िन्दगी का सिला उसे खुद अल्लाह ने दिया था और अपने जाती दुश्मनों से बदला लेने के लिए उसे अपने हाथ भी न रंगने पड़े थे। नहीं, खज़ानची ने अपना रहस्य जाननेवाले कर्ण से बदला नहीं लिया था। उसने तो सज़ा दी थी सुलतान के शत्रु को, इस्लाम के दुश्मन को। मुहम्मद को इसमें ज़रा भी सन्देह न था कि कर्ण भावलो की सहायता करता था और उसे सारी साजिशों का पता था।

उसने अफ़नासी के बारे में ज़बान तक न खोली। क्या यही उसकी सखावत का सबूत न था? बेशक राजेन्द्र की बात जानकर रूसी ने अनजाने उसे रुष्ट किया है, पर क्या हिन्दुओं की नयी साज़िश खज़ानची की इस धारणा को उचित नहीं ठहराती कि प्रत्येक हिन्दू ऐसा दुश्मन है, जिसे मौत के घाट उतार देना चाहिए? भले ही उन्हें किसी भी तरह क्यों न मार डाला जाये?

मुहम्मद की बाछें खिल गयीं। जब से अफ़नासी श्री-पर्वती से लौटा है तब से खज़ानची को यह पक्का विश्वास हो गया है कि अफ़नासी भावलो के यहां आने का कारण नहीं जानता। निकीतिन ने उससे वादा किया था कि जब भावलो लौटेगा तो वह उसकी खबर खज़ानची को कर देगा। इसी लिए खज़ानची को अफ़नासी पर कोई सन्देह न रह गया था।

जिस दिन मुहम्मद वज़ीरे आज़म के यहां से वापस लौटा था, उसी दिन उसने रूसी सौदागर को बुला भेजा। वह अफ़नासी से मिलना चाहता था। वह इस परदेशी से बातचीत करके अपने में फिर से आत्मविश्वास और दृढ़ता का अनुभव करना चाहता था।

परन्तु खज़ानची की आशाओं पर पानी फिर गया। उसका नौकर यह खबर लेकर लौटा कि रूसी सौदागर कहीं चला गया है और सितम्बर से पहले वापस न आयेगा।

सबसे बुरी बात यह थी कि रूसी अकेला ही न गया था। वह गया था राजेन्द्र के बेटे के साथ।

और एक बार फिर खज़ानची को चिन्ताओं ने धर दबाया। आखिर फिर अफ़नासी ने उसे नाराज़ कर दिया।

"तो वह अपनी क़ब्र आप खोद रहा है!" क्रोध से खज़ानची बोल उठा, "अल्लाह गवाह है कि अब आगे से मैं अपने दुश्मनों

के दोस्त पर करम का हाथ न रखूंगा। उस परदेशी ने महमूद गवान के बुलावे का भी इन्तज़ार न किया! वज़ीरे आज़म अपनी यह हुक्म-उदूली बरदाश्त न कर सकेंगे!"

इस समय तक निकीतिन बीदर से बहुत दूर निकल चुका था और पूर्व में हीरे के लिए जगत् प्रसिद्ध, गोलकोंडा की ओर जा रहा था। सबसे कम उसे वज़ीरे आज़म और खज़ानची मुहम्मद का ही ध्यान आ रहा था, और यदि उसे सलतनत की राजधानी की याद भी आती तो रंगू से केवल यही कहने के लिए—

"अब तो बीदर में ठहरूंगा नहीं, सिर्फ़ उससे होता हुआ जाऊंगा। अब वतन जाऊंगा! वक़्त भी तो हो गया है!"

उसे लगा जैसे एक बार फिर उसमें साहस और शक्ति का स्रोत फूट पड़ा है।

रास्ता एक पगडंडी से होकर जाता था—वे उन मुसलमान पहरेदारों की नज़रें बचाते हुए जा रहे थे जो खानों की दिशा में जानेवाली हर सौदागर की गाड़ी को सन्देह की नज़रों से देखा करते थे। रास्ता बड़ा ऊबड़-खाबड़ था। कभी पहिये पत्थरों या पेड़ों की जड़ों से टकराकर उछलते तो कभी कीचड़ में धंस जाते, और फिर मुश्किल से निकल पाते। कभी कभी मुसाफ़िर घने जंगलों में, उन उलझी हुई लताओं के बीच से होकर जाने लगते, जो उनका रास्ता रोके पड़ी रहतीं और जैसे ही गाड़ी उनपर से होकर गुज़रती कि कट जाने के बावजूद भी वे जुड़ी-सी दिखाई देतीं। वर्षा जैसे जल का मुक्त दान कर रही थी। कभी पानी की झड़ी लगती तो कभी सूरज की तपती हुई किरणें मनुष्य का शरीर जलाने लगतीं। किन्तु निकीतिन प्रकृति की इस मनमानी पर केवल हंस-भर दिया करता। उसके लिए कीचड़, गर्मी या गाड़ी के हिचकोले यानी कोई भी चीज़ दुस्साध्य न थी।

"तुम तो बड़े ही सहनशील हो!" बड़ी इज़्ज़त से, रंगू ने उससे कहा।

अपनी कठोर-सी जगह पर उछलते हुए निकीतिन ने उत्तर दिया –

"अरे भाई, रूस में तो इससे भी बड़ी मुश्किलों का मुक़बला करना पड़ा था . . ."

जब रास्ता थोड़ा-बहुत ठीक हुआ तो रंगू ने गाना शुरू कर दिया।

उसने हलवाहों और शिकारियों के गीत गाये, भक्ति और विवाह के गीत गाये।

निकीतिन ने बड़ी प्रसन्नता से उसके गीत सुने। क्या भारत, क्या रूस, गीतों ने सदा ही मनुष्य का साथ दिया है – उसके श्रम में, उसके आराम के समय, उसके सुख में, उसके दुख में। इसलिए गीत मनुष्य की आत्मा के ज़्यादा निकट रहा है, सुबोध रहा है और यद्यपि अफ़नासी उसके बहुत-से शब्दों को समझ न पा रहा था फिर भी उसका भाव उसे अक्षरशः समझ में आता जा रहा था।

"पता है तुम्हें, मैं बहुत-से विदेशियों को जानता हूं किन्तु हम लोगों के प्रति जितनी उदारता तुममें है उतनी मैंने दूसरों में नहीं देखी," रंगू बोला।

"भारत – यह देश तो मेरे दिल की धड़कन है!" अफ़नासी ने उत्तर दिया, "तुम्हारे लोग मेरे हृदय के उतने ही निकट हैं जितने मेरे अपने लोग हैं। मैं उन्हें रूसियों से कम प्यार नहीं करता। तुम लोग भी मेहनत करते हो और हम लोग भी। तुमपर सुलतान और राजा-महाराजा जुल्म करते हैं और हमपर तातार और सामन्त लोग। पर अपनी कठिनाइयों के बावजूद भी न रूसियों की ही महान



आत्मा कुंठित हुई, न भारतीयों की ही। इसी की तो मुझे खुशी है, रंगू। इसी की तो खुशी है!"

इन दिनों उसे अपना भविष्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उसे बहुत-से काम करने थे – गोलकोंडा जाकर हीरे खरीदना, बीदर लौटना, सीता के गांव जानेवाले मुसाफ़िरों का पता चलाना, अपने प्रेम की दूरस्थ प्रतिमा को आंख-भर देखना और यदि वह किसी दूसरे की पत्नी हो चुकी है तो उससे विदा लेना, समुद्र तक जाना और फिर रूस का सफ़र।

जंगलों में रंग-बिरंगे फूल खिल रहे थे। उसने कुछ चमचमाते और महकते हुए पुष्प तोड़े और उन्हें सूंघने लगा। गन्ध मीठी थी किन्तु वह उससे परिचित न था। उसके दिल में यह विचार उठा कि रंगू को समझाऊं कि रूसी रमाश्का और लान्दिश की सुगन्ध कैसी होती है।

खेतों की जुताई कर रहे देहातियों को देखते हुए उसने अपना सिर हिलाया।

"तुम लोग अपनी ज़मीनों में खाद नहीं देते!" वह रंगू से बोला, "अगर उसमें गोबर की खाद दी जाये तो सोना उगलने लगेगी ज़मीन!"

रंगू हंस पड़ा।

"गोबर हमारे यहां जलाने के काम आता है! उसे दवा के काम में लाते हैं और उससे मकान पोतते हैं," वह बोला, "ऐसी चीज़ को हम ज़मीन में दफ़नायें? क्या कहते हो तुम!"

खेतों में पानी ही पानी भरा था। गांव में हर झोंपड़े के सामने क्यारियां थीं जिनमें धान के पीले पीले पौधे उग रहे थे। कुछ दिनों बाद उन्हें हटाकर खेतों में रोप दिया जायेगा। धान का हर छोटा पौधा, बड़ी होशियारी से, एक जगह से हटाकर किसी दूसरी नयी जगह लगा दिया जाता है। इसके बाद मौसम आता है जौ का और उसके बाद गेहूं का। फिर ख़ूब साग-सब्ज़ियां, फिर पहली फ़स्ल। और फिर मालगुज़ारी इकट्ठा करनेवाले, महाजन और सूदख़ोर...

रास्ते में कोई क़स्बा पड़ता है – मिट्टी के छोटे छोटे और गीले मकान, मीनार, क़स्बे की चहारदीवारी की टूटी हुई अथवा पानी से ध्वस्त मिट्टी की दीवालें, वहां लापरवाही से खड़े चौकीदार; अधभूखा गांव, जिसके चारों ओर ढेरों जंगल हैं जिनमें से भोर के समय जंगली हाथी नदी की ओर जाते दिखाई पड़ते हैं। निकीतिन और रंगू गाड़ी के पीछे, एक के बाद एक, पहाड़ी पार करते, आपस में गप्प लड़ाते और पान चबाते हुए आगे बढ़ रहे थे। अफ़नासी की तो बाछें खिली जा रही थीं। उसे लग रहा था जैसे वह दोस्तों से घिरा है। यह फ़ारस नहीं, जहां सौदागरों से ज़्यादा लुटेरे रास्ते में मिलते हैं। यह है भारत जहां पुराने रीति-रिवाज उसकी धरती से चिपके हुए हैं, जहां लोगों की जान लेना और उनका माल-असबाब लूटना सबसे बड़ा पाप समझा जाता है, जहां घर का मालिक ख़ुद भूखा मरना गवारा कर लेता है, पर घर आये मेहमान को भूखा नहीं रहने देता।

रास्ता प्रायः सुनसान था। कभी कभी एकाध फ़क़ीर दिखाई पड़ता जिसकी गरदन में लोहे की ज़ंजीरों से बंधा भारी पत्थर लटका होता। बूंदा-बांदी के समय, भ्रमण करते हुए योगी भी मिल जाते थे। ऐसे मौसम में इन योगियों को यह भय न रहता कि पृथ्वी पर

रेंगनेवाला कोई प्राणी उनके पैरों तले दबकर मर जायेगा। कभी कभी उनकी भेंट किसी छोटे-मोटे क़ाफ़िले से हो जाती – दो-तीन गधे, ऊंट ग्रौर चार-पांच थके थके-से ग्रादमी, सभी मुस्कराते ग्रौर मज़े में रास्ता नापते; ग्रौर कभी, दुनिया-भर का चक्कर लगानेवाले खुशमिज़ाज मदारी दिखाई पड़ जाते।

योगी पास से गुज़र जाते हैं। वे ग्रापके मन की बात वैसे ही ताड़ लेते हैं, मानो शीशे में से देख रहे हों। क़ाफ़िले के लोग ग्रापको सचेत करते हैं – ग्रगली पहाड़ी के पीछे नदी पर बना हुग्रा पुल टूट गया है, पर बायीं तरफ़ का पानी छिछला है। मदारियों को ग्रगले गांव तक जाना है। वे भी साथ हो लेते हैं, ज़ंजीरों में बंधे हुए बंदर उछलते-कूदते उनके साथ चलते हैं। मदारी बड़े कुतूहल से निकीतिन के बारे में पूछते हैं, ग्रौर यह भी पूछते हैं कि क्या वह एकाध सिखा-सिखाया बन्दर खरीद लेगा? कीचड़ में फंसी गाड़ी में कन्धा देकर उसे रास्ते पर लाते हैं।

नदियां पार करना सबसे कठिन काम है। वे किनारे तोड़कर बढ़ती हैं, फैलती हैं ग्रौर सिर्फ़ वही लोग उन्हें पार करने का खतरा उठा सकते हैं जो छिछली जगहें जानते हैं।

निकीतिन को विश्वास था कि गोलकोंडा का रास्ता तीन हफ़्तों का है। किन्तु पन्द्रहवें दिन प्रातःकाल, जब उन्हें ग्रपनी यात्रा फिर से ग्रारम्भ करनी थी, उसी समय ग्रफ़नासी को हल्की हल्की ठंढक लगी ग्रौर उसका सिर पिराने लगा। उसने रंगू से कुछ न बताया, पर दोपहर होते होते उसकी तकलीफ़ बढ़ गयी ग्रौर वह ग्रपनी कमज़ोरी न छिपा सका। उसे कंपकंपी चढ़ी, उसका सिर जैसे फटने लगा ग्रौर मतली होने लगी। रंगू ने ग्रफ़नासी की चंचल निगाहें देखीं ग्रौर घबड़ा गया। उसने जल्दी जल्दी बैल सामने ही दिखाई पड़नेवाले निकटस्थ गांव की ग्रोर फेर दिये।

गाड़ी के झोंपड़ों की ओर बढ़ते समय तो अफ़नासी की आंखे तक न खुल रही थीं। उसकी समझ में भी प्रायः कुछ न आ रहा था।

भयंकर शीत-ज्वर ने उसके दांत खट्टे कर दिये थे।

जब वह कुछ कुछ ठीक महसूस करने लगता तो टकटकी लगाये छत की ओर देखता और यह याद करने का प्रयत्न करता कि वह है कहां, उसे हो क्या गया है। और जब रंगू उसके सिर पर झुकता तो अफ़नासी मुस्कराने का प्रयत्न करता। अर्द्ध-उन्माद की दशा में उसे लगता कि पीने की कोई चीज़ उसके सामने लायी जा रही है और कोई तेज़ काढ़ा उसके मुंह में डाला जा रहा है। हर हरकत से उसे व्यथा होने लगती। उसने शान्ति से पड़े रहने का प्रयत्न किया। उसके ज्वर ग्रस्त मस्तिष्क में तरह तरह के धूंधले चित्र बन बनकर मिट रहे थे।

निकीतिन कराहने लगता, उसका शक्तिशाली शरीर थरथराने लगता, उसका मुंह पीला पड़ जाता, बेहोशी धर दबाती...

दसवें दिन निकीतिन की हालत कुछ सुधरी। अब वह पहली बार अपनी चारपाई पर बैठ, और चारों ओर आंख भर कर देख सकता था। मामूली-सी झोंपड़ी, मामूली-सी साज-सज्जा। देहलीज़ पर एक औरत बुरक़ा पहने बैठी थी। निकीतिन ने अनुमान लगा लिया कि वह मुसलमानी गांव में है। जब उस औरत ने मेहमान को उठते हुए देखा तो वहां से चली गयी और तभी रंगू आ गया। उसके चेहरे पर चिन्ता और ख़ुशी दोनों ही झलक रहे थे। रंगू ने हाथ फैलाये, पर निकीतिन के पैर लड़खड़ाये और रंगू ने उसे लिटालने का यत्न किया और प्याला उसके मुंह से लगा दिया।

"आखिर भगवान ने हमारी प्रार्थना सुन ही ली!" रंगू फुसफुसाया, "तुम लेटे रहो, लेटे रहो। तुम अब भी कमज़ोर हो ..."

"हम हैं कहां ?"

"दोस्तों के यहां... फ़िक्र न करो। जल्दी ही ठीक हो जाओगे।"

"वर्षा अब भी हो रही है?"

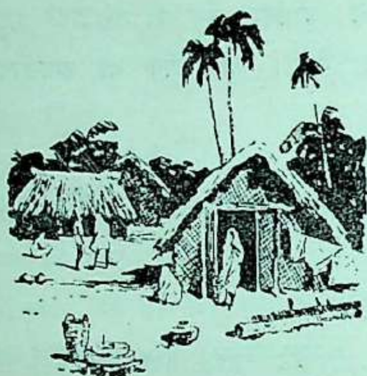
"क़रीब क़रीब रुकं गयी है... लेटे रहो। बोलो मत।"

निकीतिन की हालत धीरे धीरे सुधरती रही। उसकी ताक़त धीरे धीरे बढ़ रही थी। सफ़र पर आगे बढ़ने की बात तो रंगू अभी सुनना भी न चाहता था।

इस प्रकार वे गफ़ूर के इस छोटे-से मकान में कोई दो हफ़्ते और पड़े रहे। गफ़ूर एक ग़रीब मुसलमान था। उसी ने इन लोगों को पनाह दी थी। वह बड़ा मेहनती था और सुबह से शाम तक अपने छोटे-से खेत में पसीना बहाता था। उसके तीन छोटे छोटे बच्चे थे जो मकान के इर्द-गिर्द, अनाथों की तरह खिसकते और चक्कर लगाते थे। गफ़ूर की शान्त पत्नी सारे दिन मेहनत करती – खाना बनाती, चिड़ियों की देखभाल करती और कभी कभी खेतों में जाकर अपने पति के कामों में हाथ बटाती।

गफ़ूर संयमी और चिन्ताशील व्यक्ति था। जब खेतों से लौटता तो अफ़नासी के आगे सिर झुकाता, उसका हालचाल पूछता और किसी ओझा या मुल्ला को दिखाने की सलाह देता। किन्तु उसने यह कभी नहीं पूछा कि निकीतिन है कौन और कहां जा रहा है।

गफ़ूर के पड़ोसी भी जिज्ञासु थे। अफ़नासी ने प्रायः इस बात पर ग़ौर किया था कि ये पड़ोसी उसमें दिलचस्पी दिखा रहे हैं।



जब अफ़नासी को कुछ और ताक़त आयी तो वह घर से बाहर निकलकर पुराने ताड़ के वृक्ष के नीचे बैठने, रंगू से बातचीत करने और गांव को नज़र भर कर देखने लगा।

यह गांव हिन्दू गांव जैसा ही लग रहा था। फ़र्क़ इतना ही था कि यहां सुअर नहीं थे। किन्तु मामूली-से घर, लोगों के खराब-से कपड़े—ये सब हिन्दुओं की ही तरह थे।

वहां रहनेवालों की बातचीत भी हिन्दू गांववालों जैसी ही थी। वे भी बातें करते थे अपने छोटे छोटे खेतों की, वर्षा की जो इस वर्ष कम हुई थी, और क़र्ज़ों की।

वहां के ग़रीब किसानों ने खुलकर रंगू से बातचीत की और उससे अपने दुखड़ों का रोना रोया। धूप और ग़रीबी से कुम्हलाये हुए उनके चेहरों से हिन्दुओं के प्रति किसी भी द्वेष की झलक न मिल रही थी।

तो, जब तक मालगुजारी वसूल करनेवाले कारिन्दे, खिलजी के दर्शन न हुए तब तक सब कुछ ठीक चलता रहा। खिलजी खुड्डे दांतों वाला एक घमंडी-सा आदमी था। दाढ़ी काली, नाक टेढ़ी। शाम होते होते गफ़ूर के मकान में पहुंचा। उस समय सूरज डूबने की तैयारियां कर रहा था, गांव के इर्द-गिर्द की पहाड़ियां नीली पड़ रही थीं और संध्या की लाल चादर में लिपटे हुए जंगलों के मुंह पर धीरे धीरे स्याही पुती जा रही थी। लोग गाय-बैलों को हंकाते हुए घर ला रहे थे। किसान खेतों से लौटने लगे थे।

लगता था कि कारिन्दे को मालूम था कि गफ़ूर ने अपने घर काफ़िरों को टिकाया है। वह बड़ी शान से घर की ओर बढ़ा और निकीतिन को बैठा देख, उससे कोई पांच क़दम दूर ठिठक गया, कुछ क्षणों तक विदेशी को घूरता रहा। फिर मकान मालिक को पुकारने लगा जो भेड़ों को आंगन में हंका रहा था।

"ए गफ़ूर! ये लोग कौन हैं?"

गफ़ूर घूम पड़ा और कारिन्दे के आगे झुककर सिर नवाने लगा।

"सलाम हुज़ूर!" उसने जवाब दिया, "ये मुसाफ़िर हैं।"

"ये यहां कैसे? इन्हें क्या चाहिए?"

निकीतिन पत्थर पर से धीरे धीरे उठा। उसका मुरझाया और पीला पड़ा हुआ चेहरा तमतमा रहा था।

"और तुम्हें क्या चाहिए जी?" गफ़ूर को उत्तर देने का अवसर न देते हुए निकीतिन ने रुखाई से पूछा, "यहां टपक कैसे पड़े? मुझसे बातें करना तुम्हें अच्छा नहीं लगता क्या?"

मालगुज़ारी वसूल करनेवाला घूम पड़ा और घृणा से अफ़नासी की आंखों में देखने लगा। परन्तु उसके चौड़े कंधे और चमचमाती हुई सख़्त आंखें देखकर उस घमंडी का क्रोध कुछ ठंढा पड़ा। पर खिलजी अपनी ताक़त जानता था।

"मैं जिससे चाहूंगा, उससे बात करूंगा!" उसने बात काटी, "गफ़ूर, इन लोगों के जिम्मेदार तुम हो। ये मशक़ूक आदमी हैं।"

कारिन्दा बिना इधर-उधर देखे वहां से खिसक गया। निकीतिन का जी हुआ कि वह इस बदमाश को पकड़कर उसका दिमाग़ दुरुस्त कर दे, किन्तु गफ़ूर की दयनीय आंखें देखकर उसकी बंधी हुई मुट्ठियां खुल गयीं।

दूसरे दिन पता चला कि खिलजी ने कई किसानों को इस बात

के लिए उकसाया था कि वे इन काफ़िरों को मारपीट कर उनका माल-मता छीन लें।

गफ़ूर बेचारा परेशान हो उठा।

"यह खिलजी बड़ा बदमाश है!" आह भरते हुए वह बोला, "कहता है कि इस लूटमार के लिए किसी को कोई सज़ा न दी जायेगी... अरे बदमाश!"

"गफ़ूर! तुमने हमें पनाह दी। बहुत बहुत शुक्रिया!" निकीतिन बोला, "मैं समझता हूं कि इस गीदड़ को और अधिक न चिढ़ाया जाये। रंगू, कल हम कूच करेंगे।"

रात में उसने अपनी पेटी खोली, एक सफ़ेद सुलेमानी पत्थर निकाला और घर में रखी एक हांडी के नीचे रख दिया। और सुबह, जब थोड़ा थोड़ा प्रकाश फैल रहा था, उसने स्वयं बैल तैयार किये और रंगू को जगाया। गफ़ूर अभी तक नहीं जगा। सारा गांव मज़े की नींद सो रहा था। निकीतिन की गाड़ी धीरे धीरे गांव छोड़कर आगे बढ़ रही थी। गोलकोंडा की खानों तक का रास्ता चार दिन से अधिक का न रह गया था।

निकीतिन ने गोलकोंडा की अद्भुत खानों के बारे में तरह तरह की कहानियां सुन रखी थीं। किन्तु जब उसने वहां की नुकीली पहाड़ियां और नीचे नीचे जंगल देखे तो उसे निराशा-सी होने लगी। इस प्रकार के जंगल दक्खन के पठारों में प्रायः मिलते थे। किन्तु मुसलमान पहरेदारों के तम्बुओं की क़तारें और उत्तेजित रंगू को देखकर यह पता चलता था कि गोलकोंडा की अद्भुत ज़मीन उसके सामने ही है।

निकट के एक जंगल में किसी का तम्बू दिखाई पड़ा। तम्बू

के पास ही धुएं के छल्ले भी आसमान में उठ रहे थे। निकीतिन ने अपने बैलों को ताड़ के पेड़ों की ओर बढ़ा दिये। एक लम्बी दाढ़ीवाला मुसलमान मिलने के लिए आगे आया। धूप से बचने के लिए माथे पर हथेली रखकर उसने आनेवालों पर एक नज़र डाली।

मुसलमान ने अपना नाम नहीं बताया, हीरे के बारे में कुछ कहना-सुनना ठीक न समझा और क़ायदे का बरताव भी नहीं किया। किन्तु रंगू ज़रा भी परेशान न हुआ। उसे संतोष ही हुआ।

"इसके माने हैं सब कुछ पहले जैसा ही है!" उसने निकीतिन को समझाया, "यह आदमी हीरे का दलाल है। ऐसा आदमी तुरन्त झंप जाता है। वह हमसे डरता है। तो, माने हैं कि हीरे मिल सकते हैं। हमें तम्बू लगा देना चाहिए। फिर मैं किसी जान-पहचानवाले को ढूंढूंगा।"

किन्तु उन्हें किसी जान-पहचानवाले को ढूंढने की नौबत न आयी। इधर निकीतिन और रंगू तम्बू लगा रहे थे और उधर एक सिपाही झाड़ियों के पास से, खेमे के पास आकर खड़ा हो गया।

उसकी निगाहों से दोस्ती का कोई संकेत न मिल रहा था। उसका एक हाथ तलवार की मूठ पर था।

"यहां से अपना तम्बू-सम्बू हटाओ तो जल्दी।" सिपाही ने निकीतिन से कहा, "अगर तुम मौत के मुंह में नहीं जाना चाहते तो यहां से भागो तो।"

"अरे भाई!" निकीतिन ने कहना शुरू ही किया था कि सिपाही ने उसे रोक दिया—

"यह सब समेटो-समाटो! या फिर बुलाऊं आदमी..."



तभी झाड़ियों में से रंगू निकल ग्राया। उसके ग्रोंठों पर मधुर मुस्कान थी।

"ग्रमां रशीद, तुम!" उसने सिपाही को पुकारा, "तुम ग्रभी तक यहीं हो?"

सिपाही के माथे पर एक मोटी-सी शिकन पड़ी। फिर वह भी मुस्करा दिया।

"ग्ररे, बीदर के बाशिन्दे!" वह बोला, "तुम हो?"

"हां, मेरे भाई, मैं। मेरे बैल थक गये हैं। सोचा थोड़ा सुस्ता लूं। मुझे ग्रफ़सोस है कि तुम्हें तकलीफ़ हुई, लेकिन ख़ुशी भी है कि तुमसे मुलाक़ात हो गयी!"

सिपाही ने मूठ पर से हाथ हटा लिया ग्रौर कोट की ग्रास्तीन से माथे का पसीना पोछने लगा।

"कैसी तेज़ गर्मी है!" वह बोला, "बहुत दिनों के निकले हो, रंगू? बीदर की क्या खबर है?"

एक ही मिनट बाद तीनों तम्बू के भीतर जम गये ग्रौर शराब के जाम चलने लगे। रंगू ने नहीं पी किन्तु रशीद ने किसी को यह मौक़ा ही न दिया कि कोई उससे पीने को कहे। वह तुरन्त जुट पड़ा।

"ग्रच्छा, मज़े से रहो यहां!" ख़ुश होकर सिपाही बोला, "लेकिन ग्रब वक़्त बदल गया है, रंगू। ग्रब ज़्यादा पैसा देना होगा। हमारा नया सरदार पैसे को दांत से पकड़ता है। दो सोने के सिक्के मुझे दो ग्रौर पांच उसे।"

रंगू ने सौदा पटाने की कोशिश की किन्तु रशीद ने हाथ झुलाते हुए मना कर दिया।

"शीऽऽ... मुझे ज़रूरत से ज़्यादा पैसा नहीं चाहिए। पर, अगर आराम की ज़िन्दगी बसर करना चाहते हो तो बिना चीं-पचड़ किये पैसा हवाले करो।"

"अच्छा, हम देंगे!" निकीतिन बोला। सिपाही ने उसकी ओर देखा और खुश हो गया।

"सौदागर, मैं तो पहले ही तुम्हारी तरफ़ खिंचा था। अच्छी बात है। अब मैं तुम्हारे पास आया करूंगा ताकि तुम्हारा मन न ऊबे।"

और वह अपनी छोटी छोटी आंखें सिकोड़ता और तोंद झुलाता हुआ हंस दिया।

पैसा लेकर रशीद जाने लगा।

"हां," परदा उठाते हुए वह बोला, "यहां भेड़िये रहते हैं। बैलों को बचाये रखना। अच्छा, सलाम!"

रशीद के जा चुकने के बाद रंगू ने सिर हिलाया।

"बहुत पैसा मांग लिया बदमाश ने!" सोचते हुए रंगू बोला, "बहुत... लेकिन ख़ैर कोई बात नहीं। है वह भरोसे का आदमी। जिसका पैसा लेता है उसका काम कर देता है।"

"हम हीरे खरीदेंगे कैसे?" निकीतिन ने पूछा, "कहां जाना होगा हमें?"

"वे खुद ही यहां आ जायेंगे," रंगू हंस दिया, "चलो कुछ टहनियां बटोर लायें। हमें चावल पकाना है।"

गोलकोंडा पर रात्रि की गहनता बढ़ने लगी थी। चारों ओर सन्नाटा था। चौकीदारों के तम्बुओं के सामने जलती हुई आग की

32—1576

चिनगारियां दिखाई पड़ रही थीं। कहीं गीदड़ भों-भों कर रहे थे, कहीं लकड़बग्घे चिग्घाड़ रहे थे।

"वक़्त हो रहा है!" रंगू बोला।

उसने अलाव में सूखी टहनियां लगा दीं। आग एक क्षण के लिए दब जाती, फिर सहसा भभक उठती और लगता जैसे उसकी लपटें नीला आकाश छू लेंगी।

"अलाव तेज़ जलता रहे!" रंगू ने कहा, "हम इन्तज़ार करेंगे।"

और दोनों घुटनों के बीच सिर रखकर वह बड़ी सावधानी से रात की ध्वनियां सुनने लगा। निकीतिन भी चुपचाप सुनता रहा – जलती हुई टहनियों की चटाख, बैलों की घंटियों की टुनटुन, सिर के ऊपर से गुज़र जानेवाले रात्रि के किसी पक्षी की सरसराहट।

इन दिनों निकीतिन काफ़ी थक चुका था। वह बहुत कमज़ोर हो गया था। आखिर वह भी भारत के कष्टों से बच न सका था। उसे मृत रंगसाज़ की याद आने लगी थी।

"चौल के अलावा और कौन कौन बन्दरगाह हैं?" निकीतिन ने शान्ति भंग की।

"गोआ, दाभोल..."

"और सीता के गांव से कौन बन्दरगाह नज़दीक पड़ेगा?"

"दाभोल... जाने की सोच रहे हो क्या?"

"हां, रंगू।"

"मैं तुम्हें पहुंचाऊंगा वहां।"

"अरे, क्या कहते हो... इतनी दूर!"

"तो क्या अब मैं तुम्हारा दोस्त नहीं रहा?"

निकीतिन आकर रंगू के पास बैठ गया और उसके कन्धे पकड़कर उसे छाती से लगा लिया। फिर दोनों पास पास बैठे हुए काले काले और मूक अन्धकार की ओर देखने लगे।

"बताओ अफ़नासी, क्या सोच रहे हो तुम?" काफ़ी देर तक चुप रहने के बाद आखिर रंगू ने शांति भंग की।

"मेरा धर्म यह सिखाता है," निकीतिन ने धीरे धीरे कहना शुरू किया, "कि सभी लोगों को भाई भाई की तरह रहना चाहिए। जब मैं जवान था तो त्वेर में लोगों को झूठ बोलते सुनकर मुझे तैश आ जाता था। इसके लिए मुझे हानि भी काफ़ी उठानी पड़ी थी। मैंने यह समझ लिया था कि रईसों में सत्य के दर्शन नहीं हो सकते। इसी लिए मेरा जी उदास हो गया था। मैंने सारी दुनिया का चक्कर लगाया है। लोग कैसे रहते हैं यह मैंने अपनी इन्हीं आंखों से देखा है। मैं उत्तरी मुल्कों में घूमा-फिरा, जर्मन प्रदेश गया, तुर्की गया, नाव पर ज़ारग्राद भी गया – सभी जगह एक ही बात... और अब तुम्हारे साथ हूं। तुम्हारे दुख-दर्द हमारे दुख-दर्दों से अधिक मीठे नहीं। मैंने अनुभव किया है कि हर जगह आदमी खुशी के सपने देखता है, अपने अपने धर्म के अनुसार भगवान के भरोसे रहता है, अपने अपने विचारों से शान्ति प्राप्त करता है। ऐसी हालत में भलाई में विश्वास डिगने लगता है पर अपने हृदय की थाह लेने पर पता चलता है कि मनुष्य का विश्वास अडिग है। और जानते हो ऐसा क्यों होता है? इसलिए कि दुनिया में इन्सान सुखी नहीं रहता। और यदि यह सही है तो उसे, सुख की मंज़िल तक ले जानेवाला सच्चा रास्ता ढूंढना चाहिए। मैं वह रास्ता नहीं जानता। उस रास्ते का राज़ मुझे आज तक न मालूम हो सका। फिर भी मैं समझता हूं कि यद्यपि भगवान के भिन्न भिन्न रूप हैं और हमारी आपस में भी कितनी ही भिन्नताएं

हैं, फिर भी सभी के लिए सुख का रास्ता एक ही होगा, वैसे ही जैसे दुनिया के हर इन्सान के लिए दुख की अनुभूति एक ही होती है..."

रंगू ने अविश्वास से सिर हिला दिया।

"तुम्हारे विचार तो बड़े ऊंचे हैं," उसने उत्तर दिया, "परन्तु सुख की धारणाएं अलग अलग हैं..."

"नहीं!" निकीतिन ने आपत्ति करते हुए कहा, "नहीं! आदमी एक ही प्रकार से अनुभव करता है–युद्ध दुखदायी है, भूख दुखदायी है, रईसों का अत्याचार दुखदायी है... ठीक नहीं है क्या?"

"ठीक है। यह बात तो ठीक है," रंगू बोला।

अफ़नासी और रंगू बातों में इतने फंस गये कि उनका ध्यान आग की ओर से हट गया। आग धीमी पड़ गयी। उन्होंने उसपर कुछ सूखी लकड़ियां और डालीं और दोनों उसे फूंक फूंककर सुलगाने लगे। लपट भभक उठी और निकीतिन ने आग की गर्मी से लाल पड़ा हुआ चेहरा ऊपर उठाया। कुछ क्षणों के लिए जैसे उसे कुछ भी न सूझा। उसकी आंखों के आगे लपटों के घेरे ही नाचते रहे। फिर इन घेरों में से उसे किसी आदमी का एक ढांचा-सा दिखाई दिया। वह आग की दूसरी ओर, घुटनों के बल बैठा हुआ, गहरी और उदासीन-सी दृष्टि से, अफ़नासी को ताक रहा था। रंगू आग का चक्कर-सा लगाता हुआ उस ढांचे के पास आया, उसके कंधे ठोंके और हथेली फैला दी।

ढांचे ने कुछ कहा और रंगू ने ओंठ हिला दिये।

"क्या बात है?" अफ़नासी ने पूछा।

"यह निगल्लू है," रंगू ने अबोध्य-सा उत्तर दिया और रात्रि के अतिथि को चावल परोस दिये।

अफ़नासी ढांचे के पास आया। गोलकोंडा का यह गुलाम मंत्रमुग्ध की तरह रंगू के हाथों की एक एक हरकत देख रहा था। गुलाम की गर्दन कांप रही थी। वह इतना सींक-सलाई था कि हड्डी का ढांचा-सा लग रहा था। पर था यह एक इन्सान, जिन्दा इन्सान।

गुलाम के आगे चावल आये। उसने चावल गटके और ताड़ का पत्ता चाटने लगा।

इसी बीच रंगू तम्बू में गया और कोई जड़ी ले आया। गुलाम ने वह जड़ी भी निगल ली।

अफ़नासी उसे साश्चर्य देखता रहा।

गुलाम कांपने लगा। उसकी आंखें जैसे बाहर निकलने लगीं। उसके लिए सांस लेना भी दूभर हो गया...

कुछ ही मिनटों में सब कुछ हो गया। रंगू ने आग के पास खड़े होकर कुछ किया, पानी से कुछ साफ़ किया और निकीतिन को पुकारकर कहने लगा—

"यहां आओ!"

अफ़नासी उसके पास चला आया। रंगू की हथेली पर दो हीरे दमक रहे थे। आग की चमक में ये रत्न लाल दिखाई पड़ रहे थे। गुलाम इन लोगों की ओर न देखते हुए फिर चावल पर जुट गया। अब वह अच्छी तरह चबा चबाकर खा रहा था, धीरे धीरे और गम्भीरता के साथ।

"यह क्या है ... ऐसा हमेशा होता है क्या?"

"नहीं," रंगू ने जवाब दिया, "दूसरे लोग भी होते हैं, जो शरीर में घाव कर लेते हैं और हीरे उनमें छिपा लेते हैं। परन्तु हीरे निगल जाना अधिक महफ़ूज़ चीज़ है। इसे कोई भी पहरेदार

नहीं भांप सकता। पर निगल्लुग्रों के साथ पेश ग्राना प्रिय बात नहीं है। इसमें चावल ग्रधिक खर्च होता है, लेकिन किया क्या जाये ?"

"बड़ी विचित्र बात है!" निकीतिन बोला, "शैतान जाने यह सब है क्या! ग्रौर ग्रगर वह पकड़ा जाये ?"

"तो उसे मार डाला जायेगा..."

"इसके माने हैं कि मुट्ठी-भर चावल के लिए ग्रादमी मौत का ख़तरा मोल लेता है ?"

"बेचारे गुलाम तो भूख से यों भी मरते हैं। इस तरह वे किसी न किसी प्रकार ग्रपने को ज़िन्दा तो रखते हैं। कुछ लोग इन्हीं चावलों को खाकर मज़बूत बनते हैं ग्रौर भाग निकल सकते हैं।"

"तो यहां हीरे इतने सस्ते हैं। मैं नहीं जानता था!" निकीतिन बोला, "मैं नहीं जानता था!"

गुलाम चावल ख़ाकर उठने लगा।

"इसे ग्रभी ग्रौर दो!" निकीतिन ने जल्दी जल्दी कहा, "उसे भर पेट खा तो लेने दो!"

परन्तु रंगू ने, निषेध-सा करते हुए, गर्दन हिलायी।

"नहीं। ज्यादा खाने से इसे नुक़सान होगा। वह मर भी सकता है..."

गुलाम के ग्रंधेरे में ग़ायब हो जाने के बाद एकदम सन्नाटा छा गया।

"यह तो युगों से होता चला ग्राया है!" ग्राखिर रंगू बोला, "ये हीरे हम नहीं लेंगे तो कोई दूसरे लोग ले लेंगे।"

निकीतिन ने ग्राह भरी, एक ग्रंगारा उठाकर ग्राग में रखा ग्रौर ग्रपनी गन्दी हुई उंगली की ग्रोर देखते हुए सिर हिलाने लगा—

"इस चीज़ की तो मैंने कभी आशा न ही की थी... आज और अधिक की कोई ज़रूरत नहीं।"

रंगू ने आग में सूखी लकड़ियां नहीं लगायीं। आग धीरे धीरे बुझने लगी। निकीतिन चटाई पर लेट गया और बुझती हुई लपटों की ओर देखने लगा। उसका दिल भारी और उदास था। उसे अच्छी नींद भी नहीं आयी। प्रातःकाल उठने पर रात के सन्देह उसे केवल कमज़ोरी के फल मात्र लगे। वह यहां हीरों के लिए आया था और वह हीरे प्राप्त करेगा, भले ही वे उसे किसी प्रकार ही क्यों न मिलें। उसके पास हीरे होकर ही रहेंगे। वह वहां रह गया।

वे लोग यहां अक्तूबर तक बने रहे। गुलाम तो कभी कभी ही आते थे। अधिकतर हीरे बहुत छोटे होते थे, फिर साफ़ भी न होते थे। अक्तूबर तक रंगू और निकीतिन को इतने हीरे मिल चुके थे कि ख़र्च वग़ैरह निकालकर उन्हें कुछ लाभ भी हो सकता था।

अब अफ़नासी बीदर चलने के लिए रंगू से बराबर इसरार करता रहा।

अक्तूबर के आरम्भ में उन्होंने अपने तम्बू उखाड़े और बीदर की ओर कूच किया।

सातवां अध्याय

"तुम कौन हो?"

कुछ घुड़सवार पहाड़ी के पीछे से निकले और रास्ता रोक लिया। वे मुसाफ़िरों के पास आये। मुसाफ़िरों के लिए छिपने को कोई स्थान न रह गया था।

"मुसलमान सिपाही!" भय से रंगू फुसफुसाने लगा।

निकीतिन भी घबड़ा गया। वे बीदर तक का बहुत काफ़ी रास्ता पार कर आये थे। अगर अब कुछ हुआ तो बड़ी कोफ़्त होगी। रंगू से पहले ही यह तय हो गया था कि यदि पहरेदारों से कभी कुछ कहने-सुनने की जरूरत हुई तो वे यही कहेंगे कि वे लोग उड़ीसा के राजाओं से जवाहरात ख़रीदने गये थे। अभी तक इस तरक़ीब से काम चलता गया था। और अगर इन सिपाहियों ने विश्वास न किया और छान-बीन की और उन्हें कुछ शक हो गया तो?

निकीतिन, बैलों को संभालता हुआ, बरावर यह सोचता रहा कि उनका साबक़ा मुसलमानों की टुकड़ी से पहली बार न पड़ा था। उसे लग रहा था जैसे भारत की हालत उखाड़े गये दीमक जैसी हो गयी है। सिपाही जल्दी जल्दी कहीं जा रहे हैं। कहीं कोई युद्ध तो नहीं छिड़ गया?

इसी बीच मुसलमानों की टुकड़ी और पास आ गयी। निकीतिन भौंहें तरेरने लगा। सामने का सिपाही रईसाना ढंग की वर्दी में था। उसका चेहरा अफ़नासी को बहुत कुछ परिचित-सा लगा। उसका घोड़ा तक परिचित था – सफ़ेद ख़ूबसूरत घोड़ा। उसे कुछ कुछ याद आने लगा...

"मुस्तफ़ा!" अफ़नासी चिल्लाया, "अगर तुम मुस्तफ़ा न हो तो ख़ुदा का मुझे कुफ़्र!"

सिपाही ने भी निकीतिन को पहचान लिया। एक ही क्षण में सिपाही के चेहरे पर घबड़ाहट के कुछ भाव दिखाई दिये परन्तु उसने, जैसे अपने को संभालते हुए, बड़े लोगों जैसी हंसी हंस दी।

"सौदागरों को छोड़ दो। वे हमारे दोस्त हैं!" गाड़ी को घेर रखनेवाले सिपाहियों से मुस्तफ़ा ने कहा। सिपाहियों ने फ़ौरन ऐसा ही

किया। निकीतिन ने आश्चर्य से मुस्तफ़ा की ओर देखा जिससे मुस्तफ़ा को बड़ी खुशी हुई।

"अजी, तुम्हें तो पहचानना मुश्किल हो गया!" अफ़नासी बोला।

"हुं-ह... और अपने घोड़े की याद है?" मुस्तफ़ा ने दांत निकाल दिये और घोड़े की रास खींच ली।

"मेरा घोड़ा तुम्हारे पास?! इसे तो खान उमर ने खरीदा था!"

"हां वही है! इसका नाम तुम्हारे नाम पर ग्याउर* रखा गया है। और खान उमर, खान था ज़रूर लेकिन अब तो डफली बन गया है।"

अपने ही मज़ाक़ पर खुश होकर, मुस्तफ़ा हो-हो कर हंसने और दूसरे सिपाहियों की ओर देखने लगा। वे भी मुस्करा दिये।

"मेरे पल्ले कुछ नहीं पड़ता..." निकीतिन बोला, "पहेली बुझा रहे हो।"

"लगता है, अरसे से बीदर नहीं गये!" सिपाही ने आंखें सिकोड़ीं, "बस, पैरों का सनीचर उतारते रहते हो? ढेरों खबरें हैं, ढेरों... और हां, यह तुम्हारे साथ कौन है?"

मुस्तफ़ा ने संदिग्ध दृष्टि से रंगू की ओर देखा और निकीतिन जैसे सतर्क हो गया।

"मेरा गाड़ीवान," उसने होशियारी से उत्तर दिया, "क्यों?"

"तुम रत्न-तराश रंगू को तो नहीं जानते?"

मुस्तफ़ा दोनों की ओर पैनी दृष्टि से देखने लगा।

"क्यों नहीं जानता," निकीतिन बोला। उसे किसी बुराई का शक हो रहा था, "उसके साथ ही तो मैं बीदर से चला था।"

---

* काफ़िर।

"कहां ?"

"हम लोग आठ दिनों तक साथ साथ रहे फिर अलग हो गये। शायद वह श्री-पर्वती चला गया। तुम्हें उससे क्या लेना-देना ?"

"वह सुलतान का दुश्मन है। तुमने बुरे लोगों से दोस्ती पाली है, यूसुफ़।"

"तो वह कोई दुश्मन है? क्या किया है उसने ?"

"इसे बताने में बड़ा वक़्त लगेगा! वह अपने दादा के साथ खान उमर की साज़िश में शामिल था। उसके दादा की तो खाल खींची ही जा चुकी है। अकेला रंगू कहीं निकल भागा। पर वह भी हत्थे चढ़ेगा ही।"

"ऐसा नहीं हो सकता!" निकीतिन बोला।

"इस साज़िश का पता चलाने में मैंने ख़ुद मदद दी थी!" बड़े गर्व से मुस्तफ़ा बोला, "और हां तुम भावलो सौदागर को जानते थे। उसे भी फांसी दे दी गयी। ख़ज़ानची मुहम्मद की मेहरबानी से तुमपर कोई आंच न आयी। उसने तुम्हारी पैरवी की थी और वज़ीरे आज़म से कहा था कि तुम इन हिन्दुओं को ऐसे ही जानते हो। तुम बेखटके बीदर लौट सकते हो।"

इन खबरों से चौंक कर अफ़नासी को समझ ही में न आया कि वह क्या उत्तर दे।

फिर सिपाही ने लापरवाही से उसकी ओर देखा, सिर हिलाया और घोड़े को चलने का इशारा किया।

"तुम्हारा सफ़र आराम से कटे!" वह बोला।

अफ़नासी ने अन्यमनस्कता से, हाथ अपने सीने पर रखा। सारे सिपाही एक ओर बढ़ गये।

"रंगू!" निकीतिन बोला, "यह साज़िशवाली बात ठीक है क्या?"

रंगू की आंखों में आंसू छलछला आये। वह शून्य दृष्टि से दूर की पहाड़ियां देखने लगा। उसके मुंह से बोल तक न फूट रहे थे। उसने सिर्फ़ निषेधसूचक ढंग से सिर हिला दिया।

जब बीदर का रास्ता कोई एक दिन का रह गया तो रंगू और निकीतिन एक दूसरे से अलग हो गये। रंगू को एक गांव में अफ़नासी की प्रतीक्षा करनी थी और निकीतिन को यह पता चलाना था कि कर्ण के परिवार का क्या हुआ। उसे खज़ानची मुहम्मद से यह भी पूछना था कि जो कुछ मुस्तफ़ा ने कहा था वह सच है या नहीं। और यदि कर्ण जीवित है, तो उसे उसकी रक्षा के लिए कोशिश करनी चाहिए।

अफ़नासी ने बीदर के द्वार में प्रवेश किया। उस समय वह चिन्तित, और परेशान था। उसका दिल भी भारी हो रहा था। उसका अपना क्या होगा इस चिन्ता ने उसे नगर की परिचित गलियों में भी चैन की सांस न लेने दी। फिर मित्रों की चिन्ता भी उसे सता रही थी।

नगर में सब कुछ जैसे पूर्ववत् था। संकरी गलियों में ऊंट गुर्रा रहे थे। दुबले-पतले कुली भारी बोझों के नीचे दबे जा रहे थे। जवान मुसलमान छोकरियां सिर से बुरक़ा उठाकर अपने मिलने-जुलनेवालों की ओर देख देखकर मुस्करा रही थीं। बटेरें लड़ रही थीं, लोग बाड़े की परछाइयों में उकड़ूं बैठे इस खेल का मज़ा ले रहे थे और हुसका हुसकाकर पक्षियों को उत्साहित कर रहे थे। फेरीवाले चक्कर लगा रहे थे। उनके मुंह से पसीना टपक टपककर ज़मीन पर गिर रहा था। दो विवाहित हिन्दू स्त्रियां माथे पर नीली बिन्दियां लगाये आपस में चटर चटर कर रही थीं। और हल्के नीले आकाश में बादल जैसी हल्की,

दूध जैसी सफ़ेद और मेघ जैसी उदास महल की रूप-रेखाएं दिखाई पड़ रही थीं।

परन्तु फिर भी सब कुछ पूर्ववत् न था।

अफ़नासी जल्दी जल्दी अपने घर की ओर बढ़ा। उसके पड़ोसी, बूढ़े कुम्हार ने उसे पहचाना और अपने दरवाज़े पर से ही झुककर अभिवादन करने लगा। अफ़नासी मुस्कराया। उसने बैल रोके और गाड़ी से उतरकर घर का दरवाज़ा खटखटाने लगा। हसन ने उसकी आहट सुन ली थी और दस्तक के ढंग से ही मालिक को पहचानकर, बिना कुछ पूछे-गछे, दरवाज़ा खोलने के लिए नंगे पैरों भागा चला आया था...

यहां कोई परिवर्तन न हुआ था। कूड़ा साफ़ किया जा चुका था, फ़र्श पर झाड़ू लग चुकी थी। अफ़नासी सोफ़े पर बैठकर अपने इर्द-गिर्द देखने लगा। उसे ऐसी खुशी हो रही थी मानो अपने वतन लौटा हो। किन्तु यह खुशी क्षणिक थी।

"हसन!" अफ़नासी ने पुकारा, "बताओ, यहां क्या क्या हुआ था? कुछ जानते हो?"

हसन दरवाज़े की चौखट पर खड़ा हुआ। उसने इधर-उधर बड़ी सतर्कता से एक निगाह डाली—यह जानने के लिए कि उसकी बात कोई सुन तो नहीं रहा है, फिर निकीतिन की ओर बढ़ आया।

"यहां की हालत बड़ी खराब है, खोजा!" वह फुसफुसाया, "बड़ी खराब ... मैं तुम्हें सब कुछ बताऊंगा और अगर तुम्हें कोई बात बुरी लगे तो मुझपर गुस्सा मत होना। तो जो कुछ हुआ और जो कुछ मैं जानता हूं वह तुम्हें बता रहा हूं ..."

हसन ने आद्योपान्त वे सारी बातें कह डालीं जिन्हें निकीतिन पहले ही मुस्तफ़ा से सुन चुका था। बस उसने उसमें ब्यौरे की बातें और बढ़ा दीं। फिर जैसे परेशान-सा होकर कहने लगा –

"बहुतों को तो यही सुनकर हैरत हो रही थी कि इस साज़िश में कर्ण का हाथ हो सकता है। फिर यह अफ़वाह भी सुनाई पड़ने लगी ... हां आप परेशान मत हों! बेशक रत्न-तराश की जान-पहचान भावलो से थी। और यह भी ख़बर उड़ी कि खज़ानची मुहम्मद ... अल्लाह गवाह है, मैं उसका वफ़ादार ग़ुलाम रहा ... पहले खज़ानची दिल्ली में रहता था। वहीं कर्ण का बेटा राजेन्द्र भी रहता था ..."

"यह क्या कह रहे हो तुम?" निकीतिन पूछने लगा। उसका गला सूख रहा था, "नहीं, यह नहीं हो सकता!"

"खोजा, तुमने कुछ सुना है इसके बारे में?"

"मैंने तो यह सोचा भी न था कि खज़ानची..."

"लोगों का कहना है कि वही। अब उसे यह मालूम हो चुका था कि बाप को अपने बेटे के क़ातिल का पता चला और उसने अपना पुराना हिसाब बेबाक़ कर दिया।"

अफ़नासी उठ बैठा –

"हसन, तुमने यह बात सुनी कहां?"

"नौकर-चाकर कह रहे हैं ... बाज़ार में भी चर्चा है ..."

"हे भगवान!" अफ़नासी के मुंह से निकल गया, "अरे कर्ण के बारे में यह बात तो मैंने ही उससे कही थी ... मैंने!"

हसन चौंक पड़ा –

"तुमने, खोजा?"

"कौन जानता था? कौन सोच भी सकता था?" दुखी होकर

निकीतिन चिल्ला पड़ा, "अच्छी बात है, मियां खज़ानची, अच्छी बात है!"

हसन ने क्रुद्ध अफ़नासी का हाथ छुआ।

"सावधान रहना, खोजा!" उसने कहा, "खज़ानची मुहम्मद महमूद गवान का नज़दीकी दोस्त बन गया है। वह है सांप। और सांपों के लंबी ज़िंदगी होती है।"

"मैं देखता हूं कि अब तुम भी उसकी तरफ़दारी नहीं करते? कभी तो उसके लिए आंखें बिछाये रहते थे..."

हसन ने सिर लटका लिया –

"खज़ानची यहां आया था। तुम नहीं थे। बड़ा लालपीला हो रहा था... उसने मुझे खूब मारा पीटा और जब मैंने कुछ कहने के लिए मुंह खोला तो मेरे मुंह पर थूक दिया। बोला मैं ग़ुलाम हूं... लेकिन मैं ग़ुलाम तो नहीं हूं। तुमने तो मुझे आज़ाद कर दिया है न?"

"हां," निकीतिन ने उत्तर दिया, "तुम ग़ुलाम नहीं। चाहते तो तुम भी उसके मुंह पर थूक सकते हो। तुम उससे ईमानदार आदमी हो... अफ़सोस कि आदमी आदमी को तुरन्त नहीं पहचान पाता!"

और उसकी मुट्ठियां भिंच गयीं।

कमज़ोर आंखों वाला ब्राह्मण राम लाल, तांडव मुद्रा में शिव की स्वर्ण-प्रतिमा पर निगाह डालते और अफ़नासी से नजर चुराते हुए, बोला –

"हमारे मुंह से तो हंसी मज़ाक़ में भी झूठ न निकलेगा..."

"अच्छा, जो कुछ आप जानते हैं, वह तो बता दें।"

"अफ़वाहें ठीक होंगी इसमें मुझे कोई विश्वास नहीं।"

अफ़नासी तत्काल दरी पर से उठ पड़ा। उसने इस सतर्क और भयभीत बूढ़े से कुछ पूछकर व्यर्थ ही अपना समय बरबाद किया।

"नमस्ते!" निकीतिन रुक्षता से बोला। ब्राह्मण ने हाथ अपनी छाती पर रख लिया।

अब अफ़नासी निर्मल के घर की ओर चल पड़ा। शायद कपड़ों का यह व्यापारी ही कुछ जानता हो!

वह बड़े बड़े डग भरता, और छांह में चलने की भी परवाह न करता हुआ, अपने रास्ते बढ़ रहा था। सांस लेना तक उसके लिए कठिन हो रहा था। परन्तु, उसने अपनी चाल नहीं धीमी की।

रंगू के सिर पर कितनी बड़ी मुसीबत टूट पड़ी थी – रत्न-तराश के घर में न कर्ण ही था और न झांकी और उसका बेटा ही। और फिर कोई यह तक न जानता था कि उनका हुआ क्या।

निकीतिन ने सोचा – सारे वीदर में अकेला मैं ही बेचारे रंगू की मदद कर सकता हूं। मैंने उसे दोस्त कहकर पुकारा है। लेकिन मदद कैसे करूं? और क्या करूं? झांकी के पास तक पहुंचने का कोई सूत्र मिले तो कुछ किया भी जाये, यदि सचमुच कर्ण को मार डाला गया है।

निर्मल उसे घर ही में मिल गया। वह बांस की छत के नीचे खड़ा हुआ कपास के गट्ठर उतारने में लोगों की मदद कर रहा था।

निर्मल ने अफ़नासी को देखा और, सहसा घबड़ाकर, उसे घर के भीतर ले गया। निकीतिन कड़वी हंसी हंस पड़ा। निर्मल के चेहरे से ही पता चल रहा था कि राम लाल की भांति वह भी वीदर की घटनाओं से बेहद डरा हुआ है।

नारियल का पानी पीने से इनकार करते हुए, अफ़नासी ने तुरन्त अपने आने का उद्देश्य कह डाला।

निर्मल ने उदास होकर हाथ फैला दिये—झांकी का क्या हुआ कौन जाने? भावलो के साथ कर्ण को भी फांसी दे दी गयी थी। उन दोनों के सिर खम्भों पर लटकाये गये थे। खान उमर की खाल खींचकर उसकी लाश सारे शहर में घुमायी गयी थी। दसियों हिन्दुओं को गिरफ़्तार किया गया था। भगवान की कृपा है कि मैं अभी तक बचा हुआ हूं! नहीं नहीं, मैंने कुछ नहीं सुना! और अगर निकीतिन झांकी की मदद करना चाहे तो अपने मुसलमान हिमायतियों के पास जाये। वे तो सभी कुछ जानते हैं।

रास्ते में निकीतिन अपने कुछ और हिन्दू दोस्तों से मिला और आख़िर खाली हाथ घर लौट आया। कुछ लोगों ने रंगू के कष्टों के प्रति सहानुभूति प्रकट की, कुछ चुप रहे परन्तु उनमें से एक भी ऐसा न था जिसे सचमुच किसी बात की कोई जानकारी होती। बस एक ही चारा रह गया था—क़िले में जाना। अफ़नासी ने निश्चय किया कि वह फ़रहत-खान से मिलेगा। कभी इस तरफ़दार ने उसमें और रूस में रुचि दिखायी थी, उसे पुस्तक भेंट की थी और मदद करने का वादा किया था। शायद वह...

निकीतिन तालाब में अच्छी तरह नहाया-धोया और मुसलमानी कपड़े पहनकर तैयार हो गया। चूड़ीदार पैजामा, हल्का कुरता, सिर पर पगड़ी। वह हसन को पुकारकर कहने लगा—

"मेरे साथ चलो! मेरा छाता लिये रहना ... शान बढ़ाने के लिए।"

जब निकीतिन हसन के साथ बीदर के क़िले के एक फाटक पर पहुंचा, उस समय सूर्य डूबने की तैयारी कर रहा था।

दीवालों पर आंखें चौंधिया देनेवाली धूप पड़ रही थी और ताड़ के पेड़, गतिहीन, वायु में अकड़कर रह गये थे। सभी चीजों से जैसे

गर्मी फूट रही थी। मौसम को देखते हुए दिन बेहद गर्म लग रहा था। फाटक पर बैठे हुए मुंशियों में चहलपहल शुरू हुई। अफ़नासी ने अपना नाम बताया और यह भी कि वह कहां जाना चाहता है। पहले तो इतना कह देना काफ़ी समझा जाता था, लेकिन अब पंख की क़लम दावात में ही पड़ी रही। मुंशी ने उसका नाम नहीं लिखा और दो पहरेदारों ने भाले लेकर उसका रास्ता रोक दिया।

"काफ़िरों को अन्दर जाने की मनाही है!"

"मुझे तो फ़रहत-खान के पास जाने की हमेशा इजाज़त रहती थी!" क्रोध से निकीतिन बोला। उसने पहरेदारों की आंखों में देखा।

"कह तो दिया कि काफ़िरों को अन्दर जाने की मनाही है," पहरेदारों ने उदास मुद्रा से दोहराया। उनके चेहरों पर कोई भाव न थे। अफ़नासी ने ओंठ भींचे, मुड़ा और निकल गया। हसन भी उसके पीछे पीछे चलता रहा।

आज निकीतिन के घर में सन्ध्या उदासी बिखेर रही थी। अफ़नासी सोफ़े पर पड़ा पड़ा सोच रहा था कि उसे क्या करना चाहिए। हसन चुपचाप चूहे की भांति बग़लवाले कमरे में खड़बड़ करता रहा।

निकीतिन का दिल भारी हो रहा था। रंगू को इस समय कितनी व्यथा हो रही होगी, वह इसकी कल्पना करते हुए करवटें बदलता रहा। उसकी किसी प्रकार मदद करनी ही चाहिए, करनी ही चाहिए! परन्तु हसन की आवाज़ से उसके विचारों में बाधा पड़ी!

"खोजा!"

"क्या है?"

"मैं क़िले में जाऊंगा।"

"तुम?!"

"हां मैं। मैं मुसलमान हूं। मुझे जाने देंगे।"

33—1576

निकीतिन बैठ गया। यह बात पहले उसके दिमाग़ में क्यों नहीं आयी ?

"ठीक है, हसन ! तुम जाओ, वहां फ़रहत-ख़ान के महल का पता चलाना और कुछ ऐसा करना कि वह तुम्हारी बात सुने। फिर कहना कि मैं उससे मिलना चाहता हूं। कोई बड़ा जरूरी काम है।"

"आप फ़िक्र न करें, खोजा," हसन ने सिर हिलाते हुए कहा, "मैं सब कर लूंगा। और अगर ख़ान पूछे कि काम क्या है ?"

"तो कहना, मैं नहीं जानता। बस यही जानता हूं काम जरूरी है।"

"अच्छी बात है, खोजा। कह दूंगा।"

उस शाम को चले तो देर हो चुकी थी। सुबह सुलतान अपने दोस्त-अहबाबों के साथ शिकार खेलने गया था। तीसरे दिन कहीं हसन क़िले में दाखिल हो पाया। वह सीधे फ़रहत-ख़ान के पास गया। उसने निकीतिन का सन्देश उसे सुना दिया। तीसरे दिन, शाम के समय फ़रहत-ख़ान ने अपने पहरेदारों के साथ निकीतिन को लाने के लिए एक पालकी भेजी।

निकीतिन ने उत्तेजित होकर तरफ़दार के महल 'रौनक़े दिल' की ओर देखा। पालकी उठानेवाले हबशी कहारों के हर क़दम के साथ महल नज़दीक आ रहा था। वही फौवारा, वही प्रवेश-द्वार, संगमरमर की वही सीढ़ियां, वही खंभे ...

फ़रहत-ख़ान भीतरी बग़ीचे में नक़्क़ाशीदार लकड़ी के मंडप में मेहमान का इन्तज़ार कर रहा था।

अफ़नासी ने तरफ़दार के आगे सिर झुकाया और ज़ोरों से मुस्करा दिया –

"आखिर किसी तरह तुम्हारे पास आ ही गया, ख़ान !"

"कौनसी परेशानी में मुब्तिला हो गये हो तुम ?" फ़रहत-ख़ान

ने पूछा, "तुम तो बीदर से यकायक ग़ायब ही हो गये ... इधर मुझपर भी एक मुसीबत आ पड़ी," तरफ़दार ने ठंढी सांस ली।

"कैसी मुसीबत?"

"मेरा सेफ़ी मर गया। ज़हरीली भाप उसकी नाक में चली गयी थी। अब मुझे एक नये आदमी की ज़रूरत है!"

"मुझे तुमसे हमदर्दी है, ख़ान," खुले दिल से निकीतिन बोला, "सेफ़ी मेहनती आदमी था।"

"और ईमानदार भी!" फ़रहत-ख़ान ने तर्जनी उठाकर कहा, "यह ख़ासियत सचमुच बहुत कम लोगों में मिलती है!"

दोनों चुप हो गये। निकीतिन को न जाने कैसा लग रहा था। बात कैसे शुरू की जाये यह उसकी समझ ही में न आ रहा था। इसी समय तरफ़दार ने अपनी उत्सुक निगाहें उठाकर जैसे उसकी मदद की।

"मैं तुम्हें तकलीफ़ दे रहा हूं, मुझे माफ़ करना, आला ख़ान," अफ़नासी ने अपनी बात शुरू की, "ख़ान उमर की बीदर में साज़िश खुल गयी थी ..."

फ़रहत-ख़ान ने काली और हल्की भौंहें ऊपर उठायीं और सिर एक ओर झुका दिया।

"उमर-ख़ान की साज़िश," निकीतिन ने दृढ़ता से कहा और तरफ़दार की आंखों में आंखें डालकर देखने लगा, "कौन कौन पकड़ा गया है और क्यों, उन सबका फ़ैसला करना तो मेरा काम नहीं, हां मैं रत्न-तराश कर्ण को जानता था।"

"उसे तो फांसी दे दी गयी।"

"यह तो मैं जानता हूं। बेकार ही उसकी जान ली गयी।"

"तुम्हारे पास इसका सबूत है?"

"है।"

"क्या सबूत है?"

"मेरी बात ग़ौर से सुनना, खान। मैं जानता हूं कि इस साज़िश का भंडाफोड़ किसने किया – ख़ज़ानची मुहम्मद और खान उमर के सिपाही मुस्तफ़ा ने।"

"ठीक। अब ख़ज़ानची सुलतान की शिकारी बाज़ों वाली टुकड़ी का सरदार है और मुस्तफ़ा घुड़सवारों की एक टुकड़ी का।"

"...किसे पकड़ना चाहिए इस मामले में सिर्फ़ उन्हीं की सुनी गयी है।"

"वे इज़्ज़तदार आदमी हैं। उन्होंने तख़्त की हिफ़ाज़त की है।"

"सुनो खान। कभी मैंने ख़ज़ानची की जान बचायी थी और उसने भी जुन्नर में मेरी मदद की थी।"

"हम जानते हैं।"

"यह बड़ा नीच है और झूठा भी। उसने अन्याय से कर्ण को फंसा दिया। पुराना हिसाब बेबाक़ किया है।"

"अगर हम यह भी मान लें कि कोई पुराना हिसाब बेबाक़ किया गया है तो फिर कर्ण को फंसाना अन्याय कैसे हुआ?"

"इसलिए कि जब इतने वर्षों बाद भी कर्ण ने ख़ज़ानची से बदला नहीं लिया तो वह सुलतान के विरुद्ध कैसे साज़िश कर सकता था?"

"बदला नहीं लिया?"

"ख़ज़ानची ने उसके बेटे को मार डाला था..."

निकीतिन ने फ़रहत को राजेन्द्र और ख़ज़ानची के बारे में सभी सुनी-सुनायी बातों, स्वयं अपनी अनिच्छित ग़द्दारी और बीदर में फैली हुई अफ़वाहों के बारे में सब कुछ बता दिया।

"अब मुझे याद आता है कि जब मैंने उससे कर्ण की चर्चा चलायी थी तो वह क्यों इतना घबड़ा उठा था," क्रोध से निकीतिन

बोला, "उस दिन मैंने ही शतरंज की सारी बाज़ियां जीती थीं फिर भी वह चुप रह गया था। इसका अर्थ है कि उसका दिल साफ़ नहीं है!"

"लेकिन तुम्हारा यह सबूत कोई सीधा सबूत नहीं ..." तरफ़दार ने सतर्कता से जवाब दिया, "सिर्फ़ अन्दाज़ों और अफ़वाहों की बिना पर किसी को गुनहगार ठहराना ठीक नहीं।"

"तो सबूत मैं ढूंढ लूंगा। जानते हो वह मुझे भी तख्त का दुश्मन ही ठहरायेगा।"

फ़रहत-ख़ान मुस्करा दिया।

"उसका विश्वास किया जा सकता है ... अभी कुछ ही पहले उसने महमूद गवान के सामने तुम्हारी पैरवी करते हुए कहा था कि जिन हिन्दुओं ने साज़िश में भाग लिया था उनसे तुम्हारी बहुत कम जान-पहचान है।"

"मुझे ऐसी पैरवी नहीं चाहिए!"

"मगर तुम यह गुत्थी सुलझाओगे कैसे? तुमने जो कुछ खज़ानची के बारे में कहा है उससे तो तुम्हारी ही बात उलटी पड़ती है। इससे तो यह साबित होता है कि वह सच्चा है, ईमानदार है और साथ ही साथ नीच है, मन का काला है। और इतनी ख़ासियतें एक ही आदमी में हो कैसे सकती हैं?"

"ऐसा आदमी बिना फ़ायदे पर आंख रखे कुछ नहीं कर सकता। शायद इसलिए उसने मेरी पैरवी की है कि वह रूस जाना चाहता था।"

फ़रहत-ख़ान ने आंखें नीची कीं, बायें हाथ की अंगूठी छुयी और शान्ति से उत्तर दिया—

"यह ग़लत है। वह जानता है कि कोई क़ाफ़िला रूस नहीं जायेगा। तुमने सलतनत के वज़ीरे आज़म, महमूद गवान की मेहरबानियों

की कोई परवाह नहीं की थी। और उसी ने यह फ़ैसला किया है कि तुम अब बीदर के बाहर नहीं जा सकते। और हां, शहर कोतवाल ने अपने पहरेदारों को यह हुक्म दे रखा है कि वे तुम्हें शहर के बाहर न जाने दें। वज़ीरे आज़म का कहना है कि इस्लाम क़बूल करने पर ही भारत की ज़मीन पर तुम सफ़र कर सकोगे।"

और यह देखकर कि अफ़नासी चुप है फ़रहत-ख़ान ने, एक क्षण चुप रहने के बाद, कहा—

"मेरी सलाह है कि तुम जल्दी करो।"

निकीतिन ने सिर लटका लिया।

"सोचूंगा। अच्छा, एक मामले में मेरी मदद करो। मैं जानना चाहता हूं कि कर्ण के पोते की स्त्री कहां है। उसने तो कोई गुनाह नहीं किया था। और उसका बेटा भी ..."

"मैं पता लगाने की कोशिश करूंगा ... महमूद गवान का फ़ैसला तुमने चुपचाप मान लिया? या शायद तुमने खुद ही यह फ़ैसला कर लिया है कि तुम्हारा ईसाई मज़हब वाहियात है?"

"शायद ..." निकीतिन ने सीधा जवाब न दिया, "ख़ान, मैं ठहरा तुम्हारा ग़ुलाम। अब जाने की इजाज़त दो।"

"जाओ!" शान के साथ फ़रहत-ख़ान ने आज्ञा दे दी।

यदि जाते समय निकीतिन ने मुड़कर देखा होता तो उसने यह ज़रूर समझ लिया होता कि तरफ़दार उसे चकित दृष्टि से देख रहा है। इसका कारण भी था। रूसी सौदागर बराबरी का बर्ताव करता है, बड़े लोगों पर इल्ज़ाम लगाने में नहीं डरता और हिन्दुओं की वकालत करता है... और किससे? सलतनत के एक बाइज़्ज़त रईस से!

आखिर फ़रहत-ख़ान ने तय किया कि यह सब बड़ा विचित्र है और धीरे से हंस दिया।

किन्तु अफ़नासी ने न तो उसकी हैरानी पर ही कोई ध्यान दिया और न उसकी मुस्कराहट ही देखी। वह तो पहले ही बाग़ से बाहर हो चुका था।

हबशी कहारों ने उसके सामने पालकी झुकायी और पहरेदार पालकी के इर्द-गिर्द आ गये। जुलूस चल पड़ा।

परन्तु, क़िले के फाटक पर उसे कुछ देर प्रतीक्षा करनी पड़ी। कोई घुड़सवार तेज़ आवाज़ में पहरेदारों को डाट बता रहे थे।

"सुअर के बच्चो!" निकीतिन को अशिष्ट-सी आवाज़ सुनाई पड़ी, "मैं दिल्ली के सुलतान का अमीर हूं! तुम्हें अपनी बदतमीज़ी की क़ीमत चुकानी होगी! मुझे जाने दो!"

निकीतिन पालकी से झांकने लगा। फ़ौजी वर्दी पहने हुए एक घुड़सवार, तलवार की मूठ पर हाथ रखे, पहरेदार पर बरस रहा था।

परन्तु पहरेदार, अपने ऊपर नाराज़ होनेवाले इस आदमी के घोड़े की छाती में भाले की नोक अड़ाये, उदासीन-सा खड़ा था।

"यहां तो एक ही सुलतान है–आफ़ताबे जमां, आला मुहम्मद!" पहरेदार बुदबुदाया, "ठहरो, अभी हमारा सरदार आता है।"

अफ़नासी ने पालकी की धोक लगायी और परदा गिरा लिया। मुझे इन अमीरों या पहरेदारों से क्या लेना-देना! तो इसके माने हैं कि मैं रंगू की कोई मदद नहीं कर सकता। मैं तो खुद ही इस दईमारे शहर में क़ैदी हूं!

हबशी मज़े मज़े चलते रहे। पालकी धीरे धीरे हिलती रही। रात आसमान से उतरती रही।

निकीतिन की निराशा अकारण न थी। बीदर की सलतनत में महमूद गवान के शब्द ही क़ानून थे। रूसी यात्री के सिर पर खतरे की घंटी बज रही थी।

दूसरे दिन अफ़नासी के एक कृत्य से तो आग में घी ही पड़ गया। उसके पास खज़ानची मुहम्मद का भेजा हुआ एक ग़ुलाम आया, परन्तु अफ़नासी ने जाने से इन्कार कर दिया और बिना कोई बहाना किये हुए।

हसन बेहद घबड़ा गया था। परन्तु निकीतिन को संतोष था। उसे क्रोध भी आ रहा था और खुशी भी हो रही थी। वह समझ रहा था—इस इन्कार की मुझे गहरी क़ीमत चुकानी पड़ेगी। परन्तु शांति के क्षणों में भी उसे इसके लिए कोई भी पछतावा न रह गया था। आखिर उसने वही तो किया था जिसकी गवाही उसके दिल ने दी थी। इसके माने हैं कि उसने ठीक किया था। बेशक, खज़ानची समझ लेगा कि वह आया क्यों नहीं, परन्तु यदि वह बदला लेना चाहेगा तो अफ़नासी भी अपनी बचत ढूंढ ही निकालेगा, अगर ज़रूरत पड़ी तो तलवार भी उठायेगा।

उसकी दशा कसे हुए तांत जैसी हो रही थी। वह सतर्क था और किसी भी अप्रिय घटना का मुक़ाबला करने को तैयार।

दिन पर दिन बीतते गये परन्तु कोई घटना न घटी। लगता है सभी लोग उसे भूल चुके हैं। वह इसका कारण न समझ सका। अपनी ऊपरी सुरक्षा में उसे कोई विश्वास न रह गया था और इसी लिए जब वह दिन में भी शहर घूमने जाता तो तलवार बांधकर—पता नहीं कब, कौन, किस कोने से उसपर हमला कर बैठे। इस समय खज़ानची सब कुछ करा सकता है। अभी तक उसे किसी ने नहीं छेड़ा इसका एक ही कारण उसकी समझ में आ रहा था। प्रति दिन सैनिकों की छोटी छोटी और नयी टुकड़ियां बीदर से बाहर भेजी जा रही थीं, और यह बात किसी से भी छिपी न थी कि वज़ीरे आज़म नये हमले की तैयारियां कर रहा है। इस बार

चढ़ाई विजयनगर पर होगी। विजयनगर सबसे बड़े हिन्दू महाराजा की राजधानी थी। इस समय वज़ीरे आज़म सुलतान के अधीनस्थ राजाओं के पास हरकारे भेज भेजकर उनसे फ़ौज, हाथियों, घोड़ों और खाने की जिन्सों की मांग कर रहा था।

बेशक, इस होहल्ले में रूसी सौदागर की किसे सुध रहती? परन्तु मुहम्मद क्या सोच रहा है?

वह उसे कभी न बख़्शेगा—यह बात साफ़ थी। आखिर वह कुछ करता क्यों नहीं?

अफ़नासी सोच-विचार में अपना ही सिर खपा रहा था। खज़ानची का बर्ताव ज़रा भी उसकी समझ में न आ रहा था।

परन्तु अफ़नासी बहुत-सी बातों से अनभिज्ञ था। यह भी न जानता था कि वह दिल्ली का अमीर कौन था जिसे उसने फ़रहत-खान के पास से लौटते समय क़िले के फाटक पर देखा था। यदि वह इसे जानता होता तो सारी बातें साफ़ हो गयी होतीं, तब उसे यह सुनकर आश्चर्य न हुआ होता कि कोई तीन हफ़्ते बाद खज़ानची की मौत सुलतान के शिकार के समय हुई थी और उसके शरीर को शिकारी तेंदुए ने चीरकर रख दिया था।

अफ़नासी के लिए अब इस खतरनाक दुश्मन से बचाने के लिए भगवान को धन्यवाद देना ही बाक़ी था।

असल में बात दूसरी ही थी जो न किसी की आंखों ने देखी थी और न किसी के कानों ने सुनी थी।

बेशक निकीतिन ने यह समझने में ग़लती नहीं की थी कि खजानची उससे बदला लेगा। जब खज़ानची को मालूम हुआ कि अफ़नासी ने उसके पास आन से इनकार कर दिया, तो पहले तो उसके कान खड़े हुए और वह घबड़ा गया। उसने अनुमान लगाया

कि रूसी जो कुछ भी जानता है सब को सुना सुनाकर कहेगा। लगता है उसने फ़रहत-ख़ान से सब कुछ कह दिया है। अब दूसरों से भी कहेगा। और अगर उसके कहने की जांच-पड़ताल की जाये, तब तो ख़ज़ानची कहीं का भी न रहेगा। उसके पापपूर्ण अतीत को महमूद गवान कभी माफ़ न करेगा। इसलिए नहीं कि उसका अतीत अन्धकारपूर्ण था—वैसे कम ज़्यादा किसका नहीं होता—पर इसलिए कि उसके बारे में सभी जान जायेंगे।

अपने भविष्य के बारे में सोचते हुए खजानची को कंपकंपी भर गयी। वज़ीरे आज़म को अपनी सच्चाई और ईमानदारी पर गर्व जो था।

परन्तु, इस एक चोट के बाद उसपर एक चोट और पड़ी और वह बौखला उठा।

सुलतान के नज़दीक पहुंचने के लिए उसने क्या क्या नहीं किया था। खान उमर की साजिश का भंडाफोड़ होने से तो उसकी शोहरत में चार चांद लग गये थे। अब ख़ज़ानची महज सौदागर न था, यद्यपि था वह मशहूर। अब वह दरबारी था और दौलत और इज़्ज़त के दरवाज़े उसके लिए खुल गये थे।

ख़ज़ानची पहली बार सुलतान के दरबार में पहुंचा, डरा डरा-सा, सुलतान के शिकारियों की पोशाक में—सोने के कामवाली शानदार हरी हरी वर्दी में।

यद्यपि सुलतान की प्रातःकालीन हाथ-मुंह धोने की रस्म में उसका स्थान उतना महत्त्वपूर्ण नहीं था—खानों, अमीरों और सेनापतियों के पीछे और सईसों और शिकारी बाज़ों की टुकड़ी के बीच—फिर भी उसे सन्तोष था, इसलिए कि उसे सबसे अन्तिम पंक्ति में नहीं खड़ा होना पड़ा था।

खज़ानची बाज़ों की टुकड़ियों का सरदार था। यह साधारण काम न था। एक बाइज़्ज़त काम था। ऐसे व्यक्ति से सुलतान बराबर यह राय ले सकता था कि वह शिकार के लिए किधर जाये और कौन कौन चिड़ियां अपने साथ रखे। ऐसा आदमी तो हमेशा सुलतान की निगाहों के सामने रहता है। वह बहुत कुछ कर सकता है बहुत कुछ! बस वह चापलूसी करता रहे, जी-हुज़ूरी करता रहे और सुलतान से अपनी मांग तब पेश करे जब शिकार कामयाब रहा हो।

सुलतान खज़ानची से पांच ही क़दम पर तो जा रहा था पर उसने खज़ानची की ओर देखा तक नहीं। फिर भी खज़ानची कुछ आगे झुक गया। उस पहले ही दिन उसे अपने भीतर विजय के गर्व का अनुभव हो रहा था।

शीघ्र ही वह अपनी नयी ज़िन्दगी का आदी हो गया और उसी की धारा में वह चला। उसके पुराने भय जैसे मिट गये। दरबार में उसकी दिल्ली के अपने किसी जान-पहचानवाले से भेंट नहीं हुई थी। उसे लग रहा था जैसे वह ठोस ज़मीन पर खड़ा है, निडर, अचल। हिन्दुस्तान में आदमी को ढेरों कामयाबियां मिल सकती हैं! हां, ढेरों! वह बगदाद के कुम्हार का बेटा है और अब आला सुलतान मुहम्मद का एक दरबारी! उसका भविष्य अभी और भी उज्ज्वल दिखाई पड़ रहा है। आखिर बीदर का सुलतान है ही कौन? अट्ठारह साल का छोकरा ही तो, जो अव्वल दरजे का ऐयाश है। महमूद गवान की मदद से मुल्क-भर की सुन्दरियां उसे रखेलियों के रूप में भेंट की जाती हैं। सुलतान को तो मन बहलाना ही चाहिए! आफ़तावे-ज़मां को फ़िक्रों में मुब्तिला रहने की कोई ज़रूरत नहीं! महमूद गवान यही कहा करता है। सुलतान के

दरबार में शराब की नदियां बहती हैं, अफ़ीम के धुएं के बादल उड़ते हैं, सुन्दरियों की ता-थेई से ज़मीन कांपती है और खाने के समय दो सौ गवैये और तीन सौ बजवैये अपनी कला से दुनिया को चकित करते हैं। प्रातःकाल सुलतान का चेहरा पीला रहता है, सूजा रहता है। उसकी निगाहें शून्य जैसी दिखाई पड़ती हैं, मुंह के कोने मुरझाये रहते हैं ... सुलतान को तो मन बहलाना ही चाहिए! महमूद गवान यही कहता है, और हुकूमत का बोझ रात दिन अपने कंधों पर लिये लिये फिरता है।

हां, सुलतान को तो मन बहलाना ही चाहिए! खज़ानची यह सब समझता है। अभी सुलतान की कच्ची उम्र है, और उसमें राजकाज में दखल देने की क़ाबिलियत नहीं है और वज़ीरे आज़म ने उसके ऐश के जो साधन जुटा रखे हैं उनसे मुंह मोड़ना उसके लिए मुम्किन नहीं।

तो... कभी तो वह समय आयेगा ही जब वह इस संकल्पहीन, चिड़चिड़े और चंचल सुलतान से अपना मतलब गांठेगा? खज़ानची की विचारधारा यहीं टूट गयी। महमूद गवान ने तो उसपर एहसान किया था। अभी तो उसे पूरी फ़रमांबरदारी के साथ सुलतान की चाकरी करनी चाहिए। अभी...

परन्तु खज़ानची मुहम्मद को तक़दीर की एक ऐसी ठोकर लगी कि उसके सारे सपने और सारी योजनाएं मिट्टी में मिल गयीं।

दिल्ली के अमीर को खज़ानची से ऐसा बदला लेना था, जिससे खज़ानची बेहद डरता था। यह अमीर दिल्ली से भाग आया था। वह अपने उस शासक के खिलाफ़ साज़िशों में उलझ गया था, जो उस ज़माने से प्रायः शक्तिहीन हो रहा था। निस्सन्देह दिल्ली के कुछ जागीरदार भी अमीर के खिलाफ़ हो गये थे। यही कारण

था कि उसे आकर बीदर में शरण लेनी पड़ी थी। वह यहां अपनी तीन हज़ार की सेना लेकर महमूद गवान की सेवा करने आया था। वज़ीर ने बड़ी खुशी से उसका स्वागत किया था।

दिल्ली से भागकर आये हुए इस अमीर को देखते ही खज़ानची की जैसे सुध बुध खो गयी। इस अमीर के भाई ने खज़ानची की सूदखोरों वाली कमीनी हरकतों से बरबाद होकर आत्महत्या कर ली थी।

मुहम्मद की दशा बहुत कुछ उस खरगोश जैसी हो रही थी जो दो क़दम आगे, अपने ऊपर घात लगाये हुए विषधर के सामने घास में जड़वत् खड़ा रह गया हो। और जिस प्रकार खरगोश अपने ऊपर सर्प के टूट पड़ने का इन्तज़ार करता है, उसी प्रकार मुहम्मद भी अपने दुश्मन की पहली चाल का इन्तज़ार करने लगा।

इसी लिए इन दिनों उसे अफ़नासी निकीतिन की कोई सुध न आयी थी।

और उसके दुश्मन ने भी कोई प्रतीक्षा न की। वह खज़ानची को क्षमा नहीं करना चाहता था। दिल्ली के अमीर ने सुलतान की शिकारी बाज़ों की टुकड़ी के इस सरदार के रूप में अपने उस दुश्मन को पहचान लिया था जिसने उसके खानदान को लगभग चौपट कर दिया था। सोने की कुछ मुद्राओं ने कतिपय बीदरवासियों की ज़बानें खोल दी थीं और अमीर को मुहम्मद की सारी कारगुज़ारियों का पता चल गया था।

अमीर हैबत उस खानदान से था जिसका एक पुरखा हैबत-खान दो शताब्दियों पहले अवध में सूबेदार था और दिल्ली में कुप्रसिद्ध था। अमीर हैबत-खान का नाम अपने इसी प्रपितामह के नाम पर पड़ा था।

अमीर खानदानी अपने इस बुज़ुर्ग के दुखद अन्त को याद रखने के बजाय उसकी शक्ति और साहस की कहानियां सुन सुनकर ही फूले न समाते थे। बेशक इसमें सत्य का अंश अवश्य था, पर पूरा सत्य यह था कि उसने नशे की झोंक में किसी की हत्या कर डाली थी और सुलतान बलबन के हुक्म से उसे, कोड़े लगाये जाने के बाद, मृत व्यक्ति की विधवा को सौंप दिया गया था जिसने इस पियक्कड़ स्वेच्छाचारी का गला अपने हाथों से काटकर उसे मौत के घाट उतार दिया था।

परन्तु सुलतान बलबन का ज़माना कभी का लद चुका था। उसने जिन राव-राजाओं की ताक़तें छीन छीनकर उन्हें अशक्त बना दिया था, अब वे सुधर रहे थे। उपर्युक्त खानदान के इस चिराग़ – अमीर हैबत – में पुरानी आदतों की जड़ें गहराई तक चली गयी थीं। वह किसी भी बात में अपने पुराने बुज़ुर्ग से कम न था – उसमें उन्हीं जैसी स्वेच्छाचारिता, उन्हीं जैसी निर्ममता, उन्हीं जैसी हृदयहीनता और उन्हीं जैसी ऐयाशी आज भी मौजूद थी।

बीदर में अपने दुश्मन को पहचानकर, पहले तो, अमीर हैबत ने उसे सरे बाज़ार ठोकने और उसकी बेइज़्ज़ती करने का निश्चय किया। परन्तु यह था बीदर और अमीर यह न जान सका कि यदि उसने ऐसा किया तो दरबारी इसके बारे में क्या रुख़ अपनायेंगे। महमूद गवान कभी किसी की मनमानी न बरदाश्त कर पाता। और फिर, किसी की सरे बाज़ार बेइज़्ज़ती करने को उचित ठहराना भी आसान न था। इस औचित्य को प्रमाणित करने के लिए सबसे पहले अमीर के लिए यह स्वीकार करना ज़रूरी होता कि वह और उसका मृत भाई ज़रूरत पड़ने पर किसी के सामने हाथ फैलाने और क़र्ज़ लेने में संकोच न करते थे। धन-कुबरों को मिट्टी में मिलानेवाली

और बातों को छोड़ दें तो भी अकेले एक यही बात अमीर के नाम पर कालिख पोत देने को काफ़ी थी। नहीं, अमीर हैबत उन लोगों में से न था कि अपना बदला लेने से बाज़ आता।

नवम्बर के मध्य में सुलतान ने घोषित किया कि वह जंगली सुअरों का शिकार करना चाहता है। और एक दिन, जुमेरात को, प्रातःकाल क़िले से एक शानदार जुलूस बाहर निकला—घुड़सवार, हाथियों की टुकड़ियां, हरम, तम्बू, शराब और तरह तरह के खाने लादे हुए ऊंट।

ख़ज़ानची मुहम्मद एक भूरे घोड़े पर सवार, अपने शिकारी बाज़ों की टुकड़ी के साथ सुलतान के हरम के ठीक पीछे चल रहा था। उसका दिल धड़क रहा था। आज भी अमीर ने उसे बड़ी तीखी दृष्टि से देखा था और अपने साथियों से कुछ कहा था।

चारों ओर भीड़ शोर-गुल मचा रही थी और ख़ज़ानची, मन ही मन कांपता हुआ भी, ऊपर से मुस्करा रहा था।

शीतल प्रात, साफ़ आकाश, चमचमाती हुई रंग-बिरंगी वर्दियां, सुलतान की रखेलियों के हंसी-क़हक़हे, तोतों की बोलियां, नगाड़ों की गड़गड़ाहट, बिगुल की आवाज़—इनमें से कोई भी चीज़ ख़ज़ानची को न सुहा रही थी।

वह जैसे नींद में आगे बढ़ रहा था और चारों ओर जैसे उसपर कोई संकट झपटा पड़ रहा था।

बीदर से कोई नौ मील दूर पड़ाव डाला गया। यहीं पहाड़ियों में गुम होती हुई एक छोटी-सी नदी बह रही थी। नदी के इर्द-गिर्द बांस और बेंत के वन थे। पानी के ऊपर वृक्षों की जड़ें लटकी हुई थीं। नदी के ऊपर उड़ती हुई भयभीत बत्तखें और हंस बादलों की तरह लग रहे थे। और यहीं इसी मैदान में, जंगली सुअर पहली बार दिखाई पड़े थे।

खज़ानची मुहम्मद ने भी सबों के साथ घुड़दौड़ में भाग लिया। उसने देखा कि शिकार के लिए सिखाये गये चीते और बाघ जंगली सुअरों पर छोड़े गये। एक क्षण के लिए खज़ानची अपनी चिन्ताएं भूल गया। पर इसी समय उसने देखा कि कुछ घुड़सवार उसे शिकारी बाज़ों की टुकड़ी से एक ओर ले गये। उसके आगे आगे घोड़े पर अमीर हैबत चल रहा था और अमीर के पास ही में उसके कुछ खास दोस्त-अहबाब।

उनके पास ही काले काले लचकदार तेंदुए लम्बी लम्बी ज़ंजीरों में बंधे हुए थे और पागल की तरह कूद रहे थे।

सारी घटना कैसे घटी यह किसी ने भी न देखा। जब खज़ानची मुहम्मद की चीख सुनकर उसके पास चलनेवाले लोगों ने घूमकर देखा, तब तक सब कुछ खत्म हो चुका था। खज़ानची ज़मीन पर पड़ा था, उसकी रीढ़ की हड्डी चीर दी गयी थी और अमीर हैबत और उसके सिपाही लहूलुहान मृत शरीर के पास से क्रुद्ध तेंदुए को एक ओर हटा रहे थे। किसी को यह तक संदेह न हुआ कि उसे जाल रच कर मारा गया था। फिर खज़ानची कोई इतना बड़ा आदमी तो था नहीं कि उसकी मौत से सुलतान के शिकार पर कोई प्रभाव पड़ता। लोगों ने इसके बारे में सुलतान तक को ख़बर न की। उसके रंग में भंग नहीं पड़ना चाहिए! खज़ानची की लाश तुरन्त वहां से हटाकर, बीदर लाकर, दफ़ना दी गयी। उसके उत्तराधिकारी का सवाल तय करना कोतवाल का कर्तव्य था।

खज़ानची की मौत की कहानी सुनकर अफ़नासी ने सलीब का निशान बनाया।

"सच्चाई भगवान देखता है!"

और यद्यपि यह बात ईसाई धर्म के विरुद्ध थी, फिर भी यह

सच था कि निकीतिन के हृदय में खज़ानची के प्रति रंचमात्र भी सहानुभूति न रह गयी थी। उसका भाग्य अच्छा था कि वह एक खतरनाक दुश्मन के पंजे से छूट गया। और यह अच्छा ही हुआ।

जिस दिन अफ़नासी को खज़ानची की खबर मिली थी उस दिन वह विशेष रूप से उदास था। उसने सुलतान के नगर से बाहर जाने का फ़ायदा उठाया और शहर से निकल जाने का प्रयास किया। परन्तु उसे जाने की अनुमति न मिली। गुप्त रूप से उसकी निगरानी हो रही थी। आखिर, भारी दिल से, वह बीदर के अपने घर में फिर लौट आया। फ़रहत-खान ने उसे उसकी मांगी हुई सूचना भी न दी थी, और खुद निकीतिन रंगू की सहायता करने में असमर्थ था।

फिर हो क्या? और एक बार फिर उसकी निगाहें किसी आशा में हसन पर टिकीं और एक बार फिर वह उसका काम करने को राज़ी हो गया।

वह रंगू के पास गया और उससे कह आया कि अभी कुछ और इन्तज़ार करना चाहिए। अभी इन्तज़ार करने की ज़रूरत है।

आठवां अध्याय

चार महीने और बीत गये। हल्की ठंढक के दिन भी गुज़र गये। चिलचिलाती हुई गर्मी पड़ने लगी थी। पक्षी अन्यत्र उड़ जाने की तैयारी कर रहे थे। सारसों का झुंड किलकारियां भरता हुआ भटक रहा था। बटेर आंखों से ओझल हो चुके थे। खेतों में उनकी तेज आवाजें न सुनाई पड़ रही थीं। हंस भी, चौंधियाते हुए प्रकाश

34—1576

में, काफ़ी उंचाई पर उड़ रहे थे। बीदर के तालाबों के ऊपर बहनेवाली सान्ध्य वायु में बत्तख़ों के परों की फड़फड़ाहट गूंज रही थी। सांप केंचुल बदल रहे थे।

निकीतिन अब भी शहर ही में रह रहा था। वह कई बार फ़रहत-ख़ान के पास भी गया था। झांकी के बारे में उसे इतना ही पता चल सका था कि उसे कोतवाल के हरम में दे दिया गया है। उसे वहां से वापस लाना असम्भव था। ख़बरें तो यह भी सुनने में आ रही थीं कि कोतवाल उसपर लट्टू है। अफ़नासी ने हसन द्वारा यह दुखद समाचार रंगू को कहला भेजा और हसन ने आकर बताया कि यह ख़बर सुनते ही रंगू के दिल पर कोई भयंकर चोट लगी और वह उससे एक शब्द भी कहे-सुने बिना कहीं निकल गया।

स्वयं अफ़नासी की स्थिति भी डांवांडोल थी। भाग निकलने के दो प्रयत्नों में असफल रहने के बाद अब वह फ़रहत-ख़ान से भी किसी दया की आशा न कर सकता था। इस प्रकार की प्रार्थना से तरफ़दार सिर्फ़ परेशान ही होता। फिर आजकल फ़रहत-ख़ान काम में बुरी तरह व्यस्त था—सेना तैयार करनी थी, अपनी तरफ़ में जाना था, मालगुज़ारी वसूल करने के लिए सख़्ती करनी थी, चढ़ाई के लिए तैयारियां करनी थीं। ऐसे में उसे रूसी सौदागर में कौनसी दिलचस्पी हो सकती थी?

इन्हीं दिनों नौरोज़ पड़ा। मुसलमानों का नया वर्ष का त्योहार, जो मुहर्रम के बाद पड़ता है। यह दिन शिया अपने इमाम हुसेन की याद में मनाते हैं।

धार्मिक नियमों के अनुसर मुसलमान नौरोज़ के एक महीना पहले से ही हर शाम अपने मकानों की छतों पर आग सुलगाते हैं।

आग की लपटें, एक दूसरे की ओर देख देखकर, जैसे आंख मिचौनी खेलती हैं, हिलती-डुलती हैं। लगता था कि सारा बीदर अग्नि की जिह्वा पर उड़कर इस पापी संसार से दूर भागा चला जा रहा है। धुआं देती हुई आग जैसे इस्लाम की शक्ति का नारा लगा रही थी। मुसलमान उस आग को देखता और उसका कलेजा ठंढा हो जाता—उसे लगता जैसे वह अपने ही मादरे वतन में रह रहा है।

निकीतिन को रूस की याद हो आयी। उसका दिल भर आया।

विजयनगर के विरुद्ध लड़ने के लिए महमूद गवान ने सेनासहित जिन जिन राजाओं को आने का न्यौता दिया था वे सब नौरोज़ के बाद से बीदर में एकत्र होने लगे थे। ये राजे, बीदर की चहारदीवारी के पास अपनी सेनाएं छोड़कर, स्वयं नगर की सड़कों से होते हुए क़िले की ओर जाते थे।

सोने, मोतियों और जवाहरात से लदे हुए राजे-महाराजे हाथियों की झूलों की शोभा बढ़ा रहे थे। महावत चमचमाते हुए अंकुश हिला रहे थे।

दो राजे अपने साथ कुछ कम सेना लाये थे। वज़ीरे आज़म ने क्रुद्ध होकर उन्हें तब तक के लिए क़िले में बन्द कर रखा था जब तक उनकी ओर से बीस बीस हाथी और कुछ हज़ार की पैदल सेना और नहीं आ जाती। राजाओं ने इस हुक्म के आगे सिर झुकाया भी था। निकीतिन ने लड़ाई की ये ज़ोरदार तैयारियां देखीं और सैनिक के रूप में भरती हो जाने का विचार करने लगा। उसे लग रहा था कि रास्ते में भाग निकलना उसके लिए कठिन न होगा।

यही प्रार्थना लेकर वह फ़रहत-खान के पास गया और यह जानकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई कि उसकी मुराद बन आयेगी। अब वह भी अपने सफ़र पर निकल सकेगा। फ़रहत-खान ने बताया कि

अफ़नासी को उसी की फ़ौज के साथ जाने का हुक्म मिल गया है। उसे हाथियों की सेना के साथ साथ चलने को कहा गया।

इस प्रकार, मार्च के अन्त तक कहीं उसे बीदर की नज़रबन्दी से निजात मिली।

भारी भारी हाथी मन्थर गति से चल रहे हैं। उनकी पीठ पर से अनन्त दूरी तक, दक्षिण में जाती हुई सेना फ़ीते जैसी दिखाई पड़ती है। दौड़ते हुए ऊंट, और उनपर भालों और तीर-कमानों से लैस सिपाही, घुड़सवार और सख़्त क़दम बढ़ाती हुई पैदल फ़ौज।

सुलतान की फ़ौज, महमूद गवान की फ़ौज, फ़रहत-ख़ान की फ़ौज... रंगबिरंगे कपड़े, हवा में लहराते हुए सब्ज़ परचम। सभी तरफ़दारों की फ़ौजें एक ही दिशा में, विजयनगर की ओर बढ़ रही हैं। महमूद गवान दक्षिण में हिन्दुओं की ताक़त को तहस-नहस कर डालेगा। न जाने कब से वज़ीरे आज़म इसके सपने देख रहा है, आखिर अब उसके सपने साकार होंगे। हर रोज़ सवेरे और शाम को मुल्ले अपनी अपनी नमाज़ में अल्ला ताला से इस्तदुआ करते हैं कि वह मुहाफिज़े तख़्त और जलाले क़ाफिरान, महमूद गवान को फ़तह अता करे।

खुद वज़ीरे आज़म भी अल्लाह से यही दुआ मांगता है। निकीतिन ने उसे कई बार नज़दीक से देखा है। और वह क्यों न दुआ मांगता! विफलताओं का सामना करना दूसरों की अपेक्षा अकेला वही सबसे अधिक जानता है। सारे राज्य की पूरी शक्ति इस आक्रमण पर लग गयी है। इस चढ़ाई पर बेतहाशा धन फुंक रहा है।

डेढ़ लाख सिपाही – सभी को खाना चाहिए, सभी को हथियार। उन्हें विजयनगर की ओर जो बढ़ना था। फिर हाथी, घोड़े, ऊंट,



गोले, बारूद — इन सब के लिए सोने की ज़रूरत है, इनपर बेहद खर्च बैठता है।

इन सब से मुनाफ़ा भी होना चाहिए, वरना... वरना सलतनत की ताक़त पानी का बुलबुला बनकर रह जाये और यदि ऐसा हुआ तो फिर कभी बहामनियों को वह शक्ति नसीब ही न होगी। इसके माने हैं कि एक बार फिर तख्त पलटने लगेगा, एक बार फिर महमूद गवान की ताक़त जवाब देने लगेगी... वज़ीरे आज़म खुदा की इबादत करता है।

निकीतिन चारों ओर एकटक देख रहा है, उसका अन्तर कांप रहा है। उसे मौक़ा मिलते ही भाग खड़ा होना चाहिए, सतर्क पहरेदारों की आंखों में धूल झोंक कर। सवाल सिर्फ़ यही है कि वह मौक़ा उसे मिलेगा कब। अफ़नासी सैनिकों की पलटनें देखता हुआ अन्दाज़ लगाता है, सोचता-विचारता है। और पलटनें मैदान से होकर

चली जा रही हैं। अभी मौक़ा नहीं है। मैदान में निकल भागने की कोई युक्ति नहीं। वह हसन की ओर देखता है, हसन की ओर जो हर हारे-अटके में उसके साथ है, जो सब कुछ जानता है।

खज़ानची मुहम्मद के भूतपूर्व गुलाम में बड़ा परिवर्तन आ गया है। वह अब एक साल पहले का हसन नहीं रहा!

और यह परिवर्तन आया था बिल्कुल अनजाने। शायद अफ़नासी को ही वैसा लग रहा था—वह हर समय हसन के साथ रहने का आदी जो हो चुका था। ख़ैर, कारण कुछ भी क्यों न हो, अब हसन चुप्पा न रह गया था और न हर किसी के आगे घुटने टेकता या सिजदा ही करता था। अब तो अफ़नासी उसके साथ सीता के बारे में भी बातें कर सकता था और निकल भागने की अपनी योजना पर भी।

"रायचूर के उस पार," हसन कहता है, "वहां, कृष्णा नदी तक जानेवाले रास्ते में पहाड़ शुरू हो जाते हैं। वहां से निकल भागना आसान रहेगा..."

निकोतिन हसन की बात सुनता है। अब तो रायचूर की लाल-सी मिट्टीवाली जमीन भी पीछे छूट चुकी है और सेना संकरे-से दर्रों से होकर आगे बढ़ रही है।

यहां ऊंचे ऊंचे पहाड़ हैं और ऊबड़-खाबड़ रास्ते। एक ऐसे ही रास्ते पर पहाड़ गिरने से सौ आदमी और बीस हाथी साफ़ हो चुके हैं। इनमें से कुछ हाथी, कहीं नीचे पड़े हुए, पैर टूट जाने के कारण बड़ी दर्दनाक आवाज़ में चिग्घाड़ रहे हैं... और सेना है कि बढ़ रही है, बढ़ रही है। सिपाहियों के चेहरों पर शान्ति है। लगता है जैसे उन हाथियों की आवाज़ सैनिकों के कानों में नहीं पड़ती।

हसन की आशाएं सफल न हुईं। पहाड़ों में निकल भागना तो

ग्रौर भी कठिन है। इधर-उधर कतरानेवाला कोई छोटा-मोटा रास्ता तक नहीं, पीछे लौटना सम्भव नहीं—पीछे तो जहां तक निगाह जाती है, पलटन ही पलटन दिखाई पड़ती है। फिर बिना रास्ता जाने पहाड़ों पर चढ़ना ग्रौर ग्रनजानी जगहों में भटकना भी तो मुम्किन नहीं—कौन जाने वहां शेरों या बाघों से सामना हो जाये।

निकीतिन फ़ौज के साथ साथ कृष्णा नदी तक पहुंच जाता है। वह इस नदी का जल पहचानता है—पागलों की तरह बहनेवाला जल, निर्ममता का प्रतीक उसका काला रंग।

कृष्णा के तट पर फ़ौज दो दिन के लिए पड़ाव डालती है, नदी पार करने की तैयारी करती है, ग्राराम करती है।

फ़रहत-खान का एक हरकारा ग्रफ़नासी के पास ग्राता है। तरफ़दार का सुझाव है कि निकीतिन खान के ही साथ चलनेवाले उसके नौकरों की पलटन के साथ ग्राकर मिल जाये।

खबर बुरी थी, फिर भी वाह्यतः वह ऐसी मुद्रा बनाता है जैसे उसे खान की मित्रता की बड़ी चिन्ता है। निकीतिन समझता है—या तो ग्रभी या कभी नहीं।

"खान से कह दो, ग्रा रहा हूं," वह हरकारे को उत्तर देता है। हरकारा ग्रब भी तरुण है, "बस, थोड़े-से क़र्ज़ वसूल करने हैं, कर लूं, ग्रौर ग्राया।"

हरकारे के चेहरे पर ग्रनादर सूचक मुस्कान बिखर गयी। सौदागर से ग्रौर उम्मीद ही क्या की जाये? हरकारा घोड़े को एड़ लगाता है ग्रौर घोड़ा पिछले पैरों पर घूम जाता है।

निकीतिन हसन को पुकारता है।

वे चुपचाप ग्रपनी तैयारियां करने लगते हैं। पास ही चार सिपाहियों ने, जो पांसा उछाल रहे हैं, हरकारे से हुई उसकी बातचीत

सुन ली थी। अब-तब कुछ मुसलमान उनके पास से होकर आ-जा रहे हैं। जब तक हसन रेशमी कपड़े में कुछ पुस्तकें बांधता है और कुछ खाना रखता है तब तक अफ़नासी खिलाड़ियों के बीच आ जाता है।

लालची भूरे हाथ पांसा फेंक रहे हैं और चार जोड़ी आंखें उसे उछलते-गिरते देख रही हैं।

अफ़नासी ज़मीन पर एक चमचमाता हुआ दीनार गिरा देता है जिसकी झन्नाहट सुनकर सिपाहियों की चखचख बन्द हो जाती है। असली बात खिलाड़ियों की समझ में तुरन्त नहीं आती। पर, धीरे धीरे उनके खीझे हुए चेहरों पर मुस्कान बिखर जाती है और वे मुंह बा देते हैं। सचमुच का दीनार! अभी तक तो वे लोग उधार खेल रहे थे, भावी लाभ की आशा में। बेशक खेल में गरमी आ चुकी थी, लेकिन कौन जाने हारनेवाला लड़ाई में मार ही डाला जाये तो! सौदागर धोखा नहीं देगा। वह तो फ़ौरन पैसा दे रहा है। वह दीनार पर दीनार दांव पर लगा रहा है। उसने कनखियों से देखा—हसन जाकर तम्बुओं के पीछे ग़ायब हो चुका है। शीघ्र ही वह पहरेदारों की क़तार भी पार कर लेगा। वहां बांस के जंगल के पास वह इन्तज़ार करेगा... अफ़नासी के हाथ कांपते हैं। उसका दुर्भाग्य कि वह बराबर जीतता ही जा रहा है। ख़त्म भी हों ये दीनार। यह जीत तो सारा गुड़ गोबर किये दे रही है। पर जीतते हुए आदमी उठकर जा भी तो नहीं सकता।

निकीतिन पांसा फेंकता है... दो और तीन ... एक और चार... एक और दो... आखिर वह दीनार हार ही गया।

अफ़नासी सिपाहियों को पैसा चुकाता है, और हाथ फैलाता हुआ उठ खड़ा होता है। वह अब अधिक नहीं खेल सकता। ऐसे तो वह मिनटों में कंगाल हो जायेगा।

सिपाही बड़े खुश हैं और हंसते हुए, उसे धीरज बंधाते हैं। निकीतिन अपने चारों ओर बेचैनी से देखता है। उसका गुलाम कहीं ग़ायब हो गया। उसे ढूंढना चाहिए। आप लोग मेरा सामान देखते रहेंगे न? मैं जल्द ही लौट आऊंगा... फ़ौजी चिल्लाते हुए हामी भरते हैं और सिर हिलाने लगते हैं। खोजा, तुम निश्चिन्त रहो!

"ये लोग हाथ मारने से कभी बाज़ न आयेंगे!" निकीतिन समझता है। लेकिन अब उसे इस बात की कोई चिन्ता नहीं।

वह इधर-उधर सुलगती हुई आग से होता हुआ शिविर के उस पार तक चला जाता है। सिपाही अपने अपने कामों में लगे हैं। निकीतिन ऐसी मुद्रा बनाता है मानो कुछ ढूंढ रहा हो। यह रहा नौकरों का तम्बू – उसके सामने एक लम्बे-से बांस पर घोड़े की पूंछ बंधी है... कुछ दाढ़ी-वाले ठहाके मार मारकर हंस रहे हैं... घुड़सवार अपनी तलवार पैनी कर रहा है... हर क़दम पर उसे ऐसा लगता है जैसे परिचित चेहरे उसे घूर रहे हैं। उसका दिल बैठा जा रहा है।

"ठहरो!"

यह पहरेदारों की क़तार है। सिर पर ज़िरहटोप डाटे और हाथों में भाले और ढाल लिये एक पहरेदार उसे नज़दीक आने का इशारा करता है। वह धीरे धीरे उसके पास जाता है। उसे कुछ बांस काटने हैं। यह रही कुल्हारी। पहरेदार अनमनेपन से सिर हिलाता है और मुड़ जाता है। निकीतिन का कंठ सूख जाता है। वह भावहीन पहरेदार की पीली ढाल पर बने चांदी के कामवाले छल्ले देखने लगता है। फिर, धीरे धीरे वह बांसों की ओर बढ़ता है। बस, अब बांस कोई पचास क़दम ही रह गये हैं। अफ़नासी झुककर अपने बूट ठीक कर लेता है। बस जल्दी न करनी चाहिए।

उसके और शिविर के बीच का फ़ासला बढ़ता ही जा रहा था।

उसे ऐसा लगता है कि उसे कोई तीर का निशाना बना दे रहा है। आखिर वही हुआ जिसका उसे भय था। उसके पीछे लोग, पूरे अधिकार के साथ और धमकियां देते हुए, चीख-चिल्ला रहे थे।

परन्तु अफ़नासी मुड़कर नहीं देखता। दो ही छलांगों में वह जंगल तक पहुंच जाता है। उसके मज़बूत हाथ बांस हटा रहे हैं और कंधे उन्हें एक ओर झकझोर रहे हैं। उसका शरीर पसीने पसीने हो रहा है, उसकी पगड़ी गिर पड़ी है, वह घने घने बांसों से होकर बढ़ता है, गिरता है, उठता है, दौड़ता है ... "हसन! हसन!" अफ़नासी जंगल में चीखता है। पर हसन पहले से ही उसके पास खड़ा है। उसके मुरझाये हुए चेहरे पर ख़तरे की आशंका से मुरदनी-सी छा गयी है। दोनों टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर दौड़ रहे हैं, तब तक दौड़ते हैं जब तक अशक्त होकर ज़मीन पर नहीं गिर पड़ते। शुरू शुरू में न तो वे कुछ देखते ही हैं, न सुनते ही। उनकी आंखों के सामने अंधेरा छा जाता है, लेकिन फिर जैसे उन्हें सब कुछ दिखाई पड़ने लगता है। उनके शरीर में खून का दौरा इतना तेज़ हो जाता है कि उसकी सर सर कानों तक में सुनाई पड़ती है। आख़िर यह दौड़ा शान्त होता है। कुछ मिनटों तक दोनों चुपचाप कुछ सुनते हैं। परन्तु उन्हें सुनाई पड़ती है, अपरिचित पक्षियों की चें-चें। बेशक, उनका कोई पीछा नहीं कर रहा है। निकीतिन आस्तीन से माथा पोंछता है, सूखे और गर्म ओठ चाटता है और हसन की ओर देखता हुआ कह उठता है–

"खून पोंछ डालो, हसन... तुम्हारे गाल में चोट आ गयी है।"

फिर भी उसे विश्वास नहीं होता कि उसका भाग निकलने का प्रयास सचमुच सफल हो गया है। वह उठता है और हसन को संकेत करता है–चल देना चाहिए, तुरन्त चल देना चाहिए।

कृष्णा नदी के तट पर घने घने दुर्भेद्य वन हैं। लताएं एक दूसरी में

इस तरह उलझी हुई रहती हैं कि आदमी के लिए वन में प्रवेश करना खतरनाक है। परन्तु, दोनों जैसे उनकी छाती चीरते हुए बढ़े जा रहे हैं। इन शीतोष्ण वनों में भी जैसे निकीतिन को सन्तोष है। अब कोई डर नहीं।

संध्या जल्दी जल्दी उतर रही है। भगोड़े पेड़ों पर चढ़ जाते हैं। ज़मीन पर रात बिताना खतरे से खाली नहीं। सोना भी तब तक असम्भव है जब तक आदमी अपने को शाखा से न बांध ले। प्यास जैसे उनका दम तोड़े दे रही है। उन्हें भूख की याद हो आती है। परन्तु निकीतिन खुश है। वह स्वतंत्र है, अपना मालिक है। और अब कई महीनों बाद वह खुलकर हंस रहा है। पास ऊंघते हुए छोटे छोटे बन्दर, उसके क़हक़हों से डरकर, जैसे उत्तर में चिंचियाते जा रहे हैं।

"जाने भी दो महमूद गवान को बिना हमारे!" निकीतिन चिल्लाता है और उसे अपनी प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है–"हमारे... आरे... आरे..."

जंगलों की शीतोष्ण रात। कितनी उदास, कितनी भयानक। दिन की रोशनी में भी यहां अंधेरा रहता है, नमी रहती है। डालों पर कुछ खड़ खड़ हुई, बन्दर चिंचियाये और हवा में कोई तेज़ गरज-सी गूंज गयी ... नीचे अंधेरे में दो हरी हरी आंखें चमकी और फिर सब कुछ शान्त हो गया, अंधेरे से ढक गया ...

निकीतिन और हसन, एक दूसरे से सटे हुए से, बैठे हैं। जैसे ही उनके कानों में कोई सरसराहट पहुंची कि उनके हाथ अपनी अपनी तलवारों की मूठ पर पहुंच जाते हैं। भोर होते होते अफ़नासी ऊंघने लगता है। उसकी आंखें खुली थीं और वह अर्द्धचेतन जैसी अवस्था में था।

दिन निकला और वे, सूर्य के प्रकाश में रास्ता ढूंढते हुए, अपनी राह चल दिये। दूसरी रात उनके लिए मुसीबत की घड़ी सिद्ध हुई।

निकीतिन की शक्ति जवाब दे रही थी। उसने आंखें बन्द की ही थीं कि हसन की भयानक चीख़ सुनकर सकपका गया, उसका कलेजा मुंह को आ गया। उसने देखा कि एक बड़ा-सा सर्प हसन के शरीर के चारों ओर लिपटा हुआ है और उसका दम घुट रहा है। ग़ुलाम का हाथ तलवार तक न पहुंच पा रहा था। बाद में क्या हुआ इसे निकीतिन भली भांति न समझ सका। पहले क्षण उसे यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसकी तलवार सर्प के शरीर में ऐसे घुस गयी मानो मक्खन को काट रही हो। उसने सांप के ठंडी आंखों वाले सिर के चार टुकड़े कर डाले परन्तु उसके कुछ कुंडल अब भी हसन के बदन में लिपटे हुए थे। वह इन कुंडलों को देर तक काटता रहा। उसकी समझ में यह तक न आ सका कि वह उन्हें खींच ले सकता था।

हसन कराह रहा था। उसकी पसलियां बुरी तरह दुख रही थीं। उसकी छाती और पीठ में नीली नीली बरतें पड़ गयी थीं। दूसरे दिन चल-फिर सकना उसके लिए असम्भव था। खाने की चीज़ें समाप्त हो चुकी थीं और प्यास बुझाने के लिए ओस काफ़ी न थी। अफ़नासी ने हसन को कंधों पर लादा और जिस ओर से आये थे उसी ओर चल पड़ा – मैदान की ओर।

उन्हें रास्ते में दो दिन लग गये। भूख, प्यास, थकान, चिन्ता और दर्द ने उन्हें बेहाल कर रखा था। आख़िर उन्हें कृष्णा के दर्शन हुए। अफ़नासी रुक गया। उसने हसन को ज़मीन पर लिटा दिया।

"बाहर मत निकलना," हसन बोला, "लोग तुम्हें मार डालेंगे। मैं अकेला जाऊंगा, खिसकता हुआ।"

किन्तु उसके लिए तो खिसकना भी असम्भव था।

निकीतिन के ओठों पर एक उदास-सी हंसी बिखर गयी। वह बांसों के उस पार चमचमाती हुई नदी की ओर बढ़ने लगा। आख़िर

निकल भागने की उसकी योजना सफल न हुई। अफ़नासी ने आखिरी बांस भी हटाया और एक क्षण के लिए मस्त शराबी की भांति अपने सामने देखने लगा। फिर धीरे से हंसा। उसकी आंखों से आंसू झरने लगे। कृष्णा के सामने का सारा मैदान खाली था। मुसलमानी सेना कूच कर चुकी थी। अफ़नासी घुटनों के बल बैठा और सलीब का निशान बनाने लगा।

अब दोनों, जैसे घसिटते हुए, उसी रास्ते पर हो लिये, जिससे होकर महमूद गवान की फ़ौज गुज़री थी। लगता था जैसे ज़मीन पर से कोई बवंडर निकल गया हो। सड़क के पास पड़नेवाले हिन्दुओं के गांव तबाह और बरबाद कर डाले गये थे। रास्ते में राख के ढेर पड़ रहे थे – एक के बाद एक। और यद्यपि हसन अपने आप चल सकता था, फिर भी भूख से बेदम होने के कारण उनकी चाल बहुत धीमी थी। बांस, जंगली फल और जड़ों से भूख नहीं मिटती थी। पुस्तकों का थैला उनके लिए अलग मुसीबत बन रहा था। कमर में बंधी हुई पेटी तक व्यर्थ के सोने और हीरों के कारण बहुत भारी लग रही थी। परन्तु निकीतिन इनमें से कोई भी चीज़ अलग नहीं करना चाहता था।

तीसरे दिन एक और गांव उनके रास्ते में पड़ा। यह गांव भी जलाकर राख कर डाला गया था। वहां के नष्ट-भ्रष्ट और वीरान घर बड़े दयनीय लग रहे थे।

उन्होंने मकानों में झांककर देखा – वहां सिर्फ़ टूटे हुए बर्तन और कुछ अंगड़-खंगड़ पड़े थे। एक मकान में तो उन्हें, एक अंधेरे कोने में पड़ी हुई, कोई पुस्तक भी मिली थी। पुस्तक की लिपि से वे परिचित न थे।

निकीतिन ने पुस्तक ले ली, परन्तु हसन ने उसे वहीं छोड़ जाने की सलाह दी।

"कौन जाने यह हिन्दुओं का वेद पुराण हो," वह बोला, "फिर तो इसे साथ रखना ख़तरनाक होगा। ब्राह्मण उन लोगों से बदला लेते हैं जो उनके सिद्धान्तों में पैठने की हिम्मत करते हैं।"

"अगर तुम थक गये हो, तो किताब मैं ख़ुद ले चलूंगा!" रुखाई से अफ़नासी ने जवाब दिया।

हसन चुप रह गया।

पांचवें दिन वे एक साधारण-से गांव में पहुंचे जो तीन ओर से जंगलों से घिरा था। यहां वे लोग कुछ दिनों तक ठहरे। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वे कुछ आराम करके ही अपने रास्ते पर बढ़ेंगे। दोनों बेहद थक चुके थे। दोनों डर रहे थे कि कहीं वे किसी बची-खुची फ़ौजी टुकड़ी के हत्थे न चढ़ जायें।

गांव में उन्हें दो बूढ़े बैल और एक जर्जर-सी गाड़ी मिल गयी। उनकी बांछें खिल गयीं। कम से कम पैरों को तो आराम मिलेगा ही। गांव के निवासियों ने दोनों की बड़ी आवभगत की। निकीतिन की शिष्टता और अपने रीति-रिवाजों के संबंध में उसकी जानकारी देखकर सीधे-सादे ग्रामवासी उसपर लट्टू हो गये। मुसाफ़िरों की सहायता कर वे बड़े प्रसन्न हो रहे थे। लग रहा था जैसे वे लड़ाई की ओर से निश्चिन्त थे। यहां कुछ दिनों तक ठहर चुकने के बाद निकीतिन और हसन आगे बढ़े।

दो हफ़्तों तक बराबर पहाड़ों से होकर चलते रहे, फिर रायचूर की ज़मीन पार कर कुलूरी पहुंचे। कुलूरी ज़िरहसाज़ों और रत्न-तराशों का गढ़ है। उन्हें रास्ते में किसी ने भी न रोका और न उनसे कुछ पूछा ही। कुलूरी में अफ़नासी को फिर शीत ज्वर चढ़ा और उसे यहां कोई दो महीने तक चारपाई तोड़नी पड़ी।

कुछ कुछ स्वस्थ होने पर उसे विजयनगर की चढ़ाइयों की पहली

ख़बरें मिलीं। महमूद गवान की फ़ौजें वहां का मोर्चा संभाले खड़ी थीं। लौटनेवाले सौदागर काफ़िरों को बुरा-भला कहकर मालिक-अ्रत-तुजार को उचित ठहराते थे। उन्होंने बताया था कि विजयनगर सात दीवालों से घिरा है, नगर के सामने के बड़े-से मैदान में पत्थरों के बड़े बड़े खम्भे हैं जो बढ़ते हुए हाथियों और घोड़ों के लिए भयंकर अवरोध हैं। नगर के एक ओर तुंगभद्रा के ढालू किनारे हैं और दूसरी ओर—जंगल।

सौदागर हमलों, चढ़ाइयों और लड़ाइयों की बातें किया करते। उनका कहना था कि महमूद गवान ने निश्चय कर लिया है कि वह विजयनगर पर क़ब्ज़ा करेगा, भले ही इसके लिए उसे कितना ही मूल्य क्यों न चुकाना पड़े।

निकीतिन ने कुलूरी के रत्न-तराशों को, आब रखने के लिए, अपने वे थोड़े-से हीरे दिये जिन्हें वह गोलकोंडा से लाया था।

उसने रत्न-तराशों के काम को बड़े ध्यान से देखा और हीरों पर आब रखनेवाला एक औज़ार खरीद लिया। यह चीज़ उसके काम आयेगी!

"अब तुम कहां जाओगे?" एक बार हसन ने उससे प्रश्न किया।

"कोठूर। मुझे सीता के गांव का पता चलाना है," निकीतिन ने जवाब दिया, "और तुम?"

"मैं आख़िर तक तुम्हारे साथ रहूंगा ... लेकिन अब बारिश शुरु हो गयी है। हमें इन्तज़ार करना होगा।"

"तो क्या हुआ! करेंगे इन्तज़ार!"

और इस प्रकार बरसात ख़त्म होने तक प्रतीक्षा कर चुकने के बाद अफ़नासी फिर अपनी यात्रा पर चल दिया, और इस बार पूर्व की दिशा में। यह भारत में उसकी अन्तिम यात्रा थी।

दोनों बंजर और कम उपजाऊ ज़मीन पर आगे बढ़ते रहे। कहीं कहीं उन्हें कुछ किसान कुम्हड़े, मिर्च, मटर और गाजर की क्यारियों के पास मिट्टी गोड़ते हुए दिखाई पड़ जाते थे।

अफ़नासी सोचने लगा – "यहीं सीता पैदल चली होगी। शायद उस पहाड़ी के पास सुस्ताने के लिए बैठी होगी, शायद उसने उस कुएं का जल पिया होगा ..."

"हमारा रंगू कहां होगा?" कभी कभी निकीतिन को रंगू की याद आ जाती और उसका मन भारी हो जाता। "हसन, उससे भेंट तो होगी न? होगी न, हसन?"

"शायद!" हसन ने उत्तर दिया।

परन्तु उनकी फिर भेंट न हुई।

... झांकी के दुर्भाग्य की सूचना पाकर रंगू अपने साथ दो जवानों को लेकर मुसलमानी पहरेदार-दस्तों से होता हुआ, किसी प्रकार विजयनगर पहुंचा। यहां महाराजा महमूद गवान के आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहा था।

नगर में सिर्फ़ पत्थर के बने मंदिर और महल सुरक्षित बचे थे। प्रथानुसार, दुश्मन की चढ़ाई के पूर्व, नगर के सभी मकानों में आग लगा दी गयी थी, इसलिए कि सारी प्रजा अपने राजा की इच्छा पर चलती रहे।

अब, जहां नगर-निवासियों को जगह मिल जाती वहीं जम जाते – झोंपड़ों में, मामूली तम्बुओं में।

नगर में रंगू और उसके साथियों की तरह के और भी दूसरे हज़ारों जवान और बहादुर हिन्दू थे।

ऐसे हिन्दुओं को भरती करके छोटी छोटी पलटनें बना ली गयी थीं और उन्हें किराये के टट्टू मुसलमानों के मातहत रखा गया था।

हिन्दुओं को हथियारों के नाम पर छोटे छोटे भाले और चाकू दिये गये थे। और किराये के मुसलमानों के पास तलवारें, धनुषबाण, ढाल और कटारें थीं। वे इन नये रंगरूटों को देख देखकर जैसे उनका मज़ाक़ उड़ा रहे थे। और, किराये के मुसलमान सिपाहियों की अपेक्षा, हिन्दू किसानों को खाना भी खराब दिया जाता था।

फिर भी ये हिन्दू युद्ध में भाग ले सकते थे! वे दुश्मनों पर टूट पड़ने का इन्तज़ार कर रहे थे।

रंगू ने नगर की चहारदीवारी के सामने एक समतल मैदान देखा। उसकी पलटन, प्रातःकालीन धुंध को चीरती हुई, वहां पहुंच चुकी थी। उसके कानों में हज़ारों पैदलों की पटापट, हाथियों के क़दमों की धमाधम और घोड़ों की दुलकियों की आवाज़ें पड़ रही थीं।

हिन्दुओं को किराये की मुसलमान पैदल टुकड़ियों के बीच बीच, सबसे आगे, रखा गया था। दूसरी टुकड़ियां उनके पीछे थीं।

रंगू ने अपने सामने दुश्मन पर एक निगाह डाली। उनकी व्यूह रचना हो चुकी थी। यद्यपि आंखों में सूर्य की सीधी किरणें पड़ रही थीं, फिर भी दुश्मन के चलते-फिरते घोड़े और पहाड़ जैसे हाथी तो दिखाई ही पड़ रहे थे।

लड़ाई का बिगुल बजा, नगाड़ों पर चोट पड़ी और सुलतान की फ़ौज आगे बढ़ने लगी।

रंगू की टुकड़ी के सामने से तीरंदाज आ रहे थे। हाथियों का बढ़ता हुआ दस्ता जैसे प्रलय की धमकी दे रहा था।

तीर दूर से घूर रहे थे और प्रतीक्षा करते हुए अरक्षितों को निशाना बना रहे थे। रंगू उनकी सरसराहट सुनकर झुक जाता था।

स्थिति कष्टकर थी और खतरनाक भी। इसके माने थे कि जब तक दुश्मन जान नहीं ले लेते तब तक खड़े खड़े इन्तज़ार करते रहो।

35—1576

रंगू अधिक न सह सका। उसने होशियारी दिखायी। भाले और चाकू का हाथ दिखाने के लिए कूद कर आगे निकल आया। उसके पीछे कुछ और हिन्दू भी बढ़ आये। वे तीरंदाज़ों के साथ उलझ गये। इसी क्षण रंगू को, अपने पास-पड़ोस के मित्रों और शत्रुओं के अतिरिक्त, न तो कुछ दिखाई दे रहा था, न सुनाई दे रहा था।

रंगू यह भी न देख सका कि सुलतान की फ़ौज के हाथियों के पहले ही बड़े आक्रमण से राजा की सेना के किराये के सैनिक कैसे डर गये थे—ये लोग राजा के लिए अपनी जान जोखिम में डालने को तैयार न थे।

रंगू यह भी न देख सका कि किस प्रकार राजा के घुड़सवार, महावत और किराये के पैदल टट्टू मुड़े और नगर के फाटकों में घुस गये।

रंगू लड़ाई में जूझ पड़ा और तब तक भाला चलाता रहा जब तक कि वह किसी की ढाल में न घुस गया। फिर उसने चाकू से काम लेना शुरू किया। आखिर उसने अपना बदला ले लिया। वह वीर सैनिक था। परन्तु यह युद्ध कोई आध घंटे ही में समाप्त हो गया। अब तो अलग अलग टुकड़ियां ही मुक़ाबले पर रह गयी थीं।

एक भाला आकर रंगू को लगा और वह धराशायी हो गया... उसकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया। परन्तु मरते हुए भी वह उस मिट्टी को पकड़े रहा, उस ज़मीन से चिपका रहा, जो उसकी अपनी थी, किसी राव-राजा या सुलतान की नहीं, जिसे वह मरकर भी किसी को देना न चाहता था...

अफ़नासी को यह सब कुछ मालूम न हो सका। हर घंटे वह कुलूरी और बीदर से दूर ही होता जा रहा था। अब कोंकन का प्रदेश शुरू हो गया था।

ग्रौर एक रोज़ उसे मालूम हुआ कि सीता के गांव का रास्ता केवल एक दिन का रह गया है। उसने दो कूबड़ों वाले ऊंट जैसी एक पहाड़ी देखी जिसके सिरे पर ताड़ के वन थे। सीता कहा करती थी कि जब वह बच्ची थी, खजूर लेने के लिए प्रायः उस वन तक दौड़ी चली जाती थी। भोर के झुटपुटे में उसे लक्ष्मी का मन्दिर दिखाई दिया। सीता दो बार पिता के साथ इसी मन्दिर में गयी थी। अफ़नासी को लगा जैसे वह मन्दिर के उन बड़े बड़े पाषाण-स्तम्भों को पहचानता है; जिनपर ग्रद्भुत लिपि में कुछ लेख खुदे थे। इन पत्थरों के बारे में उसकी प्रेयसी ने उसे बहुत कुछ बताया था।

वह हसन का कंधा पकड़कर गाड़ी पर खड़ा हो गया। गाड़ी पर खड़ा होना ग्रासान न था। वह डगमगा रहा था। वह हरे हरे वनों से लगे हुए कुछ झोंपड़ों ग्रौर उनके पास खड़े हुए कुछ लोगों को देख रहा था। उसे लगा जैसे वह सीता को देख रहा है। बैलों का धीरे धीरे रेंगना उसकी बरदाश्त से बाहर था। वह ज़मीन पर कूद पड़ा ग्रौर लम्बे लम्बें डग भरता हुग्रा गांव की ग्रोर चलने लगा। शीघ्र ही उसे स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा कि सबसे निकट के मकान की छत बेंत की है। ग्रौर, ग्रब तो वह मकान के बाड़े में लगी हुई सींकें तक गिन सकता था। बाड़े के पास कुदाल पर झुका हुग्रा, एक बूढ़ा हिन्दू खड़ा था। वह ग्रफ़नासी की दिशा में देख रहा था। निकीतिन ग्रौर भी निकट ग्राया ग्रौर हाथ जोड़कर बूढ़े का ग्रभिवादन करने लगा।

"नमस्ते, जी!"

बूढ़े ने कुदाल हाथ से छोड़ दी। उसके चेहरे पर भय के लक्षण दिखाई पड़ रहे थे। ग्रभिवादन के लिए उठे हुए उसके दोनों हाथ कांप रहे थे।

निकीतिन मुस्करा दिया और ऐसी मुद्रा बनायी जिससे पता चलता था कि वह मित्र है, शत्रु नहीं और उससे डरने की कोई बात नहीं। परन्तु हिन्दू उसे वैसे ही, भयग्रस्त, देखता रहा।

"धनजी के बेटे अण्णू का घर कहां है, जी?" निकीतिन ने पूछा।

हिन्दू ने एक गली की ओर इशारा कर दिया।

"वहां...सफ़ेद पत्थर के पास..." वह बोला।

अफ़नासी ने बूढ़े को सिर नवाया और आगे बढ़ा।

एक लड़की कन्धे पर घड़ा रखे चली जा रही थी। उसने मुस्कराती हुई आंखें ऊपर उठायीं और सहसा चीख पड़ी। कंधे पर रखा हुआ उसका घड़ा गिरकर टुकड़े हो गया और उसके उछले हुए पानी से अफ़नासी के पैर भीग गये।

बेंत के छोटे-से बाड़े के पीछे से किसी का सिर दिखाई पड़ा।

दूर पर बातचीत करते हुए लोगों ने अपनी बातें बन्द कर दीं और परदेसी की ओर मुड़ गये।

कोई ज़ोरों से चिल्ला पड़ा—"अरी ओ, अरी ओ!.." और फिर सब कुछ शान्त हो गया। निकीतिन कुछ न समझ सका। वह उस झोंपड़े के निकट आ गया जिसके पास सफ़ेद पत्थर पड़ा था।

सीता के मकान के चारों ओर एक ओर झुका हुआ बेंत का एक बाड़ा था। बेंत से बंधा हुआ एक दरवाज़ा ज़मीन पर गिरा पड़ा था। झोंपड़े तक जाने के लिए सूखी-सी क्यारियों के बीच से होकर, एक पगडंडी थी। निकीतिन, हिचकिचाते हुए, घर के उसी दरवाज़े पर खड़ा हो गया जो एक फटा-पुराना परदा डालकर बनाया गया था। परन्तु घर में से कोई न निकला। आखिर उसने हिम्मत कर धीरे से आवाज़ दी—

"सीता!"

परदा हिला और लगा जैसे किसी जर्जर भूरे हाथ ने उसे ऊपर उठा दिया। एक बूढ़ा बाहर आ गया। निकीतिन ने तुरन्त ही उसे पहचान लिया। वह सीता का पिता था।

अण्णू क्लान्त-सा लग रहा था। उसकी हल्की सफ़ेद दाढ़ी उसकी छाती पर लोट रही थी। बूढ़े की आंखें छलछला रही थीं।

"प्रणाम पिता जी!" निकीतिन बोला, "भगवान की कृपा बनी रहे आप पर, अण्णू।"

बूढ़ा उसके सामने अचल खड़ा रहा। उसके मुंह से कोई जवाब न निकला। फिर उसने हाथ जोड़े और, कुछ झुककर तथा पीठ सीधी करते हुए, पूछ बैठा –

"तुम कौन हो? मेरा नाम कैसे जानते हो?"

बूढ़े की निगाहें देखकर ही अफ़नासी ने समझ लिया था कि उसने उसे अनुमान से पहचान तो लिया है पर अब उस अनुमान की पुष्टि की प्रतीक्षा कर रहा है।

अफ़नासी ने उसे अधिक इन्तज़ार न कराया।

"मैं बीदर में आपकी बेटी को जानता था," उसने उत्तर दिया, "मेरा नाम है अफ़नासी! सीता ने मेरी कभी चर्चा नहीं की थी क्या?"

"की थी ..." बूढ़े ने धीरे से कहा, "हां ... की थी ..."

वह उत्सुकता भरी निगाहों से निकीतिन की ओर ताकने लगा। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उसकी समझ ही में न आ रहा था कि क्या करे।

आखिर उसने निश्चय कर डाला।

"भीतर चलो!" अण्णू बोला, "घर में थोड़ा आराम करो..."

बाड़े के पीछे से कुछ स्त्री-पुरुष निकीतिन को बड़े कुतूहल से देख रहे थे और जब वह मुड़ा तो वे लोग ग़ायब हो गये।

"धन्यवाद," निकीतिन ने सिर झुकाकर कहा।

बूढ़े ने दरवाज़े पर पड़ा हुआ परदा उठाया।

छत में धुएं के लिए बने हुए सूराख में से सूर्य का छनता हुआ प्रकाश धूल के स्तम्भ जैसा लग रहा था। झोंपड़े के बीचोंबीच एक गड्ढा था, जिसमें ताड़ी सड़ायी जाती थी। दरवाज़े के दाहिनी ओर कुछ घड़े और कुल्हड़ रखे थे। दीवालों से सटी हुई कुछ चटाइयां पड़ी थीं जिनपर मोटी-सी चादरें बिछी थीं।

जिस ढंग से गुड़ी-मुड़ी चादरें बिछी थीं, जिस बेतरतीबी से कुल्हड़ रखे थे उसे देखकर निकीतिन ने तुरन्त ही समझ लिया था कि सीता यहां बहुत अरसे से नहीं रही है ... परन्तु कोई ऐसी चीज़ थी जो उसके इस प्रश्न में रुकावट डाल रही थी कि सीता है कहां।

अण्णू अफ़नासी के सामने उकड़ूं बैठा और धीरे से कहने लगा–

"वह चली गयी ..."

अफ़नासी तत्काल कुछ न समझा बल्कि जैसे इस आशा में दरवाज़े की ओर ताकता रहा कि शीघ्र ही सीता घर में आती हुई दिखाई देगी।

बूढ़े की निगाहों से निकीतिन की नज़रें छिपी न रह सकीं।

"वह देवताओं के पास चली गयी!" उसने समझाया। बूढ़े की निगाहों में याचना थी और लग रहा था मानो वह इस परदेसी के क्रोध से डर रहा है।

सहसा निकीतिन जैसे होश में आ गया। दुख से उसका कलेजा फटा जा रहा था और ठुड्डी फड़कने लगी थी। वह धीरे धीरे हाथ उठाकर गले तक ले गया और कालर खोलने लगा। उसे लग रहा था जैसे लोहे की गोलाकार सलाखें उसकी गरदन मरोड़ रही हैं। वह अण्णू की ओर देखते हुए भी उसे न देख रहा था। उसने कुछ पूछने का प्रयत्न किया परन्तु आवाज़ जैसे उसके गले ही में अटक गयी।

ग्रौर जैसे कहीं दूर से, कहीं झनझनाते हुए शून्य में से, सीता के पिता के कठिनाई से पहचाने जा सकनेवाले शब्द निकीतिन के कानों में पड़ रहे थे–

"वह ब्याह नहीं करना चाहती थी... पटेल को प्यार नहीं करती थी... लेकिन उसके साथ तो उसकी सगाई हो चुकी थी... ग्रौर मुझे यह यक़ीन न था कि कोई उसका हाथ भी पकड़ेगा... पर उसे विश्वास था... ग्रौर जब ब्राह्मण रामप्रसाद ने उसका गौना कराया तो वह कहीं ग़ायब हो गयी... ग्रौर ग्राख़िर पवित्र नाग वृत्त के पास उसकी लाश पड़ी मिली... वह स्वर्ग जा चुकी थी..."

निकीतिन झोंपड़े से बाहर निकल गया। धरती पर दिन का चौंधिया देनेवाला प्रकाश छा रहा था। दूरस्थ पहाड़ियों की तलहटियों ग्रौर ताड़ तथा सदाबहार वृक्षों की परछाइयों पर गहरी नीलिमा उतर रही थी। क्यारियों में लगे मटमैले पौधों पर लाल चिंउंटियां रेंग रही थीं। उसने सब कुछ देखा, पर कुछ भी न समझा। उसके क़दम लड़खड़ा रहे थे ग्रौर वह घबड़ाये हुए हसन की ग्रोर जा रहा था।

"क्या बात है? क्या हुग्रा?" हसन ने पूछा।

निकीतिन रुककर ग्रपने मित्र की ग्रोर देखने लगा। ग्रफ़नासी के चेहरे पर व्यथा के चिह्न साफ़ साफ़ दिखाई पड़ रहे थे। ग्राख़िर लड़खड़ाते हुए वह किसी प्रकार गाड़ी तक पहुंच गया। परन्तु सहसा रुका, घूमा ग्रौर ग्रण्णू से ग्रांखें मिलाता हुग्रा पूछ बैठा–

"कहां?"

उस स्थान पर सारे गांव की लाशें जलायी जाती थीं। वहां की ज़मीन राख से काली हो रही थी। ग्रधजली लकड़ियां ग्रब भी वहां पड़ी थीं।

निकीतिन यहां बड़ी देर तक बैठा रहा और देखता रहा कि कैसे वायु राख को उड़ा रही है। लग रहा था जैसे उसका सारा शरीर अकड़ गया है।

फिर उसने आस्तीन से आंखें पोंछीं और उठ खड़ा हुआ। हसन ने देखा कि किस प्रकार रूसी उस श्मशान की धरती पर झुका, तेज़ी से घूमा और उसकी ओर बढ़ आया।

उसी दिन महमूद गवान घोड़े पर बैठा हुआ, बायें हाथ से उसकी रास पकड़े, सामने अपनी सेनाओं की ओर देख रहा था। हरकारे और पहरेदार चुपचाप खड़े थे।

वज़ीरे आज़म अपनी सेनाओं की स्थिति का निरीक्षण कर रहा था – उस दईमारे नगर को चारों ओर से घेरे हुए असंख्यों तम्बू, खूंटों में बंधे हुए हाथी, घोड़ों के दल, शिविराग्नि, दूर से चींटियों की तरह दिखते हुए हज़ारों आदमी।

पछुवा हवाएं चल रही थीं। पहले बादल तुंगभद्रा के ऊपर से गुज़र रहे थे। शीघ्र ही वर्षा आरम्भ होगी। फिर रसद पहुंचाने की समस्या और जटिल बन जायेगी। पिछवाड़े के हिन्दू फ़स्लों को तबाह बरबाद किये दे रहे हैं। बीदर से यह समाचार आ रहे थे कि सुलतान नाराज़ है, दुश्मन साज़िश कर रहे हैं।

रूसी सौदागर लोगों की आंखों में धूल डालकर निकल भागा है। अब ईसाइयों की दुनिया में भारत की खबरें पहुंचेंगी। फिर तो सम्भवतः ईसाइयों से भी युद्ध की तैयारियां करनी होंगी। मलिक-अत-तुजार के दुश्मन रूसी व्यापारी के भाग जाने से फ़ायदा उठायेंगे। रूसी का तो सिर ही काट लेना था! और अब भी अगर हत्थे चढ़ जाये तो काट लूं। फ़रहत-खान ने सूचना देने के लिए सारे बन्दरगाहों पर हरकारे भेज ही दिये हैं... अपनी ग़लती का प्रायश्चित तो करना

ही चाहिए। शिविराग्नि, शिविराग्नि, शिविराग्नि ... तम्बुओं के बीच बीच से मनुष्य नाम के प्राणी आते-जाते दिखाई दे रहे हैं। गधे इस दीर्घकालीन युद्ध से थक चुके हैं। सोचने और अपने विचार व्यक्त करने का भी साहस कर रहे हैं! महमूद गवान ने रास खींची। घोड़े ने सिर उठाया और आगे बढ़ गया।

"हमले की तैयारियां करो!" महमूद गवान ने आज्ञा दी, "आज रात को!"

उसने घोड़े को चाबुक लगाया और सेना की ओर आ गया। अब उसकी उदासी कुछ कम हो गयी थी। विजयनगर को घुटने टेकने ही चाहिए! अकेली यही एक बात सारी मुसीबतों के लिए नियामत बन सकती है।

अंगरक्षक भी चुपचाप घोड़ों पर मालिक-अत-तुजार के पीछे चलते रहे। सभी भयभीत-से लग रहे थे। जब वज़ीर की मानसिक स्थिति ठीक न होती तो वह बड़ा निर्दय हो उठता और छोटी छोटी बातों पर आदमी के प्राण तक ले लेता ...

गाड़ियों पर लाद लादकर लम्बे लम्बे लट्ठे क़िले की दीवालें तोड़ने के लिए बढ़ाये जा रहे थे। तोपें फाटकों को निशाना बनाने के लिए तैयार खड़ी थीं। रात के अंधेरे में सिपाही सीढ़ियां, कांटे और रस्सियां लगाने का इन्तज़ाम कर रहे थे। हाथियों में हरकत होने लगी थी और घुड़सवार तो मौक़ा ही देख रहे थे कि कब फाटक टूटे और कब वे शहर में प्रवेश करें।

वज़ीरे आज़म अपने खेमे में अकेला बैठा प्रतीक्षा कर रहा था ... आखिर हरकारे ने खबर दी कि फ़ौज क़िले के पास जमा हो गयी है।

मालिक-अत-तुजार रात के अंधेरे में निकल पड़ा। सेना की एक एक सांस जैसे उसके कानों में पड़ रही थी। लाखों लोग उसके हुक्म

का इन्तज़ार कर रहे थे। अब वह अपने को पहले ही की तरह शक्तिशाली अनुभव कर रहा था।

"आगे बढ़ो!" उसने साफ़ साफ़ और अधिकार के स्वर में कहा।

हुक्म तोपचियों के कानों तक पहुंचने में कुछ क्षण अवश्य लग गये थे। और उसे जैसे सहसा किसी भय ने घेर लिया था–ऐसी अनुभूति उसे पहले कभी न हुई थी। उसे लगा जैसे उसका हुक्म अन्धकार में विलीन हो गया, जैसे उसके शब्दों में कोई शक्ति न रह गयी ...

तोपें गोले उगल रही थीं। उसी क्षण आक्रामकों की कंठध्वनि वातावरण में गूंज उठी। जलती हुई मशालों से प्रकाशित क़िले की दीवारें अन्धकार में से उठती हुई सी दिखाई दे रही थीं। तोपें गरज रही थीं, गरज रही थीं...

चारों ओर प्रलय का सा दृश्य था–लोग बतहाशा चीख़-चिल्ला रहे थे, तलवारें सिपाहियों के शरीर में घुस घुसकर उनकी आंतें तक बाहर निकाले ले रही थीं, भाले अपना काम कर रहे थे, कटे हुए सिर ज़मीन पर लोट रहे थे, ख़ून के दरिया बह रहे थे, दीवालों पर लगी हुई सीढ़ियों के गिरने से उनपर चढ़े हुए सिपाहियों की हड्डी-पसलियां भुरकुस हो रही थीं और न जाने कितने निरीह हाथियों के पैरों के नीचे दब दबकर परलोक सिधार रहे थे। महमूद गवान ने अपने सूखे हुए ओंठ चाटे। उसे लगा जैसे उसकी निराशा उसका पीछा छोड़ रही है। उसने चैन की सांस ली–उसकी आज्ञा का पालन किया जा रहा था।

...फ़ौज सुबह तक लड़ती रही। उसने पहली और दूसरी दीवाल तोड़ डालीं। लेकिन अभी तो पांच दीवालें और थीं। पांच और! फ़ौज मैदान से हट आयी। पैदली सिपाहियों ने सबसे अन्त में मैदान छोड़ा। शहर पर अधिकार न हो सका। फिर भी, वज़ीर को क्रोध

न आ रहा था। और अमीरों, खानों और मलिकों को यह देख देखकर आश्चर्य हो रहा था कि मालिक-अत-तुजार बड़ा प्रसन्न है। रसोइये तक से मज़ाक़ कर रहा है, मज़ा ले लेकर खा-पी रहा है। फिर उसने सेना-नायकों को बुलाया, आंखें सिकोड़ते हुए उन्हें देखा और नये आक्रमण की तैयारी करने की आज्ञा दी। वह वापस बीदर लौटकर नहीं जा सकता। इस समय उसे राजा की सेना से अधिक तो अपनी राजधानी का डर लग रहा था।

मेंह बरसता है और थम जाता है। बन्दर ताड़ की चौड़ी चौड़ी पत्तियां झकझोरते हैं और उनपर पड़ी हुई पानी की आखिरी बूंदें ज़मीन में ढह पड़ती हैं। तोते टांय-टांय कर रहे थे। दाहिनी ओर बांसों की झाड़ियों के चिटखने की आवाज़ें सुनाई दे रही हैं। गाड़ीवान जंगली जानवरों को डराने के लिए चिल्लाते हैं और चाबुक फटकारते हैं।

गोलकोंडा की खानों का उदास गाना अभी तक जैसे निकीतिन के कानों में गूंज रहा है—

हीरे वहां जन्म लेते हैं
गिरते जहां हमारे आंसू
ऊ-ऊ-ऊ!
आ-आ-आ!
ऊ-ऊ-ऊ!

गाने की टेक में दर्द था। लेकिन अब तो सब कुछ बहुत पीछे छूट चुका था—गोलकोंडा, बीदर, सीता का गांव। सब कुछ ...

घासों से भरा हुआ रास्ता, जंगलों और पहाड़ों से होता हुआ, दाभोल बन्दरगाह की ओर जा रहा है।

रास्ते में यदा-कदा कोई गांव भी आ जाते हैं और प्राय: मुसाफ़िरों को, रास्ता साफ़ करने के लिए, मार्ग पर उगे बांसों और लताओं को काटना पड़ता है। उनके हथियार हर समय तैयार रहते हैं।

जंगल! रात में तम्बू के पास सियार रेंका करते हैं। शिविराग्नि के पीछे झाड़ियां सरसराया करती हैं।

गाड़ी अपने रास्ते बढ़ती है। मुसाफ़िरों ने सिना नदी पार की, फिर भीमा ... नदियों पर बत्तखें, हंस और कुछ अन्य पक्षी उड़ रहे थे। शायद ये पक्षी इस गर्म प्रदेश में जाड़ा बिताते हैं। भीमा की एक सहायक नदी के किनारे किनारे यात्री पहाड़ों में प्रवेश कर गये। नदी के किनारे पर, प्रवाह की प्रतिकूल दिशा में, भयभीत तीतर, जंगली मोर, बगुले और सारस उड़ रहे थे। चट्टानों के ऊपर आसमान में चील स्थिर दिखाई दे रहे थे। मखमली फूलों जैसी मुलायम और चमचमाती हुई तितलियां मंडरा रही थीं।

रातों में मच्छड़ काटते हैं। उनसे आदमी अपनी जान नहीं बचा सकता। वे कपड़ों में घुस जाते हैं और उनके काटने से लगता है जैसे शरीर पर अंगारा रख दिया गया हो। ऐसे में धुआं भी तो कोई काम नहीं करता। बैलों की खाल लाल हो जाती है, आदमियों का चेहरा सूज आता है।

दिन हफ़्तों में बदले गये और हफ़्ते महीनों में। अब, वायु में समुद्री पानी की गन्ध मिलने लगी थी और ताड़ के पेड़ दिखाई दिये। दर्रा! अब, उतराई ही करनी है।

"तीन दिनों में हम दाभोल पहुंच जायेंगे!" गाड़ीवान बोले।

अफ़नासी न तो सांपों से ही डरता और न पहाड़ी शेरों की दहाड़ से ही। वह आवश्यकता पड़ने पर अभी एक महीने तक पहाड़ों में चलते

बांसों के बीच से होकर अपना रास्ता खोजने और बाघों से मोर्चा लेकर अपनी ज़िन्दगी खतरे में डालने को भी तैयार था।

परन्तु निकीतिन को दाभोल जाने में भय लग रहा था। शायद वहां लोगों को उसके निकल भागने की बात मालूम होगी। इस खतरे ने जैसे उसे नयी शक्ति दे रखी थी। सीता के गांव से लेकर दाभोल तक के सारे रास्ते हसन उदास निकीतिन की ओर चिन्तित दृष्टि से देखता रहा। रूसी अपने चारों ओर जिस उदासीन-सी दृष्टि से देखता, उससे हसन को डर लग रहा था। परन्तु अब, दाभोल के निकट आते ही अफ़नासी फिर पहले जैसा फुर्तीला हो गया। एक पड़ाव पर तो उसने अपनी गठरियां ठीक कर लीं, रेशम और किताबें क़ायदे से रख दीं। हसन ने चन की सांस ली। रूसी में जैसे जिन्दगी लौट आयी थी!

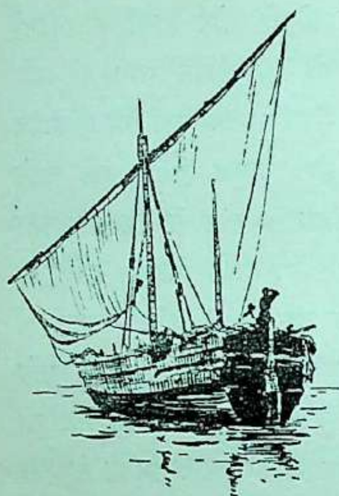
दाभोल सलतनत का सबसे दक्षिणी बन्दरगाह था – समुद्री तट पर बसा हुआ एक छोटा-सा नगर। खाड़ी में नावें पहाड़ पर से ही दिखाई दे रही थीं।

धान के खेतों और घने वन से घिरा हुआ दाभोल बन्दरगाह अपने मां-बाप से भाग जाकर समुद्री तट पर लेटे हुए आलसी बच्चे की तरह फैला हुआ था।

अफ़नासी की नज़र उन उजले वनों पर पड़ी जो नगर के समीपस्थ पहाड़ों पर उगे हुए थे।

"ओह!" दांत निकालते हुए गाड़ीवान बोला, "वसन्त की वर्षा इन वनों को साफ़ कर देती है। यही तो दुख है। कभी कभी तो पानी पत्तियों और शाखाओं की तो बात ही क्या, सारे गांव को बहा ले जाता है।"

अफ़नासी ने गाड़ीवान को अच्छी रक़म दी। वह नगर में नहीं जाना चाहता था। उसने सतर्क रहने का निश्चय कर लिया था।



वह हसन के साथ, नगर से दूर की बस्ती में, एक छोटे-से मकान में ठहर गया। अफ़नासी जानता था कि भारतीय, प्रथानुसार, कभी मुसाफ़िरों को पनाह देने से इनकार नहीं करते। उसका मालिक मकान हिन्दू था और किसान लग रहा था। उसकी थोड़ी-सी अपनी ज़मीन भी थी।

निकीतिन ने हसन को बैलों के पास भेजा और स्वयं मालिक मकान से कहने लगा –

"मैं मुसलमान नहीं हूं। सुलतान के आदमी मेरे पीछे लगे हैं। मेरी सहायता करो।"

हिन्दू को कोई आश्चर्य न हुआ। उसने चुपचाप सिर हिला दिया।

"बताओ, कैसे तुम्हारी सहायता करूं?"

"मुझे समुद्री सफ़र पर जाना है। उधर जानेवाली कोई नाव तो मिल जायेगी न?"

"हां, मिल जायेगी।"

"तो फिर बात करो। मैं इसके लिए अच्छी रक़म दूंगा।"

"तुम यहां आराम करो!" मालिक मकान ने कहा, "मैं बन्दरगाह तक जाऊंगा।"

उसने अफ़नासी से कुछ भी न पूछा, कुछ भी न जानना चाहा। वह चला गया और जब लौटा तो बताया कि कोई एक हफ़्ते बाद नाव जायेगी। उसमें उसे जगह मिल जायेगी ...

निकीतिन पूरे एक सप्ताह दाभोल में पड़ा रहा।

मालिक मकान पहले ही की तरह चुप रहा। उसके घरवालों ने भी कुछ न पूछा। अफ़नासी हिन्दू को अपने बारे में बताना चाहता था परन्तु उसने स्वयं ही निकीतिन को मना कर दिया।

"तुमने मुझपर भरोसा किया, यही बहुत बड़ी बात है!" वह गर्व से बोला।

नाव पर रात में सामान लादा गया। तट और नाव के बीच लगे हुए पटरे के नीचे समुद्र का जल कलकला रहा था। निकीतिन का सन्दूक़ हाथ से फिसलकर पानी में गिरा और बड़ी मुश्किल से बाहर निकाला जा सका।

अंधेरे में किसी प्रकार निकीतिन ने मालिक मकान को ढूंढ ही लिया।

"नमस्ते, भाई!" वह बोला।

"नमस्ते, भाई!" हिन्दू ने उत्तर दिया।

हसन ने अरमूज़ तक जाने का निश्चय किया था। वह डेक पर सहयात्रियों से, जो अभी तक अपरिचित ही थे, धीरे धीरे बातें करता रहा।

निकीतिन झुका, मुट्ठी-भर गीली बालू ली, रूमाल में बांधी और नाव में चला आया। फिर अंधेरे में देखते हुए, धीरे धीरे, कहने लगा –

"नमस्ते, सीता!"

कोई आवाज़ सुनकर उसने अनुमान लगा लिया कि किनारे पर से नाव तक लगा हुआ परदा हटाया गया। नाव डगमगायी, चिंचियायी और पाल सरसराने लगा।

किनारे पर से कोई अप्रत्याशित-सी आवाज़ सुनाई दी –

"ठहरो! ठहरो!"

नाव के किसी भी व्यक्ति ने कोई उत्तर न दिया।

आवाज़ फिर सुनाई दी, परन्तु इस बार वह मद्धिम हो चुकी थी। कुछ क्षणों में वह बिल्कुल ही विलीन हो गयी।

नाव और भी तेज़ी से डगमगाती रही। हवा और भी तेज़ चलती रही।

"जान बची!" निकीतिन ने सोचा।

और उसे अपनी उदासी का कारण स्वयं समझ में न आया।

प्रातःकाल उसने अपने चारों ओर तटहीन महासागर का एक विशाल प्रदेश देखा। हसन, कोहनी पर सिर रखे, उसके पास ही सो रहा था। दूसरे मुसाफ़िर भी वैसे ही खर्राटे भर रहे थे। अफ़नासी उठा और नाव के पिछले भाग में, नाव के मालिक की कोठरी की ओर चल दिया। दरवाज़ा खुला था। खुशदिल जवान हिन्दू पान चबा रहा था।

"ख़ैर, चले तो!" अफ़नासी बोला।

"हां, चल तो दिये!" हंसती हुई नज़रों से हिन्दू ने हामी भरते हुए कहा, "क्या सुलतान से तुम्हारी नहीं पटी? कोई बात नहीं। यहां किसी की भी उससे नहीं पटी। सबसे पहले – मेरी। हा-हा-हा!"

"तुम मुसाफ़िरी का ज्यादा पैसा लोगे क्या?"

"बेशक!" नाविक ने खुश होकर कहा।

"और जल्दी चलेंगे न?"

"हां! देखो न कितनी तेज़ हवा है! जल्दी! अरे, मैंने तो किराया बहुत थोड़ा लिया है। हवा को देखते हुए तो मुझे ज्यादा पैसा लेना था! अच्छा बैठो! पान लो। सोये क्यों नहीं?"

"ऐसे ही ... हूं ... तो हम चार हफ़्तों तक चलते रहेंगे?"

"ओह! लड़ने-झगड़ने और फिर सुलह करने के हमें बहुत-से मौक़े मिलेंगे ... चलो खाना खायें? शतरंज खेलना आता है?"

मालिक बड़ा जिंदादिल आदमी था। परन्तु इसी मौज के साथ ही साथ सफ़र के मज़े का भी अन्त आ गया था।

वसन्त में हिन्द महासागर पर प्रायः तेज़ तूफ़ान आते हैं, उत्तरी-पूर्वी हवाएं चलती हैं। अभी एक हफ़्ता भी न गुज़रा था कि मुसाफ़िरों को पहले तूफ़ान का सामना करना पड़ा। पाल हटा लिया गया था और लोग डांड़ चलाने लगे थे। परन्तु प्रकृति के साथ होनेवाला यह संघर्ष उनकी शक्ति के बाहर था। तूफ़ान चलता रहा, बढ़ता रहा और नाव इधर उधर डगमगाती रही...

डेक पर से सारा सामान नीचे रखा जाने लगा। उसे रस्सियों से बांधा भी गया ताकि वह जहाज़ के कगार से टकराकर उसे तोड़-फोड़ न डाले। डांड़ ऐसे चल रहे थे कि नाव का सन्तुलन न बिगड़े।

नाव अज्ञात प्रदेशों की ओर बढ़ रही थी। अभी कुछ ही देर पहले खुश दिखाई पड़नेवाला नाव का मालिक इस समय सफ़ेद पड़ रहा था और बराबर भगवान की प्रार्थना कर रहा था।

लोग डरते हुए जैसे अपनी चीज़ों के साथ चिपक गये थे। वे मुंह में जाते हुए नमकीन पानी के कुल्ले करते जा रहे थे।

लहरें हहरा रही थीं, चमचमा रही थीं और नाव को ऊपर-नीचे चढ़ा उतार रही थीं।

निकीतिन को कास्पियन के तूफ़ान की याद हो आयी। परन्तु इस तूफ़ान को देखते हुए वह न के बराबर लगता था।

नाव ऐसे चिनचिना रही थी जैसे अब टूटी, तब टूटी। उसके किनारे लगने का तो सवाल ही क्या! किनारा था कहां? अफ़नासी, मल्लाहों की बेंच पकड़े अपने को जैसे धीरज बंधा रहा था।

इस प्रकार सारा दिन बीत गया। सिर्फ़ चौथे दिन प्रातःकाल तूफ़ान की तेजी कम हुई परन्तु आसमान अब भी साफ़ न हुआ था।

36—1576

वे लोग पूरे एक हफ़्ते तक महासागर पर भटकते रहे। वे समझ ही न पा रहे थे कि वे हैं कहां।

आखिर उन्हें दिशा का ज्ञान हुआ, पश्चिमी दिशा का, और वे उसी ओर चल दिये। वे किधर जा रहे थे इसका उन्हें कोई पता न था। नाव के मालिक को विश्वास था कि वे किनारे लगेंगे। लेकिन किस मुल्क के किनारे? यह वह निश्चित रूप से न कह सकता था।

तीसरे हफ़्ते हवा शान्त हुई। पाल जैसे निष्प्राण-सा लटक आया था। नाव, अनाथ की तरह, लहरों पर डोल रही थी। इस समय वह डांड़ों के सहारे ही चल रही थी। सभी लोग बारी बारी से डांड़ चला रहे थे। मुसीबत में सभी हाथ बटाते हैं।

जैसा कि पता चला था, अधिकतर यात्री वे थे जो चोरी चोरी व्यापार करते थे और छिप-छिपाकर आते-जाते थे। वे अपने साथ सोना और जवाहरात ले जाते थे और चुंगीवालों को चकमा दे जाते थे।

ख़ुशमिज़ाज मालिक ने खाने और पीने के मामले में बचत करने की सलाह दी। सभी लोग उसकी राय से सहमत थे यद्यपि अब मालिक को जैसे मालिक न समझ रहे थे।

हर व्यक्ति मुसीबत में अपने को किसी से भी घट-बढ़कर न समझता। वे किधर जा रहे हैं यह वे न जानते थे। क़िस्मत उन्हें अफ़्रीका के तट, इथियोपिया की ओर ले गयी।

हसन प्रायः नाव के ऊपरी भाग पर टहलता था। इसी लिए सबसे पहले ज़मीन पर उसी की निगाह पड़ी। वह ऐसे चिल्ला पड़ा मानो किसी ने उसे काट डाला हो। सभी लोग नाव की नासिका की ओर दौड़ पड़े। ज़मीन के निकट ही फेन की एक सफ़ेद रेखा-सी चमचमा रही थी।



एक टेढ़ी नाकवाला अरब तो रो ही दिया। दो हिन्दू तुरन्त प्रार्थना करने लगे।

नाव के मालिक ने किनारे की ओर देखा और ओठ भींच लिये।

"क्या?" निकीतिन फुसफुसाया।

हिन्दू ने तुरन्त उसकी ओर देखा।

"अच्छा होता कि हमें यह ज़मीन दिखाई ही न दी होती... हम तो यहां जंगलियों के हाथ में पड़ गये। अगर वे नरभक्षक न हुए तो हमारी खुशक़िस्मती समझो!"

"तो मोड़ नहीं सकते?"

"कहां? हमारे पास पानी जो ख़त्म हो रहा है..."

स्थिति बड़ी निराशाजनक थी। अधिकतर लोग इस मत के थे कि नाव किनारे से लगानी चाहिए। लोग इतने थक चुके थे, इतने परेशान हो चुके थे कि उन्हें जंगलियों से भेंट होना, रास्ते पर चलते रहने की अपेक्षा, कम खतरनाक लग रहा था।

"यही तब तक के लिए इन्तज़ार करना चाहिए जब तक हवा अनुकूल न हो जाये!" डेक पर से कुछ लोग चिल्लाये, "अभी नाव खेना आसान नहीं है! फिर प्यास... हमें पता चलाना चाहिए कि हम हैं कहां!"

मालिक ने नाव रोकने का हुक्म दिया।

अफ़्रीका महाद्वीप का समुद्री तट बिल्कुल सपाट था। कहीं भी आरामदेह खाड़ियां न थीं। उनकी नाव किनारे की हरी पट्टी से कोई

पांच सौ क़दम पर खड़ी थी और उनकी समझ में न आ रहा था कि क्या किया जाये। पानी के लिए जाना तो चाहिए, परन्तु इसके लिए नाव ज़मीन के पास रुकनी चाहिए और इस रहस्यपूर्ण देश के किनारे पर उतरना तो बड़ा ख़तरनाक था।

समुद्र के पानी से ही लगे लगे उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले वन आरम्भ हो जाते थे। मुसाफ़िर उन वनों, और नीले पड़ते हुए पहाड़ों की ओर देखते हुए परस्पर बातचीत करते रहे।

सहसा, कंधों पर लम्बी संकरी डोंगियां रखे, कुछ लोग किनारे पर भागते हुए दिखाई दिये। डोंगियां समुद्र में डाली गयीं, लोग उनमें कूदे और तुरन्त ही दसियों डोंगियां दो ओर से नाव की ओर चल पड़ीं। मालिक ज़ोरों से सीटी बजाने लगा।

सौदागरों के हाथों में तीर-कमान दिखाई पड़ने लगे।

"हथियार हटा लो!" मालिक ने आज्ञा दी, "कुछ भी हो उनकी संख्या अधिक है। हमें उनके साथ सुलह करनी चाहिए!"

वह दौड़ता हुआ नाव के पिछले भाग में गया, सिर से पगड़ी उतारकर उसे हिलाने लगा।

डोंगियों के लोगों ने उसे देख लिया। भाले और तीर-कमान से लैस इन लोगों ने अपनी चौकोर और लम्बी लम्बी ढालें नीची कर लीं।

चारों ओर से घिरी हुई नाव पर हबशी लोग चढ़ रहे थे। लम्बे-चौड़े क़द, गुदे हुए भयानक-से शरीर, लाल रंग से रंगे हुए बाल। सभी नंगे थे। उनके भालों और तीरों की नोकें तांबे की थीं और ढालें चमड़े की। जो व्यक्ति सबसे अधिक रंगा-चुना था वह कभी नाव की ओर इशारा करता, कभी किनारे की ओर।

उसकी बात कोई न समझ सका। नाव का मालिक आगे बढ़ा और मुद्राओं से, और छाती पर हाथ फेरते तथा ठंढी सांसें लेते हुए अपनी बात समझाने का प्रयत्न करने लगा। फिर उसने संकेतों से यह समझा दिया कि उन्हें प्यास के कारण कितना कष्ट है...

हवशियों ने उसकी बात समझी, हामी भरते हुए कुछ कहा और खुद यह संकेत करने लगे कि उन्हें खाना दिया जाये। वे जबड़े नचा रहे थे, पेट पर हाथ फेर रहे थे और धमकियां दे रहे थे।

"देना ही होगा!" निकीतिन ने साथियों से कहा, "और हम कर ही क्या सकते हैं? हम सभी को कुछ न कुछ देना चाहिए! चलो खाने का सामान लायें!"

मुसाफ़िरों ने हवशियों को एक बोरा चावल, एक पोटरी मिर्च और डबलरोटियों की एक टोकरी दी। इसके बदले में उन्होंने पानी की मांग की। हवशियों ने खाने का सामान और थोड़ी-सी मसकें डोंगियों पर रखीं। दो डोंगियां चल पड़ीं।

बाक़ी हवशी नाव पर ही रह गये। उन्होंने हर चीज़ को उलट पुलट कर देखा। सभी चीज़ों में रुचि दिखायी—पाल को मींजा-मांजा, रस्सियां हिलायीं-डुलायीं, लोगों के कपड़े खींच खींचकर देखे। फिर निकीतिन के चारों ओर खड़े होकर जीभ चटकारते और उसकी सफ़ेद त्वचा में चिकोटियां काटते हुए बराबर इस बात पर आश्चर्य करते रहे कि वह कैसी लाल पड़ जाती है।

निकीतिन को क्रोध आ गया। आखिर इससे उसे दर्द जो होने लगा था! एक हवशी ने फिर चिकोटी काटने के लिए अपना हाथ बढ़ाया कि निकीतिन ने उसपर एक मुक्का जड़ दिया।

"शैतानी मत करो! मैं तो तुम्हें नहीं छूता! चलो रास्ता नापो!"

हवशी नाराज हो गया। उसने सीना तान लिया और आंखें

तरेरने लगा। अफ़नासी ने विचार किया कि उसे छेड़ना ठीक नहीं वरना सभी मुसीबत में फंस जायेंगे। निकीतिन ने अपनी कटार निकाली और हवशी को देते हुए कहने लगा – "लो, सिर न खाओ!"

इस व्यवहार का बड़ा अच्छा असर हुआ। हवशी ने कटार ले ली और उसकी सराहना करते हुए नाचने लगा। उसके साथी भी इस भेंट को आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगे।

नाव पर हवशी औरतें और बच्चे भी चढ़ आये थे। सभी नंगे थे, रंगे थे। सभी के शरीरों पर सीपों और घोंघों का शृंगार था। वे हर चीज़ को हाथ फैला फैलाकर देखते और जब उन्हें कोई चीज़ न दे दी जाती तो उन्हें बड़ा आश्चर्य होता। डोंगियां वापस आ गयीं, परन्तु हबशियों ने पांच मसकों में से केवल तीन ही लौटायीं और बाक़ी दो मसकों के बारे में बड़े व्यवहारिक ढंग से समझा दिया कि उन्हें हमने रोक लिया है।

हवशी शाम होते होते वहां से चले गये। उनके जाने के बाद मुसाफ़िरों को पता चला कि उनकी बहुत-सी छोटी-मोटी चीजें ग़ायब हो गयी हैं। वे इनको बराबर गालियां देते रहे।

नाव चार दिन तक वहीं खड़ी खड़ी अनुकूल हवा का इन्तज़ार करती रही। कोई भी जान के डर से किनारे पर न गया। परन्तु हबशी रोज़ रोज़ आकर नाव को घेर लेते। चावल और डबलरोटी लेते और मालिकों जैसा व्यवहार करते।

पांचवें दिन, रात से ही, अनुकूल दक्षिणी हवा चलने लगी थी। नाव का मालिक, हसन और दो तीन सौदागर आपस में बातचीत करते दिखाई दे रहे थे।

रोज़ की तरह डोंगियां उस दिन सुबह भी आयीं। हसन ने दो तीन हबशियों को नाव पर ले लिया और फिर चिल्ला पड़ा। पाल

उठ गये, डांड़ चलने लगे और नाव झटके से आगे बढ़ गयी। किनारा पीछे छूटने लगा। डोंगियां नाव के चारों ओर वैसे ही नाचती रहीं जैसे कुत्तों के बच्चे किसी बड़े कुत्ते के इर्द-गिर्द नाचते हैं।

सौदागर उन हतबुद्ध हबशियों पर टूट पड़े, उन्हें मारा-पीटा और कुछ दूर जाकर नाव के पीछे फेंक दिया। हसन मुक्का दिखा दिखाकर उन तैरते हुए, घुंघराले बालों वाले हबशियों के सिरों को धमकियां दिये जा रहा था।

"तुम्हें ऐसा नहीं करना था," निकीतिन ने उससे कहा, "बेशक वे शैतान हैं, लेकिन उन्होंने तुम्हें मारा-पीटा तो नहीं, अगरचे चाहते तो हम सब की खबर ले सकते थे!"

"कोई बात नहीं! वे यह तो याद रखेंगे कि दूसरों की रोटी हड़पने की क्या सज़ा है! दुष्ट कहीं के!"

अफ़्रीकी समुद्रतट बायीं ओर था। पहले ही जैसा रहस्यपूर्ण, पराया। कोई भी यह न जान सका कि यह कौन देश है, छोटा है या बड़ा, और वहां रहता कौन है।

परन्तु नाव का मालिक एक बार फिर प्रसन्न दिखाई पड़ने लगा।

"अब रास्ता साफ़ है," वह बोला, "इस तरह समुद्र के किनारे किनारे हम अरब, मस्क़त और अरमूज़ तक जा सकते हैं!"

"भारत कहां है?" निकीतिन ने पूछा।

हिन्दू ने दाहिनी ओर हाथ से संकेत किया। अफ़नासी ने उधर देखा। एक के बाद एक अनन्त लहरें, क्षितिज की ओर बढ़ती चली जा रही थीं। उनका नीला-हरा रंग मूक और मनुष्य के विचारों और अनुभूतियों के प्रति पूर्णतः उदास लग रहा था। एक गंगाचिल्ली दिखाई दी और फिर अदृश्य हो गयी।

"नमस्ते... नमस्ते!"

नवां अध्याय

शरद के मौसम के आखिरी दिन। क्राइमीया के समुद्री तटों पर दक्षिणी और दक्षिणी-पश्चिमी हवाएं चलती हैं, समुद्र पर गर्मी रहती है, पहाड़ों पर बर्फ़ गिरती है।

काफ़ा के गेनोआ नगर की गलियों में मास्को का व्यापारी मत्वेई र्याबोव अपने दोस्तों के पास जा रहा है।

रास्ते में वह सोच रहा है – लौट चलने का वक़्त हो गया, आज कल गेनोआवालों के साथ व्यापार चौपट हो रहा है – तुर्कियों ने गेनोआवालों की नाकेबन्दी कर दी है, फिर तातारों से घोड़े भी खरीदने हैं, आजकल वे सस्ते जो हैं, और अपने पुराने घोड़े निकालने भी तो हैं।

अस्तरखान की डकैती को छः वर्ष बीत चुके हैं। अब तो मत्वेई र्याबोव की उम्र भी ढलने लगी है, वह पहले से अधिक मोटा भी हो गया है, और अब तो पहले से भी अधिक बैल जैसा दिखता है। उसकी काली काली आंखें गालों में छिप-सी गयी हैं, उसकी दाढ़ी पहले से अधिक सफ़ेद हो चली है। वह इधर-उधर न देखते अपने रास्ते चला जा रहा था। इतालवी पत्थर के खूबसूरत मकानों, महलों की सजीली ड्योढ़ियों और छज्जों, आरमीनियाई छोटे गिरजों की गम्भीर सादगी, गेनोआ के गिरजों की विलासिता और रंग-बिरंगी मस्जिदों के सौन्दर्य की ओर से पूर्णतः उदासीन लग रहा था।

काफ़ा में वह कोई पहली बार नहीं आया है। उसे नगर देखने की कोई चिन्ता नहीं। बेशक नगर अब पहले जैसा नहीं रहा, यद्यपि सभी चीजें अपनी अपनी जगह वैसी ही बनी हैं – दुर्ग की

मोटी मोटी दीवालों पर वैसे ही झंडे लहरा रहे हैं, झंडों की सुनहली पृष्ठभूमि में सेंट जार्ज का घोड़ा वैसे ही खड़ा है, कौंसल के लम्बे-चौड़े और आलीशान महल में वैसी ही डिज़ाइनदार गैलरियां हैं, शहर में वही पहले जैसे बाज़ार... लगता है कि शहर पर कुछ काई-सी चढ़ गयी है।

"मत्वेई!" किसी ने उसे पुकारा।

र्‌याबोव्र रुक गया और आंखें सिकोड़ने लगा।

"मैंने नहीं पहचाना, भाई..." उसने कहा। लग रहा था जैसे नवागन्तुक शायद फ़ारसी है, शायद तुर्की। "लगता है कहीं देखा है, मगर कहां... लेकिन हो सकता है तुम ग़लती कर रहे हो?"

"र्‌याबोव?" उत्तेजित होकर, आगन्तुक ने मुस्कराते हुए फिर पुकारा।

"र्‌याबोव... ठीक... लेकिन तुम कौन हो?"

"याद तो करो, मेरे दोस्त, मास्को के शैतान! खुद ही याद करो। तुम्हारी बैल जैसी शकल तो मैंने पहले ही पहचान ली थी!"

र्‌याबोव के मस्तिष्क में कुछ धुंधली स्मृतियां कौंध गयीं– नाव, सराय, अलाव...

"नहीं..." उसने अविश्वास से कहा, "लगता है तुम्हें कहीं देखा है, पर कहां–याद नहीं आता।"

आगन्तुक ने र्‌याबोव का कंधा पकड़ा और हिलाने लगा–

"मत्वेई, मत्वेई! नोवगोरद की याद है, शेमाखान के राजदूत की याद है? दरबंद की याद है?! क्यों?"

र्‌याबोव भौंचक्का-सा रह गया। वह मुंह बाकर देखने लगा।

"क्यों? अफ़नासी? नहीं, नहीं हो सकता...तुम?"



"तो तुमने पहचान लिया!" र्यावोव का कन्धा पकड़े हुए, उत्तेजित निकीतिन कहने लगा, "पहचान लिया! लगता है मैं ज़्यादा नहीं बदला हूं। आओ मिलने की ख़ुशी में तुम्हें चूम लूं! मेरे बूढ़े खूसट!"

दोनों देर तक एक दूसरे की बांहों में लिपटे रहे, इतनी देर तक कि उनकी हड्डियां तक पिराने लगीं।

दो बूढ़े दोस्तों को इस प्रकार आलिंगन में लिपटे देखकर एक गेनोआवासी युवती मुस्कराने लगी – निकीतिन ने उसे देखकर उंगलियां हिलायीं, फिर जैसे आंखों में चमक भरकर मत्वेई की ओर देखने लगा।

"हां... तो तुम ठीक हो? रूस का क्या हाल है?"

"तो तुम किधर से आ रहे हो?"

"ठहरो... यहां और कौन कौन है?"

"त्वेरवाले कोई नहीं है।"

"अफ़सोस...हमारे कज़ान पर क़ब्ज़ा हो गया? ठीक है क्या?"

"हां... लेकिन तुम्हारी यह तुर्की जैसी पोशाक कैसी?"

"हुं-ह... मारो गोली इस पोशाक-ओशाक को। दूसरी थी ही नहीं। ठहरो। मुझे बड़ी हैरत हो रही है – कितने दिनों बाद पहली बार एक रूसी को देख रहा हूं। आओ फिर एक बार तुम्हें गले लगा लूं!"

"बस बस... तुम तो जैसे बच्चे हो रहे हो! बस भी करो मैं कह रहा हूं! बन्द करो यह चपटा-चपटी! चारों ओर आदमी ही आदमी हैं!"

"धूल डालो उन सब पर! कुछ और सुनाओ। कहो न! शब्द तो रूसी ही हैं!"

"तुम ऐसे उतावले क्यों हो रहे हो? तुमने क्या आदमी की बोली नहीं सुनी कभी?"

"मुझे रूस दिखाई पड़ रहा है! हां, हां, कहो न!"

"यह तुम्हें हो क्या गया!" हंसते हुए र्याबोव बोला, "मैं क्या सुनाऊं तुझे? अच्छा हो तुम्हीं कुछ कहो। कहां से आ रहे हो? अभी हाल ही में मैं त्वेर गया था। वहां हमने तुम्हारे बारे में बातें कीं। लोग समझ रहे हैं कि तुम कहीं खो गये। दरबंद से कहां गये थे?"

"बड़ी दूर, भाई। भारत।"

"मज़ाक़ न करो!"

"हां, भारत गया था।"

"क़सम से?"

"क़सम सलीब की, भारत गया था!"

र्याबोव ने एक गहरी सांस ली और टोपी खिसकाकर माथे पर कर ली।

"क्या कह रहे हो! मज़ाक़ तो नहीं करते? चलो हमारे साथियों के पास चलो। वे मेरा इन्तज़ार कर रहे हैं।"

"चलो। लेकिन यह तो बताओ–सेरेगा कपिलोव से भेंट हुई? मिकेशिन से? और भी किसी से?"

"हां, हुई। बताऊंगा..."

जब तक दोनों मुख्य चौराहे–प्यासेत्ता–तक पहुंचे पहुंचे तब तक अफ़नासी को कई बातें मालूम हो चुकी थीं। मिकेशिन ने उसके बारे में झूठ बोला था, कपिलोव कुछ मुनाफ़ा कमाकर बाकू

से, कोई एक साल बाद, लौटा था। अब तो ज्यों-त्यों ज़िन्दगी काट रहा है। ज़िरहसाज़ का परिवार ग़रीबी में बसर कर रहा है। पिछले वसन्त में काशिन भी चल बसा था... रूस में भी कई तब्दीलियां हुई थीं। बड़े राजा ने यूनान की राजकुमारी से ब्याह किया था। कज़ान और सराय अब रूसियों के अधिकार में हैं। अस्तरखानी चुप हैं – अब वे गरजते-तरजते नहीं। नोवगोरद की ग्राम सभा भंग कर दी गयी। मास्को की ताक़त बढ़ रही है!

"सुनो," एक ओर देखते और शान्ति से बोलने का प्रयास करते हुए निकीतिन ने पूछा, "अब मैं अपना क़र्ज़ किसे लौटा लूं? काशिन के घर में कोई रहा भी या नहीं? उसकी एक बेटी थी..."

"ओ-हो!" र्याबोव बोल उठा, "पांच साल हुई काशिन की बेटी का ब्याह बरीकोव परिवार में कर दिया गया था। अब तो उसके तीन बच्चे भी हैं। यों देखने में ख़ूबसूरत मगर दुष्ट-सी लगती है। भगवान ऐसी बीवी किसी को न दे! हमेशा अपने आदमी से झगड़ती रहती है। कभी उसके मन की नहीं करती। उसी के कारण बरीकोव ने पीना भी शुरू कर दिया है। छोड़ भी दो उसकी बात! और तुम्हारा क़र्ज़ कैसा! तुम्हारा घर-बार और सारा सामान तो उन्होंने पहले ही हथिया लिया था।"

"तुम कहते हो – तीन बच्चे?" निकीतिन ने पूछा, "बेटे हैं?"

"एक बेटा और दो बेटियां... घर में हमेशा चखचख रहती है।" क़दम बढ़ाकर र्याबोव बोला – "अभी हम लोग अपने साथियों से मिलेंगे। तो अब मज़ाक़ बन्द करो... बस मुझे इतना याद है कि तुम एक अच्छे छोकरे थे और कहां गये थे, यह तुम्हारी बात है। नहीं बताना चाहते तो न बताओ। मगर भारत के बारे में झूठ

न बोलो। हमारे साथी बड़े गम्भीर लोग हैं। उन्हें ज़बान की लपालपी पसन्द नहीं।"

"अच्छी बात है," निकीतिन बोला, "चलो! अब चुप रहूंगा। लेकिन, भाई, भारत मैं गया था – विश्वास करो या न करो। मैं झूठ नहीं बोलता..."

"... इथियोपिया से हम पानी के रास्ते अरमूज़ आये। यह पहले से ही हमारा परिचित नगर था। यहां मेरा साथी ठहर गया। उसने भिश्ती का काम करने का निश्चय किया। और मैं घर लौटने के लिए चल पड़ा। मेरा विश्वास करो, दोस्तो, मेरी सारी आत्मा तड़प रही थी! धीरज जैसे साथ छोड़ रहा था। ऊंट की पीठ पर कभी इधर, कभी उधर झूलना, जलती हुई धूप, ज़बान चिटका देनेवाली प्यास। परन्तु विचार एक ही था – जल्दी, जल्दी, जल्दी! पड़ावों से खीझ उठता, कहीं रहने-ठहरने से खुशी न होती। एक शहर पड़ा शीराज़। गुलाब से महमहाया और हरियाली से नहाया हुआ। वहां रोकनाबाद नाम की एक नदी है। लेकिन मेरी आंखें तो वहां भूल और नीरसता के सिवा और कुछ देख तक न रही थीं। गुलाब भी मुझे अपनी ओर न खींच रहे थे। मैं सोच रहा था – अपनी वोल्गा पर पहुंचूं, अपनी सर ज़मीन पर पहुंचूं! ओफ़! अभी तो न जाने कितने काले कोस पार करने थे... शीराज़ से यज़्द, यज़्द से नईन और वहां से पहाड़ों के रास्ते इस्फ़हान और फिर पहले रास्ते से होता हुआ कूम तक। यहां सुना – वोल्गा प्रदेश में तातारों और मास्को से फिर लड़ाई छिड़ गयी। इसके माने थे रास्ता बन्द था। मैंने इधर-उधर हाथ-पांव मारे। फिर पता चला – एक क़ाफ़िला तबरीज़ जा रहा है और तबरीज़ से त्रबज़न, तुर्की और काले सागर तक जाना मुमकिन है।

मैंने जोखमें उठाने का निश्चय किया। मैंने यही सोचा बलक्लावा जाऊं या काफ़ा—दूसरा कोई रास्ता भी तो नहीं। तो मैं चला गया। तबरीज़ तक का सफ़र अच्छी तरह निपट गया। उसी समय वहां के खान उज़ून-हसन ने तुर्कियों पर चढ़ाई करने की तैयारी की। इस तरह वहां से आगे का रास्ता फ़ौज के साथ कट गया। तबरीज़ में मैं खान से मिला भी था। बूढ़ा है मगर है घुमक्कड़, और उसे गाने-बजाने का भी शौक़ है। जब कभी पड़ाव पड़ता तो दावतों के मुंह खुल जाते। उसकी सारी ज़िन्दगी ही दुश्मनों पर चढ़ाइयां करने में कटी है। हे भगवान, यह ज़िन्दगी तो तातारों से भी बदतर है। ऐसा कोई शहर भी तो न था जहां खान जमकर रहता। आज यहां—कल वहां ... हां तो तबरीज़ से मैं उसकी फ़ौज के साथ एर्दज़ीजान पहाड़ों तक आ॰ गया। उसके बाद फ़ौज तो दक्षिण में चली गयी और मैं त्रबज़न आ गया। तुर्की क़ुदरत तो हमारी जैसी लग रही थी—मज़े की ठंढक और ढेरों जंगल। बस एक बात थी—लग रहा था जैसे घर पहुंच रहा हूं! हां... परन्तु सचमुच अभी इतना खुश होने का अवसर न था। मैं त्रबज़न पहुंचा ही था कि हमें गिरफ़्तार कर लिया गया। हमारा सामान छीन लिया गया और हमें क़िले में बन्द कर दिया गया। वे लोग मुझे उज़ून-हसन का जासूस समझ रहे थे। उन्होंने काग़ज़ात ढूंढने के लिए मेरी तलाशी ली। काग़ज़ात तो उन्हें न मिले, पर दुष्टों ने मेरे माल पर हाथ साफ़ कर दिया—मिर्च, रेशम और कुछ और चीज़ें। और किससे क्या कहता? इस बदमाशी में खुद पाशा का ही तो हाथ था। उस मुटल्ले ने मुझे छः दिन बन्द रखा। फिर मैंने अपने दो ऊंट बेच डाले, बाक़ी सामान जहाज़ पर लादा और यहां आ गया... और खुशक़िस्मती

यह कि पहले ही दिन तुमसे भेंट हो गयी! अब अकेला तो न रहूंगा।"

सारे सौदागर मन्त्रमुग्ध निकीतिन की दास्तान सुन रहे थे। आखिर उसने अपनी कहानी समाप्त की और चुप हो गया। रात काफ़ी जा चुकी थी। जिस सराय में मास्को के व्यापारी ठहरे हुए थे और जहां निकीतिन भी अपना सामान ले आया था, वहां सब के सब वहुत पहले ही सो गये थे।

दिया टिमटिमा रहा था। रात में सागर की उदासीन ध्वनि कानों में पड़ रही थी। मत्वेई र्‌यावोव ने अपने साथियों से निकीतिन का परिचय कराया था और खुद ही उसके भारत जाने का जिक्र भी कर दिया था। अफ़नासी को अपनी यात्रा का सारा विवरण सुनाना पड़ा। पहले तो वे लोग उसकी बातें अविश्वास से सुनते रहे, फिर उन्हीं बातों में इतने खो गये कि रात का खाना तक भूल गये। और जब उसने सन्दूक़ खोलकर उन्हें भारत का रेशम, क़ीमती गहने-ज़ेवरों पर किया हुआ अभूतपूर्व काम दिखाया और फैले हुए एक कपड़े पर काले मोती, हीरे और लाल रखे तो सौदागरों के हाथ कांपने लगे और उनकी आंखें फटी की फटी रह गयीं।

"मगर दोस्तो, यहां तक तो मैं कुल सामान का दसवां भाग ही ला पाया हूं!" निकीतिन बोला, "बहुत-सा माल तो भाग निकलने के समय फेंक दिया, कुछ चुंगी में दे दिया, कुछ रास्ते में खर्च हो गया और बाक़ी त्रबज़न में लुट गया... क्या? जवाहरात बढ़िया हैं न? और ये रही किताबें। ईसाइयों की दुनिया में किसी ने ऐसी किताबें आज तक न देखी होंगी..."

परन्तु भारत की रहस्यपूर्ण लिखावट, फ़ारसी की शेरोशायरी और निबंध-प्रबंध सौदागरों को आकृष्ट न कर सके। उन्होंने

किताबों के पन्ने पलटे, उनके ग्राश्चर्यजनक ग्रक्षरों पर ग्रौर छोटे छोटे रेखा-चित्रों पर एक निगाह डाली। कुछ ग्राश्चर्य प्रकट किया ग्रौर फिर वस्त्रों ग्रौर जवाहरात पर ग्रांखें गड़ा दीं।

"ग्रब तो तुम राजा से भी ज़्यादा मालदार हो गये हो!" एक बड़े ग्रौर नीले-से हीरे को उंगलियों के बीच पकड़कर र्‌याबोव ने भर्राती हुई ग्रावाज़ में कहा। इस हीरे पर कर्ण ने ग्राब रखी थी।

सीता इस हीरे पर मरती थी। कहती थी इसमें चांद का टुकड़ा छिपा है।

"सचमुच, तुम्हारे जैसा कोई रईस नहीं!" नाटे ग्रौर काईदार-से चेहरेवाले सौदागर क्रिलोव ने संक्षेप में र्‌याबोव की बात की पुष्टि करते हुए कहा। "रूस में तुमसे ग्रधिक सुखी दूसरा होगा कौन! इतना धन! इतनी कामयाबी!"

"क्या यह मुम्किन है कि इतने बड़े हीरे का दाम है एक कटोरा चावल?" हड्डहे-से सौदागर इवान श्तीर ने विस्मित होकर पूछा, "यह हो कैसे सकता है? मेरी समझ में कुछ नहीं ग्राता!"

"तो इसके माने हैं कि भारत नाम का कोई देश है ज़रूर," कुछ कुछ बहरे ग्रौर शान्त-से दिखनेवाले व्यापारी पेत्रो कज़ेल ने विचारशील मुद्रा में कहा, "है, ज़रूर..."

"मास्को जाग्रोगे या त्वेर?" हीरे पर ग्रांखें गड़ाये हुए र्‌याबोव ने पूछा, "ग्रफ़नासी, ग्रब तुम्हें बहुत होशियारी से सफ़र करना है। मैं ग्रौर मेरे साथी तुम्हारी मदद करेंगे। बुरे लोग कहां नहीं होते। भगवान बचाये रात में उनके बारे में मुंह नहीं खोलना चाहिए। होशियार रहना चाहिए। तुम्हारे पास काफ़ी माल जो है।"

"नहीं, पहले त्वेर जाऊंगा!" ग्रफ़नासी ने सिर हिलाते हुए

कहा, "मेरा दिल बल्लियों उछल रहा है... शायद कोई दिखाई ही पड़े। और हां तुम कैसे जाग्रोगे?"

"रास्ता जाना-बूझा है। कीएव होकर स्मोलेंस्क और वहां से मास्को!"

"तब ठीक है–स्मोलेंस्क तक मैं तुम्हीं लोगों के साथ चलूंगा।"

सौदागर रात में बहुत देर से सोये। अफ़नासी को तो बहुत देर तक नींद न आयी। वह आंखें खोले पड़ा रहा। और जैसे ही उसने दिया बुझाया कि शरद के बादलों की भांति उदास विचारों ने उसे आक्रान्त कर डाला। सुख? सफलता? भगवान ऐसा सुख दुश्मन को भी न दे! हां, तो त्वेर जाऊं। ओलेना से आंखें मिलाने में डर-सा लगेगा। लेकिन मन तो उसके दर्शन करना चाहता है। दुनिया में वही अकेली तो रह गयी है जिसे कभी उसकी ज़रूरत थी।

कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। बर्फ़ पड़ रही थी, जिसे वायु प्रायः उड़ा उड़ाकर दिकोये पोले में इधर-उधर, ढेरों के रूप में जमा कर रही थी। मुसाफ़िरों को ठीक रास्ते पर चलना और सांस लेना दूभर हो रहा था।

मुसाफ़िर घोड़ों पर सफ़र कर रहे थे। छोटे छोटे अथक तातारी घोड़े, फूफू करते हुए, और सिर झुकाये अपने रास्ते चले जा रहे थे। हां, कभी कभी वे हवा से बचने के लिए अपने मुंह ज़रूर एक ओर कर लेते थे।

जाड़े-पाले में, और खासकर जब हवा तेज़ हो, देर तक आदमी घोड़े पर बैठ भी तो नहीं सकता–सर्दी से घुटने जलने लगते हैं और खून जमकर बर्फ़ बन जाता है। ऐसे में आदमी उतर पड़ता है और चल-फिरकर या तीखे मजाक़ करता हुआ किसी प्रकार बदन को गर्म-

रखने का प्रयत्न करता है। दिकोये पोले सचमुच वन्य मैदान है—न कहीं कोई बाड़ा, न आंगन। कहीं भेड़ियों के झुंड घूमते हैं, कहीं लोमड़ियां चूहों को पकड़ती हैं और कहीं दूर से जंगली बैल अपने झुंड की रक्षा करता हुआ दिखाई दे जाता है।

झबरीला क्रिलोव खांसता है। शान्त प्योत्र कज़ेल बड़े दुलार से घोड़े की पीठ थपथपाता है—स्वयं घोड़ा अपने मालिक की भांति शान्त है। पीछे से र्याबोव की एक जैसी तेज़ सांसें और भारी पदचाप सुनाई पड़ रही है।

चुपचाप चलते जाना ही ठीक होगा—कहीं फेफड़ों में ठंढ न बैठ जाये। निकीतिन को याद आ रही है—गर्मी का मौसम, ताज़ी ज़मीन की सोंधी सोंधी ख़ुशबू, पेड़ों में फुदकते हुए बन्दर, नाचते हुए मोर...

कहीं कोई गांव नहीं। मुसाफ़िर पड़ाव डालते हैं—खेमे लगाते हैं, सूखी घास और सूखी शाखें बटोर लाते हैं और आग जलाते हैं। फिर, लोहे के बरतन में बर्फ़ पिघलाकर उसका गर्म पानी पीते हैं और लपसी बनाकर पेट की क्षुधा शान्त करते हैं।

"अफ़नासी, सुनाओ भी," कोई कह बैठता है।

और वह हमेशा कोई न कोई नयी चीज़ कहने लगता है। बस सीता के बारे में कुछ नहीं कहता...

पसीने से क़मीज़ भीग गयी है, शरीर मैला हो गया है, धुएं से हाथ और चेहरे काले पड़ गये हैं। सभी कीएव का स्वप्न देखते हैं। अगरचे तातारों के हमलों, पोलिश रईसों के झगड़ों और लिथुआनिया के आक्रमण ने इस नगर को बहुत कुछ तबाह कर दिया है, फिर भी वहां घर तो हैं और कुछ हम-मज़हब ईसाई भी।

निकीतिन के मन में फिर उम्मीदें अंगड़ाइयां लेने लगी हैं। वह रूस के लिए कितनी ही चीजें तो लिये जा रहा है—नई नई वस्तुएं,

स्वार्जित ज्ञान, कुतुबनुमे की कहानी, सितारों और पृथ्वी के नक़्शे, जिनमें भारत के बारे में सब कुछ बताया गया है, कीमिया और शिल्प के रहस्य। त्वेर का नहीं तो मास्को का राजा उसके लिए रास्ता देगा। विदेशी पुस्तकों का रूसी में अनुवाद होना चाहिए, भारत या इथियोपिया को लोग भेजने चाहिए...

ये विचार उसमें उत्तेजना भर रहे हैं। उसकी आत्मा थिरक रही है। उसका अंग प्रत्यंग खुश है। फिर उदासी क्यों? अभी तो उसने इकतालीसवें वसन्त में ही क़दम रखा है। अभी शायद उसे और घुमक्कड़ी करनी होगी, ज़िन्दगी आराम से कटेगी। कौन जाने एक बार और उसे भारत जाने का मौक़ा मिल जाये!

पैर बर्फ़ में धंस जाते हैं। मगर वह घोड़े के साथ साथ चलता जा रहा है। उसकी पहली जैसी शक्ति और लगन अब भी बनी हुई है।

कीएव जाते समय दिन में उन्हें द्नेपर नदी पार करनी पड़ी। वे धीरे धीरे और होशियारी से चल रहे हैं। किनारा पास ही था कि बर्फ़ चरमरायी, कड़कड़ायी, पानी पर जमी एक पतली-सी पर्त टूटी और काला पानी छपाक की ध्वनि करता हुआ बर्फ़ पर आ गिरा। जो घोड़ा पुस्तकों और रेशम का गट्ठर लादे था वह हिनहिना उठा। निकीतिन तुरन्त एक ओर हट गया परन्तु यह समझते ही कि वे कितनी मुसीबत में पड़ गये हैं वह फिर जैसे स्वतः घोड़े की ओर बढ़ा।

घोड़े के पिछले दोनों पैर पानी में थे और अगले पैरों से वह बर्फ़ खरोंचता हुआ हिनहिना रहा था। बर्फ़ की पतली पर्त और भी अधिक फट रही थी।

"मेरी मदद करो, दोस्तो!" घोड़े की रास पकड़कर उसे खींचने का प्रयत्न करते हुए निकीतिन बोला।

"वह तुम्हें भी ले डूबेगा!" र्याबोव चिल्लाया, "हट जाओ!"

37*



"फन्दा बनाओ, जल्दी!"

"बोरा काटो!"

लोग इधर-उधर भाग-दौड़ रहे थे परन्तु मुसीबत में फंसे घोड़े के पास तक आने में डरते थे। कज़ेल ने कांपते हुए हाथों से फन्दा तैयार किया ताकि उसे घोड़े की गर्दन में डाला जा सके। र्याबोव चाकू लेकर आगे बढ़ा परन्तु बोरों के पास तक न पहुंच सका।

निकीतिन ने दांत पीस लिये।

उसने झट से फ़र कोट के बटन खोले, कोट उतारा, दस्ताने बर्फ़ पर फेंके और कूदकर घोड़े की पीठ पर बैठ गया। घोड़े से बंधी रस्सियां बर्फ़ जम जाने के कारण लोहे जैसी हो गयी थीं। निकीतिन के पैरों में फ़ेल्ट के बूट थे जो इतने भीग चुके थे कि अब पैरों से चिपक-से गये थे। उसे लगा कि उसके पैर सुन्न पड़ रहे हैं, फिर भी उसने सारी ताक़त लगाकर रस्सियां काट ही डालीं। घोड़ा अपनी जान बचाने के लिए निकलने का प्रयत्न कर रहा था पर पानी की धार उसे बर्फ़ के नीचे घसीट रही थी। घोड़ा मृत्यु भय के कारण लोगों के लिए और भी बाधक सिद्ध हो रहा था ...

किसी प्रकार निकीतिन ने बोरे काटे और उन्हें बर्फ़ पर फेंक दिया। फिर उसने फंदा हाथों में लिया और घोड़े की गरदन में डाल दिया।

"खींचो!" वह चिल्लाया और खुद नीचे कूद पड़ा। परन्तु इस समय तक उसकी ताक़त जवाब दे चुकी थी। फलतः वह धुएँले-से पानी में जा गिरा। उसकी टोपी एक ओर गिरी, क्षण भर में बालों और बरौनियों में बरफ़ की एक परत जम गयी। वह जैसे कुछ भी न देखता हुआ तब तक पानी में हाथ-पैर पटकता रहा जब तक किसी नें उसका कालर पकड़कर उसे बाहर न कर लिया और उसके पैरों के नीचे सख्त बर्फ़ न कड़कड़ाने लगी।

"दौड़ो!" निकीतिन की भीगी हुई पीठ पर भारी कोट रखते हुए र्याबोव चिल्लाया, "दौड़ो!"

निकीतिन के शरीर से बर्फ़ से जमे हुए कपड़े जैसे सटे हुए थे। बड़ा कोट उसके बदन पर कछुए की पीठ की तरह पड़ा था। सर्दी से उसकी हड्डियां तक जम गयी थीं। उसके पैर बेकार-से हो रहे थे और घुटनों में जैसे कोई भी हरकत न रह गयी थी। फिर भी उसने भागने का प्रयत्न किया। इस प्रकार भागने में वह गिरता, फिर उठता, फिर गिरता, फिर उठता। आखिर वह ऐसा गिरा कि उठ न सका।

र्याबोव और क्रिलोव ने, बड़बड़ाते हुए, अफ़नासी को घोड़े पर बिठाया और निकीतिन साज़ पर बोरे की तरह, मुर्दा जैसा, पड़ा रहा। सर्दी से उसका सारा शरीर इतना दर्द कर रहा था कि लगता था अब दम निकला, तब दम निकला। उसकी सांस ठहर ठहरकर चल रही थी।

पहाड़ की ओर बढ़ते हुए इन मुसाफ़िरों को देखकर फ़र-कोटों से लदे-फंदे पोलिश घुड़सवार पहरेदारों ने क़हक़हा लगाते हुए उन्हें फाटक के पास रोक दिया। कौन हो? कहां जा रहे हो? क्यों जा रहे हो?

"आदमी मर रहा है!" क्रोध से र्‌याबोव चिल्लाया।

"चुप रहो, बैल कहीं के! कैसा आदमी? रूसी कुत्ते! वह कभी न मरेगा! तुम तो अच्छे-खासे पट्ठे हो! कहां से जा रहे हो? क्या सामान है तुम्हारे पास?"

पहरेदारों ने पैसे ऐंठे और फिर द्वार खोलकर मुसाफ़िरों को जाने की अनुमति दी।

रास्ते में जो पहला झोंपड़ा पड़ा वहीं मत्वेई र्‌याबोव ज़ोरों की दस्तक देने लगा। यह एक पुराना साधारण-सा मकान था जिसकी छत बेंत की थी। बूढ़े उरूइनी ने अफ़नासी को कमरे में ले जाने में मदद दी, अंगीठी के ऊपर की टांड़ पर से तीनों बच्चों को भगाया और किसी कोने में छिपाकर रखी हुई कुछ वोदका ले आया।

इसी मकान में र्‌याबोव का भी सामान लाया गया। बाक़ी मुसाफ़िर एक घर के बादवाले मकान में टिक गये। उन्होंने इस मकान में अपना सारा सामान रखा कि उलटे पैरों फिर उसी मकान में आ गये जहां निकीतिन को रखा गया था।

"कुछ ठीक है न?" घर में क़दम रखते ही कज़ेल ने पूछा, "हे भगवान, दुनिया का चक्कर लगा डाला और कुछ न हुआ, और यहां... देखो न क़िस्मत!"

"यह ज़िन्दगी है, मेरे दोस्त!" उदास होकर क्रिलोव बोला, "मौत का कुछ बहाना तो चाहिए न।"

अंगीठी की टांड़ पर लेटे लेटे निकीतिन का बदन गर्म हो गया था। वह अब वहां से हटना चाहता था।

"कहां? लेटे रहो जी!" उसपर लोग बरस पड़े।

"बोरा काट दो," वह बोला, "नहीं, मुझे दो—मैं खुद ही काटूंगा। वह भीग गया है। उसमें किताबें हैं। उन्हें सुखाओ!"

वह तभी शान्त हुआ जब हस्तलिपियां और रेशम के दो थान अंगीठी की टांड़ पर फैला दिये गये। वह अधिक देर तक वहां बैठा न रह सका बल्कि कोट लपेटे हुए, आकर एक बेंच पर बैठ गया।

"अब ठीक हूं!" वह बोला, परन्तु सचमुच उसे भीतर ही भीतर अपनी हालत खराब लग रही थी।

शाम होते होते उसकी दशा और भी बिगड़ गयी। उसे बेहोशी ने धर दबाया और वह पलंग पर करवटें बदलता हुआ, किसी अज्ञात भाषा में किसी को पुकारता और कोई विचित्र गाना गाता रहा। उसका शरीर जल रहा था।

मत्वेई र्‌याबोव ने अपने साथी को पानी दिया और उसके सिर पर पानी से भीगा हुआ कपड़ा रखने और उसे शान्त करने लगा।

बूढ़े मालिक, दादा लेव्को ने, मशाल जलायी, उन्मादग्रस्त निकीतिन की बातें सुनीं और सिर हिलाने लगा।

"यह कौन है, परदेसी?"

"नहीं, दादा!" दुख से, निकीतिन के सूजे हुए चेहरे और शून्य आंखों को देखते हुए र्‌याबोव बोला, "वह हमारा ही है – रूसी। बड़ा बहादुर आदमी है। बड़ा बुद्धिमान। दुनिया में दूर दूर तक हो आया। तीन तो समुद्र पार किये हैं उसने ... शायद सारी दुनिया में ऐसा कोई दूसरा आदमी न होगा!"

दादा लेव्को कुछ लड़खड़ाया, फिर घुटनों के बल उठा और निकीतिन के पैर ढक दिये।

"भगवान रक्षा करे ..." बूढ़ा बोला, "भगवान रक्षा करे!"

और निकीतिन कहीं दूर, बहुत दूर, जा चुका था। वह सीता का हाथ पकड़े कृष्णा के किनारे किनारे घूम रहा है, उसे रूस चलने को मना रहा है, और सीता हंसती हुई उसे मन्दिर में शिव की मूर्ति के



पास खींचे लिये जा रही है। जंगली हाथी पानी पीते समय चिग्घाड़ रहा है। आर्किड के लाल लाल फूल उसके चेहरे के सामने आ जाते हैं।

उसने आंखें खोलीं और धुएं से काली पड़ी हुई छत, छोटी छोटी और बर्फ़ से जमी खिड़की, मामूली-सी बेंच और द्वार पर रखे हुए पानी के घड़े पर नज़रें दौड़ाने लगा... अंगीठी के पास गुलाबी गालों वाली एक युवती, चिमटे से कुछ कर रही थी।

"क्यों ठीक हो गये न?" उसकी ओर झुकते हुए बूढ़े ने पूछा।

"मैं हूं कहां?" निकीतिन बड़बड़ाया।

"अपने दोस्त के घर में... लेटे रहो। ठीक हो जाओगे।"

युवती ने चिमटा जहां का तहां रोक दिया। निकीतिन ने उसकी उदास आंखों की ओर देखा और एक आह भरी।

"प्यास लगी है!" निकीतिन बोला।

उसे लकड़ी के प्याले में पानी दिया गया। वह एक बल लेटा, आंखें बन्द कीं और गहरी नींद सो गया।

इस दिन के बाद से वह धीरे धीरे अच्छा होने लगा। उसने ख़र्च में कोई कंजूसी न की और मांस, दूध और साग-सब्ज़ियां खरीदने के लिए बूढ़े लेव्को को बराबर पैसा देता रहा।

ऐसा लग रहा था जैसे वह पूरे तीन हफ़्तों तक मौत और ज़िन्दगी के बीच झूलता रहा था। व्यापारी उसे अधिक समय तक वहां न रखना चाहते थे, परन्तु उनका काम ज़रूरी था और उन्हें शीघ्र मास्को पहुंचना

था। फलतः वे तो चले गये परन्तु बूढ़े लेव्को से अनुरोध करते गये कि वह रोगी की देख-रेख करता रहे। वे गिरजे में पादरी के पास भी गये और उससे निकीतिन के बारे में सब कुछ कह सुनाया। उसने वचन दिया कि वह रोगी के लिए प्रार्थना करेगा और अगर आवश्यकता आ ही पड़ी तो उसके लिए सारे धार्मिक संस्कार भी करेगा।

मत्वेई र्‌यावोव चलते समय अफ़नासी के लिए एक पत्र छोड़ गया – "अफ़नासी, हम लोगों ने तुम्हारी दो हफ़्तों तक प्रतीक्षा की। अब हमें भय है कि रास्ता खराब हो जायेगा, पर हमें जाना तो चाहिए। हमें विश्वास है कि भगवान की दया से तुम स्वस्थ हो जाओगे। मैं तुमसे क्न्यातिनो गांव के किसान फ़्योदोर के बारे में कहना भूल गया था। तुमने बहुत दिन पहले उसके लिए कोई अर्ज़ी लिखी थी न? वह राजा इवान का अन्तरंग है, सौदागरी करता है और तुम्हें प्रायः याद करता है। अच्छा नमस्ते, अफ़नासी। चंगे हो – मास्को आओ। तुम्हारा सारा सामान सुरक्षित है। दादा तुम्हारी मदद करेंगे। अब हम चलते हैं। नमस्ते।"

निकीतिन को बहुत समय तक याद न आ सकी कि मत्वेई र्‌यावोव ने किस फ़्योदोर के बारे में लिखा है। आखिर उसे उसका स्मरण हो आया और वह हल्की-सी हंसी हंस दिया – मैंने उसके लिए किया ही क्या था और वह है कि मुझे याद करता है!

दूसरे दिन अफ़नासी कुछ होश में आया और उसी दिन एक छोटे-से गिरजे का पादरी उससे मिलने आया। बूढ़ा और दुबला-पतला-सा आदमी। वह खुश था कि उसकी प्रार्थना काम कर गयी थी। उसने जीवन के बारे में निराशा दिखाते हुए एक आह भरी और खाना खाने को तैयार हुआ। वह बेंच पर बैठ गया, उसने मांस के टुकड़ों को छोड़कर चुपचाप बन्दगोभी का शोरबा पिया। पादरी को लोग पिता अलेक्सेई के नाम से पुकारते थे।

निकीतिन को स्वस्थ होते हुए देखकर पादरी भारत के बारे में बातचीत करने लगा।

अफ़नासी ने उसे दूसरे धर्मानुयायियों की बातें बतायीं और हाथी, बन्दर, सुलतान के महलों की विलासिता तथा भारतीयों के रीति-रिवाजों के क़िस्से भी सुनाये। पिता अलेक्सेई साश्चर्य, सब कुछ सुनते रहे।

पुस्तकों ने तो उन्हें और भी परेशानी में डाल रखा था। उन्होंने हिम्मत जुटाकर पुस्तकें छुयीं परन्तु साथ ही साथ बराबर प्रार्थना करते रहे।

"अच्छा हो, मेरे बेटे, तुम इन्हें जला डालो!" उसने सलाह दी, "जिन्हें अपने धर्म में दृढ़ विश्वास नहीं उनपर ये पुस्तकें प्रभाव डालेंगी ... पुस्तक तो एक ही है–बाइबिल। और ये पुस्तकें–ये तो ज़हर हैं।"

अफ़नासी ने पुस्तकें छिपा लीं ताकि बूढ़ा उन्हें इधर-उधर न कर दे।

वह दिन ब दिन स्वस्थ होता गया। अब वह प्रायः घर के बाहर साफ़ हवा में घूमने निकला करता।

"अब शीघ्र चलूंगा!" जाड़े के दिनों की ताज़गी में सांस लेते हुए उसने सोचा। वह कीएव की गलियों पर निगाह गड़ाये था। इन गलियों में प्रायः कोई भी प्राणी न दिखाई पड़ रहा था। हां, कोई औरत पानी की बाल्टी लिये निकलती थी, कोई डरा हुआ आदमी बाड़े के किनारे किनारे चलता था अथवा कोई पोलिश रईस सेबल का फ़र और लाल ऊनी कपड़े डाटे घोड़े पर चला जाता था।

दादा लेव्को के परिवार में निकीतिन सगे-संबंधी की तरह रह रहा था। लेव्को के बेटे, यानी युवती के पति को तातार लोग कोई एक साल पहले उड़ा ले गये थे इसी लिए बूढ़ा उदास रहता था और मन में तरह तरह की कल्पना करता हुआ प्रायः निकीतिन पर एक भेदभरी दृष्टि डाल लेता था।

निकीतिन को वहां काम ही क्या था। कभी वह मालकिन की मदद करता, कभी उसके बच्चों से खेलता और कभी पड़ा पड़ा अपने विगत जीवन और अदृष्ट की कल्पनाएं किया करता।

ज़िन्दगी से उकताकर, और अपने इर्द-गिर्द असत्य का अनुभव कर वह सुख की तलाश में घर से निकल पड़ा था और दुनिया के उस छोर तक पहुंच गया था जहां तक कोई न जा सका था। लेकिन भारत में भी तो आदमी की ज़िन्दगी फूलों की सेज न थी। वहां भी दुख था, दर्द था। रूस के रईसों की ही भांति दुनिया के दूसरे रईस भी जुल्म करते थे। फिर विदेश में सुख शान्ति कहां! कोई कहीं भी क्यों न चला जाये मातृभूमि से अधिक प्यारी कोई चीज़ नहीं। बेशक समुद्र पार बसनेवाले लोग अच्छे हैं, सरल हैं। रूस! रूस! तुम भी वैसे ही देश बनो कि यहां आदमी सुख और चैन की सांस ले सकें?

"पिता अलेक्सेई!" एक बार उसने पादरी से कहा, "आज मैंने अपनी कॉपियां पढ़ी हैं और अब निश्चय किया है कि मैं अपनी यात्रा का पूरा पूरा वर्णन करूंगा। मुझे आशीर्वाद दें!"

"भगवान तुम्हें चिरायु करे, मेरे बेटे!" पादरी ने उत्तर दिया, "अगर भगवान ने तुम्हें बुद्धि दी है तो ग़ैरमजहबियों के बारे में ज़रूर लिखो और बताओ कि वे कितने गहन अंधकार में प्रवेश करते जा रहे हैं। ईसाई संसार तुम्हारी इस रचना का स्वागत करेगा।"

और निकीतिन अपनी कॉपी लेकर बैठ गया। उसने अपनी पुरानी टिप्पणियां निकालीं और सामने नक़्शा खोल लिया... ओफ़, उसे कितना लिखना था। बेशक वह उस दूर देश के बारे में, अपने बारे में सब कुछ सच सच लिखेगा, सच सच कहेगा।

उसकी कल्पना के समक्ष अगस्त की एक रंगीन सुबह, इवान



लप्शोव का चेहरा, काशिन की चिनचिनाहट, क्रिलोव और इल्या की पत्नियों के मुखड़े और वोल्गा की छपाक घूम गयी।

उसने क़लम स्याही में डुबोयी और लिखने लगा – "मैं तीन समुद्र पार की अपनी पापपूर्ण यात्रा का वर्णन आरम्भ कर रहा हूं... मैंने १५ अगस्त को वोल्गा पर अपना सफ़र शुरू किया..."

उसने धीरे धीरे लिखना शुरू किया। लिखा, दुहराया और बेकार के ब्योरे काटे-छांटे। मुस्कराया और दांत भींच लिये – वह एक बार फिर अतीत के गर्भ में पहुंच गया था।

"सुनो," एक दिन दादा लेव्को ने अपने मेहमान से कहा, "अब तुम ठीक हो गये हो, स्वस्थ हो गये हो। तो क्या ख़्याल है चले जाओगे?"

"जाऊंगा।"

"क्यों, रुक जाओ न?" जैसे अविश्वास से बूढ़े ने सुझाव दिया, "मेरा बेटा नहीं लौटा। और यहां तुम्हारे लिए सभी कुछ तो है– घर, स्त्री..."

"धन्यवाद, दादा!" बूढ़े के दुख का अनुभव करते हुए निकीतिन ने उत्तर दिया, "इस कृपा के लिए धन्यवाद। पर आप बुरा न मानें। मैं जाऊंगा ही। मुझे जाना है।"

"प्रभु मसीह तुम्हारी रक्षा करें!" लेव्को ने आह भरते हुए कहा, "जैसा चाहो, करो ... बेचारी कितनी उदास, कितनी अकेली है। फिर तुम भी अकेले हो। इसी लिए मैंने सोचा ..."

बाल्टी की झनझनाहट सुनाई दी। दोनों चुप हो गये। बूढ़े की बहू आ रही थी। उसका चेहरा लाल पड़ गया और आंखें झुक गयीं। वह विना ज़रूरत ही चीज़ें उठाने-धरने लगी। उसका बेटा रो दिया। उसने उसे गोद में उठा लिया और उसे चुप कराने लगी।

"ठहरो, पिता जी आयेंगे और तुम्हें ठीक करेंगे," बहू बोली और उसकी आवाज़ में वेदना की प्रतिध्वनि साकार हो उठी।

प्रस्थान से कोई तीन दिन पहले निकीतिन गिरजे में पादरी अलेक्सेई के यहां गया और दान में सोने का एक मुकुट दिया। मुकुट में तीन लाल और मोती भी लगे थे।

इस बड़े दान को देखकर पिता अलेक्सेई गदगद हो गया।

"किसके साथ जा रहे हो?" आखिर उसने पूछा।

"ओर्शा से दो आदमी हैं, उन्हीं के साथ।"

"भगवान तुम्हारी मदद करे। भगवान मदद करे।"

नगर में आये हुए इस व्यापारी के रईसाना दान की चर्चा सारे कीएव में बिजली की तरह फैल गयी। निकीतिन ने ओर्शा के व्यापारियों से कुछ भी न कहा था, परन्तु उन्हें भी शीघ्र ही मालूम हो गया कि वह भारत होकर लौटा है।

घर के पास निकीतिन ने दो बार कैथालिक पादरी को देखा था। पहली बार वह अकेला आया था और दूसरी बार किसी मुछैल जवान के साथ। वे अफ़नासी को घूरने लगे थे ...

निकीतिन के दिल ने जैसे यह भविष्यवाणी कर दी थी कि इन लोगों का आना अकारण नहीं है, और उसकी धारणा ग़लत न थी।

गिरजे में जाने के दूसरे ही दिन, भोर के समय, दादा लेव्को के झोंपड़े के द्वार पर ज़ोरों की दस्तक हुई। अफ़नासी ने कुहनी के बल

लेटे हुए, अपनी बेंच पर से ही, आगन्तुकों पर एक दृष्टि डाली। उसने उनके वस्त्र देखकर ही समझ लिया था कि वे विदेशी हैं। उसका माथा ठनका। पहले आगन्तुक की दाढ़ी सफ़ाचट थी और गाल भरे हुए। हो सकता है कोई पादरी हो, या कोई व्यापारी। वह जैसे चापलूसी की मुद्रा में मुस्कराया और अफ़नासी के आगे सिर झुकाकर खड़ा हो गया। अंधेरे झोपड़े में उसने अफ़नासी को बड़ी मुश्किल से देखा।

"क्या मुझे महाशय निकीतिन से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है?" सफ़ाचट दाढ़ीवाले ने पूछा। उसकी ज़बान लड़खड़ा रही थी, परन्तु आवाज़ मीठी थी।

"मैं हूं निकीतिन," अफ़नासी ने उत्तर दिया, "कहिये, कैसे आना हुआ?"

"मैं अपना परिचय देने की स्वतंत्रता ले रहा हूं। मैं पृथ्वी पर ईसा के पैग़म्बर पोप के दूत का सेक्रेटरी हूं।"

"बहुत अच्छा! क्या चाहते हैं?"

निकीतिन के इस प्रत्यक्ष और रूखे से प्रश्न को सुनकर सेक्रेटरी जैसे घबड़ा गया। परन्तु वह और भी ज़ोर से मुस्कराने लगा।

"दूत ने मुझे भेजा है यह पता चलाने के लिए कि आपका स्वास्थ्य कैसा है, आपको किसी चीज़ की आवश्यकता तो नहीं है और यह कहलाया है कि यदि उन्हें रूसी यात्री से बातचीत करने का मौक़ा मिले तो वे बड़े खुश होंगे।"

अफ़नासी ने पोप के दूत के भेजे हुए इन लोगों पर एक दृष्टि डाली और तुरन्त समझ लिया कि क्या करना चाहिए। लगता है उन लोगों ने उसके भारत जाने की बात सुन रखी है। यह तो बुरा हुआ—नगर पोलिश लोगों के हाथों में है। चारों ओर कैथालिक ही कैथालिक हैं। उसे तो ऐसा करना चाहिए कि वह किसी मुसीबत में न पड़ जाये।

बेशक पोप के दूत से मिलने से कोई लाभ तो होगा नहीं... फिर किया क्या जाये? उसने दो मुसीबतों में से कम खतरनाक मुसीबत चुनने का फ़ैसला किया।

निकीतिन ने हामी भरी।

"दूत ने मेरी याद की इसके लिए उनका शुक्रिया," शान्ति से वह बोला। उसने कुछ ऐसी मुद्रा बनायी जैसे वह इन ग्रागन्तुकों की प्रतीक्षा ही कर रहा था, "मेरा स्वास्थ्य ठीक है। मुझे किसी चीज़ की ग्रावश्यकता नहीं। रही बात बातचीत की तो समय निकालकर ग्रा जाऊंगा। कहां जाना है?"

सेक्रेटरी ने ग्रफ़नासी के ग्रागे सिर झुकाया ग्रौर बिना साफ़ किये हुए फ़र्श तक हाथ ले जाकर सलाम करते हुए हाथ झुलाने लगा।

"ग्रापको परेशान होने की कोई ज़रूरत नहीं। बाहर घोड़े खड़े हैं।"

"ग्रच्छा," निकीतिन बोला। "तो फिर ठहरो। जूते पहन लूं।"

ग्रौर निकीतिन ने भेड़ की खाल के कोट के नीचे से ग्रपना नंगा पैर निकाला। दूत के सेक्रेटरी ने बड़ी शिष्टता से ग्रांखें नीची कर लीं।

पोप का दूत मठ के एक गर्म ग्रौर बड़े कमरे में बैठा ग्रौर ग्रपने पर जब्र करता हुग्रा पादरी की बातें सुन रहा था। पादरी स्वधर्मावलंबियों की ग्रावश्यकताग्रों के संबंध में बात कर रहा था। पोप का दूत मास्को से ग्रा रहा था। वह वहां जिस काम से गया था उसमें उसे सफलता न मिली थी। कुछ समय पहले मास्को के राजा का विवाह यूनानी राजकुमारी ज़ोय पलेग्रोलोग से हुग्रा था ग्रौर इसके परिणामस्वरूप वैटिकन को यह ग्राशा थी कि रूस का शासक कैथालिक धर्म में ग्रास्था करने लगेगा ग्रौर पश्चिम के देशों के साथ उसके संबंध

मधुर बनेंगे। परन्तु रोम का चेता न हो सका। रूसी शासक ने ज़ोय को पत्नी तो बना लिया किन्तु कैथालिक धर्म में कोई रुचि न दिखायी और कैथालिक गिरजों के बारे में अपने पूर्व विचारों में कोई परिवर्तन न आने दिया। पश्चिमी देशों के साथ भी उसने कोई नया रुख़ न अपनाया।

पोप के दूत को इसलिए भेजा गया था कि वह मास्को की महारानी को उसके कर्त्तव्यों की याद दिलाये। कभी पोप नें बाईज़ंटाइन के अन्तिम शासकों को शरण दी थी और अब वह बदले में महारानी की सेवाओं की मांग कर रहा था।

परन्तु मास्को में दूत बड़ी विषम स्थिति में पड़ गया। उसे महारानी के साथ एकान्त में बातचीत करने की अनुमति न दी गयी, उसकी हर बात का उत्तर कुछ उपहास के साथ दिया गया और यद्यपि दूत की अच्छी क़द्र की गयी थी, उसे अच्छे से अच्छा खाने-पीने को दिया गया था, परन्तु एक बात ज़रूर उसके दिमाग़ में बिठा दी गयी थी— दूत जितना ही शीघ्र मास्को से चला जाये उसके लिए उतना ही अच्छा होगा।

जब दूत मास्को से लौटा तो काफ़ी उदास था। वह कल्पना कर रहा था कि पोप उसपर क्रुद्ध होगा, वैटिकन के दरबारी उसे सारगर्भित कनखियों से देखेंगे। रूस की सर्दी के कारण कीएव के रास्ते-भर वह दांतों के दर्द से तड़पता रहा था और इस पीड़ा और अपनी व्यथा से उसका जी रोने रोने को हो उठता था। कीएव में आकर दूत ने दांत उखड़वा दिया और तब उसे कुछ चैन मिला। और यहां, बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से, उसे ऐसी सम्भावना दिखाई पड़ रही थी जो रूस में उसके आने की सफलता का कारण बन सकती है। उसे पता चला कि कीएव में एक रूसी यात्री है जो भारत हो आया है।

वह शीघ्र से शीघ्र उस यात्री से मिलकर यह जान लेना चाहता था कि यह सच है या नहीं कि वह अद्भुत भारत देश में गया था,

उस देश में जिसके स्वप्न यूरोप के राजे-महाराजे देखते हैं। और यदि यह सच है तो वह उसे अपने साथ ले जायेगा। जो आदमी भारत का रास्ता और स्वयं उस देश को जानता हो वह पोप का अच्छा सेवक बन सकता है।

दूत ने समय नष्ट नहीं किया और तुरन्त कुछ लोगों को यह पता लगाने भेजा कि रूसी कहां रहता है, कैसे रहता है। साथ ही उसने अपने आदमियों को यह आज्ञा भी दी थी कि वे उसके संबंध में सभी अफ़वाहों का पता चलायें। दूत को बताया गया कि रूसी एक ईसाई के यहां रहता है, उसकी ज़िन्दगी मामूली तरह से कटती है और लगता है जैसे वह सचमुच भारत गया था। इसके पश्चात् दूत ने अपने सेक्रेटरी को निकीतिन को बातचीत के लिए निमंत्रित करने को भेज दिया था।

पादरी अपने स्वधर्मावलंबियों के कष्टों का रोना रो रहा था और दूत अपने विचारों में खोया था। इसके कान स्लेज-गाड़ी की ओर लगे थे।

सहसा आंखों के नीचे नीले गड्ढों वाला उसका गोल और ऐयाशी में पगा झुर्रीदार चेहरा खिल उठा। पादरी ने यह परिवर्तन देखा और खुश हो गया। वह मठवालों के हितों की रक्षा करने में सहायता देने की याचना कर रहा था। परन्तु पोप के दूत ने उसे बीच ही में रोक दिया।

"अच्छा, अच्छा, सोचूंगा ... हम तय करेंगे। इस समय तो मेरा धार्मिक कर्त्तव्य मुझे अपनी ओर आकृष्ट कर रहा है। आमीन भाई।"

पादरी, सिर झुकाये, कमरे से बाहर निकल गया और चुपचाप दरवाज़ा बन्द कर लिया। पोप के दूत के पद को देखते हुए पादरी

38—1576

अन्यथा व्यवहार भी तो न कर सकता था। और जैसे ही दरवाज़ा बन्द हुआ कि दूत उठा, हाथ मले और अपने भावहीन मुंह पर उदारता के भाव लाने का प्रयास करने लगा। उसने एक क़दम आगे रखा ही था कि दरवाज़े पर दस्तक हुई। उसके सेक्रेटरी ने झुकते हुए रूसी यात्री को कमरे में जाने का मार्ग कर दिया। दूत मुस्कराया और उसने दोनों हाथ आगे फैला दिये। यात्री उसे अच्छा लगा – वह लम्बा था, मज़बूत था और यद्यपि यह स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था कि अभी हाल ही में वह किसी गम्भीर रोग का शिकार हुआ है, फिर भी वह कमज़ोर नहीं लग रहा था।

"भगवान तुम पर कृपा करे!" दूत ने रूसी में कहा, "भगवान का नाम लेकर अंदर आओ!"

"धन्यवाद," निकीतिन ने उत्तर दिया, "प्रभु मसीह आपकी रक्षा करें!"

अफ़नासी ने शीघ्रता से कमरे पर एक नज़र डाली। वह कुछ कुछ मठ जैसा लग रहा था। फ़र्श पर क़ालीन पड़ा था, पलंग पर साटन का कम्बल था। पलंग के चारों ओर परदे थे। कुरसी की पीठ नक़्क़ाशीदार थी और मेज़ पर लाल मख़मली मेज़पोश था। दूत के ओंठों पर पहले की ही तरह उदार मुस्कान बिखर गयी और उसने इशारा करते हुए रूसी से आराम-कुर्सी पर बैठने को कहा। निकीतिन आगे बढ़ा और बैठ गया। दूत ने फ़र्श तक लटकती हुई अपनी पोशाक उठायी और अफ़नासी के सामने ही एक कुर्सी पर बैठ गया।

"आदमी प्रकृति से ही कमज़ोरियों से मुक्त नहीं है भले ही वह पृथ्वी पर ईसा के पैग़म्बर के कितना ही निकट क्यों न हो!" दूत ने कुछ इस ढंग से और इस मुद्रा में कहा कि लगता था जैसे वह अफ़नासी को बराबर का और अपने मज़ाक़ की क़द्र करनेवाला समझ

रहा हो। वह धीरे धीरे आंखें मिचियाने लगा। "कुतूहल और जिज्ञासा तो हम मर्त्य पीढ़ियों के पापियों में भी होती है न। पर आज मैं उन्हें आशीर्वाद देता हूं क्योंकि मुझे अपने सामने उस साहसी यात्री को देखकर प्रसन्नता हो रही है जिसके बारे में तरह तरह की अफ़वाहें सुनाई पड़ रही हैं।"

अफ़नासी मुस्करा दिया।

"पिता, मैं वैसा आदमी नहीं जिसके लिए लोगों के हृदय में कुतूहल उत्पन्न हो। लोग तो जाने क्या क्या कह सकते हैं।"

"लेकिन ये सारी अफ़वाहें पुष्ट होती हैं तुम्हारे उस बड़े दान से जो तुमने रूसी गिरजे को दिया है। मगर यह न समझना कि मेरे मन में तुम्हारे लिए कोई ग़लत विचार उठ रहे हैं या मैं तुम्हारी भर्त्सना करता हूं। नहीं! नहीं! धर्म के प्रति किसी की आस्था देखकर भगवान के सभी सेवक खिल उठते हैं। मैं तो तुमसे यही कहना चाहता हूं कि लोग तुम्हारी भारत यात्रा के बारे में जानते हैं। इसके बारे में लोग तरह तरह से चर्चा करते हैं। तो मैं स्वयं अपनी आंखों से उस व्यक्ति को देखना चाहता था जो वहां तक हो आया है जहां का रास्ता तक हम नहीं जानते। मुझे तुमसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई।"

अफ़नासी ने सिर झुका लिया।

"अगर ऐसी बात है तो मैं भी बड़ा खुश हूं, मेरे पिता।"

"तो यह ठीक है क्या कि तुम ... भारत हो आये हो?"

"हां।"

दूत जल्दी जल्दी हाथ मलने लगा।

"मेरे बेटे!" वह गम्भीरता से कहने लगा, "हम भिन्न भिन्न गिरजों के लोग हैं। लेकिन मानते हैं एक ही भगवान को। धर्म-

भाई की तरह मुझे फिर बताओ, शायद मैंने ठीक न सुना है? तुमने जो कुछ कहा है उसे साबित कर सकते हो?"

"नहीं, आपने ठीक ही सुना है। मैं अपनी बात साबित न करूंगा। मैंने कभी झूठ नहीं बोला और इस समय भी नहीं बोलता। आप चाहें यक़ीन करें, न चाहें आपकी मर्ज़ी..."

दूत ने, जैसे उदास होकर, नज़र ऊपर उठायी।

"मेरे शब्दों से तुम्हें दुख नहीं होना चाहिए। मुझे खेद है कि मैंने तुमसे इस ढंग से कहा। ज़बान ही तो हमारी शत्रु है। उसमें मन की अनुभूतियों और आत्मा की भावनाओं को व्यक्त करने की सामर्थ्य कहां? भारत... भारत तो... मेरे बेटे, मुझे बताओ यह ठीक है कि यह देश बड़ा अद्भुत है?"

अफ़नासी अभी तक खिड़की के उस पार देख रहा था। उसने अपनी निगाहें हटाकर दूत के चेहरे पर गड़ा दी।

"हां यह ठीक है," आख़िर वह बोला।

दूत ऐसा बैठा लग रहा था मानो जलते हुए कोयलों पर बैठा हो। उसे सहसा लगा जैसे उसकी आवाज़ बैठ गयी। उसने अपनी मुलायम और मोटी उंगलियां अपनी गरदन पर फेरीं, कुछ घूंट निगले, खांसा और तब ही पूछने लगा।

"मेरे बेटे! मुझे इस देश का कुछ हाल सुनाओ... वहां ईसाई रहते हैं?"

"नहीं।"

"तो सिर्फ़ मूर्ति पूजक ही हैं वहां?"

"वहां बहुत-से धर्म हैं, मेरे पिता। आपको समझाने में बड़ा समय लगेगा।"

"लेकिन वहां कोई सच्चा धर्म नहीं है क्या? नहीं है न?"

"इस बात का उत्तर मैं एक प्रश्न द्वारा दूंगा, मेरे पिता। बताइये, मनुष्य की तृष्णा का अन्त कहां है?"

दूत ने भौंहें उठा दीं—

"बड़ा विचित्र है तुम्हारा सवाल। हमारी तृष्णा तो एक व्यर्थ की चीज़ है। हमें तो एक ही चीज़ की तृष्णा करनी चाहिए—हम भगवान की दया प्राप्त करें और स्वर्ग के भागी बनें।"

"भारत में वैसे धर्म हैं जिनके माननेवाले आप ही जैसा जवाब देंगे, परन्तु वे दूसरे ही भगवान को मानते हैं। और ऐसे धर्म भी हैं जिनमें संसार दुख की खान माना जाना है परन्तु वे यह सिखाते हैं कि मनुष्य अपने जीवन में ही परमानन्द प्राप्त कर सकता है। वहां इस्लाम भी है। देख रहे हैं मेरा प्रश्न इतना विचित्र नहीं था।"

"हां, हां, हां..."

"और उनमें ज्ञानी-विज्ञानी, महात्मा और वैरागी भी हैं। जुन्नर नगर में मैंने एक फ़क़ीर को देखा था। वह छः साल से चांद से लौ लगाये खड़ा था। उसने खाने का तो एक प्रकार से परित्याग ही कर दिया था। उसने इंद्रियों को वश में कर लिया था, ध्यान-धारणा में लीन रहता था और विश्वशक्ति के साथ एकाकार हो जाना चाहता था। भारतीयों की धारणा है कि ऐसे लोग दीवाल के उस पार देख सकते हैं, दूसरों के विचारों को जान सकते हैं, बिना किसी चीज़ के इच्छित वस्तु का निर्माण कर सकते हैं, सिर्फ़ मन्त्रों द्वारा वस्तुओं की स्थिति बदल सकते हैं... हमारे यहां के महात्माओं की तरह, पिता।"

दूत का मोटा-सा ओंठ नीचे लटक आया और जैसे ही उसकी

निगाह अफ़नासी से मिली कि उसने झट ओंठ भींच लिये और ऐसी आवाज़ सुनाई दी मानो थूक निगल रहा हो।

"चांद से लौ लगाये?" जैसे घबड़ाकर उसने पूछा, "वस्तुओं की स्थिति बदल सकते हैं? बड़े कौतूहल की बात है... और यह सब करते हैं वे मूर्तिपूजक?! और... यह देश बड़ा मालदार है क्या?"

"वहां की मिट्टी सोना उगलती है, सोना। साल में तीन तीन फ़स्लें होती हैं। जैसे फल, फूल, पशु और पक्षी वहां मिलते हैं वैसे सिर्फ़ स्वर्ग में देखने को मिलते होंगे। यह तो तासीर है मिट्टी की। और देश... मैं आपसे एक प्रश्न और करूंगा। आप किसके बारे में पूछते हैं? प्रजा के बारे में या राजाओं के बारे में?"

"राजाओं के बारे में और प्रजा के बारे में।"

"तब मैं आपको अलग अलग उत्तर दूंगा। राजा तो वहां विलासिता में डूबे हुए हैं और प्रजा नंगी है, ग़रीब है। मेरे उत्तर से आप ख़ुश भी हुए, मेरे पिता?"

"मेरे बेटे!" दूत ने एक बार फिर हाथ अफ़नासी की दिशा में फैलाये, उसकी ओर ऐसे देखा जैसे कोई अपने सगे-संबंधी को देखता है और बोला, "मेरे बेटे, मेरे इस कुतूहल को क्षमा करना। परन्तु यह कुतूहल स्वाभाविक ही है। इस देश के बारे में मुझे विस्तार सहित सब कुछ बताने का कष्ट करो। तुम तो बड़ी बड़ी अद्भुत बातें कह रहे हो..."

निकीतिन ने इनकार न किया। उसने उसे सांपों, शेरों, लकड़बग्घों, छोटे छोटे किन्तु निर्दयी भारतीय भेड़ियों, घड़ियालों, तेज़ बहनेवाली नदियों, घने जंगलों और नहरों के बारे में बहुत कुछ बताया-सुनाया।

परन्तु पोप के दूत की अधिक रुचि तो किसी दूसरी ही चीज़ में थी। वह भारत की सलतनतों और रजवाड़ों, उनकी सेना के बारे में जानना चाहता था।

"हां!" निकीतिन ने अनुमान से कहना शुरू किया, "बेशक वहां बहुत-से धर्म हैं, बहुत-से सुलतान हैं, फिर भी वे एक दूसरे के साथ मित्रों जैसा व्यवहार करते हैं। सभी के पास बड़ी बड़ी फ़ौजें हैं। और फ़ौजों के पास तोपें हैं, बन्दूक़ें हैं... उनके हाथी किसी तोप से कम नहीं। उन्हें कोई मार भी नहीं सकता। गोले-बारूद तक उनका बाल बांका नहीं कर सकते।"

अफ़नासी ने दूत के चेहरे पर घबड़ाहट के लक्षण देखे और बड़े संतोष के साथ मुस्करा दिया। वे बड़ी देर तक बातचीत करते रहे परन्तु अफ़नासी ने पोप के दूत के बहुत-से प्रश्नों के जो उत्तर दिये वे स्पष्ट न थे। भारत के रास्ते के बारे में उसने केवल यही कहा कि खुद तो वह ढूंढ सकता है परन्तु यह नहीं जानता कि दूसरों को समझाये कसे। उसने कहीं कुछ लिखा भी तो नहीं, और नक़्शा भी उसके पास नहीं।

"तो अब तुम रूस लौट जाओगे?" कुतूहल से दूत ने पूछा।

"बेशक!"

"वहां तुम्हें इनाम की आशा है?"

"क्यों, इनाम क्यों? भगवान की दया से वतन पहुंचूंगा – इससे बड़ा इनाम मुझे क्या चाहिए?"

"फिर भी!" तर्जनी उठाकर दूत बोला, "तुम्हारे जैसे ज्ञानी आदमी को तो मान सम्मान और इनाम-इकराम मिलना ही चाहिए।"

"मेरे लिए तो यही बहुत है कि भगवान की प्रार्थना करके अपने पापों को काट सकूं और किसी प्रकार अपना क़र्ज़ पाट दूं।" निकीतिन ने मुस्कराते हुए कहा।



दूत ने रूसी यात्री के चेहरे पर एक भेदती-सी निगाह डाली।

"मेरे बेटे!" शान्ति और गम्भीरता से दूत बोला, "मेरे बेटे, मैंने तुम्हें केवल संयोगवश या कुतूहलवश ही नहीं बुलाया। मुझे विश्वास है कि हम मिले हैं भगवान की इच्छा से, जो अपने बहुत-से पापी दासों की ख़बर रखता है। मैं देख रहा हूं कि तुम बुद्धिमान और बहादुर आदमी हो। प्रभु मसीह के सेवा-मार्ग पर चलकर तुम्हें यश मिलेगा। मेरे बेटे, मेरी बात ध्यान से सुनो। इस समय तुम्हारे वतन का क्या हाल है? तातार उसे कुचल रहे हैं, उसकी शक्ति नष्ट हो चुकी है, उसमें सांस लेने-भर की शक्ति भी नहीं रही। वह हमारे गिरजे के उद्देश्य फैलाने के महान कार्य को अपने कंधों पर नहीं ले सकता। फिर यूरोप के बहुत-से राजा-महाराजों ने भी संसार में ईसाइयत का झंडा गाड़ने के लिए पूरा ज़ोर लगाया है। स्पेन के बादशाह, पुर्तगाल के सम्राट तथा फ़्रांस और इंगलैंड के शासकों ने इस दिशा में काफ़ी कार्य किया है यद्यपि अन्तिम दोनों सम्प्रति पाखण्डी बन रहे हैं। महामान्य पोप अपने धर्म-बालकों को मूर्तिपूजकों और मुसलमानों के धर्म रूपी अंधकार में धंसते हुए देखकर बड़े व्यथित हो उठे हैं। जब मैं उनसे उस साहसिक ईसाई की वीरता का हाल कहूंगा जिसने परायी दुनिया में प्रवेश किया है जिससे हम अभी तक अपरिचित हैं तो वह प्रसन्नता

से फूला न समायेगा। और मैं जानता हूं कि वे भारत के रास्ते का पता लगानेवाले व्यक्ति की बड़ी क़द्र करेंगे। मुसाफ़िर, तुम्हें मान-सम्मान मिलेगा, धन-वैभव प्राप्त होगा। कौन जाने, महामान्य तुम्हें ईसाइयों की किसी ऐसी सेना का नायक बना दें जो तलवार और उपदेशों द्वारा भारत में हमारे धर्म की स्थापना के लिए तुम्हारे पथ-प्रदर्शन में वहां जाये... लेकिन तुम्हें हो क्या गया?"

दूत, भयभीत, आराम-कुर्सी से उठ पड़ा।

"पिता, मेरी तबीयत ठीक नहीं..." मुश्किल से ही निकीतिन इतना और कह सका, "भारतीय...ज्वर। इस समय मुझे कंपकंपी शुरू होगी... किसी को पानी लाने का हुक्म दें, मुझे कुछ आराम करने दें, फिर बातें होंगी। आपकी बातें तो ऐसी हैं कि आदमी बरबस उनकी ओर आकृष्ट हो जाता है... मुझे माफ़ करें।"

अफ़नासी को कंपकंपी चढ़ गयी। दूत ने चांदी की घंटी बजायी, पानी लाने और रूसी के लिए बिस्तर ठीक करने की आज्ञा दी।

"नहीं, घर जाऊंगा, वहां मेरा सामान है, मुझे डर लगता है..." निकीतिन ने कहा।

और दूत ने कुछ सोचकर रूसी को उसके झोंपड़े में छोड़ आने की आज्ञा दी।

"मैं तुम्हारी सेहत के बारे में पूछ-ताछ करता रहूंगा," अफ़नासी के जाते समय वह मृदुता-से बोला, "जो कुछ तुम्हें चाहिए, मांग लेना, हम तुम्हारे लिए सभी चीज़ें मुहैया करेंगे।"

"धन्यवाद," कठिनाई से ओठ खोलते हुए निकीतिन ने कहा...

दादा लेव्को ने भयग्रस्त होकर बीमार को भेड़ की खाल के कोट उढ़ा दिये और प्रार्थना करने लगा, किन्तु जैसे ही पोलों के

जाने के बाद दरवाज़ा बन्द हुआ कि निकीतिन पैरों पर उछल खड़ा हुआ। दादा को हैरत हो रही थी।

"चुप!" अफ़नासी बोला, "चुप रहें दादा... मैं बिल्कुल ठीक हूं। मैं तो सांप के बिल में चला गया था। अब मुझे निकल जाना चाहिए... किसी को भी मेरे पास न आने देना। और घोड़ा तैयार करो..."

शीघ्र ही अंधेरा छाने लगा। दादा लेव्को ने गट्ठर बांधने में अफ़नासी की सहायता की और उसपर सलीब का निशान बनाने लगा। बहू बिलखने लगी और दादा की आंखें भर आयीं। निकीतिन भी भारी दिल से विदा हुआ। चलते समय उसने दादा के हाथ में दो रत्न और पांच मोती पकड़ा दिये और आग्रह करने लगा कि वह उन्हें अस्वीकार न करें।

उसने रक़ाब में पैर डाला और उछलकर घोड़े पर बैठ गया।

"आप लोग सुखी रहें!"

"भगवान तुम्हारी मदद करे, बेटे!"

अफ़नासी लदे हुए घोड़े को रास पकड़े ले जा रहा था।

कीएव के फाटकों के पहरेदारों को कोई शक न हुआ और उन्होंने निकीतिन को जाने की इजाजत दे दी। शायद उन्होंने सोचा होगा कि वह दूर न जायेगा। अकेले कोई दूर नहीं जाता। निकीतिन ने घोड़े को एड़ लगायी और पीछे मुड़कर न देखा। "ओह, शैतान पादरी!" उसने सोचा, "हूं-ह! मैं इसलिए तो भारत गया नहीं था कि तुम्हारे सिपाहियों को वहां का रास्ता दिखाऊंगा! नहीं, बिल्कुल नहीं!"

जनवरी का महीना समाप्त हो रहा था। फ़र्वरी के आगमन की सूचना मिलने लगी थी। जल्दी करना ज़रूरी था। निकीतिन बराबर घोड़ा दौड़ाये जा रहा था। वह रूस पहुंचने की जल्दी में था!

दूसरे दिन कीएव के लोगों ने देखा – दादा लेव्को और उसकी बहू को शहर की सड़कों पर घसीटा गया और सबके सामने उन्हें मारा-पीटा गया, उनपर क्रोध किया गया। उन दुखी लोगों को न जाने क्यों मठ में खींचकर ले जाया गया। फिर लोगों ने एक बात और देखी – कीएव से उत्तर को जानेवाले तीनों रास्तों पर सशस्त्र घुड़सवार भेजे गये। क्यों भेजे गये इसे कोई नहीं जानता। बस यही दिखाई पड़ता था कि घुड़सवार जल्दी में हैं, मानो किसी का पीछा कर रहे हैं, किसी ऐसे आदमी का जिसे पकड़ लाने का उन्हें हुक्म मिला है।

उपसंहार

तीन वर्ष बीत गये।

१४७५ की जाड़े की ऋतु। कड़कड़ाती हुई सर्दी पड़ रही है और मास्को के क्रेमलिन के उद्यानों के सौ सौ वर्ष पुराने वृक्ष चटाख चटाख चिटख रहे हैं। महलों की खिड़कियों पर मढ़े हुए अभ्रक पर बर्फ़ की भांति भांति की डिज़ाइनें बन रही हैं। बर्फ़ सूखी पड़ चुकी है और किसी के चलने पर वह चरमरा उठती है। चिमनियों से धुआं उठ रहा है। कार्यालय के मुंशियों के हाथ सर्दी से ठिठुरते जा रहे हैं। अभी तक अंगीठी नहीं सुलगायी गयी है। वे गर्मी लाने के लिए उंगलियों पर गर्म सांसें फेंक रहे हैं और खीजते जा रहे हैं। कार्यालय में जल्दी मची हुई है। बड़े राजा इवान वसील्येविच के लिए इतिवृत्त लिखा जा रहा है। सभी लोगों ने यह कार्य मुंह-अंधेरे शुरू किया और संध्या का अंधेरा होते होते खत्म किया। उन्हें आदेश दिये गये थे कि खाने के बाद वे अपना हाथ अच्छी तरह धो-

पोंछ लें इसलिए कि कहीं काग़ज़ों पर चर्बी का कोई धब्बा न लगा रह जाये। इस आदेश के अनुसार काम न करनेवालों के लिए दंड की भी व्यवस्था थी।

वसीली ममीरेव सारे कार्यों की देख-रेख कर रहा था। वह बूढ़ा किन्तु उम्र को देखते हुए बड़ा फुर्तीला, चतुर और ध्यान लगाकर काम करनेवाला मुंशी था।

कमरे में, लिखने में व्यस्त लोगों के पीछे घूमता हुआ, ममीरेव सहसा रुका और एक सींक-सलाई जैसे मुंशी की चपटी चांद पर चपत लगाते हुए कहने लगा –

"सो रहा है, शैतान का बच्चा?"

मुंशी ने सिर कंधों के बीच धंसा दिया और चुप रह गया। वसीली ने हाथों में काग़ज़ ले लिया।

"तुम ऐसा लिखते हो? कहा तो यह गया था कि एक अक्षर का भी हेर-फेर न होना चाहिए। यह हुक्म ख़ुद ज़ार का है! और यह तुमने क्या किया? पता है तुम्हारी इस बेवक़ूफ़ी से कितनी बड़ी हानि हो जायेगी? ये लेख हमारे वारिसों के लिए हैं जो इन्हें पढ़कर इस बात का निश्चय करेंगे कि रूसी का दिमाग़ कितना जिज्ञासु था और रूसी कैसे निडर होते हैं... फिर से लिखो!"

वसीली ममीरेव ने, खीझते और बड़बड़ाते हुए, भागती हुई क़लमों पर एक निगाह डाली और अपनी बेंच तक जाकर, छाती मेज़ से सटाकर बैठ गया। उसका चेहरा सूखा हुआ था, पलकें कांप रही थीं और मुंह पर खीझ के भाव झलक आये थे।

आज मुंशी इतिवृत्त के लिए त्वेर के व्यापारी अफ़नासी निकीतिन की डायरी की नक़ल कर रहे थे। यह रूसी भारत तक गया था। ज़ार इवान वसील्येविच को इन प्रतियों की विशेष चिन्ता थी। उसने

अफ़नासी की डायरी ममीरेव को देकर, उपहास-सा करते हुए कहा था –

"खुद सौदागर का तो पता न लगा सके और न उसे बचा ही सके, मगर इस डायरी को तो सही-सलामत रखना!"

कहना आसान है – पता न लगा सके! लेकिन पता लगता कैसे? डायरी पायी गयी थी लितवा के सौदागरों के पास जो स्मोलेंस्क के पास से होकर लितवा आये थे। व्यापारी निकीतिन का पता चलाना वसीली ममीरेव के लिए सिर्फ़ सिरदर्द था। इससे कुछ होना-ह्वाना न था। निकीतिन का पता किसी भी को न लगा था।

ऐसा लगता था कि दैव प्रतिकूल था। यह डायरी किसी व्यक्ति ने, मौत से पहले घंटिये को दी थी और घंटिये ने लितवा के व्यापारियों को।

निकीतिन की खोज त्वेर में, सारे नोवगोरद में और दूसरे रूसी नगरों में की गयी। किन्तु न तो वही मिला, न उसकी कोई खबर ही।

यह व्यापारी सचमुच एक महान् व्यक्ति था। बहुत काल से पूर्व का रास्ता जानने की आवश्यकता प्रतीत हो रही थी और उसने इस रास्ते का पता चलाया था। विदेशी राजदूतों को उसकी डायरी की गन्ध मिल चुकी थी, उन्होंने उसे पढ़ने की इच्छा प्रकट की थी। उनमें से किसी को उसका दर्शन भी न करने दिया जायेगा!

अफ़सोस! निकीतिन की तक़दीर ही अंधेरे में थी। पता नहीं उसे बदमाशों ने मारकर उसका सामान हथिया लिया, या अपनी मौत मरा?



इसके बारे में कोई कुछ नहीं जानता। वह एक महान् व्यक्ति था और उसने रूस की सर-ज़मीन की बड़ी खिदमत की थी।

...क़लम बराबर चलते गये, उनकी किर्र-किर्र की आवाज़ बराबर होती गयी। खिड़कियों के उस पार झुटपुटा उतर रहा था।

वसीली ममीरेव दूर भारत के विचारों में इतना खो गया था कि उसे पता ही न चला कि मोमबत्तियां जलाने का वक़्त हो चुका है। परन्तु किसी में साहस न था कि उसके विचारों की शृंखला झनझना दे।

पाठकों से

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है :

२१, ज़ूवोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

Вл. ПРИБЫТКОВ

ТВЕРСКОЙ ГОСТЬ


91.1
37238

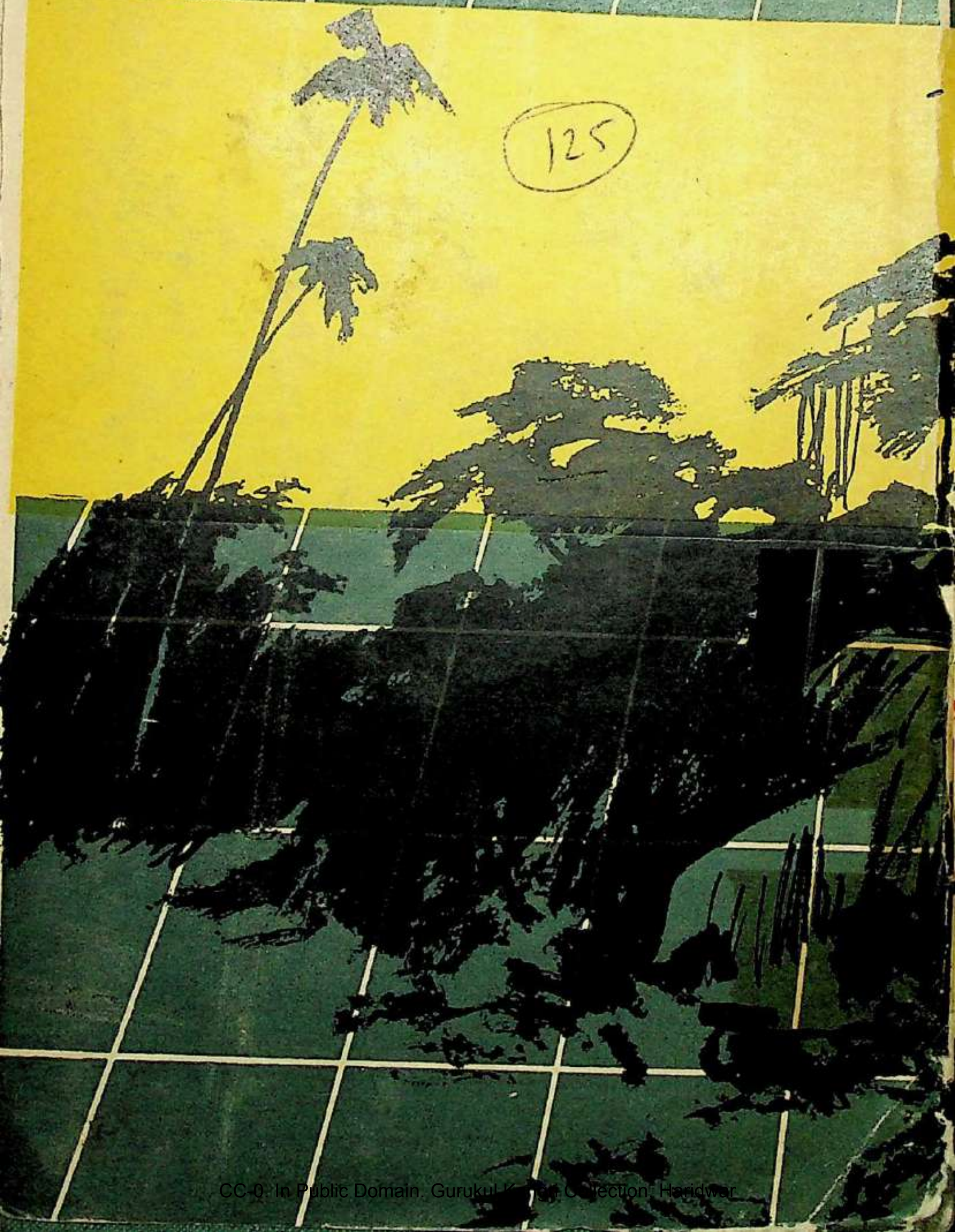

R 9.1,KHA-A
37238

बचपन को बीते बहुत स
हो गया। जब मैं पंद्रह साल का
तभी से मुझे किपलिंग में विश्व
न रहा और मैंने सोचा : रवींद्रन
ठाकुर की रचनाएं पढ़नी चाहिए

कुछ ही समय बाद द्विती
विश्वयुद्ध आरंभ हुआ और मैं मो
पर चला गया। फ़ासिज़्म की पराज
के बाद मुझे फिर श्रम और अध्यय
का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जो मोर्च
पर से वापस आये वे अभूतपूर्व दृढ़त
के साथ श्रम और अध्ययन में ल
गये। हम जानते थे कि ओरादूर
बुखेंवाल्द और ओस्वेन्सिम की
पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए। हम
सभी, लोगों के सार्वत्रिक भ्रातृभाव के
सपने देखते थे। आज भी मेरा दृढ़
विश्वास है कि बिना युद्ध के जीना
संभव है।

'अफ़नासी निकीतिन की भारत-
यात्रा' उपन्यास सन् १९५४-५६
में लिखा गया। भारत और हम,
सदियों पुरानी मैत्री और आदर-
भावना के सूत्र में बंधे हुए हैं
और सोवियत व्यक्ति स्वतंत्रता एवं
शांतिप्रेमी भारतीय जनता के प्रति
जिस हार्दिक भ्रातृभाव का अनुभव
करता है यदि उसका एक कण भी
यह पुस्तक अभिव्यक्त कर सकी तो मुझे
बड़ी प्रसन्नता होगी।

व्लादीमिर प्रिबीत्कोव


125